ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

जीवन वृत्तांत
जगद् गुरु श्री गुरु नानक देव जी

सिक्ख इतिहास, भाग-प्रथम

लेखक : स. जसबीर सिंघ

फोन 0172-2696891, 09988160484

क्रांतिकारी गुरु नानक देव चैरिटेबल ट्रस्ट, चण्डीगढ़

Website : www.sikhworld.info

अंश - (1)

विषय सूची

प्रथम अध्याय

द्वितीय अध्याय

प्रथम उदासी

मानचित्र प्रथम प्रचार दौरा

13	सिद्ध मण्डली से गोष्ठी	गुरुदेव सुमेरु पर्वत (कैलाश) 'तिब्बत'
14	चण्डी देवी का खण्डन	(अलमोड़ा उत्तर प्रदेश)
15	'तपोवन'	नैनीताल घाटी (उत्तर प्रदेश)
16	'गोरख मता / नानक मता'	नैनीताल का तराई क्षेत्र (उत्तर प्रदेश)
17	'ऋण चुकता'	टांडा नगर (उत्तर प्रदेश)
18	'दीवाली पर्व'	अयोध्या नगर (उत्तर प्रदेश)
19	त्रवेणी घाट (चतुर दास पण्डित)	प्रयाग (इल्लाहाबाद)
20	'अक्षयवट वृक्ष'	(प्रयाग इल्लाहाबाद)
21	जागीरदास हरिनाथ	बनारस (उत्तर प्रदेश)
22	स्थानीय विद्वानों से गोष्ठी	बनारस (उत्तर प्रदेश)
23	'प्रकृति के अमूल उपहार'	गंगा नदी का तट (पटना, बिहार)
24	'सालस राय जौहरी'	(पटना, बिहार)
25	सैय्यद शेख वजीद सूफी	हाज़ीपुर (बिहार)
26	पण्डों को उपदेश	(गया जी, बिहार)
27	भिक्षु देवगृह	(बुद्ध गया, बिहार)
28	'युवक पाली को आर्शीवाद'	रास्ते में (चैबासा, बिहार)
29	'बसते रहो तथा उजड़ जाओ'	रास्ते में (चाईबासा बिहार)
30	'डाकुओं का उद्धार'	रास्ते में (केन्दुझरगढ़, उड़ीसा)
31	चैतन्य भारती का उद्धार	(कटक, उड़ीसा)
32	रथ यात्रा (जगत नाथ मन्दिर)	(पुरी नगर, उड़ीसा)
33	जगत नाथ मन्दिर	(पुरी नगर, उड़ीसा)
34	पाखण्डी साधु	(पुरी, उड़ीसा)

35	कलयुगी पण्डा	(पुरी, उड़ीसा)
36	शाह सुजाह	हावड़ा (बंगाल)
37	बड़ी संगत, छोटी संगत	(कलकत्ता, बंगाल)
38	भाई भूमिया जी	(जैस्सोर, बंगला देश)
39	ढाकेश्वरी मन्दिर	(ढाका, बंगला देश)
40	झंडा वाढ़ी (बढ़ई)	(चाटो ग्राम, बंगला देश)
41	'राजा देव लूत'	(नागा पर्व, नागालैंड)
42	पद्मा (नूरशाह)	गोलाघाट (कामरूप/आसाम)
43	कामारव्या मन्दिर	('गोहाटी', आसाम)
44	पुजारी शंकर देव	(धूबड़ी, आसाम)
45	पारो नगर	(भूटान देश)
46	गंगटोक नगर (सिक्कम)	चुंगथांग (सिक्कम)
47	चुंगथांग	(सिक्कम)
48	ल्हासा नगर	(तिब्बत)
49	चीन (शंघाई नगर)	(चीन)
50	नानकिंग नगर	(चीन)
51	पशुपत्ति मन्दिर	(नेपाल की राजधानी काठ मंडू)
52	बन्धूआ मजदूरों को मुक्ति	रुहेलखण्ड (कानपुर में)
53	माई जसी	(आगरा, उत्तर प्रदेश)
54	केशव देव मन्दिर	(मथुरा, उत्तर प्रदेश)
55	मजनू दरवेश	(दिल्ली)
56	सम्राट इब्राहीम	(दिल्ली नगर)

57	शेख शरफ	(पानीपत, हरियाणा)
58	नारी जाति का सम्मान	(करनाल, हरियाणा)
59	सूर्य ग्रहण	(कुरूक्षेत्र, हरियाणा)
60	पण्डों को शिक्षा	पेहेवा (पिहोआ, हरियाणा)
61	सूफी फ़कीरों को परामर्श	(सरसा, हरियाणा)
62	बहन से पुनर मिलन	(सुलतानपुर, पंजाब)
63	परीवार से पुनर मिलन	तलवण्डी से पक्खों के रंधावे ग्राम

तृतीय अध्याय
द्वितीय प्रचार दौरा

मानचित्र द्वितीय प्रचार दौरा

1	शाह सुहागिन	(दीपालपुर, प० - पंजाब)
2	कुष्ट रोगी का उपचार	(दीपालपुर, प० पंजाब)
3	शेख ब्रह्म जी	(पाकपटन, प० पंजाब)
4	गुग्गा का खण्डन	(बीकानेर, राजस्थान)
5	दरगाह खवाजा मूईद्दीन चिश्ती	(अजमेर, राजस्थान)
6	पुष्कर तीर्थ	(अजमेर, राजस्थान)
7	भाई मरदाना जी और कंदमूल	अजमेर से चित्तौड़गढ (राजस्थान)
8	अवतारवाद का खण्डन	(चित्तौड़गढ़, राजस्थान)
9	नाथद्वार (पण्डों का ऐश्वर्य)	(उदयपुर, राजस्थान)
10	जैनी साधु	(आबू पर्वत, राजस्थान)

11	गया जी का विकल्प स्थान	(भीम उडयार, गुजरात)
12	दलदल क्षेत्र का पुनरवास	(लखपत नगर, गुजरात)
13	वाम मार्गीयों को उपदेश	(भुज नगर, गुजरात)
14	आशा पूर्णनी देवी	(मांडवी नगर, गुजरात)
15	कृतिम चिन्हों का खण्डन	(द्वारका, गुजरात)
16	मूर्तियों का विसर्जन	पोरबन्दर (सुदामा नगरी, गुजरात)
17	भक्त नरसी का गांव	(जूनागढ़, गुजरात)
18	डण्डी संन्यासी मण्डली	(गिरनार पर्वत, गुजरात)
19	कायरता की निंदा	(सोम नाथ मन्दिर के समक्ष, गुजरात)
20	जैनी साधु 'अनभी'	(पालिताणा नगर, गुजरात)
21	सत्संगत की महिमा	(भाव नगर, गुजरात)
22	नाम की महिमा	(साबरमती अहमदाबाद, गुजरात)
23	महाजन द्वारा शोषण	(बड़ोदरा नगर, गुजरात)
24	जमीदार द्वारा शौषण	(सूरत नगर, गुजरात)
25	स्वांगी गुरू	नासिक (पंचवटी), महाराष्ट
26	नारी जाति का अपमान	ठाणे शिव मन्दिर (अमर नाथ) महाराष्ट
27	ज्ञान ही गुरू	(जिला पूणे, महाराष्ट्र)
28	अश्लील मूर्तियों की भर्त्सना	रंग पट्टम नगर (कर्नाटक)
29	भिक्षा-पैतृक विरासत का अपमान	(पाणाजी, गोआ)
30	देव दासी प्रथा की भर्त्सना	(मैसूर नगर, कर्नाटक)
31	मधुर संगीत की महिमा	(बेंगलूर, कर्नाटक)
32	पशु वध (बली) की भर्त्सना	(पालघाट, कर्नाटक)

33 समय/श्वासों के सदुपयोग पर बल (कालीकट, कर्नाटक)

34 अनैतिक यौन सम्बन्धों पर फिटकार (कोचीन, केरला)

35 (त्रिवेन्द्रम, केरला) स्वांगी साधु, संन्यासीयों को ललकार

36 प्रकृति सौन्दर्य पर न्यौछावर कुमारी अन्तरीप (कन्या कुमारी)

37 राजा शिवनाभ मटिया कलम (कोलम्बो)

38 कार्तिकय मन्दिर (कत्तरगामा नगर, श्रीलंका)

39 एकीश्वर के अस्तित्व पर गोष्ठी (वटीकलोवा बन्दरगाह, श्री लंका)

40 बौद्ध भिक्षुकों के साथ गोष्ठी (ट्रिंकोमली नगर, श्री लंका)

41 प्रेम ही पूजा है (अनुराधापुरा, श्री लंका)

42 दिव्य ज्योति की उपासना ही सर्वोत्तम (रामेश्वरम, तामिल नाडू)

43 ज्ञान और श्रद्धा दोनों अनिवार्य (मदुरै नगर, तामिल नाडू)

44 कर्म ही प्रधान है (श्री रंगम, त्रिच्रापल्ली तामिल नाडू)

45 विवेक बुद्धि का होना अनिवार्य (तंजावुर नगर, तामिल नाडू)

46 श्रमिकों की समस्या का समाधान (नागापट्नम बंदरगाह, तामिल नाडू)

47 श्रमिकों के अर्न्तजातीय विवाह (जकार्ता, इन्डोनेशिया)

48 आदिवासी कबीलों का उत्थान (सिंगापुर)

49 त्री सूत्रीय कार्यक्रम कल्याणकारी (कवालालम्पुर, मलेशिया)

50 आडम्बरों पर प्रभु नहीं रीझता (कुंभकोनम नगर, तामिल नाडू)

51 परमेश्वर का कोई प्रतिद्वन्दी नहीं (करानूर नगर, तामिल नाडू)

52 प्रकृति के दृढ़ नियम (पाण्डीचेरी)

53 उज्ज्वल आचर्ण में आत्म कल्याण (कांचीपुरम नगर, तामिल नाडू)

54 विचार की कसोटी से शुभ कर्म (तिरूपति मन्दिर, आंध्रा प्रदेश)

55	शनि देवते का खण्डन	(कुड़प्पा नगर, आंध्रा प्रदेश)
56	कपिल मुनि का आश्रम	(गंटूर नगर, आंध्रा प्रदेश)
57	जग दिखावे पर आलोचना	(विजयवाडा नगर, आंध्रा प्रदेश)
58	मसकीनियां पहलवान	(हैदराबाद नगर, आंध्रा प्रदेश)
59	जनहित में जल की व्यवस्था	(बिदर नगर, कर्नाटक प्रदेश)
60	सईयद शाह हुसैन फ़क्कड़	(नांदेड़ नगर, महाराष्ट्रा)
61	पतिव्रता होने की सीख	दौलताबाद (औरंगाबाद) नगर, महाराष्ट्रा
62	ओंकारेश्वर मन्दिर	(खण्डवा क्षेत्र, मध्य प्रदेश)
63	साध-संगत की महिमा	(इन्दौर नगर, मध्य प्रदेश)
64	हृदय की पवित्रता ही स्वीकार्य	(उज्जैन नगर, मध्य प्रदेश)
65	आदिवासी भील कबीले का सरदार कौडा राक्षस (भीलवाडा क्षेत्र, राजस्थान)	
66	राजपूत चौधरी धर्म सिंह	(जयपुर नगर, राजस्थान)
67	तीर्थो पर भटकना व्यर्थ	(रिवाड़ी नगर, हरियाणा)
68	संसार मिथ्या है	(हिसार नगर, हरियाणा)
69	श्रमिकों में आस्था जाग्रित	(बठिण्डा नगर, पंजाब)
70	दौलत खान से पुनर मिलन	(सुलतान नगर, पंजाब)
71	पिता पुत्र में सैद्धांतिक मतभेद	(तलवण्डी नगर, पंजाब)
72	भाई दोदा जी	(पक्खो के रंधावे ग्राम, पंजाब)

चौथा अध्याय
तृतीय प्रचार दौरा

मानचित्र तृतीय प्रचार दौरा

1 जीवन सार्थक करने की युक्ति (चम्बा नगर, हिमाचल)
2 निराकार उपासना ही फलीभूत होती है (कांगड़ा नगर, हिमाचल प्रदेश)
3 अंध विश्वासों का खण्डन (ज्वाला मुखी मन्दिर क्षेत्र, हिमाचल प्रदेश)
4 निर्बिधन प्रीति भोज (बैज नाथ नगर, हिमाचल प्रदेश)
5 ज्योति स्वरूप प्रभु का अनुभव (कुल्लू नगर, हिमाचल प्रदेश)
6 मन हाथी, गुरू शब्द रूपी अंकुश (मनीकरण, हिमाचल)
7 हरिनाम रूपी धन अर्जित करने की प्रेरणा (मण्डी, हिमाचल प्रदेश)
8 रूप-यौवन के अभिमान त्यागे (रवालसर, हिमाचल प्रदेश)
9 काल्पनिक देवताओं की पूजा वर्जित (बिलासपुर, हिमाचल प्रदेश)
10 गडरीये बुडन को दीर्घ आयु (कीरतपुर, पंजाब)
11 भूमि पंचायत को मिली (नालागढ़, हिमाचल)
12 भजन करने की प्रेरणा (पिंजौर ग्राम, हरियाणा)
13 प्रभु पर दृढ़ भरोसा (धर्मपुर, हिमाचल प्रदेश)
14 पुरुषार्थी होने की सीख (सपाटू, हिमाचल प्रदेश)
15 पशुबलि पर आक्रोश (जोहड़सर, हिमाचल प्रदेश)
16 जल की समस्या का समाधान (माहीसर, हिमाचल प्रदेश)
17 व्यापारीयों के शौषण विरुद्ध अन्दोलन(ज्ञार्सा नगर, तिब्बत)
18 हृदय की पवित्रता ही स्वीकार्य (रुडोक नगर, तिब्बत)

19	प्रभु स्वयम्बू है	(लद्दाख का चशूल गांव, काशमीर)
20	प्रभु हमारे घट में ही बसता है	(लेह नगर, लद्दाख क्षेत्र)
21	कुख्यात दस्यु का कल्याण	(बासगो, लद्दाख क्षेत्र)
22	गडरीये को दिशा निर्देश	(सर्कदू गांव, लद्दाख क्षेत्र)
23	योगीयों के बारह पंथ	(बाल-टाल क्षेत्र, काशमीर)
24	गोष्ठी-नाथ पंथीयों से	(गुरुदेव अमर नाथ के मैदान में, काशमीर)
25	निराकार प्रभु की आराधना की महिमा	(पहलगाम नगर, काशमीर)
26	गोष्ठी-पण्डित ब्रह्म दास	(मटन नगर, काशमीर)
27	हृदय की शुद्धि पर बल	(अनंतनाग नगर, काशमीर)
28	सेवा सिमरन से अन्त:करण स्वच्छ	(आवन्ती पुर, काशमीर)
29	विकारों से मुक्ति के लिए प्रार्थना	(श्री नगर, काशमीर)
30	एक मात्र पुस्तकीय ज्ञान का खण्डन	(बारामूला नगर क्षेत्र, काशमीर)
31	साधु वेष में धन अर्जित करने की आलोचना	(उड़ी क्षेत्र, काशमीर)
32	सत्य मार्ग के पांधीयों पर संतुष्ट	(मुज़फराबाद नगर, काशमीर)
33	वली कंधारी	(हसन अबदाल-पंजा साहिब, पंजाब)
34	सदा रहन-सहन पर बल	(रावल पिंडी नगर, पंजाब)
35	गुरुदेव जेहलम (बाल गुदाई) क्षेत्र में	(प० पंजाब)
36	गुजरात नगर	(प० पंजाब)
37	पीर हम्जा गौस स्यालकोट नगर	(प० पंजाब)
38	दन्त कथा दुर्गा देवी	(कटड़ा कस्बा, जम्मू क्षेत्र)
39	रघूनाथ मन्दिर	(जम्मू नगर, कशमीर)
40	सूफी फ़कीर मीयां मिट्ठा जी	(पसरूर नगर, पंजाब)
41	चौधरी अजिता जी से परामर्श	(पक्खो के रंधावा ग्राम, पंजाब)
42	बेबे नानकी जी का देहान्त	(सुलतानपुर, पंजाब)

अध्याय पाँचवा
चतुर्थ प्रचार दौरा

मानचित्र चतुर्थ प्रचार दौरा

1	सज्जण तथा कज्जण शाह	(तुलम्बा कस्बा, प० पंजाब)
2	फ़कीर बहाउद्दीन मखदूम	(मुल्तान नगर, प० पंजाब)
3	पीर शेख अबदुल बुखारी मखदूम	(उच्च नगर, प० पंजाब)
4	महिलाओं की समस्याओं का समाधान	(सरख्वर नगर, सिंध)
5	जुलाहा दाउद	(दादू नगर, सिंध)
6	देवी देवताओं के चक्रव्यू से मुक्ति	(हिंगलाज नगर, सिंध)
7	अरब देशों को प्रस्थान	(सोनमयानी बन्दरगाह, सिंध)
8	मधुर मोसीकी हराम नहीं	(अदन नगर, अरब देश)
9	गोष्ठी-इमाम रुकनदीन के साथ	(मक्का नगर, साउदी अरब)
10	गोष्ठी-इमाम अब्दुल रहमान	(मदीना नगर, अरब देश)
11	सम्राट हमीद (कारू)	(मिश्र के काहिरा नगर, मिश्र देश)
12	चिंतन मनन आवश्यक	(येरुश्लम नगर, इज़राईल)
13	सत्संगत अनिवार्य	(इस्तम्बोल नगर, टर्की)
14	चौदह तबकों का खण्डन	(बगदाद नगर, इराक)
15	खुदा का बन्दा हूं बन्दगी मेरा काम	(तहरान नगर, ईरान)
16	मुहम्मद साहब और अली एक सम	(मशहद नगर, ईरान)
17	प्रार्थना ही फलदायक	(बुख़ारा नगर, तुर्कमानिस्तान)
18	साध-संगत का महत्त्व	(ताशकंद नगर, उजबेगीस्तान)

अन्तिम (छटा अध्याय)

आमुख

मनिति विचित्र सुकवि कृत जोऊ ॥

राम नाम विनु सोह न सोऊ ॥

(गोस्वामी तुलसी दास)

राम नाम की महमा के बिना अच्छे कवि की अनूठी कविता भी शोभाहीन हो जाती है।

भाई जसबीर सिंह ने "महामानव की रोचक यात्राएं एवं कथाएं" नामक पुस्तक में 'जगद्गुरु' गुरू नानक देव की लीलाओं का अति सुन्दर वर्णन किया है। अधुनिक युग में जहां प्रचार के साधन इतने अधिक हैं और प्रचुर मात्रा में साहित्य उपलब्ध है, ऐसे समय में प्रस्तुत पुस्तिक का सरल एवं जनसाधारण की भाषा में जन मानस की पहुँच में आ जाना ही सराहनीय है। गुरूदेव जी ने अपनी चार उदासियों (यात्राएं) में जो भमर्ण किया है, उन स्थानों के बारे सोच लेना ही अचंम्भा सा लगता है। पुस्तक में भाषा की मधुरता, सरलता एवं यात्राओं का प्रवाह ऐसे चलता है जैसे नदिया अपने उदगम् से निकल कर, अनवरत वहती हुई, अपने अंतिम लक्ष्य को पा लेती है।

किसी भी लेखक की स्व-रचित रचना का विश्लेषन एवं विवेचन करना बहुत ही कठिन काम होता है। फिर भी मैंने यथा संभव एक छोटा सा प्रयास किया है। ऐसे में चंद शब्दों में इतनी बड़ी पुस्तक का विचेचन कर पाना और भी असंभव सा कार्य लग रहा है। पाठक वर्ग से एक कर-वद्ध अनुरोध करता हूँ कि इन यात्राओं में, गुरूदेव के बारे में कोई ? क्यों ? और किन्तु ? आदि के लिए किसी भी तरह का समावेश न होने दें।

प्रथम अध्याय में लेखक ने सबसे पहले देव नागरी लिपि एवं गुरुबाणी के लिखित स्वरूप से सम्बंधित और आवश्यक जानकारी को प्रस्तुत किया है। यह जानकारी इतनी महत्वपूर्ण है कि उस की सहायता से गद्ध एवं पद्ध के स्वरूप को समझने में काफी आसानी हो गई है। मेरा ऐसा मानना है कि लेखक का उद्देश्य कोई विद्धता दिखवाना नहीं

बल्कि इन यात्राओं की कथाओं को जन जन तक पहुँचा कर, गुरुदेव के प्रति अपनी सच्ची हृदय भावनायों को प्रक्ट करना ही है।

गुरू महाराज की प्रथम यात्रा से पहले उनके वाल्य काल का संक्षिप्त रूप में दिया गया वर्णन बहुत ही प्रभावशाली ढंग से कहा गया है। इस वर्णन में गोपाल पंडित के साथ अक्षरों के अध्यात्मिक बोध का विवेचन, एक नया सिद्धांत पेश करता है। यज्ञोपवीत संस्कार, सच्चा सौदा, विवाह, मोदीखाना में नवाब की नौकरी, मस्जिद में निमाज़ आदि पढ़ना कुछ ऐसी घटनाएं हैं, जिन से पाठक का मन और भी आगे ज्यादा जानने के लिए उत्सुक हो जाता है। इस से हट कर एक बात और भी है जो कि लेखक ने नाटकीय शैली का प्रयोग कर, प्रस्पर वार्तालाप दिखलाकर अपनी मौलिकता का परिचय दिया है। यह घटनाएं, केवल घटनाएं मात्र न होकर, गूढ़ रहस्य को जन साधारण की भाषा में प्रस्तुत करने का प्रयास भी है।

इस के पश्चात् द्वितीय अध्याय में 'महा मानव' की पहली उदासी (यात्रा), सुलतानपुर (लोधी) से 1497 ई. से 1509 ई. तक पूर्ण हो जाती है। इस यात्रा में उत्तरी भारत के पश्चिमी छोर से सुदूर पूर्व तक आसाम तथा चीन में शंघाई तक का विशाल भू-भाग आ जाता है। मानचित्र पर नजर दौडाने से कई प्रकार के ऊट पटांग प्रशन मन में जरूर उठेंगे, परन्तु जैसा कि मैं पहले ही अनुरोध कर चुका हूँ कि इस विष्य पर किन्तु, परन्तु के लिए कोई स्थान नहीं, क्योंकि पारब्रहम् परमेश्वर के लिए कुछ भी असंभव नहीं। गुरुदेव की यह यात्राएं कोई सैर सपाटे के लिए न थीं बल्कि लोगों को सत्य उपदेश देकर गुमराह हुई जनता जनार्दन को यथोचित उपदेश हित थी और सत्यमार्ग पर चलने को प्रेरित करने के लिए थी, क्योंकि उन दिनों समस्त समाज घोर अंधकार में फंसा हुआ था। गुरुदेव जी अपने साथ भाई मरदाना को लेकर अनेक तीर्थ स्थानों पर गये, जहां पर कर्म कांडी लोग जन साधारण को भ्रमित कर रहे थे। जैसा कि हरिद्वार में कुंभ के मेले पर सूर्य को जल अर्पण करने के ढोंग का परदा फाश कर समाज में नई चेतना का संचार करना।

गुरुदेव का सुमेरु पर्वत पर पहुँच कर सिद्ध-योगियों के साथ गोष्ठी करना भी अपना ही महत्व रखता है। इस गोष्ठी का वार्तालाप शैली में लेखक द्वारा वर्णन, एक सफ़ल प्रयास है। यहां पर ही गुरुदेव ने गृहस्थ आश्रम की महत्ता को बताते हुए योगियों को अपने तीन सूत्री सिद्धांत, पहला किरत करो (काम करो), दूसरा वण्ड कर छको (बांट कर खाओ) और तीसरा नाम जपो (प्रभु चिन्तन करो) पर चलने को उत्साहित किया। इसी तरह उड़ीसा में पुरी नगर में भगवान जगन्नाथ के मन्दिर में उपस्थित जनसमूह के समक्ष परमेश्वर की सच्ची एवं प्राकृत्कि आरती गगनु मै थालु रवि चंद दीपकु वने .... से परिचित करवाया। सिक्कम में पहुँच कर, वहां के बौद्ध लामाओं के साथ वार्तालाप कर, उनको असली भक्ति का मार्ग बताया और अनेक शंका-समाधानों को दूर करते हुए तिब्बत में ल्हासा नगर के बौद्ध अनुयायिओं का मन जीत लिया। चीन के शंघाई नगर में अफ़ीम जैसे नशीले पर्दाथों के सेवन से लोगों को सावधान किया। गुरुदेव जी द्वारा, जगह जगह पर दिया गया उपदेश और घटनायों का क्रम ऐसे चलता है जैसे कोई चलचित्र चल रहा हो। कुल मिला कर यात्राओं का मार्ग जो कि भारत के मान चित्र पर दर्शाया गया है, वह अति दुर्गम स्थानों से गुजरता हुआ भी, लुभावना जान पड़ता है और खोजार्थियों के लिए संदेशवाहक भी है।

गुरू महाराज का दूसरा प्रचार अभियान 1510 ई० से 1516 ई० तक सर्म्पूण होता है। अब की बार यह यात्रा भारत के उत्तर पश्चिम से लेकर दक्षिण भारत को पार कर कन्याकुमारी, सिंगापुर और जर्काता आदि तक पहुँच गई थी। मान चित्र को देखकर तो बड़ा आश्चर्य होता है कि छः वर्ष की इस यात्रा के दौरान गुरू महाराज ने कैसे कैसे लोगों का किस किस तरह से उद्धार किया होगा। उनके न्यारे खेलों का ज़वाब उन्हीं के पास ही है। आबू (राजस्थान) और गुजरात आदि प्रदेशों में जैनी-साधुओं से वार्तालाप करते हुए महाराष्ट्र और मैसूर से होते हुए गुरुदेव जी कोलम्बो पहुँच जाते हैं। जहां पर राजा शिवनाभ को हठ-योग से हटा कर 'सुरति शब्द' के मार्ग पर चलने का उपदेश देते हैं। इस दौरान ही उन्होंने जैनियों, बौद्धियों और वैष्णव-साधुओं के मठों एवं धर्म-स्थलों पर

जाकर उन्हें सत्य-धर्म का उपदेश दिया। गुरुदेव का एक मात्र लक्ष्य, "सच्च का जीवन कैसे जीना है" था। और इसी बात का उन्होंने सब से अधिक बल दिया। लेखक ने गुरुदेव को 'महामानव' की एक बहुत ही छोटी उपाधि से अलंकृत कर अपनी तुच्छ बुद्धि का परिचय दिया है।

गुरुदेव जी का तीसरा यात्रा अभियान केवल उत्तरी भारत तक सीमित रहा। यह यात्रा 1516 ई० से 1518 ई० तक चलती है। जो कि दुर्गम पहाडियों, गहरी घाटियों और बीहड़-जंगलों आदि से होकर गुजरती है। इस यात्रा के दौरान हिमाचल के चंबा नरेश द्वारा गुरुदेव से दीक्षा प्राप्त करना, महत्वपूर्ण घटना है। पहाड़ी प्राकृतिक सौन्दर्य का जो मधुर संकीर्तन वर्णन आप ने किया, वह आज भी जन मानस का गीत बन गया है। जिसे "बलिहारी कुदरत वसिआ" कह कर वे आनंद विभोर हो जाते हैं। तिब्बत की धरती ज्ञार्सा नगर से होते हुए आप ने लद्दाख और लेह में लामाओं को ज्ञान से लाभान्वित किया और कश्मीर की वादी में पहुँच कर भ्रमित समाज का मार्ग दर्शन किया। इस यात्रा में आप जी ने वली कंधारी का घमण्ड तोडते हुए उपदेश दिया "करते हो इबादत, परन्तु उस ख़ालक की ख़लकत को दो घूँट पानी, अल्लाह के नाम पर पिला नहीं सकते?" इस तरह ही स्यालकोट में हमज़ा गौस पीर को अमृतमयी वाणी से शांत किया और उपदेश दिया कि "मरना सच जीना झूठ।"

आप की चौथी यात्रा 1518 ई० से 1521 ई० तक पश्चिम की ओर के अरब देशों की थी। इस यात्रा के दौरान हिंगलाज़ से होते हुए सोनमयानी बंदरगाह से अदन (अरब) तक पहुंचना भी, अपने आप में एक करिश्मा ही है। मक्का-शरीफ़ से जीवन नामक मौलवी को 'खुदा का घर' चारों ओर दिखा कर अचंमित ही नहीं किया बल्कि मुख्य मौलवी रुकनउद्दीन का खुद महाराज के दर्शनों के लिए चले आना, अचम्भे की बात थी। बग़दाद के पीर दस्तगीर और उसके पुत्र को "पाताला पाताल लख अगासा आगास" के दर्शन करवाना, परमेश्वर की अपर अपार लीला का वर्णन ही था। इस तरह तेहरान,

ताशकंद, समरकंद, कंधार, पेशावर आदि से होते हुए जब गुरुदेव ऐमनाबाद (पंजाब) पहुंचते हैं तब उस समय बाबर का आकर्मण हो जाता है। बाबर और गुरू साहब का वार्तालाप भी इतिहास और अध्यात्म श्रोत में बहुत ज्ञानवर्धक स्थान रखता है, और उच्च कोटि के पीर फ़कीरों से वार्तालाप आप की चौथी यात्रा का लक्ष्य प्रस्तुत करता है।

अंतिम अध्याय में लेखक ने गुरू महाराज द्वारा दिये गये अमृतमयी उपदेशों से जन साधारण तथा विशिष्ट वर्ग के जो लोग उनके सम्पर्क में आएं, उन का संक्षिप्त परिचय दिया गया है। जिस में कत्थू नंगल के किसान, भाई सुग्धा जी के पुत्र बाबा बुडढा जी का प्रसंग अति रुमांचक है। इस तरह उनके मित्रों साथियों प्रेमियों का उद्धार करते हुए आप की मुलाकात भाई लहणा जी से होती है जिनको बाद में, गुरयाई प्रदान कर, गुरू अंगद देव का नाम देकर, अपना उत्तराधिकारी थाप दिया।

अंत में पुस्तिक की विवेचना करते हुए इतना ही कहा जा सकता है कि गुरू महाराज का सम्पूर्ण संघर्स, रोचक घटनाओं का श्रृंखला बद्ध वर्णन है। बीच बीच में गुरुबाणी तथा वार्तालाप, एक ऐसी ज्ञानर्वधक सामग्री है कि जिससे लाभ उठाकर साधारण से साधारण व्यक्ति भी अपना जीवन सत्य मार्ग पर चलता हुआ देख सकता है। कौडा भील या सज्जन जैसे लोग आज भी समाज में देखे जा सकते हैं, जो कि समाज का शोषण निरंतर करते आ रहे हैं। मैं आशा करता हूँ कि अगर इस पुस्तक के माध्यम से किसी एक व्यक्ति के जीवन में भी सुधार हो जाए तो वह, इस पुस्तक के रचनाकार की बहुत बड़ी उपलब्धि होगी।

डा० डी. के. पाण्डे
संपादक – मासिक पत्रिका आत्म मार्ग
प्राध्यापक राजकीय कन्या महाविद्यालय
सैक्टर 42, चण्डीगढ़

दो शब्द

भक्त-आत्मा और गुरुमत दर्शन के विश्वसनीय ज्ञाता मेरे मित्र सरदार जसबीर सिंघ जी ने मुझे अपनी लिखि पुस्तक, (पंडु लिपि) 'क्रांतिकारी महामानव-गुरू नानकदेव'' सप्रेम भेंट में दी और उसे पढ़कर उसके बारे में दो शब्द लिखने की आज्ञा की । आप स्वयं शिरोमणी सिक्ख समाज की मूल प्रेरणा द्वारा स्थापित हुए अनेकों मिशनरी कालेजों की गतिविधियों से सम्बद्ध हैं तथा एक सच्चे पन्थ-हितैषी तथा गुरुमत दर्शन के जागरूक स्नातक हैं।

ज्यों-ज्यों मैं पुस्तक का अध्ययन करता गया, त्यों-त्यों मेरी अपनी मित्र के बारे में बनी यह धारण और दृढ़ होती गयी कि जहाँ एक ओर सिक्ख दर्शन, इतिहास तथा परम्पराओं का विश्वसनीय गम्भीर ज्ञान रखते हैं, वहां दूसरी ओर वे एक सच्चे श्रद्धालु के रूप में गुरूदेव के प्रति अगाध श्रद्धा और भक्ति-भाव से भी ओत-प्रोत हैं। साधारणतया जहाँ बुद्धि तत्व प्रधान हो वहाँ भावना अथवा श्रद्धा का पूर्ण अभाव हो जाता है, तथा जहाँ श्रद्धा तत्व प्रमुख हो, वहाँ अन्धविश्वास का आविर्भाव हो जाने के कारण विवेक और तर्क लुप्त हो जाते है। 1988 से मेरे लिए पक्के तौर पर मोहाली में बस जाने का योग बन जाने के फलस्वरूप अनेकों बार अपने लेखक मित्र के साथ मिशनरी कालेजों की गति-विधियों पर विचार करने के लिए गोष्ठियाँ करने का सुअवसर प्राप्त होता रहा, जिनसे यह निष्कर्ष निकालना आसान था कि मेरे इस लेखक मित्र का व्यक्तित्व बुद्धि (विवेक) तथा भावना (श्रद्धा) के दानों पहियों को बखूबी एक साथ अभीष्ट विधि से चला सकने में दक्ष एवं सक्षम है।

मुल्कराज आनन्द के इस विचार से असहमत होने में कोई तुक नहीं कि ऐसी रचनाएँ लिख सकना लगभग असम्भ्व काम है, जो वास्तविक रूप में इतिहास कहला सकती हों, क्योंकि आमतौर पर लेखकजनों को तत्कालीन विश्वसनीय स्रोत उपलब्ध नहीं होते।

सतिगुरु नानक पातिशाह के जीवन वृतांतों को लिखने के लिए भाई गुरुदास जी को वाणी, गुरुवाणी, जन्मसाखी साहित्य की विभिन्न भूमिकाओं और पीढ़ी-दर-पीढ़ी सिक्ख सन्तों और प्रचारकों द्वारा प्रचारित घटनावलियों के अतिरिक्त और कोई चीज़ प्राप्त नहीं।

उपरोक्त मूल सोतो के पठन-पाठन के अतिरिक्त इस श्रद्धावान लेखक ने पंजाब के विभिन्न विश्वविद्यालयों की खोज कृतियों से लाभ उठाते हुए सरल भाषा और सादी शैली में गुरुदेव के जीवन वृतांतों को बड़े रोचक सजीव परन्तु अत्यन्न लाभदायी रूप में आधुनिकता का समावेश करते हुए सुगठित किया है। गुरुदेव गुरू नानक का व्यक्तित्व तथा धर्म जहाँ सम्पूर्ण विश्व की साझी धरोहर है, वहाँ आप द्वारा प्रतिपादित सब सिद्धांत तथा विश्वास सार्वभौमिक और सर्व-कालीन ही नहीं, निश्चित रूप से अद्वितीय और सर्व-हितकारी भी हैं।

सिक्ख धर्म की प्रचार संस्थाएँ पाँच सौ वर्षों से अधिक का समय बीत जाने के बावजूद विश्व के सब मानवों तक गुरु-दर्शन को पहुँचाना तो दूर रहा, भारत के विभिन्न प्रदेशों के लोगों तक भी अभी तक गुरू नानक एंव उनके महानतम् मत को नहीं पहुँचा सकीं। गुरूदेव द्वारा प्रतिपादित महान कल्याणकारी विचारधारा का प्रचार एवं प्रसार केवल पंजाबी भाषा के माघ्यम द्वारा सम्भव नहीं। उत्तरी तथा मध्य भारतीय समस्त प्रदेशों तक इस ज्ञान को पहुँचाना परमावश्यक प्रतीत होता था। अभी तक हिन्दी देवनागरी में न के बराबर सिक्ख साहित्य लिखा गया है। इस दिशा में मेरे लेखक मित्र का प्रयास निश्चित रूप से वांछनीय और प्रशंसनीय है।

''दो शब्द'' के ''इस लेखक सेवक'' ने 1956 में अपने कुछ नवयुवक पन्थ-हितैषियों के सहयोग से दिल्ली में गुरूदेव के महानतम मत प्रचार के लिए एक संस्था स्थापित की थी जो कुछ वर्षो में ''शिरोमणी सिक्ख समाज'' का कारगर रूप धारण कर गई थी। उस संस्था में मूलभूत विचारों से प्रेरणा लेकर तीन सौ के लगभग पुस्तिकाओं के अतिरिक्त, ''जागो जागों, ''गुरूमत मिशनी'' , सिक्ख फुलवाड़ी, ''मिशनरी सेधां'' आदि मासिक

पत्र गुरूदेव के मत के प्रचार में जुटे। इसी मूलभूत प्रेरणा द्वारा छःसात मिशनरी कालेज और गुरुमत प्रसार ट्रेनिंग इन्स्टीच्यूट अस्तित्व में आए। क्योंकि मेरा सीधा सम्बन्ध सिक्रव मत के बारे में फेलती जा रही भ्रांतियों कि निवारण तथा सिक्रव धर्म के व्यापक स्तर पर प्रचार करने की योजनाओं के साथ पिछले 56 वर्ष से भी अधिक समय तक रहा है जो अपने इसी तजुर्बे के आधार पर हिन्दी भाषी क्षेत्रों के सिक्रव श्रद्धालुओं और गैर-सिक्रव लोगों तक गुरूदेव गुरूनानक और उनके महानतम् सन्देशों को पहुँचाने में इस पुस्तक का योगदान अवहेलना की दृष्टि से नहीं देरवा जा सकेगा।

महिन्दर सिंघ जोश

संस्थापक, शिरोमणि सिक्रव समाज

तथा प्रचारक, गुरमत प्रसार सेवा सोसाइटी चण्डीगढ़ (रजि.)

भूमिका

गुरू नानक देव जी के सम्बन्ध में हिन्दी साहित्य बहुत बड़ी मात्रा में उपलब्ध है, परन्तु वह एक विशेष शिक्षित वर्ग एवं बुद्धिजीवियों तक ही सीमित है। अत: इस पुस्तक को कोटि-कोटि जन साधारण की जिज्ञासा तृप्ति के लिए सहज, सरल, रोचक, ज्ञान वर्धक एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोण को सम्मुख रख कर, बिना विद्वता दर्शाये, साहित्य की जटिलताओं से दूर हल्का फुल्का, सारांश में किन्तु घटना क्रम के महत्व को ध्यान में रखते हुए विस्तृत, प्राचीन जन्म साखियों के विकल्प के रूप में, आधुनिक वार्ता शैली के अनुसार आम लोगों की रुचियों को ध्यान में रखते हुए लिखने का प्रयास किया गया है। अत : यह पुस्तक आप की सेवा में अर्पित है।

सरदार पाल सिंह पुरेवाल द्वारा रचित **जन्तरी 500 वर्ष**, प्रकाशक पंजाब स्कूल शिक्षा बोर्ड, मोहाली, के अनुसार श्री गुरू नानक देव जी की प्रकाश तिथि।

तथा

भाई काहन सिंह जी नाभा के ''महान कोष'' के अनुसार जीवन यात्रा की तिथियां-श्री गुरू नानक देव जी

	संवत बिक्रमी	ई० सन्
जन्म (प्रकाश)	1526	1469
शिक्षा गोपाल दास	1532	1475
शिक्षा वृज लाल	1535	1478
शिक्षा मौलवी कुतुबुद्दीन	1539	1482
विवाह	1544	1487
सुलतानपुर लोधी	1547	1490

	संवत बिक्रमी	ई० सन्
गौना (मुकलावा)	1548	1491
बड़े बेटे श्री चन्द जी का जन्म	1551	1494
छोटे बेटे लक्ष्मीदास जी का जन्म	1553	1496
प्रथम प्रचार यात्रा (उदासी)	1554	1497
करतारपुर की भूमि खरीदी	1567	1510
द्वितीय प्रचार यात्रा (उदासी)	1568	1511
तृतीय प्रचार यात्रा (उदासी)	1573	1516
चतुर्थ अथवा अन्तिम प्रचार यात्रा	1575	1518
करतारपुर बसाया	1579	1522
परम ज्योति में विलीन	1596	1539

नोट : इस पुस्तक की विशेषता यह है कि गुरुदेव का जीवन वृतांत लिखते समय केवल उन के साथ घटित घटना क्रम का ही वर्णन किया गया है। जैसे एक चलचित्र बनाते समय कैमरा, नायक तथा उस से सम्बन्धित दृश्यों को चित्रांकित करता है। इस लिए गुरुदेव से पहले अथवा बाद की घटनाओं का वर्णन नहीं किया गया। इस के साथ ही यह सावधानी भी रखी गई है कि घटना क्रम पर अपनी राय या दूसरे विद्वानों की राय अथवा टीका टिप्पणी न लिखी जाए।

पृष्ठभूमि

'श्री गुरू नानक देव जी'

सुणी पुकार दातार प्रभु, गुरू नानक जग माहि पठाया।।

श्री गुरू नानक देव जी के उत्तराधिकारी, दूसरे गुरुदेव श्री गुरू अंगद देव जी एक दिन अपने परममित्र एवं गुरू भाई, बाबा बुड्ढा जी के साथ विचार-विमर्श में लीन थे कि उनको अपने गुरू जी का वियोग छा गया तथा उनके नेत्र विरह में द्रवित हो गए। तभी बाबा बुड्ढा जी ने इच्छा व्यक्त की कि हे गुरू जी क्या यह अच्छा नहीं होगा कि हम श्री गुरू नानक देव जी का जीवन तथा उन के उपदेशों का संग्रह कर के इस मानव समाज को अद्वितीय उपहार भेंट में दें। गुरू अंगद देव जी कहने लगे कि आपने तो मेरे मुंह की बात ही कह डाली, मैं भी तो यही चाहता हूँ। अत: इस कार्य पर आज से ही काम प्रारम्भ कर देना चाहिये। तब समस्या यह सामने आई कि इस कार्य के लिए सुयोग्य व्यक्ति कौन है, जिसे दक्ष मानकर यह महान कार्य सौंपा जाए? अत: सभी संगत इस प्रकार के विशेष व्यक्ति की खोज करने लगी। तभी बुड्ढा जी को ध्यान आया कि श्री गुरू नानक देव जी बताया करते थे कि जब वह सुलतानपुर लोधी में मोदी खाने का कार्यभार सम्भाले हुए थे तो उन दिनों उन की कीर्तन मण्डली में पैड़ामोखा नामक शिष्य भी था जो कि बहुत शिक्षित था। वह गुरू जी में अपार श्रद्धा रखता था। अगर वह इस कार्य को सम्भाल ले तो गुरू जी का जीवन सहज भाव से लिखा जा सकता है। तत् पश्चात् गुरू अंगद देव जी ने संदेश भेज कर पैड़े मोखे को बुलाया। पैड़े मोखे ने आकर अपने गुरू जी के उत्तराधिकारी गुरू अंगद देव जी के चरणों में शीश झुका कर वन्दना की और कहा, "मेरे धन्य भाग्य जो आप ने मुझे याद किया है। भले ही हम पहली बार आपस में मिल रहें हैं परन्तु मैं आपके विषय में बहुत कुछ सुनता रहता हूँ। अत: मैं आप को बहुत अच्छी तरह जानता हूँ। यह संयोग की बात थी कि मैं जब गुरू नानक देव जी को मिलने आता तो आप अपने घर खडूर साहिब छुट्टी लेकर गये हुए होते तथा जब भी गुरुदेव जी सुलतानपुर आते तो संयोग वश आप साथ नहीं होते। इस लिए एक दूसरे से मिलन नहीं हो पाया। खैर! अब आप मुझे आज्ञा दें कि मैं आपकी क्या सेवा कर सकता

हूँ?" तब अंगद देव जी ने कहा कि गुरुदेव जी द्वारा रचित नई लिपि, जो आपने उन से सीखी थी, हम उस में उन का जीवन वृतांत आप से लिखवाना चाहते हैं, क्योंकि आप देव नागरी लिपी के भी बहुत बड़े विद्वान हैं। उत्तर में पैडा मोखे ने कहा कि आप ठीक कहते हैं। यदि मुझे यह अवसर दिया गया तो मैं गुरू नानक देव जी का जीवन वृतांत उन्हीं द्वारा रचित नई लिपी जो उन्होंने पंजाबी भाषा के लिए विशेष रूप से बनाई है, में आप को लिखकर दे सकता हूँ। अत: आप मुझे उन की जन्म-पत्री मंगवा दें जिससे उनका प्रकाश का समय तथा अन्य जानकारी प्राप्त हो सके। तब गुरू अंगद देव जी ने कहा, "इस कार्य के लिए भी आप को तथा भाई बुड्ढा जी को तलवण्डी ग्र।म में गुरू देव जी के चाचा श्री लाल चन्द जी के पास जाना होगा जो कि अब बहुत वृद्ध अवस्था में हैं।" यह आदेश प्राप्त कर भाई बुड्ढा जी तथा पैड़ामोखा दोनों ही श्री गुरू नानक देव जी के जन्म स्थान 'राय भोए की तलवण्डी' कस्बे में पहुँचे और चाचा लाल चन्द जी को विनम्रता पूर्वक अपने आने का प्रयोजन बताया। चाचा लाल चन्द जी ने आये अतिथियों का हार्दिक स्वागत किया तथा कहा कि मैं भी नानक जी के उत्तराधिकारी के दर्शन करना चाहता हूँ। अत: मुझे भी आप के साथ चलना है। तब जन्म पत्री खोज निकाली गई। जिसे प्राप्त कर बाबा बुड्ढा जी, भाई पैड़ामोखा जी तथा चाचा लाल चन्द जी खडूर साहिब के लिए प्रस्थान कर गये। खडूर साहिब पहुँचने पर गुरू अंगद देव जी ने चाचा लाल चन्द जी का बहुत आदर-सत्कार किया जिस से चाचा जी बहुत प्रभावित हुए तथा उन्होंने गुरुदेव जी का आग्रह मानकर गुरू नानक देव जी का बाल्यकाल तथा तलवण्डी में बिताया जीवन लिखवाने का कार्य अपने उत्तर दायित्व में ले लिया।

अब भाई पैडा मोखा जी ने जन्म पत्री को देव नागरी लिपी से गुरू नानक जी द्वारा रचित नई लिपी (जिसका कि नाम करण करना बाकी था) में अनुवाद करना प्रारम्भ कर दिया। उस समय सभी के मन मे आया कि यह नई लिपी जो कि गुरू जी के कर-कमलों से उत्पन्न हुई है, इस का क्या नाम रखा जाए। तब सभी एकमत होकर कहने लगे- इसका नाम गुरूमुखी रखते हैं, क्योंकि यह गुरू-मुख से उत्पन्न हुई है। क्योंकि गुरुदेव जी का मुख्य उद्देश्य था कि सभी वर्ग के लोग, विशेष कर जन साधारण इसे सीख पायें तथा संस्कृत जैसी भाषा, जो कि ब्राह्मण (पंडित) वर्ग तक सीमित है और लोक भाषा नहीं है, से छुटकारा प्राप्त कर स्थानीय भाषा को बढ़ावा देने के लिए इसे प्रयोग में लाया जाए।

श्री गुरू नानक देव जी का प्रकाश

गुरु नानक जिन सुणिआ पेखिआ, से फिरि गरभास न परिआ रे ॥

प्रकाश

श्री गुरू नानक देव जी का प्रकाश (जन्म) पहली बैसाख शुक्ल पक्ष (पूर्णिमा) दिन सोमवार संवत 1526 बिक्रमी (सन् 1469) अर्द्ध रात्री (7 वें पहर के मध्य में) तलवण्डी (राय भोए की) नामक कस्बे में श्री कल्याण चंद (पिता मेहता कालू) (क्षत्रीय) के गृह में माता तृप्ता की कोख से हुआ। जिन की उप-जाति बेदी थी। आप की बड़ी बहन का जन्म सन् 1464 ई. में हुआ था। उन का नाम नानकी था।

नोट : गुरू नानक देव जी का प्रकाश उत्सव तथा खालसा प्रकाश उत्सव एक ही दिन होने के कारण खालसा पन्थ ने गुरमत्ता कर के गुरू नानक देव जी का प्रकाश उत्सव वैसाख पूनम के स्थान पर कार्तिक पूनम को आगामी वर्षों के लिए निश्चित किया हुआ है।

सन् 1469 अप्रैल (पहली वैसाख) पूनम की अर्द्ध रात्री में पंजाब के तलवण्डी ग्राम में मेहता कालू जी के घर में माता तृप्ता जी की कोख से एक अद्वितीय बालक नानक के प्रसूतिका कार्य में दाई दौलता ने सहायता की। दाई दौलता के कथन अनुसार इस नन्हे शिशु ने रोने के स्थान पर हंसते हुए मानव समाज में प्रवेश किया। पिता कल्याण चंद जी ने अपने पुरोहित पण्डित हरिदयाल जी से पुत्र की जन्म पत्री बनवाई तो उन्होंने भविष्य वाणी की कि यह बालक ग्रह-नक्षत्रों के अनुसार कोई दिव्य ज्योति वाला पराक्रमी पुरुष होगा। कुछ दिनों पश्चात् शुभ लग्न देख कर पण्डित जी ने बालक का नामकरण किया-'नानक देव' इस पर पिता कालू जी ने आपत्ति की कि इस की बड़ी बहन का नाम भी यही है तो पण्डित जी कहने लगे, "हे कालू ! यह संयोग की बात है कि नाम राशि भी वही बनती है। इस लिए मैं विवश हूँ क्योंकि दो पवित्र आत्माओं का तुम्हारे घर में योग है। मैंने बहुत विचार के पश्चात् इसे भी वही नाम दिया है क्योंकि इस की कीर्ति समस्त मानव समाज में कस्तूरी की तरह फैलेगी तथा यह बहुत तेजस्वी होगा।"

बाल्य – काल

आनंद मंगल के दिन शीघ्र ही बीत गये तथा बालक नानक देव पांच वर्ष के हो गये। तब वह अपनी आयु के बालकों के साथ खेलने लगे। परन्तु नानक जी के खेल अलग प्रकार के होते। वे आसन जमा कर बच्चों की मण्डलियां बनाकर ज्ञान–गोष्ठियां करते जो सब बच्चों को बहुत रुचिकर लगती। जिस से समस्त बच्चे नानक जी के नेतृत्व में रहने लगे। नानक जी खेल–खेल में मार्ग दर्शन करने लगे तथा समानता, प्रेम, सत्य, वीरता का पाठ पढ़ाते, जिस से बच्चों में कभी झगड़ा नहीं होता था। अत: नानक जी सभी को भाते थे। बिना नानक जी के सभी खेल अधूरे होते तथा बच्चे सदैव ही नानक जी की राह देखते। नानक जी घर से लाई खाद्य–सामग्री बच्चों में बांट देते तथा छीना–झपटी नहीं होने देते। इसी प्रकार समय व्यतीत होने लगा।

विद्याध्ययन

जब नानक जी सात वर्ष के हुए तो पिता कालू जी ने उन की शिक्षा का प्रबंध पण्डित गोपाल दास की पाठशाला में कर दिया। नानक जी अपने सहपाठियों के साथ प्रतिदिन देवनागरी की वर्णमाला सीखने लगे। आप एक बार में ही वह सभी कुछ कण्ठस्थ कर लेते। दूसरे बच्चों को एक–एक अक्षर सीखने में कई–कई दिन लगते। यह क्रम चलता रहा, जिससे पण्डित जी, नानक देव जी की प्रतिभा तथा तीक्ष्ण बुद्धि से बहुत प्रभावित हुए। एक दिन नानक जी ने अध्यापक गोपाल दास जी से प्रश्न किया, हे पण्डित जी ! आप ने जो मुझे अक्षर सिखवाए हैं उन का अर्थ बोध भी सिखवाएं। उन से यह सुनकर पंडित जी चकित हो गये तथा सोचने लगे कि मुझसे ऐसा प्रश्न आज तक किसी विद्यार्थी ने नहीं किया।

पण्डित – बेटा नानक, यह तो अक्षर मात्र हैं, जो कि दूसरे अक्षरों से योग कर, किसी वाक्य की उत्पत्ति करते हैं। हां अगर तुम्हें वर्णमाला के अर्थ आते हों तो मुझे भी बताओ?

नानक जी – 'क' अक्षर हमें ज्ञान देता है कि–

ककै केस पुंडर जब हूए विणु साबूणै उजलिआ ॥

जम राजे के हेरू आए माइआ कै संगलि बंधि लइआ ॥

रागु आसा, पृष्ठ 432

भावार्थ – जब मनुष्य के केश बुढापे के कारण बिना साबुन प्रयोग किये सफेद होते हैं तो मानो यमराज का संदेश मिल रहा है। परन्तु व्यक्ति प्रभु का चिन्तन न कर माया के बन्धनों में बंधा रहता है।

गोपाल पण्डित – (चकित होकर):- बेटा नानक क्या तुम वर्णमाला के सभी अक्षरों के अर्थ जानते हो?

नानक जी – हाँ पण्डित जी, मैं आप को सभी अक्षरों का आध्यात्मिक अर्थ बता सकता हूँ कि यह हमें क्या ज्ञान देना चाहते हैं।

गोपाल पण्डित – अच्छा ठीक है। तुम मुझे क्रमश: सभी अक्षरों के अर्थ बताओ। मैं भी तो सुनूँ.....

नानक जी –

खखै खुंदकारु साह आलमु करि खरीदि जिनि खरचु दीआ ॥

बंधनि जाकै सभु जगु बांधिआ अवरी का नहीं हुकमु पइया ॥

रागु आसा, पृष्ठ 432

भावार्थ – समस्त जगत का मालिक कसौटी से परीक्षा कर श्वासों रूपी पूंजी देता है। सारा संसार उस के नियमों में बंधा पड़ा है। किसी दूसरे का उस पर जोर नहीं चल सकता।

गगै गोइ गाइ जिनि छोडी गली गोबिदु गरभि भइआ ॥

घड़ि भांडे जिनि आवी साजी चाड़ण वाहै तई कीआ ॥

'ग' अक्षर कहता है कि शरीर रूपी बर्तन बनाने वाले मालिक ने हमारी मिट्टी तैयार कर दी है। केवल बातों से गोविंद रटने से अभिमान ही उत्पन्न होता है। इसलिए उस ने संसार रूपी आवे में पकने के लिए मनुष्य को कर्मों के लिए स्वतंत्र छोड़ दिया है।

घघै घाल सेवकु जे घालै सबदि गुरू कै लागि रहै ॥

बुरा भला जे सम करि जाणै इन विधि साहिबु रमतु रहै ॥

रागु आसा, पृष्ठ 432

'घ' अक्षर कहता है कि - जो जीव प्रभु में अभेद होना चाहते हैं वह गुरू द्वारा बताए मार्ग पर चलते हुए सुख-दुःख एक समान जाने तथा गुरू उपदेश को मानते हुए मृत्यु को नजर के सामने रखकर अपना आचरण करे।

ङ.ङे. ङि.आनु बूझै जे कोई पढ़िआ पंडितु सोई ॥

सरब जीआं महि एको जाणै ता हउमै कहै न कोई ॥

रागु आसा, पृष्ठ 432

'ङ.' अर्थात् जो प्राणी सत्य शब्द का विचार करता है, वही विद्वान है। जिस ने सब जीवों में उस परमात्मा का निवास जाना है, उस का अहंकार नाश होता है।

इस प्रकार नानक जी ने समस्त वर्णमाला के आध्यात्मिक अर्थ कर दिये। तब गोपाल दास पण्डित नानक जी से बहुत प्रभावित हुए तथा उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा। उन्होंने नानक जी से पूछा, "बेटा यह विद्या तुमने कहाँ से सीखी है?" तब नानक जी चुप्पी साधे रहे। इस पर पण्डित जी ने कहा, "बेटा नानक कल तुम अपने साथ अपने पिता जी को मेरे पास ले आना।" जब पिता कालू जी पण्डित गोपाल दास जी के पास पहुँचे तो उन्होंने उन का भव्य स्वागत किया तथा आदर सत्कार के पश्चात् कहा, "मेहता कल्याण चन्द जी, तुम्हारा होनहार बालक मेरे पास पढ़ रहा है। इस लिए मैं गौरव अनुभव करता हूँ। ऐसे विद्यार्थी से मेरी भी प्रतिष्ठा बढ़ेगी। परन्तु, मैं इस बालक को पढ़ाने में अपने को अयोग्य पा रहा हूँ।"

कालू जी – पण्डित जी, आप बात को घुमा फिरा कर क्यों कर रहे हो? साफ-साफ कहें न, क्योंकि मेरी समझ में कुछ नहीं आया। सच-सच बताओ, क्या नानक से तुम्हें कोई शिकायत है? या उस ने तुम्हें परेशान किया है?. . . . . . .

पंडित जी – जी नहीं ऐसा कुछ नहीं है। मैं इस की प्रतिभा से बहुत प्रभावित हूँ।

अत: मैं चाहता हूँ कि मुझ से अधिक योग्यता वाले अध्यापक से इसे पढ़वायें तो बालक को कहीं अधिक लाभ होगा, क्योंकि मैं आध्यात्मिक प्राप्ति में तुच्छ बुद्धि का स्वामी हूँ।

कालू जी – इस नन्हें बच्चे को पढ़ाने में क्या किसी विशेष योग्यता की आवश्यकता है जो कि तुम्हारे पास नहीं है? आज तक तुमने सैकड़ों बच्चों को ऐसे ही पढ़ाया है। क्या नानक उन बच्चों से न्यारा है? जो तुम्हें आज इसे पढ़ाने में कठिनाई हो रही है?

पंडित जी – श्रीमान जी, ऐसा कुछ नहीं है। मैं तो चाहता हूँ कि इसे किसी ज्ञानी पुरुष से शिक्षा दिलवाई जाती तो अच्छा था। क्योंकि यह बहुत ऊची प्रकृति का स्वामी है।

मेहता कालू – नहीं-नहीं, मैं कुछ नहीं जानता। तुम्हें मेरे बालक को पढ़ाना ही होगा। इस लिए मैं कुछ सुनना नहीं चाहता।

पंडित जी – आप नाराज न हों, मैंने तो एक अच्छी सलाह दी थी। आगे जैसी आप की इच्छा। वैसे मैं अपनी तरफ से कोई कमी नहीं छोड़ूंगा।

उस दिन के पश्चात् पण्डित जी तथा नानक जी के बीच में अध्यापक-विद्यार्थी का रिश्ता समाप्त होकर, मित्रता तथा समानता के नये नाते ने जन्म लिया। अब नानक जी तथा पण्डित जी में आध्यात्मिक चर्चा होती। इस प्रकार प्रतिदिन के विचार-विमर्श में दोनों तरफ से ज्ञान का आदान-प्रदान होता, किन्तु पण्डित जी अपने को दुनियावी विद्या तक ही सीमित पाते, जब कि नानक जी अलौकिक संसार की बातें बताते। इस प्रकार समय के प्रवाह के साथ नानक जी, पण्डित जी द्वारा दी जाने वाली शिक्षा वर्षों के स्थान पर कुछ माह में ग्रहण कर लेते, जिस से पण्डित जी, नानक जी की तीक्ष्ण बुद्धि एवं अद्वितीय स्मरण शक्ति देख कर उन पर विशेष कृपा रखने लगे। दस वर्ष की आयु होते-होते नानक जी ने पण्डित जी से पूरी तरह विद्या प्राप्त कर ली।

जनेऊ संस्कार (यज्ञोपवीत)

जब नानक जी दस वर्ष की आयु के हुए तो पिता कालू जी ने कुल-रीति के अनुसार यज्ञोपवीत धारण की रस्म के लिए एक समारोह आयोजित किया। जिस में कुल पुरोहित पण्डित हरिदयाल जी को इस कार्य के लिए आमंत्रित किया। यज्ञोपवीत की सभी शास्त्रीय विधियों को पूरा करने के बाद पुरोहित जी नानक जी को जनेऊ पहनाने के लिए जब आगे बढ़े तो बालक नानक जी ने उनका हाथ पकड़ लिया तथा पूछा-पंडित जी, आप जी मुझे जो यह जनेऊ धारण करवाने जा रहे हैं उस का मुझे क्या लाभ होगा?" तब पण्डित जी के आश्चर्य का ठिकाना न रहा, क्योंकि आज तक उन से किसी ने भी ऐसे प्रश्न किए ही नहीं थे। अत: पण्डित जी ने शास्त्रों के अनुसार यज्ञोपवीत के लाभों की व्याख्या प्रारम्भ कर दी कि यह धागा नहीं बल्कि पवित्र जनेऊ है। यह उच्च जाति के हिन्दुओं की निशानी है। इसके बगैर व्यक्ति शूद्र के समान है। यदि आप जनेऊ धारण कर लेगें तो आप पवित्र हो जायेंगे। यह जनेऊ अगले संसार में भी आप की सहायता करेगा। परन्तु नानक जी इस उत्तर से संतुष्ट नहीं हुए और कहने लगे, "पंडित जी आपने जनेऊ के बहुत गुण बताए हैं। परन्तु, मुझे इस में शंका है।"

पंडित जी – पूछो बेटा तुम्हें क्या शंका है?

नानक जी – मेरे विचार में तो यह जनेऊ मनुष्य-मनुष्य में विभाजन करके मतभेद पैदा करता है तथा वर्गीकरण करके बिना किसी वास्तविक आधार के किसी को नीच किसी को श्रेष्ठ दर्शाने का असफल प्रयास करता है। बात यहाँ तक सीमित नहीं, यह भाई-बहन के बीच में दीवार खड़ी करता है, क्योंकि नारी को यज्ञोपवीत का अधिकार न देकर उसे पुरुष की समानता के अधिकार से वंचित करके, उस को बेजान वस्तु के समान माना गया है।

दूसरा - आपने कहा है कि यह धागा उच्च जाति की निशानी है। परन्तु मेरी दृष्टि में उच्च जाति वाला तो वह है जिस ने उच्च एवं नेक कार्य किए हों। पवित्र वह है जिस के कार्य पवित्र हैं। नीच वह है जिसके कार्य नीच एवं बुरे हैं। अच्छे बुरे कार्य ही

ऊँची-नीची जाति की पक्की निशानी होते हैं। साथ ही यह धागा तो कच्चा है, यह मैला भी हो जाएगा। इस के पश्चात् नया धागा डालना पड़ेगा। इस धागे ने किसी को क्या सम्मान देना है? वास्तविक सम्मान तो नेक जीवन व्यतीत करने से ही प्राप्त हो सकता है। साथ ही आप कहतें हैं कि यह धागा मनुष्य के अगले जन्म में सहायता करता है। तो वह कैसे? यह धागा तो शरीर के साथ यहीं, इसी संसार में रह जायेगा। इसने आत्मा के साथ नहीं जाना। जब अंतिम समय शरीर जलेगा तो यह धागा भी उसके साथ ही जल जाएगा। इस लिए आप मुझे ऐसा धागा डालें जो हर समय मेरे साथ रहे। मुझे बुरे कार्य करने से रोके तथा नेक कार्य करने के लिए प्रेरणा दे। जो अगले संसार में भी मेरी सहायता करे। यदि ऐसा जनेऊ आप के पास है तो आप वह मेरे गले में डाल दें।

नानक जी की विचार धारा बहुत स्पष्ट थी। बात पण्डित हरिदयाल जी की समझ में आ गई तथा उन को वह समय स्मरण हो आया कि यह बालक कोई साधारण बालक नहीं क्योंकि जब मैंने इस की जन्म पत्री बनाई थी तभी नक्षत्रों से ही उसे यह ज्ञात हो गया था कि यह कोई पराक्रमी, तेज प्रतापी या दिव्य ज्योति पुरुष बनेगा। अत: पण्डित जी ने बहुत शान्त भाव से कहा, "बेटा नानक, अच्छा तो तुम ही हमें बताओ कि हमें कौन सा जनेऊ धारण करना चाहिये?"

तब नानक जी कहने लगे, "सबसे पहले दया की कपास बनाओ उससे सन्तोष रूपी सूत बने और सत्य का उसे बट लगायें तथा जति-पन की गांठ लगावें। ऐसा यज्ञोपवीत जिस में दया, सत्य आदि कर्म हो, वह गले में पहनें। आप का सूत से बना हुआ यह ध ागा तो आग से जल जायेगा और जीणी हो जायेगा तथा टूट भी जायेगा। परन्तु मेरा बताया हुआ जो यज्ञोपवीत है, वह पुराना नहीं होता न ही जलता अथवा टूटता है। अगर कोई पुरुष इस प्रकार का जनेऊ धारण कर लेता है तो वह मेरी दृष्टि में धन्य है।"

दइआ कपाह संतोखु सूतु जतु गंढी सतु वटु ॥

एहु जनेऊ जीअ का हई त पांडे घतु ॥

ना एहु तुटै न मलु लगै न एहु जलै न जाइ ॥

धंनु सु माणस नानका जो गलि चले पाइ ॥

रागु आसा, पृष्ठ 471

पिता कालू जी – नानक तुम पुरोहित जी का अपमान कर रहे हो। यह निरादर मैं सहन नहीं कर सकता। यह विवाद मैं बिल्कुल सुनना नहीं चाहता। तुम पण्डित जी से क्षमा याचना करो तथा कुल रीति के अनुसार चुपचाप जनेऊ धारण करो।

पंडित हरिदयाल जी– यजमान कल्याण चंद, क्रोधित न हो, नानक की बात में सच्चाई है। हम तो यूँ ही कर्म-काण्ड किये जा रहे हैं। जैसा कि नानक का कहना है अगर इसे धारण करने के उपरान्त भी धारक के जीवन में कोई श्रेष्ठता दिखाई न दी तो इस का क्या महत्व हुआ। अगर वह इसे धारण करने के पश्चात् भी रसातल में ही रहा, उसने झूठ, व्यभिचार आदि कुकर्म न त्यागे तो फिर इस यज्ञोपवीत से क्या लाभ होगा। जब तक उस व्यक्ति की अन्तरात्मा ही शुद्ध नहीं तो यह बाहर के दिखावे से उस का क्या सुधारेगा?

मेरे विचार में तो नानक के तर्क में तथ्य है अतः इसने जो जनेऊ धारण किया है वही ठीक है। इसे, इस धागे के जनेऊ की कोई आवश्यकता नहीं। इस के साथ कोई जोर जबरदस्ती न की जाए।

एक दिन पण्डित गोपाल दास जी ने नानक जी से कहा - बेटा अब मेरी तरफ से तेरी शिक्षा पूर्ण हो चुकी है। इस लिए अपने पिता जी को मेरे पास भेजो।

पिता कालू जी पण्डित जी से मिलने के लिए पहुँचे तो पण्डित जी ने कुशल-क्षेम पूछने के पश्चात् कहा, "मेहता जी मैं आपसे एक विनती करना चाहता हूँ। बात वास्तव में यह है कि नानक को पढ़ाने का मुझे गौरव प्राप्त हुआ है। मुझे मालूम है कि यह मेरा नाम रोशन करेगा परन्तु इसे उच्च शिक्षा के लिए पण्डित बृजलाल जी के यहाँ भेजें तो मुझे संतोष मिलेगा, क्योंकि वह आप के लाल को संस्कृत तथा अन्य बौद्धिक ज्ञान प्रदान कर सकते हैं।"

मेहता कालू जी– परन्तु क्यों? इतनी जल्दी भी क्या है? पहले आप तो इसे बाकी विद्यार्थियों की तरह पूरी शिक्षा दें।

पंडित जी– श्रीमान जी, जैसा कि मैं आप को कई बार बता चुका हूँ कि आप का लाल बहुत ही होनहार है। इस ने मुझ से वह समस्त शिक्षा प्राप्त कर ली है जो मैं प्रदान कर सकता हूँ। अतः मैं यह चाहता हूँ कि इससे आगे की शिक्षा के लिए पण्डित बृजलाल जी के पास भेजें।

मेहता कालू जी– सो तो ठीक है, परन्तु मेरी समझ में यह नहीं आया कि इतने अल्प समय में यह सब शिक्षा कैसे प्राप्त कर गया?

पंडित जी– श्रीमान जी, आप भाग्यशाली हैं कि आप का बेटा साधारण विद्यार्थियों की अपेक्षा तिगुनी तीव्र गति से शिक्षा प्राप्त करता है। वैसे तो पहले भी मेरे पास कुछ ऐसे विद्यार्थी थे जो कि दुगुनी गति से शिक्षा प्राप्त करते थे अर्थात् एक वर्ष में दो कक्षाओं को उत्तीर्ण करते थे। परन्तु आपका सपूत एक वर्ष में तीन कक्षाएं उत्तीर्ण करता है अत: इस ने मेरी पाठशाला में तीन वर्ष के भीतर ही अपनी प्रारम्भिक शिक्षा समाप्त कर ली है।

मेहता कालू जी– तो ठीक है मैं आपके परामर्श के अनुसार कल से ही इसे पण्डित बृजलाल जी के यहाँ भेज दिया करूँगा। इस प्रकार नानक देव जी की आगे की शिक्षा पण्डित बृज लाल जी के यहाँ प्रारम्भ हो गई तथा नानक जी संस्कृत का अध्ययन करने लगे। दो वर्ष की अल्प अवधि में ही नानक जी ने सभी प्रकार के ग्रंथों का अध्ययन किया तथा शास्त्रार्थ भी सीख लिया। पण्डित बृज लाल जी को नानक जी की प्रतिभा पर कोई आश्चर्य नहीं हुआ क्योंकि उन्होंने पण्डित गोपाल दास तथा पण्डित हरिदयाल जी से नानक जी के विषय में बहुत कुछ सुन रखा था। अत: वह अति प्रसन्न थे कि यह लड़का उनका नाम रोशन करेगा।

शिक्षा समाप्त कर नानक जी घर पर या साधु-संतों के पास घूमने लगे। दानी स्वभाव के कारण घर से लाई वस्तुएं जरूरत मंद लोगों को दे देते जिस से पिता कालू जी, नानक जी पर कभी कभी नाराज होते तथा कहते, "तू कैसा बेटा है रे, सभी के बेटे कुछ काम-काज करते हैं और एक तू है कि घर की वस्तुओं को लोगों को लुटा देता है। यह सब कब तक चलेगा।" परन्तु उदार चित नानक जी पर उनकी बातों का कोई प्रभाव न होता। वह अक्सर अपने साथी बालकों के साथ दूर-दूर महात्माओं की तलाश में घूमने चले जाते। वहाँ उन से आध्यात्मिक विचार विमर्श करते तथा जो कुछ भी पास में होता उनको दे आते। यह देख कर पिता कालू जी नानक से कुछ खीझे रहने लगे। परन्तु नानक उनका इकलौता बेटा था तथा कुछ कहते नहीं बनता था। वैसे भी अभी नानक जी की आयु केवल 12 वर्ष की थी, इसलिए उन्हें किसी काम-धन्धे पर भी तो नहीं लगाया जा सकता था। घर में किसी प्रकार से धन-सम्पदा का

अभाव तो था नहीं, हर प्रकार से परिवार में समृद्धि थी। किन्तु, एक दिन नानक जी ने घर से लाए चाँदी के लोटे को एक सन्यासी को दे दिया। इस बात को लेकर पिता कालू जी बहुत परेशान हुए। यह बात नवाब राय बुलार जी को जब ज्ञात हुई तो कालू जी को सलाह दी कि बच्चे को बिना कारण इधर-उधर घूमने से तो अच्छा है उसे मौलवी कुतुबुद्दीन के पास फारसी पढ़ने के लिए भेज दो। वहाँ पर वह अपना ध्यान पढ़ाई में लगायेगा जिससे इल्म तो हासिल होगा ही तेरी भी समस्या हल हो जाएगी। पिता कालू जी को यह सलाह बहुत रुचिकर लगी। उन्होंने दूसरे दिन ही नानक जी को मुल्ला के मदरसे में भेज दिया। फिर क्या था? नानक जी वहाँ फारसी बहुत चाव से सीखने लगे। मौलवी जी उन के रोशन दिमाग को देखकर दंग रह गए। उन्होंने जैसा सुना था वैसा ही पाया। अत: नानक जी की तरफ विशेष ध्यान देने लगे। जल्दी ही नानक जी एक के बाद एक किताबें पढ़ने लगे। इस प्रकार नानक जी एक वर्ष के भीतर ही वह सब कुछ हासिल कर गये जो दूसरे शार्गिद वर्षो में नहीं प्राप्त कर पाये। एक दिन मौलवी जी ने नानक जी के जिह्न का इम्तेहान लेने की सोची। उन्होंने नानक जी को कोई शेयर लिखने को कहा-फिर क्या था? नानक जी ने एक शेयर लिखा जो कि इस प्रकार है:-

यक अर्ज गुफतम पेसि तो दर गोस कुन करतार।।

हका कबीर करीम तू बेऐब परवदगार ।।

रागु तिलंग, पृष्ठ 721

अर्थात्-हे मेरे साहब(भगवान) तेरे आगे मेरी एक प्रार्थना है, तू ही सब का कर्त्ता है, मनुष्य दुर्गुण की खान है परन्तु तू बेदाग है, बेअन्त है, सब का रिज़क दाता है तथा तेरे बिना मुझे कोई दूसरा दिखाई नहीं देता।

यह शेयर सुनकर मौलवी जी दंग रह गए। उन्होंने सोचा शायद नानक ने कहीं से पढ़ कर याद कर रखा होगा। अत: उन्होंने फिर से कहा नानक कोई और शेयर सुनाओ जो तुमने लिखा हो तब नानक जी ने शेयर कहा-

दुनीआं मुकामे फानी तहकीक दिल दानी ।।

मम सर मुए अजराईल गिरफतह दिल हेचि न दानी ।।

रागु तिलंग, पृष्ठ 721

अर्थात्-यह संसार नाश वान है, इसलिए मैं दिल का हाल किस से कहूँ। मौत के फरिश्ते ने सब को अपनी जकड़ में लिया हुआ है। न जाने वह कब किस को उठा ले जाए।

यह शेयर सुन कर मौलवी जी नानक जी की शख्सीयत के कायल हो गए तथा वह नानक जी का अदब करने लगे। उस ने पिता कालू जी को बुला कर कहा-मैं नानक को अपना अव्वल शार्गिद मानता था, लेकिन यह तो मेरा भी उस्ताद है। इसलिए मैं इसे पढ़ाने के काबिल नहीं हूँ। मेहता कालू जी वास्तविक रहस्य को न समझ सके। अत: निराश होकर नानक जी को उन्होंने घर पर ही रहने को कहा।

कुछ दिन इसी प्रकार व्यतीत हो गये। अब नानक जी घर पर ही रहते। अपनी आयु के बालकों के साथ खेलने भी नहीं जाते थे। बस हर समय शान्त तथा मौन रहते। धीरे-धीरे उन की उदासीनता बढ़ती ही गई। किसी काम में रुचि न रखते यहाँ तक कि वह अपने खाने पीने की भी सुध न रखते। एक मात्र एकान्त वास पसन्द करते। यह देख कर माता पिता बहुत चिन्तित रहने लगे। बड़ी बहन नानकी जी, अपने प्यारे भाई के लिए बहुत स्वादिष्ट भोजन तैयार करती किन्तु नानक जी की किसी प्रकार के व्यंजनो में कोई रुचि ही न होती। तब नानकी जी, नानक को बहुत प्यार से पूछती, "भईया तुम्हें क्या दु:ख है? कुछ हमें भी बताओ।"

नानक जी- दीदी (बेबे जी) दु:ख मुझे नहीं, दुखी तो संसार है। मैं तो बस उस के लिए चिन्तित हूँ कि इसे कैसे दूर किया जाए। इस रहस्य का नानकी जी को कुछ-कुछ आभास होता, कि उसका भाई नानक परमात्मा का भेजा हुआ कोई दिव्य पुरुष है। परन्तु वह यह सब पिता जी पर प्रकट न कर पाती। बस पिता जी को समझाने के लिए कह देती - पिता जी नानक का मन बहलाने के लिए इसे किसी काम में लगा दे तो सब ठीक हो जाएगा। मेहता कालू जी सोचते, बात ठीक है परन्तु मैं लड़के को इस 13 वर्ष की आयु में किस काम में लगाऊँ। अभी इस की आयु ही क्या है? फिर लोग क्या कहेंगे कि नन्हें बालक को काम में लगा दिया। क्या घर पर धन की कमी थी या कालू लालची है जो लड़के को खेलने कूदने के दिनों में ही काम पर लगा दिया है। अत:. . . . सोचते-सोचते कालू जी को कुछ ध्यान आया। अगले दिन महता कालू जी ने नानक जी

को बुलाकर कहा " बेटा देखो मैं तुम्हें खुश देखना चाहता हूँ। अत: तेरे पर कोई प्रतिबन्ध नहीं। घर पर रहो या कहीं जाओ। परन्तु ऐसा है अगर तुम घर के काम में थोड़ा हाथ बटा दोगे तो अच्छा रहेगा। साथ में तेरा मन भी लगा रहेगा। तुम आज से अपने माल-मवेशियों को ही चरागाह में ले जाया करो"। नानक जी- पिता जी आप जो आज्ञा देगें मैं वही करूंगा। अत: नानक जी ने गौशाला में से मवेशियों को साथ में लिया और चरागाह में चले गये। इस प्रकार प्रतिदिन नानक जी मवेशियों को लेकर चारे की तलाश में वनों की ओर घूमने लगे। वहाँ नानक जी का मन बहुत रमता। वह एकान्त वास तथा शान्त वातावरण में प्रभु चरणों में मन एकाग्र कर चिंतन में खो जाते तथा कभी-कभी अपने अन्य ग्वाल-बालों के साथ नगर की मुख्य सड़क पर तालाब के किनारों पीपल के वृक्ष के नीचे चौपाल पर आ बैठते। यहाँ पर आने जाने वाले यात्री थोड़ा विश्राम के लिए रुका करते थे तथा पास के कुएँ से जल पान कर अपनी मंजिल को चले जाते थे। यह स्थल सुन्दर तथा मनमोहक था। इस लिए वहां अक्सर साधू-सन्यासी भी पड़ाव डालते तथा एक-दो दिन ठहर कर चले जाते। जब कभी रमते साधु आते तो नानक जी उन से जरूर भेंट करते तथा चौपाल पर उन से ज्ञान गोष्ठी करते। नानक जी सदैव कर्म-काण्डों तथा आडम्बरों पर कटाक्ष करते तथा अन्तर आत्मा में प्रभु को ढूंढने को कहते। कभी-कभार विचारों के आदान-प्रदान में तीखा विवाद उत्पन्न हो जाता। नानक जी सदैव कहते 'केवल एक प्रभु पारब्रह्म-परमेश्वर है'। यह देवी देवता सब उस प्रभु की रचना मात्र है। हमें इन की पूजा न कर, सीधे प्रभु को आराधना चाहिये। वही सर्व शक्तिमान है। परन्तु कुछ कर्मकाण्डी साधु उन से सहमत न होते। वे प्रभु के साकार रूप में विश्वास रखते। परन्तु नानक जी निराकार की उपासना पर बल देते तथा निराकार की परिभाषा का व्याख्यान कर बताते कि हमें मालूम होना चाहिये कि प्रभु, पारब्रह्म-परमेश्वर किसे कहते हैं। वह पत्थर की मूर्ति में नहीं, वह तो रोम-रोम में कण-कण में समाया हुआ है।

नया मार्ग सिद्धांत

ऐसे ही दिन व्यतीत होने लगे। आये दिन किसी न किसी साधु मण्डली से नानक जी का वार्तालाप होता। एक दिन एक योगी मण्डली से नानक जी की भेंट हो गई जो कि कानों में बड़ी-बड़ी वालियां डाले हुए थे। वह लोग नानक जी को बालक जानकर पहले तो रूखे से पेश आये। परन्तु जब उन्होंने नानक जी के तर्क संगत विचार सुनें तो वह सब नानक जी में रुचि लेने लगे। देखते ही देखते विचार गोष्ठी प्रारम्भ हो गई। तब नानक जी कहने लगे-हे सत्य- पुरुषों! पहले आप यह तो जानो कि हम पारब्रह्म-परमेश्वर किसे कहें?

योगी– बालक, उस के लिए हम ओम शब्द का प्रयोग करते हैं।

नानक जी– ठीक है। परन्तु यह शब्द तो तीन प्रमुख एवं अलग-अलग देवताओं का सम्बोधन चिन्ह मात्र है। केवल एक प्रभु का तो यह प्रतीक नहीं है।

योगी– बेटा तुम ठीक कहते हो-अब तुम्हीं हमें बताओ कि हम प्रभु किसे कहें?

नानक जी– यह जो हमने तीन देवताओं के स्वरूप में अलग-अलग प्रभु को मान लिया है। वास्तव में हम भटक गये हैं। प्रभु तो केवल एक और केवल एक ही है। इन (ब्रह्मा, विष्णु, महेश) तीनों देवताओं का भी निर्माता वही अदृश्य शक्ति ही है और वही एक मात्र सत्य है बाकी सभी नाशवान है यहाँ तक कि यह तीनों प्रमुख देवता भी नश्वर हैं, क्योंकि जिस की उत्पत्ति होती है उस का विनाश भी निश्चित होता है। अत: जो जन्म व मरण में नहीं आता, वही सत्य सिद्ध प्रकाश परमात्मा है।

योगी– बेटा तुम्हारे तर्क में सत्य की झलक दिखाई पड़ती है। भला बताओ तो उस ईश्वर में और क्या-क्या गुण हैं?

नानक जी– बात सीधी सी है, योगिराज ! जो दृष्टिमान है वह नाशवान भी है। जिस का जन्म है उसका मरण भी है। इसलिए, जो केवल अदृश्य है अर्थात् अनुभव प्रकाश है, वही समस्त जगत का कर्ता है। उस के विशेष गुण हैं वह अभय है अर्थात् उस को किसी दूसरी शक्ति से पराजित होने का डर नहीं, क्योंकि उस के समान कोई दूसरी

शक्ति है ही नहीं; बस वही एक मात्र शक्ति है जिस का प्रतिद्वंद्वी कोई नहीं है। वही निरवैर है अर्थात् वह सब से एक समान प्रेम करने वाला है; उस का किसी के साथ विरोध नहीं। वही एक मात्र शक्ति है जो कि समय के बन्धनों से मुक्त अर्थात् ऊपर है। वह न बूढ़ा होता है, न युवक, न ही बालक। वह तो सदैव एक सम रहने वाला अकाल पुरुष है जो कि माता की कोख से जन्म नहीं लेता। इस के विपरीत देवी-देवताओं के माता-पिता है तथा यह सब सांसारिक है। अब प्रश्न यह उठता है कि उसकी उत्पत्ति कैसे हो?

योगी– वह तो स्वयंभू है।

नानक जी– बिल्कुल ठीक, उस का निर्माता कोई नहीं। उसने अपना निमार्ण स्वयं ही किया है। इसी लिए उसे खुदा कहते हैं।

अब फिर से प्रश्न उठता है कि उस की हमें प्राप्ति कैसे सम्भव हो सकती है?

योगी– हम इस कार्य के लिए समाधि लगाते हैं चिंतन मनन करते हैं।

नानक जी– योगी एक बात जान लो। जब तक तुम्हारे पास किसी पूर्ण पुरुष का मार्ग दर्शन नहीं होगा, तब तक यह समाधियां तथा चिन्तन-मनन व्यर्थ हैं। क्योंकि, सच्चे गुरू के मिलाप के अभाव से तुम्हारे किसी भी कार्य में सफलता के अंकुर नहीं फूटेंगे। अर्थात् पूर्ण गुरू की कृपा के बिना प्रभु मिलन असंभव है।

योगी– बेटा बताओ, हम सत्य गुरू की कृपा के पात्र कैसे बनेंगे?

नानक जी– गुरू की आज्ञा पालन करने से ही हम उसकी (परमात्मा की) कृपा के पात्र बन सकते हैं, केवल गुरू धारण करने मात्र से बात नहीं बनती।

योगी– बेटा, यह बात भी तुम सत्य कह रहे हो, परन्तु प्रश्न अभी भी वैसे का वैसा ही है। हम यह कैसे जानें कि हमें गुरू जी की क्या आज्ञा है तथा उन के आदेशों का पालन कैसे हो?

नानक जी– वही कार्य किये जाएं जो परहित में हों। जिस से सभी को सुख मिले।

हमारे किसी भी कार्य में दिखावा न होकर वास्तविकता हो। अर्थात् हम केवल कर्म काण्डी ही न रहें, बल्कि सभी कार्य हृदय से सीधा सम्बन्ध रखते हों। तीसरा – जो कुछ हो रहा है वह उसी की आज्ञा अनुसार ही है, इस लिए उस के किसी भी कार्य में बाधा न डाल कर उस में प्रसन्नता व्यक्त करें। बस इन्हीं बातों से गुरू प्रसन्न होकर प्रभु मिलाने में सहायक बनते हैं।

एक दिन नानक जी अपने मवेशियों को चरागाह मे छोड़ कर अपने आप एकांत स्थान में बैठे समाधी सथित्त हो गये। तभी उन के पशु चरते – चरते एक खेत में घुस गये तथा खेत को हानि पहुँचायी। इस से खेत का स्वामी किसान झगड़ा करने लगा कि पटवारी के लड़के को मेरी क्षति पूर्ति करनी चाहिये। यह झगड़ा बढ़ते – बढ़ते स्थानीय प्रशासक राय बुलार जी के पास पहुँचा। राय जी ने अपना एक कर्मचारी क्षति ग्रस्त खेत में भेजा, जिससे यह अनुमान लगाया जा सके कि हानि कितनी हुई है? ताकि उतनी राशि उस किसान को दिलवाई जाए। परन्तु जब कर्मचारी उस खेत में पहुँचा तो खेत मे नुकसान का कोई चिन्ह दिखाई नहीं दिया। अत: वह लौट आया तथा कहने लगा – हे राय जी, वह खेत तो ज्यों का त्यों है। मुझे तो कहीं खेत में मवेशियों द्वारा बरबादी के कोई चिन्ह दिखाई नहीं दिये। यह सुन राय जी कहने लगे नानक भी अल्लाह का, खेत भी अल्लाह के तथा मवेशी भी अल्लाह के तब कैसी क्षति तथा कैसी क्षति पूर्ति। यह सुन कर खेत का स्वामी लौट गया।

एक दिन नानक देव जी अपने मवेशियों के साथ चरागाह में घूम रहे थे कि अपने विश्राम के लिए एक वृक्ष के नीचे चादर डाल कर सो गये। कुछ समय पश्चात् वृक्ष की छाया दूसरी तरफ ढल गई तब नानक जी के ऊपर धूप आ गई थी। संयोग वस सथानीय प्रशासक राय बुलार भी वहां से गुजर रहे थे। तभी उनकी दृष्टि सोय हुए नानक जी पर पड़ी। वह वहीं स्तम्भित से खड़े रह गये क्योंकि एक विशाल फनियर सांप नानक जी के सिरहाने फन फैलाए मुख – मण्डल पर छाया किये बैठा था। तब राय जी ने एक व्यक्ति को भेजा कि जाओ देखो कि यह बालक जीवित है या सांप ने इसे डस लिया है? व्यक्ति देखने पहुँचा तो सांप वहाँ से अपने बिल की ओर हो लिया। परन्तु नानक जी नींद में सोऐ हुए थे। यह देख राय जी बहुत प्रसन्न हुए कि बालक ठीक है इससे उन के हृदय में नानक जी के प्रति श्रद्धा भावना और भी बढ़ गई।

इसी प्रकार एक दिन नानक जी वन में एक वृक्ष की छाया में विश्राम के लिए सो गये तो कुछ देर बाद सभी वृक्षों की छाया ढल गई। परन्तु उस वृक्ष की छाया ज्यों की त्यों ही बनी रही जब तक उस के नीचे नानक जी विश्राम करते रहे। यह आश्चर्य जनक दृश्य जब राहियों ने देखा तो अवाक् रह गये।

एक दिन स्थानीय अधिकारी राय बुलार के पास उन के दामाद दौलत खान, जो कि सुलतानपुर लोधी का जिलाधीश (हाकिम) था, ने अपने लेखापाल (एक मुनीम) को तलवण्डी भेजा। इस ने सभी प्रकार के बही खातों के आंकड़े आपसी मिलान किये। इस लेखापाल युवक ने अपनी अल्प आयु में ही अपनी पूर्ण योग्यता का परिचय दिया। यह युवक राय बुलार जी को बहुत मन भाया। उन्होंने मेहता कल्याण चंद को एक सलाह दी, कि तू अपनी पुत्री नानकी का विवाह इस युवक जयराम के साथ कर दे, क्योंकि यह युवक हर दृष्टि से योग्य है। तेरी पुत्री भी अब वर के योग्य है। यह बात महता जी को बहुत जँची। उन्होंने तुरन्त सहमति दे दी। जब रिश्ता दोनों पक्षों में सहर्ष स्वीकार हो गया तो विवाह की तिथि निश्चित कर जल्दी ही विवाह सम्पन्न कर दिया गया। इस प्रकार नानक देव जी की बड़ी बहन नानकी जी अपने सुसराल सुलतानपुर लोधी अपने पति जयराम जी के साथ विदा होकर चली गई।

कृषक रूप

एक दिन नानक जी को पिता जी ने कहा - तुम अब मवेशियों को चरागाह में ले जाना छोड़कर अपने खेतों की स्वयं देख-भाल करो। क्योंकि पट्टे पर तो आधा लाभ रह जाता है। अब मैं तुम्हारी शादी कर देना चाहता हूँ अत: तुम्हें भी खेतों का काम हाथ में लेना होगा, जिससे तेरा उदास मन घर गृहस्थी से बहल जाएगा। तुझे बनों में भटकने की कोई आवश्यकता नहीं। मैं तुझे उच्च स्तर का रोजगार करते देखना चाहता हूँ ताकि किसी अच्छे घर में तेरा रिश्ता तय कर सकूँ। तब नानक जी ने पिता जी को आश्वासन दिया कि आप जैसी आज्ञा करेंगे, मैं वैसा ही करूँगा। अब नानक जी की आयु लगभग 15 वर्ष की हो चुकी थी। नानक जी अब अपने खेतों की देख-भाल करने लगे।

प्रात:काल ही उठते स्नान ध्यान करके खेतों में जाते। वहीं पर खेतीहर श्रमिकों से मिलकर खेतों में हल जोतते। खाद गोडाई आदि कार्यों में जुट जाते, जिस से इस बार फसल बहुत अच्छी हुई। जब मेहता कालू जी ने लहलहाती फसल देखी तो अति प्रसन्न हुए। हर्ष उल्लास में उन्होंने नानक जी को सीने से लगा कर बहुत प्यार किया तथा कहा, "मैं तेरी ऐसे ही निन्दा करता फिरता हूँ कि लड़का निकम्मा है। अरे! तूने तो मेरी सारी शिकायतें दूर कर दीं। मैं अब तेरे विवाह की बात अपने एक मित्र की लड़की के साथ पक्की करता हूँ।" अत: मेहता कल्याण चंद जी ने अपनी पत्नी त्रिपता जी से विचार-विमर्श किया कि हमारा लड़का पहले की तरह अब वैरागी नहीं रहा। वह तो अब खेती-बाड़ी (कृषि) में मन लगाने लगा है। अत: उस का मन रमा रहे इस लिए जल्दी उस के लिए घर ग्रहस्थी के बन्धन अच्छे रहेंगे। नहीं तो क्या मालूम फिर से वही पहले वाली हालत में न आ जाए। अत:हता जी ने अपने बचपन के मित्र मूलचन्द को सन्देश भेजा जो कि बाल्यकाल में मेहता जी के सहपाठी रह चुके थे। अब वह बटाला ग्राम में पटवारी का कार्य भार संभाले हुए थे। उन की लड़की जिस का नाम सुलक्खणी था, वह हर दृष्टि से कुशल, निपुण और सुन्दर थी। दोनों परिवारों में समानता थी इसलिए मूलचन्द जी ने रिश्ता स्वीकार कर लिया। विवाह कुछ समय बाद में होना निश्चित हुआ, परन्तु नानक देव जी का मन तो मानव कल्याण की अभिलाषा लिए भविष्य के लिए कार्यक्रम बनाने में लगा रहता। अत: अब वह अपना अधिकांश समय प्रभु चिंतन-मनन में लगाते जिस से खेती-बाड़ी (कृषि) की दशा बिगड़ने लगी। इस बार प्रकृति ने भी साथ नहीं दिया। वर्षा भी समय अनुसार नहीं हुई। अत: पहले वर्ष की अपेक्षा अनाज न के बराबर हुआ। यह सब देख कर मेहता कालू जी बहुत दुखी हुए। परन्तु शिकायत किसी से भी न करते। नानक जी तो काम धन्धों में रुचि ही नहीं ले रहे थे। बस अधिकांश समय चिंतन व मनन में एकान्त रहते। अन्त में पिता जी ने निर्णय लिया कि खेती-बाड़ी की कठिन समस्याएं नानक के बस की नहीं हैं। इसे तो किसी व्यापार में लगा दिया जाए तो ठीक रहेगा।

सच्चा सौदा

अब नानक जी की आयु 17 वर्ष की हो चुकी थी। अत: पिता जी ने बहुत सोच समझ कर व्यापार के लिए नानक को 20 रुपये दिये तथा कहा, "नानक तुम अब इन रुपयों से एक छोटा सा व्यापार प्रारम्भ करो। लाभ होने पर मैं तुम्हारी लगातार सहायता करता रहूँगा। मुझे पूर्ण आशा है एक दिन तुम बहुत बड़े व्यापारी बन सकते हो।" बहुत समझा बुझा कर एक सहायक के रूप में पड़ोसियों का लड़का, जिसका नाम बाला था जो कि नानक जी का बचपन का मित्र होने के कारण समान आयु का था, उनके साथ में भेज दिया ताकि नानक को अपनी राय देकर सहायता भी करता रहे। अब नानक जी को पिता जी ने एक विशेष आदेश दिया कि बेटा कहीं धोखा नहीं खाना; खरा सौदा ही करना, जिस में लाभ निश्चित ही हो। दोनों मित्र तलवण्डी से पड़ौसी बड़े नगर चूड़काणे के लिए चल पड़े। रास्ते में एक स्थान पर सड़क के किनारे साधुओं का डेरा दिखाई दिया। नानक जी ने साधुओं के दर्शनों की इच्छा प्रकट की तथा दोनों साथी रास्ता छोड़ साधुओं के डेरे पहुँच गये। सभी साधु भजन में व्यस्त थे। नानक जी ने उनके महन्त से बातचीत की कि आप ने भोजन की क्या व्यवस्था की हुई है? उत्तर में महन्त ने बताया कि कोई दानी भोजन ला देता है तो हम भोजन कर लेते हैं नहीं तो बिना भोजन के हम समय व्यतीत करते हैं। यह सुनकर नानक जी ने महन्त को 20 रुपये दे दिये तथा कहा कि आप इन से अपने भोजन का प्रबन्ध कर लें। किन्तु महन्त जी ने पूछा, "बेटा यह रुपये तुम हम साधुओं को क्यों देना चाहते हो?" उत्तर में नानक जी ने कहा मुझे पिता जी ने एक खरा सौदा करने के लिए भेजा है। मुझे ऐसा लगताा है कि इस से अच्छा खरा सौदा और हो ही नहीं सकता। इस में लाभ ही लाभ दिखाई देता है। तब महन्त ने कहा, "बेटा हम रुपये नहीं लेते अगर तुम्हारी इच्छा है तो हमें अनाज ला दो हम स्वयं भोजन तैयार कर लेंगे। यह सुनकर नानक जी चूड़काणे गये वहाँ से सभी प्रकार की रसद खरीद कर एक बैलगाड़ी में लदवा कर साधु सन्यािसियों को देकर वापस घर को लौटे। तलवण्डी गाँव के निकट पहुँचने पर आप अपने गाँव की बाहर वाली चौपाल पर बैठ गये तथा बाले को घर भेज दिया। जब पिता कालू जी को ज्ञात हुआ कि 'बाला' लौट आया है, परन्तु नानक का कहीं पता नहीं तो उन्होंने तुरन्त बाले को बुला कर सारी जानकारी प्राप्त

की। उन को जैसे ही यह ज्ञात हुआ कि सभी रुपये नानक जी ने साधुओं को भोजन कराने पर खर्च कर दिये हैं तो वह क्रोधित हो उठे और नानक जी की खोज में चल दिये। उन्हीं दिनों बहन नानकी जी विवाह के पश्चात् पहली बार मायके आई हुई थी। जैसे ही उन को ज्ञात हुआ कि पिता जी क्रोध में हैं तो वह पिता जी के पीछे चल दी। खोजते-खोजते नानक जी पिता कल्याण चंद जी को सूखे तालाब के किनारे की चौपाल पर बैठे मिल गये। तब क्या था! पिता जी ने नानक जी को आ दबोचा तथा पूछा, "रुपये कहाँ हैं?" इस पर नानक जी शांत चित्त बैठे रहे। कोई उत्तर न पाकर कालू जी ने क्रोध में आकर नानक जी के गाल पर जोर से एक चपत जड़ दी तथा फटकारने लगे। जैसे ही उन्होंने दोबारा चपत लगाने के लिए हाथ ऊपर उठाया तभी नानकी जी ने उनका हाथ पकड़ लिया तथा स्वयं अपने प्यारे भइया और पिता जी के बीच दीवार बनकर खड़ी हो गई। पिता जी का क्रोध शांत होने को नहीं आ रहा था, किन्तु करते भी क्या? जो होना था वह तो हो चुका था। अत: बेटी नानकी जी के समझाने-बुझाने पर नानक जी को साथ लेकर घर लौट आए। यह घटना जंगल की आग की तरह समस्त तलवण्डी नगर में फैल गई कि मेहता कालू जी ने नानक की पिटाई की है। जैसे ही राय बुलार को यह घटना मालूम हुई उन्होंने मेहता कालू जी को बुला भेजा। जब पिता पुत्र दोनों राय बुलार जी के सम्मुख उपस्थित हुए तो राय जी ने नानक जी पर प्रश्न किया बेटा तुमने सभी रुपये फ़कीरों पर क्यों खर्च कर दिये? उत्तर में नानक जी कहने लगे कि मुझे जाते समय पिता जी ने विशेष आदेश दिया था कि देखना बेटा खरा सौदा ही करना। इस लिए मैंने अपनी ओर से बहुत सोच-समझ कर खरा सौदा ही किया है। इस में लाभ ही लाभ है। यह उत्तर सुन कर राय बुलार ने मेहता कालू जी से कहा, "देखो कालू मैं पहले भी कई बार कह चुका हूँ कि नानक जी से भूलकर भी अभद्र व्यवहार नहीं करना। परन्तु एक तुम हो कि बात को समझते ही नहीं तथा अपनी मनमानी करते हो। आज से एक बात गांठ से बांध लो कि नानक जी जो भी कार्य करें, जैसा वह चाहें उस में बाधा मत डालना। अगर तेरे को कोई हानि होती है तो मैं उस की क्षति पूर्ति कर दिया करूंगा।" तभी उन्होंने 20 रुपये मंगवा कर मेहता कालू जी को देते हुए कहा कि यह तो तुम्हारी क्षति पूर्ति हुई है। परन्तु कालू जी यह राशि स्वीकार नहीं कर रहे थे। तब राय जी ने कुछ अधिक दबाव डाल कर रुपये स्वीकार करने पर महता जी को विवश कर दिया। किन्तु

घर पहुँचने पर आस-पड़ौस में निन्दा प्रारम्भ हो गई, जिस से महता जी ने वह रुपये राय बुलार जी को वापस लौटा दिये। इस घटना के पश्चात् नानक जी को पिता कालू जी ने फिर से समझा-बुझा कर कहा-बेटा मेरे शब्दों का कदाचित् अर्थ यह नहीं था कि तुम सभी रुपये एक ही बार में परमार्थ के लिए लगा दो। मैं तो चाहता था कि तुम आत्म निर्भर बनो, ताकि तेरा विवाह भी किया जा सके, क्योंकि तेरी सगाई हुए दो वर्ष होने को हैं। इस प्रकार समझा-बुझा कर पिता जी ने फिर से नानक जी को व्यापार के लिए राज़ी कर लियाा तथा उन को पंसारी की एक दुकान तलवण्डी में चलाने के लिए तैयार कर लिया। वास्तव में नानक जी भी चाहते थे कि वह स्वयं उपजीविका हेतु अपने हाथों से परीश्रम कर तथा स्वावलम्बी बनें। अत: उन्होंने एक दुकानदारी प्रारम्भ कर दी। कुछ दिनों मे ही नानक जी के स्नेह पूर्ण व्यवहार से दुकान चल निकली, जिससे नानक जी व्यस्त रहने लगे।

विवाह

अब नानक जी की आयु 18 वर्ष हो गई थी। अब पिता कालू जी ने देखा कि लड़का नानक कुछ काम धाम में लग गया है तो उन्होंने मूलचन्द जी को सन्देश भेज कर विवाह की तिथि निश्चित करवा दी और बारात बटाले नगर ले कर चले गये। बारात में सभी वर्ग के लोग सम्मिलित हुए। जब बारात बटाले नगर पहुँची तो वहाँ पर भव्य स्वागत हुआ। नानक जी कुछ क्षणों के विश्राम के लिए मिट्टी की एक दीवार के पास बैठकर सुस्ताने लगे कि एक वृद्ध महिला ने नानक जी से कहा, "बेटा यह दीवार कच्ची है देखना कहीं गिर न जाए।" तब नानक जी के मुख से सहज भाव से शब्द निकला - यह दीवार कभी भी नहीं गिरेगी। (वह दीवार आज भी ज्यों की तयों है)। विवाह सम्पन्न हुआ और दोनों पक्षों की ओर से यह निश्चित किया गया कि अभी बच्चे छोटे हैं। अत: कुछ वर्षो पश्चात् गौने की रीति के अनुसार लड़की की विदायगी की जाएगी, क्योंकि अभी वह शारीरिक तथा मानसिक स्तर से गृहस्थ के योग्य नहीं है।

समय व्यतीत होने लगा। अब नानक जी की मित्रता एक मिरासी युवक (भाई) मरदाना से हुई जो कि उनके विवाह में संगीत का प्रदर्शन कर रहा था यह युवक नानक जी से लगभग 9 वर्ष बड़ा था। मरदाना एक तन्त्रिवाद्य (रबाब) को बजाने तथा शास्त्रीय

संगीत में प्रवीण था। वह प्रतिदिन प्रातःकाल नानक जी के पास उपस्थित हो जाता। नानक जी कीर्तन करते, भाई मरदाना संगीत की बन्दिश में उसे अलाप करता। कीर्तन की मधुरता सब को मन्त्र मुग्ध कर देती तथा सभी हरि-यश का आनंद लेते। जिस से सभी लोग मन की एकाग्रता का अनुभव करते। यह अनुभूति बनाये रखने के लिए सभी लालायित रहते तथा चाहते कि यह भोर का समय कभी समाप्त ही न हो। अतः दूसरी प्रातःकाल की प्रतीक्षा मे उठ जाते। धीरे-धीरे नानक जी की कीर्तन मण्डली की सदस्य संख्या बढ़ने लगी। कीर्तन मण्डली का विस्तार होने से नानक जी अपने व्यापार में ठीक से ध्यान नहीं दे पा रहे थे। सभी सन्तुष्ट थे परन्तु पिता कालू जी यह देख कर मन ही मन निराश होते। इन बातों को लेकर पिता-पुत्र में अक्सर तनाव बना रहता। अधिक रोक-टोक से अब नानक जी का मन अपने व्यापार से उचाट होने लगा। वह अपना अधिक समय भजन की ओर लगाते। धीरे-धीरे नानक जी की दुकान बन्द सी होकर रह गयी। अब नानक जी की आयु लगभग 20 वर्ष थी। युवा पुत्र को कुछ कहते न बनता। अतः पिता जी क्षुब्ध रहने लगे कि मेरा इकलौता बेटा किसी काम में रुचि नहीं लेता, बस वैरागी सा बना रहता है। यह सब देख माता-त्रिपता जी भी नानक को दुनियांदारी की बातें समझाने बुझाने में लगी रहतीं कि बेटा पिता जी की आज्ञा अनुसार कार्य-व्यवहार करो, क्योंकि तुमने आत्मनिर्भर बनना है। तू जब तक कमाएगा नहीं, तेरा गौना कैसे करवाएंगे। नव पुत्र वधू के आते ही तेरे पर घर गृहस्थी का बोझ पड़ेगा। क्या तुम तब पिता के आगे हाथ पसारोगे? या घर में बाप-बेटे का टकराव दुल्हन को दिखाओगे? हम तेरे को प्रभु चिंतन तथा कीर्तन से नहीं हटाते। जैसी तेरी इच्छा है करो। परन्तु अपनी आजीविका की भी साथ में चिंता करो। पिता ने तो अपना उत्तरदायित्व पूरा कर दिया है। तुझे पढ़ा लिखा दिया है। काम-काज के लिए भी कई अवसर प्रदान किये हैं कि हमारा बेटा किसी से पीछे न रहे। परन्तु एक तुम हो कि सब कुछ जानते हुए भी किसी काम में मन ही नहीं लगाते। ऐसा कब तक चलेगा? एक न एक दिन तो तुझे अपनी जिम्मेदारी निभानी ही पड़ेगी।

कीर्तन के प्रति वेदना (विरह)

इस प्रकार की बातें नानक जी निरन्तर सुनते रहते, परन्तु शान्त तथा सहज बने रहते तथा किसी बात का भी विरोध न करते। पिता कालू जी भी चिंतित व अशांत रहते। वह सोचते कि अगर नानक को साधु सन्तों तथा इन कीर्तन मण्डलियों से हटा लिया जाए तो नानक फिर से अपने व्यापार में ध्यान देगा, जिस से फिर दुकानदारी चल निकलेगी। इसलिए उन्होंने नानक जी पर कड़े प्रतिबन्ध लगा दिये कि वह वनों में नहीं जाएगा तथा गाने वाले मिरासियों से कोई नाता नहीं रखेगा। बिना व्यापारिक कारण से कहीं दूर नहीं जाओगे। इन प्रतिबन्धों के कारण नानक जी की दिनचर्या समाप्त सी हो गई। वह एक कैदी की भांति घर पर ही रहने लगे। एक आज्ञाकारी पुत्र होने के नाते किसी बात का विरोध न करते थे। परन्तु कीर्तन मण्डली के वियोग में न कुछ खाते न कुछ बोलते। केवल मौन धारण कर बिस्तर पर पड़े रहते। इस प्रकार कुछ दिन व्यतीत हो गये। पिता जी तथा माता जी अक्सर पूछते रहते कि उसे क्या दुख है? कुछ बताता क्यों नहीं? परन्तु नानक जी गम्भीर बने रहते। उन के इस एकान्त वास अवस्था की पूरी तलवण्डी में चर्चा होने लगी – 'नानक जी न कुछ खाते हैं न किसी से बात करते हैं' 'बस बिस्तर पकड़े हुए हैं।' जैसे-जैसे यह समाचार आस-पड़ौस में फैलने लगा। लोग नानक जी को देखने के लिए आने लगे कि कुछ खबर सार लें कि नानक जी को क्या हो गया है? परन्तु नानक जी किसी से भी बात न करते, केवल शांत अडोल अवस्था में पड़े रहते। यह सब देखकर कुछ लोगों ने मेहता कालू जी को परामर्श दिया कि आप लड़के को किसी वैद्य जी को दिखाएं। तब हरिदास नामक एक वैद्य को बुला लिया गया, जो कि बहुत अनुभवी तथा योग्य माना जाता था। जब वैद्य नानक जी को बाजू से पकड़ कर नाड़ी का परीक्षण करने लगा तो नानक जी ने पूछा कि आप क्या देखना चाहते हैं? वैद्य ने कहा कि 'बेटा बताओ तुन्हें कौन सा कष्ट है? नानक जी ने कोई उत्तर नहीं दिया बदले में शांत हो गये। वैद्य ने पूर्ण जाँच की किन्तु उसको कोई रोग न मिला। अन्त में वह कहने लगा मेरी दृष्टि मे तो तुम बिल्कुल स्वस्थ हो। परन्तु तुमने शरीर की यह क्या दशा बना रखी है? वास्तव में बात क्या है? तब नानक जी ने निम्नलिखित पद्य उच्चारण करते हुए अपने हृदय की बात कह दी।

वैदु बुलाइआ वैदगी पकड़ि ढंढोले बांहि ॥
भोला वैदु न जानई करक कलेजे माहि ॥
वैदा वैद सुवैद तूं पहिला रोगु पछान ॥
ऐसा दारू लोड़ि लेहु जितु वंञै रोगा घाणि ॥

राग़ु मल्हार, पृष्ठ 1279

अर्थात्-वैद्य ने मेरा बाज़ू पकड़ कर नाड़ी परीक्षण किया है परन्तु वह भोला वैद्य नहीं जानता कि व्याधि कहाँ है? मुझे कोई शारीरिक दुख नहीं, मुझे तो हृदय की पीड़ा सता रही है, क्योंकि मुझे हरि कीर्तन से तोड़ दिया गया है। मुझे हरियश की प्यास है जो तृप्त नहीं होती। अत: मैं तो तुझे सुयोग्य वैद्य तब मानूँगा जब तुम पहले वास्तविक व्याधि को पहचानकर कोई ऐसी औषधि खोजो जिस से मेरे शरीरिक तथा मानसिक सभी प्रकार के रोग समाप्त हो जाएँ।

तब वैद्य ने पिता कालू जी को सम्बोधन होकर कहा कि तुम्हारे लड़के को शारीरिक रोग तो कोई है ही नहीं। अत: मैं इसका क्या उपचार करूँ? इस को तो मानसिक रोग है। जिस का एक मात्र उपचार यह है कि इन को खुश रखो। जैसा चाहता है वैसा करने दो। इस पर किसी प्रकार का कोई प्रतिबन्ध न लगाओ, नहीं तो लड़का खो बैठोगे। तब पिता जी गम्भीरता से सोचने लगे। उधर नानक जी की बीमारी की सूचना राय साहब को मिल गई। वह स्वयं नानक जी को देखने के लिए आये। जब उन्हें यह ज्ञात हुआ कि वैद्य ने केवल प्रसन्नचित रखने का ही सुझाव दिया है क्योंकि उन्हें कोई शारीरिक रोग दिखाई नहीं दिया। तब वह कालू जी पर बहुत नाराज हुए कि तुम स्वयं ही इन परिस्थितियों के लिए उत्तरदायी हो। तुम्हें तो धन चाहिये। लड़के की खुशी नहीं। मैंने पहले भी तुझे कई बार कहा है कि तुझे जितना धन चाहिये मुझ से ले लो। किन्तु नानक जी के किसी भी कार्य में बाधा न डालो, परन्तु तुम मेरी सुनते ही कब हो?

महता कालू जी- राय साहब बात यह है कि नानक का अभी गौना होना है। उस से पहले मैं इसे आत्मनिर्भर देखना चाहता हूँ। दूसरी ओर यह है कि किसी भी काम में मन नहीं लगाता। जैसे कि आप जानते हैं पहले-पहल मवेशी चराने भेजा तो किसानों की

शिकायतें आने लगी कि नानक की लापरवाही से मवेशियों ने खेत बर्बाद कर दिये हैं। अगर खेती बाड़ी का कार्य सौंपा तो कुछ समय तो काम ठीक से किया जिससे खेती फूली-फली, किन्तु फिर वही बात, काम में ध्यान नहीं देता। बस साधु-सन्यासियों की संगत करता फिरता है, जिस से खेती चौपट हो कर रह गई। तब मैंने सोचा चलो खेती इस के बस की नहीं तो व्यापार ही सीखे, वहां पर भी पहली बार में ही सारा धन जान बूझ कर परमार्थ में लगा आया तथा मुझे सिखाता है कि आपने ही खरा सौदा करने को कहा था। जब बलपूर्वक दुकान चलाने पर विवश किया तो कुछ दिन तो सब ठीक ठाक रहा। कुछ लाभ दिखाई देता था। परन्तु जैसे ही इसने उस मरासी युवक को अपना मित्र बनाया है तथा कीर्तन के नाम पर गाना बजाना शुरू कर दिया है, उस दिन से किसी काम में रुचि ही नहीं लेता। पहले तो हमें बुरा नही लगा किन्तु अब तो हाल यह है कि इन लड़कों ने एक गायक मण्डली तैयार कर ली है। बस आठों पहर उसी की ही धुन सवार रहती है और हर समय रिआज़ के नाम से गाते रहते हैं। बस मैंने तो इसी जनून से तंग आकर नानक को उन लोंगो से मिलने-जुलने से रोका है।

राय बुलार– फिर देख लिया न अपनी रोक-टोक का नतीजा? मेरा बस चले तो इसे तेरे से कहीं दूर भेज दूँ। जिस से इसे पूर्ण आज़ादी मिले।

कालू जी– मैं तो इस के भले की ही सोचता हूँ। परन्तु मुझे क्या मालूम कि उस मिरासी युवक के लिए यह इतना व्याकुल हो जाएगा कि किसी बात की सुध-बुध ही नहीं रहेगी। खैर . . . . . आप जैसा चाहें नानक के लिए करें। मेरे विचार से तो आप इसे कहीं कोई सरकारी नौकरी दिलवा दें तो शायद बात बन जाए।

राय बुलार– हां, तुम ठीक कहते हो। मैं इसे कहीं कोई नौकरी दिलवाने की कोशिश करता हूँ। जिस से तेरे मन को भी शान्ति मिलेगी और नानक भी खुश रहेगा।

यह कह कर राय जी चले गये तथा उन्होंने नानक जी के लिए कोई काम की तलाश प्रारम्भ कर दी। परन्तु वह चाहते थे कि नानक जी तलवण्डी से कहीं दूर किसी दूसरे नगर में जा बसे, नहीं तो बाप बेटे का प्रतिदिन का टकराव बना ही रहेगा।

अब मेहता कालू जी ने नानक जी को कह दिया, "बेटा जैसी तेरी इच्छा है करो मुझे कोई आपत्ति नहीं। मैं तो केवल तेरे को प्रसन्नचित देखना चाहता हूँ। मुझ से तेरी यह

एकान्त वास रहने की आदत देखी नहीं जाती। मुझे तो ऐसा जान पड़ता था जैसे युवा पुत्र ने बीमारी में बिस्तर पकड़ लिया हो।" इस प्रकार पिता-पुत्र में मौन समझौता हो गया। नानक जी फिर से अपनी मण्डली को लेकर कीर्तन करने लगे। अब नानक जी 21 वर्ष के हो गये। इन्हीं दिनों नानक जी के बहनोई जयराम जी अपनी पत्नी नानकी समेत ससुराल पधारे। जब वह राय बुलार साहब से मिलने पहुँचे तो उन्होंने जयराम से आग्रह किया आप नानक जी को अपने साथ ले जाएं, क्योंकि न जाने तलवण्डी में कब बाप-बेटे में तनाव उत्पन्न हो जाए। इस से मुझे बहुत कष्ट होता है। वहाँ सुलतानपुर में कोशिश करके इसे किसी काम पर लगवा देना। वैसे मैं अपने दामाद दौलत खान को पत्र लिख देता किन्तु वह किसी की भी सिफारिश नहीं मानता। वह तो व्यक्ति की योग्यता का परीक्षण लेकर ही उसको उस की योग्यता अनुसार धन्धे पर लगाता है। अतः तुम उस से नानक जी की भेंट करवा देना और बताना कि इन्हों ने हर प्रकार की शिक्षा प्राप्त की हुई है तथा बहुत प्रतिभावान युवक है।

जयराम – आप की आज्ञानुसार मैं पिता कालू जी से आग्रह करूंगा कि वह नानक जी को मेरे साथ भेज दें। आप भी नानक जी को कार्य करने के लिए मन से तैयार करें, क्योंकि वह बहुत स्वाभिमानी है।

राय बुलार – इस बात की तुम चिन्ता मत करो। मैं नानक जी की स्वीकृति प्राप्त कर लूँगा, क्योंकि वह मेरी बात कभी नहीं टालते। रही बात कालू की मैं उसे भी समझा बुझा दूंगा।

सुलतानपुर (लोधी) प्रस्थान

इस प्रकार नानक जी तलवण्डी से अपने बहनोई जयराम जी के साथ सुलतानपुर (लोधी) चले गये। सुलतानपुर के नये वातावरण में अपने को रमाने में जुट गये। वह वहाँ वेईं नदी जो पास ही में बहती थी पर प्रातःकाल ही चले जाते। वहीं स्नान कर ध्यान के लिए आसन जमाते तथा प्रकृति के सौन्दर्य में खो जाते।

एक दिन जयराम जी को पता चला कि नवाब दौलत खान को एक मोदी (भण्डार अधिकारी)की आवश्यकता है, क्योंकि मोदी खाने(सरकारी रसद भण्डार) में कोई भी

मोदी (भण्डार अधिकारी) अधिक समय तक टिक नहीं पाता था। वह जल्दी ही अयोग्य घोषित हो जाता था क्योंकि लेन देन के कार्य में सभी वर्गो को सन्तुष्ट कर पाना बहुत कठिन कार्य था। फिर जहां आचरण में भ्रष्टाचार भी छिपा हो तो शिकायतें बहुत सी सच्ची भी होती थीं। अत: नवाब की परेशानी को अनुभव करते हुए भाई साहब ने उसे बताया कि एक उच्चकोटि के आचरण वाला व्यक्ति मेरी दृष्टि में है। आप कहें तो मैं उसे आप से मिलवा दूँ। आप स्वयं देख लें कि वह आप की चिन्ताएं मिटाने में समर्थ रहेगा? यह सुन कर नवाब ने कहा, "ठीक है, उसे कल मुझ से मिलवा दो।"

घर जा कर जयराम जी ने अपनी धर्म पत्नी नानकी से कहा - नानकी सुनो तो तुम्हारे लिए एक खुशखबरी है। मैंने नवाब दौलत खान से आज बातचीत की है कि उस के पास मोदी का जो स्थान रिक्त है, वहां पर वह अपने नानक की नियुक्ति कर दें। वह बहुत योग्य है। इस पर उस ने कहा कि वह भाई नानक से सीधे बातचीत करना चाहता है।

नानकी – ठीक है किन्तु मुझे इस की कोई आवश्यकता महसूस नहीं हो रही थी क्योंकि भाई नानक की प्रवृति तो आप जानते ही हैं। न जाने उन का मन पराई गुलामी न स्वीकार करे, क्योंकि वह बहुत स्वाभिमानी है। वैसे भी वह संसारिक धन्धों में रुचि नहीं रखते। फिर ऐसी भी क्या बात है जो हम एक व्यक्ति के लिए भोजन-वस्त्र आदि नहीं जुटा पाएंगे। मेरी मानो तो उनको प्रभु चिंतन से हटा कर इन झंझटों में न ही डालो तो अच्छा है।

जयराम – तेरी बात में तथ्य अवश्य है, परन्तु तुम तो जानती हो उस का विवाह हो चुका है। अभी गौना लाना है। लड़की वाले संदेश भेज रहे हैं। एक न एक दिन तो दुल्हन को लाना ही है। जब दुल्हन आएगी तो घर-गृहस्थी वाला व्यक्ति किसी प्रकार से भी निकम्मा या दूसरों पर आश्रित नहीं होना चाहिये। वैसे यह बात-चीत नानक जी से पूछकर उनकी सहमति से ही की थी, क्योंकि वह स्वयं इस के लिए इच्छुक थे। उस का कहना है कि किसी को भी अपनी आजीविका के लिए दूसरों पर निर्भर नहीं रहना चाहिये। इस बात के लिए वह बहुत जागरूक है। वैसे भी यह नौकरी सरकारी है इस में पराई गुलामी कैसी? खैर.......।

नानकी– अगर भइया जी सहमति दे चुके हैं, तो ठीक है।

दूसरे ही दिन नवाब दौलत खान से जब जयराम जी ने नानक जी की भेंट करवाई तो दौलतखान नानक जी के तेज-तपस्वी मुख-मण्डल को देखकर, उन के व्यक्तित्व से बहुत प्रभावित हुआ फिर भी वह अपनी शंका निवारण के लिए नानक जी पर भांति-भांति के प्रश्न करने लगा कि युवक तुम कितने पढ़े-लिखे हो?

नवाब– नानक, क्या तुम बता सकते हो कि पढ़ाई लिखाई कहाँ तक की है।

नानक जी – हिन्दी, संस्कृत, फारसी का गहन अध्ययन किया है।

नवाब– कुछ गणित-वणित भी जानते हो या नहीं?

नानक जी– पिता जी पटवारी हैं, उन से इस विषय में बहुत कुछ सीखने को मिला है।

नवाब– इस से पहले कहाँ काम किया है? कोई पहला अनुभव हो तो बताओ?

नानक जी– मैं पहले अपने नगर तलवण्डी में पंसारी की दुकान चलाता रहा हूँ।

नवाब – तो ठीक है मैं तुम्हें एक अवसर प्रदान करता हूँ तुम मुझे अपनी योग्यता दिखाओ। बस मेरी शर्त यह है कि तुमने सभी को सन्तुष्ट रखना है। मुझे किसी की कोई शिकायत नहीं मिलनी चाहिये।

नानक जी– आप किसी भी बात की चिन्ता न करें। सब कुछ आप की इच्छानुसार ही होगा।

सरकारी नौकरी

दूसरे दिन से ही नानक देव जी ने मोदी खाने (रसद भण्डार) का कार्यभार सम्भाल लिया। अब आप की आयु 22 वर्ष के लगभग थी। अधिकांश किसान अपनी उपज का लगान(कर), अनाज के रूप में ही सरकारी भण्डारों मे जमा करवाते थे। एकत्र हुआ अनाज सेना तथा सरकारी कर्मचारियों में उन के वेतन के रूप में आवश्यकता अनुसार दिया जाता था तथा शेष अनाज जनसाधारण में उचित मूल्य पर बिक्री कर दिया जाता था। जिस की राशि खज़ाने में जमा करवायी जाती थी। उन दिनों भण्डारी को एक विशेष अधिकार प्राप्त होता था कि वह किसानों एवं कर्मचारियों से अनाज की एक प्रतिशत कटौती करते थे ताकि भण्डार में किसी प्रकार की कमी न हो। क्योंकि लेन-देन में कुछ अनाज नष्ट हो जाता था या तोलने में ज्यादा चला जाता था। इस कटौती को अलूफा अथवा बांटी कहते थे। यह अलूफा(बांटी) भण्डार अधिकारी (मोदी) अपनी इच्छा अनुसार प्रयोग में ला सकता था। इस अलूफे के रूप में प्राप्त अनाज पर भण्डारी का अधि कार होता था।

जब नानक जी 'मोदी' (भन्डार अधिकारी) नियुक्त हुए तो उन्होंने सर्वप्रथम अपने सहयोगी कर्मचारियों को यह आदेश दिया कि पहले मोदियों की भांति तोलने के बाट दो प्रकार के न रखे जाएं। क्योंकि पहले मोदी किसानों से अनाज लेते समय बाट आदि को वास्तविक भार से कुछ अधिक के रखते थे परन्तु अनाज को वितरण करते समय वास्तविक भार से कुछ कम के बाट प्रयोग में लाते थे। अत: नानक जी ने प्रारम्भिक घोटाला समाप्त करवा कर कार्य प्रारम्भ किया। आप ने नये सिरे से मोदी खाने के नियमों में परिवरतन कर काम शुरू कर दिया। सुबह के कार्यकाल में किसानों से अनाज की प्राप्ति तथा मध्यांतर के पश्चात् का समय उपभोक्ताओं में अनाज को वितरण करने का रखा। प्रतिदिन किसान अपनी बैलगाड़िओं में अनाज के बोरे लगान(कर) रूप में जमा करवाने के लिए प्रात:काल में पहुँच जाते तब आप स्वयं बडे कांटे(तराजू) के सामने खड़े होकर सारा अनाज तुलवाने तथा सभी किसानों का लगान बही-खातों में संकलित (दर्ज) करते तथा लगान प्राप्ति का प्रमाण पत्र (रसीद) देते। इस प्रकार लगान

के रूप में प्राप्त अनाज में, सौ बोरे अनाज प्राप्त होने पर एक बोरा अलूफे (कटौती अथवा बांटी) में प्राप्त होता जिस पर मोदी का ही कानूनन अधिकार होता। मध्यांतर के समय की प्रतीक्षा में मोदी खाने के बाहर भिखारिओं की भीड़ जमा हो जाती। जैसे ही नानक देव जी मध्यांतर के अवकाश में भोजन के लिए बाहर प्रस्थान करते, तभी सब भिखारी उन को घेर लेते। तब नानक जी अलूफे में प्राप्त अनाज को मंगवाते तथा भिखारिओं को एक कतार में खड़ा कर सब को एक-एक कटोरा अनाज देते। इस प्रकार नानक जी का अधिकांश मध्यांतर का समय भिखारियों को संतुष्ट करने में लग जाता जब आप भोजन करने के उपरान्त वापस लौटते तो उपभोगताओं में रसद वितरित करने में जुट जाते। इस प्रकार आप अपनी दिनचर्या में सरकारी कर्त्तव्य पूर्ण करते।

'तेरह नहीं, तेरा ही तेरा'

नानक जी की नियुक्ति से सभी वर्ग धीरे-धीरे सन्तुष्ट होने लगे, क्योंकि नानक जी किसी से भी नियमावली के विपरीत आचरण नहीं करते थे वह सभी को एक समान दृष्टि से देखते। न किसी को कम न किसी को ज़्यादा अनाज मिलता। तोल में तो कम होने का प्रश्न ही नहीं रहा। क्योंकि बांट सभी नये, एक ही स्तर के प्रयोग में लाए जाने लगे तथा स्वयं नानक जी अपनी देख-रेख में सारी चीज़ों को बड़े कांटे पर तुलवा कर देते। जैसे-जैसे फ़कीरों तथा भिखारिओं को मालूम होता गया कि नया मोदी उदारचित है, वह सभी को अनाज देता है तथा उस के यहाँ से कोई निराश होकर नहीं लौटा तो वहाँ दूर-दूर से भिखारी एकत्रित होने लगे। इस प्रकार नानक जी की उदारता की ख्याति दूर-दूर तक फैलने लगी, जिस से भिखरिओं का जमघट मोदी खाने के बाहर मध्यांतर के समय बनने लगा। जब नानक जी सरकारी कार्य से निवृत होते तो अलूफे में प्राप्त अनाज का बोरा सहायक कर्मचारी से मोदी खाने से बाहर मंगवाकर भिखारिओं को एक पंक्ति में बिठाकर एक-एक कटोरा अनाज बटवाते किन्तु एक दिन, एक सहायक कर्मचारी ने भिखारियों को अनाज बांटते समय अनाज के कटोरे गिनने शुरू कर दिये। जब वह तेरह की गिनती पर पहुँचा तो नानक जी ने उस के हाथ से कटोरा स्वयं थाम लिया। अत: आगे की गिनती में तेरह के स्थान पर केवल तेरा तेरा कहना शुरू कर दिया।

जिस का भाव था - हे प्रभु! ज्योति सवरूप! सब कुछ तेरा ही है तथा देने वाला भी तू ही है मैं नाचीज़ तुच्छ तेरा अदना सा बन्दा हूँ। उसी समय नानक जी ने अपने सहायक को आदेश दिया कि आगे से अनाज बांटते समय केवल तेरा-तेरा का ही उच्चारण करे। नानक जी की मोदी रूप में नियुक्ति ने नवाब दौलत खान की सिर दर्दी समाप्त कर दी। अब उस को मोदी खाने की तरफ से कोई शिकायत न मिलती बल्कि सभी कर्मचारी सन्तुष्ट हो गये थे। इसके साथ ही किसानों की तरफ से नये मोदी के पक्ष में सराहना के शब्द सुनने को मिलते। ख़जाने में पहले की भांति लगातार रुपये हिसाब के अनुसार पहुँच रहे थे। इसके साथ ही उपभोगता तो नानक जी की सिफारिश भी करने लगे कि यह मोदी बहुत अच्छा है, इस का तोल पूरा होता है तथा सभी से उचित दाम ही लिए जाते हैं। परन्तु कुछ ईर्ष्यालु लोग नानक जी के विरुद्ध नवाब के कान भरने लगे कि यह मोदी भिखारिओं में अनाज लुटा रहा है, इस लिए मोदी खाने के सामने भिखारिओं का तांता लगा रहता है। हो सकता है कि हिसाब में गड़बड़ी कर रहा हो। जिस से अन्त में मोदी खाने में बहुत बड़ा घाटा पड़ जाए। किन्तु नवाब इन बातों पर ध्यान नहीं देता था वह जानता था कि उस के खज़ाने में पहले की अपेक्षा अधिक धन जमा हो रहा था। वह सोचता जब हर कोई सन्तुष्ट है तो मैं ही क्यों बिना किसी कारण शंका करूं। किन्तु नानक जी द्वारा उदारता पूर्ण दिये जाने वाले दान को कुछ लोग सहन नहीं कर पा रहे थे। वह बार बार नवाब के पास जाकर घाटा पड़ने की सम्भावना व्यक्त करते। एक दिन नवाब ने समस्त हिसाब के निरीक्षण के लिए एक विशेष आयोग भेजा जो कि नये मोदी की नियुक्ति के पश्चात् से लेन-देन का पूरा ब्यौरा तैयार कर लाए। इस काम के लिए मुन्शी जादो राय को विशेष रूप से भेजा गया। जब सभी प्रकार के आय-व्यय का चिठ्ठा तैयार हुआ तो नानक जी के एक सौ सैंतीस रुपये लाभ में निकले जो कि नानक जी ने खज़ाने से प्राप्त करने थे। इस तरह नानक जी का पक्ष भारी रहा तो सभी विरोधी शान्त हो गये तथा नवाब बहुत प्रसन्न हुआ। इस छोटी सी अवधि में इतनी बड़ी प्राप्ति की बात जानकर बहन नानकी तथा भाई साहब जयराम जी की खुशी का ठिकाना न रहा।

जब मोदी खाने से नानक जी घर आए तो बहन नानकी जी ने भाई नानक जी के चरणों को झुक कर स्पर्श कर लिया। यह देखकर नानक जी बोले-दीदी आप ने यह क्या उल्टी गंगा बहा दी। आप मुझसे बड़ी हैं, चरण तो मुझे आप के स्पर्श करने चाहिये

थे। तब नानकी जी ने उत्तर दिया- मेरे प्यारे भइया वास्तव में बात यह है कि मैं तो केवल आयु की दृष्टि से बड़ी हूँ, परन्तु आप मुझ से आध्यात्मिक दुनियां में बहुत बड़े हैं। मैं अल्पज्ञ, कदम-कदम पर विचलित हो जाती हूँ, जब कि मैं जानती हूँ कि आप एक साधारण मानव नहीं ! बल्कि उस प्रभु में अभेद पुरुष हैं। आज भी मैं अपना धैर्य खो बैठी थी कि कहीं हिसाब में त्रुटि न हो। जब मेरा भ्रम टूटा तो मुझे अपनी मूर्खता का अहसास हुआ कि मेरे मन में शंका क्यों कर उत्पंन हुई। वास्तव में मैं अपने हृदय में विश्वास अविश्वास की लड़ाई लड़ रही थी। अत: आज मेरी श्रद्धा की विजय हुई है।

नानक जी– दीदी, यह सब उस प्रभु की माया है। मैं तो केवल उस परमेश्वर का दास हूँ, उसके दर्शाए सत्य के मार्ग पर कर्त्तव्य निभाने की चेष्टा कर रहा हूँ।

यह वार्तालाप अभी चल ही रही थी कि भाई जयराम जी वापिस घर लौट आये।

जयराम– नानकी तुम्हारे पिता जी का पत्र प्राप्त हुआ है। उस में लिखा है कि नानक के ससुराल वाले लड़की के गौने के लिए बहुत दबाव डाल रहे हैं। अत: लड़की को लिवा लाने के लिए शीघ्र कोई तिथि निश्चित करें और हम सब इकट्ठे ही यहां से बटाला के लिए प्रस्थान करेंगे। हम कुछ दिनों में तुम्हारे पास सुलतानपुर आ रहे हैं। यह पत्र सुनकर सभी प्रसन्न हो गये तथा माता पिता सगे-सम्बन्धियों के आने की प्रतीक्षा करने लगे। इस बीच जयराम जी ने नवाब दौलत खान को बता दिया कि नानक जी के गौने के लिए मेरे ससुराल से सभी रिश्ते नाते के लोग मेरे यहाँ इकट्ठे हो रहे हैं, तथा हम लोगों ने दुल्हन को बटाले से विदा करवा कर लाना है इसलिए नानक जी को कुछ दिन की छुट्टी दी जाए जिस से उस का घर गृहस्थी में प्रवेश हो सके।

यह जानकर दौलत खान ने अवकाश के लिए तुरन्त अपनी सहमति दे दी तथा कहा मेरे लिए कोई और सेवा हो तो बताओ, मैं इस शुभ कार्य में कोई सहायता कर सकूँ।

‘गौना’

कुछ दिनों बाद ही तलवण्डी से मेहता कालू जी सभी सगे सम्बन्धियों को लेकर सुलतानपुर पहुँच गये तथा लगे नानक जी को सीख देने- अब तेरी दुल्हन आ जाएगी तो तुझे घर-गृहस्थी चलाने के लिए धन की आवश्यकता रहेगी परन्तु एक तुम हो कि अभी

भी नहीं सुधरे। पहले की भांति भिखारिओं पर धन लुटा देते हो। कुछ संजोकर भी रखा है कि नहीं? जो कि आड़े समय मे काम आ सके।

नानक जी– पिता जी क्या करूं धन तो बहुत प्राप्त होता है मगर मेरे पास टिकता नहीं।

मेहता कालू जी ने बेटी नानकी को सम्बोधन करते हुए कहा – बिटिया अगर तुम थोड़ा सा ध्यान नानक की ओर अधिक दे दो तो यह धन संचित कर सकता है। बस तुम इस से आय-व्यय का हिसाब लिया करो। एक मात्र तुम्हारा अंकुश ही इसे सुधार सकता है।

नानकी जी– पिता जी आप इस बात से सन्तुष्ट क्यों नहीं होते कि भइया काम में लगे हैं तथा अब कमाने भी लगे हैं। धीरे-धीरे वह अपनी घर गृहस्थी भी स्वयं सम्भाल लेंगे। आप निश्चिन्त रहें, भगवान सब ठीक करेगा।

पूरी बारात बटाला नगर के लिए रवाना हो गई और शीघ्र ही दुल्हन को, गौने की परम्परा विधिअनुसार पूर्ण करके, विदा करवा कर तलवण्डी लौट आए। कुछ दिन अपने माता-पिता के पास ठहरकर तथा राय बुलार जी से मिलते हुए नानक जी वापिस सुलतानपुर लौटने लगे, तब पत्नी सुलक्खणी ने विनम्रता पूर्ण विनती की कि उसे भी साथ ले चलें। नानक जी ने उन्हें धीरज बन्धाते हुए कहा, “सुलक्खणी, बात यह है कि मैं अभी तक बहन के यहाँ ही ठहरा हुआ हूँ। मैं जब तक अलग से तेरे रहने के लिए मकान आदि का प्रबन्ध नहीं कर लेता तब तक तुम्हें यहीं रहना होगा, क्योंकि मैं बहन जी के ऊपर कोई बोझ नहीं डालना चाहता।” यह सुन कर सुलक्खणी, जल्दी पास बुलाने का वायदा लेकर, शान्त चित हो गई। जाते समय नानक जी ने अपने प्यारे मित्र मरदाने को साथ चलने के लिए तैयार कर लिया तथा उसे लेकर सुलतानपुर पहुँच गये। अब पुन: मरदाने की संगत मिलने से नानक जी ने, सरकारी काम से निपट कर, कीर्तन का नित्य प्रति अभ्यास प्रारम्भ कर दिया।

भाई भगीरथ

धीरे-धीरे कीर्तन सुनने दूर-दूर से प्रेमी आने लगे। नानक जी ने प्रात: तथा संध्या दोनों समय कीर्तन के लिए निश्चित कर लिया। अपने कार्य से जब वह अवकाश पाते तब मरदाने को साथ लेकर एक विशेष रमणीक स्थल पर जा बिराजते। बस, वही प्रभु स्तुति में शब्द कहते जिसे मरदाना अपनी रबाब की मधुर सुरों में बन्दिश देता। इस प्रकार दोनों मित्र अपना समय परमेश्वर-आराधना में सफल करने लगे। जल्दी ही कीर्तन के रसिक भी आपके पास आप की मण्डली में शामिल होने लगे। एक दिन मल्लसीहां का लंबरदार, भाई भगीरथ भी आपके कीर्तन को सुनने आया। वास्तव में वह दुर्गा का उपासक था। इसलिए वह स्वयं दुर्गा की स्तुति हेतु भेटें गाया करता था। परन्तु उस को अपनी इन भेटों में आत्मिक आनंद नहीं मिल पाता था, क्योंकि वह सभी रचनाएं मनोकल्पित होती थीं। किन्तु नानक जी की वाणी में कोई कल्पना या अनुमान न होकर, उस प्रभु में अभेदता का अनुभव ज्ञान होता था, जो कि मन-मस्तिष्क पर गहरा प्रभाव डालता था तथा मनुष्य को मन्त्रमुग्ध कर उस के हृदय में समा जाता था। भाई मरदाने की रागविद्या ने तो काया ही पलट दी थी। शब्द एवं राग के सुमेल ने श्रोताओं का मन मोह लिया था। जिस से नानक जी के कीर्तन की ख्याति दूर-दूर तक फैलती जा रही थी। यह ख्याति सुनकर ही भाई भगीरथ कुछ सीखने के उद्देश्य को लेकर नानक जी के दर्शनों को आया था। जब उसने नानक जी का रसमय कीर्तन श्रवण किया तो उसे अपनी रचनाएं फीकी लगने लगीं, क्योंकि उसकी भेटों में आत्म ज्ञान का अभाव स्पष्ट दिखाई देता था। अत: वह नानक जी के चरणों में गिर पड़ा तथा नम्रता पूर्वक विनती करने लगा कि आप मुझे अपना शिष्य बना लें, जिस से मैं आप से आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त कर सकूं। आज तक मैं केवल भटकता रहा हूं तथा मुझे आत्मिक आनंद अभी तक प्राप्त नहीं हुआ था जो कि आप की शरण में आने पर, आप की वाणी सुनने पर, प्राप्त हुआ है। यह सुनकर नानक जी ने भाई भगीरथ को उठाकर अपने हृदय से लगा लिया तथा उपदेश दिया कि उसे निराकार ज्योति की ही सदैव स्तुति करनी चाहिये। जो सब को साकार रूप में दृष्टिमान होता है, वह स्वयं जन्म मरण के चक्र में नहीं है। अत: जो स्वयं मोक्ष को प्राप्त नहीं हुआ वह हमें कदाचित मोक्ष नहीं दिलवा सकता।

दूजा काहे सिमरीऐ जंमै ते मरि जाए ।।

एको सिमरइ नानका जो जलि थलि रहिआ समाइ ।।

(जन्म सारवी)

यह सुन कर भाई भगीरथ जी कहने लगे-आज से मैंने आप को अपना आध्यात्मिक गुरू धारण कर लिया है अत: आप भी मुझे अपना शिष्य स्वीकार करें तथा मुझे दीक्षा देकर कृतार्थ करें। तब नानक जी ने उस को अपना प्रथम शिष्य (सिरव) मान कर चरणामृत (चरण-पाहुल) देकर अपना शिष्य बनाया। तब भाई भगीरथ ने कहा, "हे गुरुदेव ! मुझे आप ने सत्यमार्ग के दर्शन कराए हैं, मैं सदैव इस मार्ग पर चलता रहूंगा तथा दूसरों को भी इसी मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित करूंगा।"

इस प्रकार नानक जी को भाई भगीरथ ने सत्य+गुरूजी (गुरुदेव) कह कर सम्बोधन करना प्रारम्भ कर दिया।

इसी बीच गुरुदेव (नानक जी) ने अपने परिवार के लिए अलग से एक मकान का प्रबन्ध कर लिया। अत: उन्होंने वायदे अनुसार तलवण्डी अपने माता पिता जी को पत्र भेजा कि सुलक्खणी को सुलतानपुर (लोधी) पहुँचा जाये। यह पत्र प्राप्त होने पर पिता कालू जी अपनी पत्नी के साथ बहु को छोड़ने के बहाने सुलतानपुर नानक जी का घर देखने पहुँच गये।

पिता कालू जी अपनी प्रवृति के अनुसार नानक जी को धन कमा कर संजोने की प्रेरणा करने लगे। तब नानक जी ने उत्तर दिया-पिता जी उस परमेश्वर ने सब जीवों को रोजी (उपजीविका) देनी ही है, अत: वह मुझे भी दे रहा है। मुझे पूर्ण भरोसा है कि वह सदैव इस तरह ही देता रहेगा। वह तो मात-गर्भ में भी पालण-पोषण करता है। मेरे जन्म से पहले ही उसने मेरे दूध का प्रबन्ध कर दिया था। अब तो उसने मुझे एक स्वस्थ शरीर दिया है। फिर मैं भविष्य की चिंता क्यों करूं। वह तो मेरे सदैव अंग संग है तथा मेरी आवश्यकता को जानता है।

माता-पिता कुछ दिन ठहर कर और नानक जी की गृहस्थी बसा कर अपने घर तलवण्डी लौट आये।

व्यापारी मनसुख

एक दिन एक मध्य-वर्गी गरीब व्यक्ति गुरू जी के सम्मुख उपस्थित हो नम्रता पूर्वक विनती करने लगा कि मेरी बेटी का विवाह निश्चित हुआ है, परन्तु उसके पास बेटी को विदा करने के लिए कुछ भी नहीं। अत: अब मेरी लाज आप के हाथ में है। मैं बहुत दूर से आप की उदारता की चर्चा सुन कर आया हूँ। आशा है आप मुझे निराश नहीं लौटाएंगे। यह सुन कर गुरुजी ने उस को मोदीखाने से हर प्रकार की रसद देकर सहायता कर दी। परन्तु वह कुछ एक ऐसी सामग्री भी चाहता था जो कि लड़की के दहेज में जुटानी थी जो कि किसी बड़े नगर में ही प्राप्त हो सकती थी। अत: गुरुजी ने उसके साथ भाई भगीरथ को लाहौर नगर भेजा। वह दोनों एक बड़े व्यापारी मनसुख के यहाँ पहुँचे। उस से आवश्यकता अनुसार कपड़े गहने खरीद लिये। किन्तु, रात अधिक हो जाने के कारण वहीं मनसुख के यहाँ ठहर गये। संध्या समय भाई भगीरथ जी ने गुरू नानक जी के दर्शाए मार्ग के अनुसार बिना कर्म-काण्ड के प्रभु भजन किया तथा गुरू जी की वाणी गाकर आराधना की। यह सब देखकर मनसुख को बहुत आश्चर्य हुआ तथा वह कोतूहल वश भाई भगीरथ जी से पूछने लगे कि आप ने जो वाणी पढ़ी है वह किस महापुरुष की है? बहुत भाव पूर्ण तथा हृदय स्पर्शी है। इस के उत्तर में भगीरथ जी ने बताया कि यह मेरे गुरुजी की वाणी है, जो कि सुलतानपुर (लोधी) में सरकारी कर्मचारी के रूप में मोदी खाने के अधिकारी हैं तथा उन्हीं ने इस गरीब व्यक्ति की कन्या के विवाह हेतु दहेज की सब सामग्री आप से खरीदवाने भेजा है। यह सब जानकर, भाई मनसुख ने अपने हृदय में बसी शंका बताते हुए कहा, "मैंने आज तक जो जाना तथा देखा है आप उस सब के विपरीत बता रहे हैं। मेरे अनुभव तो बहुत कड़वे हैं। क्योंकि मैंने आज तक जितने भी व्यक्ति धर्मकर्म करने वाले देखे हैं उन में से कोई भी अपनी उपजीविका स्वयं कमाता नहीं देखा बल्कि वह कर्म-काण्डी अधिक तथा धर्मी कम होते हैं। यदि इस प्रकार कहा जाए कि वह केवल, बिना पुरुषार्थ के, लोगों को भ्रम में डालकर धन संचित करने का कार्य ही करते हैं तो यह बात अतिश्योक्ति नहीं होगी।"

तब भाई भगीरथ जी ने कहा, "आप ठीक कह रहे हैं परन्तु इस मानव समाज में जहाँ झूठ का प्रसार है वहाँ कहीं न कहीं अपवाद स्वरूप प्रकृति ने सत्य को भी बनाए रखा है। हाथ कंगन को आरसी क्या, आप प्रत्यक्ष दर्शन कर के देखें। पहली बार में भी मन में आप की तरह शंकाए लेकर ही गया था। वास्तव में, मैं मल्लसीहां गांव का लम्बरदार हूँ। जब मैं सत्य की खोज में घर से निकला तो नानक जी के कीर्तन की चर्चा सुनी। तब मन में एक सांसारिक व्यक्ति के लिए भ्रम अवश्य हुआ था। किन्तु गुरुदेव का पहला सिद्धांत है कि स्वयं परीश्रम करें। जिस से आत्मा पवित्र होती है।" यह विचार जानकर भाई मनसुख जी कहने लगे कि "मैं भी आप के साथ चलूँगा, क्योंकि आपने जो कुछ बताया है वह मुझे बहुत प्रभावित कर रहा है।" अत: भाई मनसुख जी गुरुदेव के दर्शनों के लिए भाई भगीरथ के साथ सुलतानपुर (लोधी) पहुँच गये। रास्ते में उन के हृदय में एक कल्पना उत्पन्न हुई कि मैं लाहौर से नानक जी के दर्शनों को चला हूँ यदि वह सर्वज्ञ हैं तो मेरा स्वागत करने के लिए मुझे 'अहोभाग्य' कहें तभी उन्हें मैं आध्यात्मिक गुरू मानूँगा।

जब यह तीनों व्यक्ति नानक जी के निकट पहुँचे तब वह खाद्यान्न तुलवाने में व्यस्त थे। परन्तु उन्होंने तुरन्त सभी कुछ छोड़कर आगे बढ़कर स्वागत करते हुए कहा–आओ भाई मनसुख जी। यह सुनकर भाई मनसुख अति प्रसन्न हुआ तथा वह चरणों को स्पर्श करने के लिए झुके किन्तु गुरू जी ने उसे हृदय से लगा कर कहा, "परमार्थ के रास्ते पर चलते समय मन में शंका नहीं रखते।" यह सुन कर उसके नेत्रों से प्रेममय जल छलक आया। इस प्रकार यह गुरु–शिष्य का प्रथम मिलन बहुत भावुकता में हुआ।

उन दिनों गुरू जी की दिनचर्या इस प्रकार थी– प्रात:(अमृत बेला) में वेईं नदी में स्नान कर सभी संगीयों को साथ लेकर कीर्तन गायन करना, जिसे भाई मरदाना रबाब पर रागों की मधुर धुनों में बांधता। इन संगियों में अब नगर के प्रमुख लोग भी थे। जैसे, भाई पेड़ामोखा जी इत्यादि। धीरे–धीरे परमार्थ के अभिलाषी, गुरू जी के पास संध्या के समय भी इकट्ठे होने लगे, जिस से दोनों समय सत्संग होने लगा। प्रभु के गुणों के व्याख्यान सुनने दूर–दूर से संगत आने लगी। इस संगत रूपी वैकुण्ठ में भाई मनसुख जी भी आनंदित होने लगे तथा गुरुदेव के उपदेशों का अध्ययन करने लगे। कुछ दिन

आध्यात्मिक शिक्षा प्राप्त कर भाई मनसुख घर को लौटने की आज्ञा मांगने लगे। तब गुरू जी ने उसे तीन सूत्री आदेश दिया-*कृत करो, वण्ड के छको तथा नाम जपो।* (पुरुषार्थ कर के जीविका कमाओ), (अर्जित धन सब मिलकर प्रयोग में लाओ) तथा (प्रभु चिन्तन-मनन में भी हृदय जोड़ो)। तथा कहा बस यही सिद्धांत तुम्हें भवसागर से पार कर, तुम्हारा कल्याण करेंगे। इसी पर दृढता से जीवन यापन करो।

दम्पति में मनमुटाव का निवारण

गुरू जी के पास अब नये-नये जिज्ञासु आने लगे तथा कुछ दिन ठहर कर आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त करके लौट जाते। इस प्रकार जो भी आता उसे गुरू जी अपने घर पर ले जाते तथा भोजन आदि की सेवा स्वयं निभाते, जिससे उन की अर्द्धांगिनी माता सुलक्खणी जी को भी सेवा का शुभ अवसर प्राप्त होता रहता। उधर तलवण्डी नगर से भी कुछ-एक मिलने-जुलने वाले पुराने मित्र रोजगार की खोज में नानक जी से मिलने आते रहते थे। नानक जी यथाशक्ति उन की सहायता करते तथा उन को भी नवाब दौलत खान से कहकर कोई काम दिलवा देते। इस प्रकार सभी प्रसन्न होने लगे। परन्तु सुलक्खणी जी के सामने एक समस्या बनी रहती कि अतिथि अनियमित रूप से आते रहते कभी-कभी तो दो-चार या उससे कहीं अधिक तथा कभी-कभी बिल्कुल नहीं। इस लिए भोजन की व्यवस्था कितनी हो? यह बात उन के लिए एक पहेली सी बनी रहती। एक दिन उन्होंने इस विषय को लेकर नानक जी से टिप्पणी की कि आप मेरे लिए भी कुछ सोच-विचार करें। समय रहते मुझे अतिथियों के बारे में अगयात करायें ताकि भोजन की व्यवस्था हो सके। किन्तु नानक जी कहने लगे ऐसा सम्भव नहीं। अत: इस बात को लेकर दम्पति में मन-मुटाव हो गया।

सुलक्खणी का तर्क ठीक था। इस लिए गुरू जी ने इस समस्या के समाधान हेतु निर्णय लिया और एक धर्मशाला बनाने की योजना बनाई। जिसे साकार रूप देने के लिए गुरूजी कार्यरत हो गये तथा उन्होंने सभी सत्संगियों को भी प्रेरणा की कि वह पहले इसी मूलभूत कार्य में यथाशक्ति सहयोग दें, जिस से लक्ष्य की प्राप्ति के लिए साधन जुटाए जा सकें।

गुरू जी की प्रेरणा पाकर सत्संगियों ने अल्प अवधि में एक छोटा सा भवन, धर्मशाला के रूप में तैयार कर लिया जो कि समस्त संगत का अपना निजी स्थान बन गया। अब इस में गुरू जी दोनों समय व्याख्यान करते, जिस में सभी कर्म-काण्डों को छोड़कर एक निराकार ज्योति की आराधना करने की प्रेरणा करते तथा मूर्ति पूजा का खण्डन कर रोम-रोम में रमे राम की उपासना पर बल देते। यह सरल नियमावली जन साधारण के मन को बहुत प्रभावित करती एवं वे पाखण्ड के झंझटों से छुटकारा पाकर वास्तविक प्रभु स्मरण का आनंद प्राप्त करते। इस प्रकार समय व्यतीत होता गया। नानक जी अपने सरकारी कार्य को निपटा कर सत्संग में लीन रहने लगे। कई बार तो घर परिवार के कार्यो में ध्यान भी न देते जिस से सुलक्खणी जी कुछ खिन्न रहने लगीं, क्योंकि नानक देव जी उन को समय नहीं दे पाते थे। अपने लिए नानक जी की अरुचि देखकर सुलक्खणी जी का मन भर आता।

एक दिन उनकी भेंट अपनी ननद नानकी जी से हुई तो उन के पूछने पर कि तुम इतनी उदास क्यों दिखाई पड़ रही हो, तो सुलक्खणी जी ने अपने पति गुरुदेव जी के रूठे होने तथा उन में कोई रुचि न लेने की बात बतायी।

सुलक्खणी– दीदी (बेबेजी) आप के भइया समस्त नारी समाज को पुरुषों के बराबर का अधिकारी मानते हैं परन्तु मुझे तो उन्होंने नोंक-झोंक का भी अधिकार नहीं दिया। जरा सी बात पर ऐसे रूठे हैं कि क्या बताऊं. . . . .

दीदी (नानकी जी)– ऐसी भी क्या बात हो गई तुम दोनों में, जो इतना बड़ा मतभेद उत्पन्न हो गया है?

सुलक्खणी– यदि बात को गंभीरता से देखो तो काफी मन-मुटाव वाली है; हंसी में उड़ा दो तो कुछ भी नहीं।

नानकी जी– मेरी प्यारी भाभी मुझसे पहेलियां ही बुझाए जाओगी या कुछ साफ शब्दों में भी कहोगी।

सुलक्खणी– जैसा कि मैं पहले आप को बता चुकी हूँ कि एक दिन नोंक-झोंक हुई थी बस उस के बाद ऐसे रूठे कि अब मुझ में कोई रुचि ही नहीं रखते। यहाँ तक कि

कई-कई दिन घर पर भी नहीं लौटते। आप समझ सकती हैं कि मेरा यहाँ और कौन है? जिस के सहारे मैं सारा दिन और फिर रात अकेली रहूँ।

नानकी जी– भाभी जी, आपने यह बात मुझे पहले क्यों नहीं बताई मैं आप को इसका उपाय बताती। खैर. . . . अभी भी देर नहीं हुई है। वास्तव में बात तो जीवन के गहरे रहस्यों को समझने की है। जब जीवन की धारा में रुकावटें उठ खड़ी हों, तो अपने से ज्यादा अनुभवियों से परामर्श कर लेना चाहिये।

सुलक्खणी– दीदी मुझे कोई अच्छी सी युक्ति बताओ। जिस से मैं अपने पति पर शासन कर सकूँ।

नानकी जी– यहाँ पर तुम फिर भूल में हो. . . . . . तुम्हारे मन में गलत धारणा बन गई है कि भइया नानक से मन मानी मनवाओं तथा उन पर तुम्हारा अधिकार चले। इस के विपरीत यदि तुम यह सोचती कि मैं वह सब साधन कैसे जुटाऊं जिससे उनकी प्रशंसा प्राप्त हो, तो तुम्हारी कठिनाइयां समाप्त हो जातीं।

सुलक्खणी– हां-हां, बस मैं यही सब कहना चाहती थी, कि है कोई ऐसी युक्ति जिस से उन पर मेरा पूरा अधिकार हो जाए।

नानकी जी– असम्भव तो कुछ भी नहीं है। परन्तु, इस कार्य के लिए तुम्हारे विचारों के बिलकुल विपरीत -त्याग, सेवा भाव तथा भक्ति की आवश्यकता होती है, जिस का तुम में अभाव है।

सुलक्खणी– मैं तो कुछ भी करने को तैयार हूँ।

नानकी जी– तो सुनो, प्रकृति ने नारी में अनेकों अदृश्य शक्तियां भरी हैं। जिन का उसे केवल सदुपयोग करना ही सीखना है। यदि वह इस रहस्य को जान जाती है तो सब असम्भव सम्भव हो जाता है।

सुलक्खणी– मुझे विस्तार पूर्वक समझाएं न।

नानकी जी– नारी के पास दो प्रमुख गुण हैं। नम्रता तथा मीठी वाणी। इन दोनों को अपना शस्त्र बनाओ। इन का पति पर खुलकर प्रयोग करो। इन के वार से कोई नहीं बच सकता, क्योंकि इनका निशाना अचूक होता है। यदि फिर भी कोई-कसर दिखवाई दे तो दो अस्त्र तुम्हारे पास और भी है, उनका प्रयोग भी लगे हाथों किया करो।

सुलक्खणी– वह क्या है?

नानकी जी– वह है सेवा तथा त्याग। यदि तुम चाहती हो कि तुम्हारे पति तुम्हारे हो जाएं तो तुम्हें इन सारे गुणों का एक साथ प्रयोग करना चाहिये।

सुलक्खणी– वह तो ठीक है परन्तु मैं आपसे इन गुणों का प्रयोग सीखना चाहती हूँ।

नानकी जी– यदि तुम चाहती हो कि भइया नानक तुम्हें प्यार करे तथा तुम्हारे में रुचि लें तो सुनो-उन के हर उस कार्य में रुचि लो जो वे करते हैं तथा उन के कार्य में उन का साथ दो। दूसरा उनके स्वभाव के अनुसार अपने को ढालो या उन के विचारों में अपनी सहमति दो। वास्तव में विचारों का सुमेल ही प्रगाढ़ प्यार की आधार शिला है। जैसे कि मान लो तुम्हारे पति किसी विशेष प्रकार का व्यापार करते हैं तो तुम्हें उन के व्यापार की बातों में रुचि लेनी चाहिये। जैसे, हानि लाभ तथा उसमें आड़े आने वाली कठिनाइयां आदि। यदि वह अपने अवकाश के समय में मन बहलाने के लिए कोई कार्य करते हैं तो उस में भी तुम्हें रुचि लेनी चाहिये। जैसे वह अपना अवकाश का समय प्रभु स्तुति में व्यतीत करते हैं या कीतन करते हैं अथवा सत संगत करते हैं, तो तुम्हें भी इन कार्यो में रुचि लेनी चाहिये अथवा भाग लेना चाहिये, जिस से तुम दोनों में निकटता आयेगी तथा परस्पर प्यार बढ़ेगा।

सुलक्खणी– ठीक है, यह आप ने मुझे बहुत काम की बात बताई है। आज से ही मैं ऐसा सब कुछ किया करूंगी। पहले मुझे यह सब करने का ध्यान ही नहीं आया। वास्तव में मुझे इन बातों का ज्ञान ही नहीं था। इस के विपरीत मैं बिना उनकी मजबूरी जाने उन से शिकायतें किया करती थी।

नानकी जी– सच्चे प्यार में गिले शिकवों का कोई स्थान नहीं होता तथा एक दूसरे पर पूर्ण विश्वास रखना होता है।

सुलक्खणी– मुझे उन का विश्वास पाने के लिए क्या करना चाहिये?

नानकी जी– आत्म समर्पण, त्याग तथा सेवा करनी चाहिये।

सुलक्खणी– विस्तार पूर्वक समझाएं न दीदी।

नानकी जी– आत्म समर्पण का सीधा सा अर्थ है सभी कुछ पति को समर्पित कर देना पति–पत्नी में सभी प्रकार की दूरियां समाप्त हो जाएं तथा उन में कोई भेद न रहे। भाव शरीर रूप में दो दिखाई दें किन्तु आत्मा एक हो जाए। अर्थात् जो विचार पति का हो वही विचार पत्नी का भी हो। वास्तव में घनिष्ट मित्रता होती ही विचारों की समानता से है। यदि विचारों में भिन्नता होगी तो वहाँ मित्रता के स्थान पर टकराव होगा, प्यार नहीं। दूसरा है त्याग; प्यार कुछ त्याग भी मांगता है। अर्थात् अपने सुखों का त्याग कर दूसरों के लिए कुछ करना, जैसे–अपनी नींद, सुख तथा आराम का त्याग कर पति के आने की प्रतीक्षा करना तथा उन के आने पर उन का स्वागत मुस्कराते हुए करना। उन को प्यार भरे हृदय से अपने हाथों से भोजन कराना। उन से सब प्रकार की कुशल मंगल पूछना। उन की कठिनाइयों में, उन की सहायता करने के लिए विचारों का आदान–प्रदान करना इत्यादि। सेवा में एक ही बात का ध्यान होना चाहिये कि उन की जो आवश्यकता है, उसे बिना मांगे, समय से पहले ही पूरी करनी चाहिये ताकि उन को मांगने की आवश्यकता ही ना पड़े।

सुलक्खणी– दीदी–यह सब तो ठीक है। आप ने मुझे जैसा समझाया मैं वैसा ही किया करूंगी परन्तु यह सब कुछ नारी को ही पुरुषों के लिए क्यों करना चाहिये?

नानकी जी– आप का प्रश्न अति उत्तम है परन्तु जब आप इसमें छिपे रहस्य को जान जाएंगी तो फिर आपको अपने इस प्रश्न में अज्ञानता प्रतीत होगी।

सुलक्खणी– मैं बस वही सब कुछ जानना चाहती हूँ कि मैं कहाँ भूल कर रही हूँ। यदि मुझे इस बात का ज्ञान हो जाए तो मैं फिर कभी भी अपने जीवन में जानबूझ कर गलती नहीं करूंगी।

नानकी जी– प्रकृति एक महत्वपूर्ण रहस्य अपने में छिपाए बैठी है। उसने नारी को शारीरिक दृष्टि से पुरुषों से कुछ कमज़ोर, कोमल तथा मां बनने का स्वरूप प्रदान किया है। इस लिए समाज ने उस को द्वितीय (जूनियर) स्थान ही प्रदान किया है, जब कि प्रथम स्थान पुरुष को ही है। किन्तु नैतिकता की दृष्टि से दोनों बराबर होने चाहिए। इस का सीधा सा अर्थ यह हुआ कि नारी को पुरुषों से मुकाबले-बाजी (होड़) नही करनी, बल्कि अपने लिए एक आदरणीय स्थान प्राप्त करना है, जिस से उनके साथ अभद्र व्यवहार न हो, यहाँ पर बात समझने की है। अगर हमारे समाज ने नारी को एक समान अधिकार दिये हैं तो इस से प्रकृति के नियम तो बदल नहीं जाते। यदि प्रकृति के साथ हम समझौता नहीं करते तो बहुत सी समस्याएँ उत्पन्न होंगी। जिस से घर परिवार टूट जाएंगे क्योंकि, उस में प्रमुखता किस को दी जाए? परिवार का मुखिया कौन हो? पुरुष अथवा स्त्री। यदि पुरुष को प्रधानता दी जाती है तो समाज में बहुत सी जटिल समस्याएं स्वयं ही सुलझ जाती हैं। नहीं तो बहुत सी नई समस्याएं उत्पन्न हो जाएंगी। क्योंकि नारी कमज़ोर होने के कारण उनका सामना करने में असमर्थ रहती है। **सुलक्खणी**-फिर तो हमारा समाज पुरुष प्रधान ही हुआ। केवल सैद्धांन्तिक बराबरी देने से क्या लाभ है?

नानकी जी-यदि सैद्धांन्तिक बराबरी भी मिल जाए तो यह क्या कम है? वास्तव में व्यवहारिक रूप में यह सब सम्भव नहीं हो पाता क्योंकि नारी ने उस के लिए अपने मन को तैयार नहीं किया हुआ होता। प्रकृति ने उसे शारीरिक दृष्टि से कमज़ोर तथा कोमल बनाया हुआ है। **सुलक्खणी**-दीदी, आप की बात में कुछ तथ्य है परन्तु नारी ही क्यों पुरुष के लिए पति भक्ति करे? क्या इस के बदले में पुरुषों को भी पत्नी भक्त होना चाहिए?

नानकी जी– इस बात के पीछे भी एक रहस्य छिपा हुआ है जो कि बिलकुल हमारे समाज के भले के लिए है। इस समाज में कठिनाइयां, बुराइयां उत्पन्न न हों इस लिए पुरुषों को केवल अपने माता-पिता की भक्ति ही करनी है जब कि नारी को पति भक्ति। इस से समाजिक संतुलन बना रहता है। क्योंकि नारी ने अपने माता-पिता को त्याग कर नये घर में प्रवेश करना है जिस से उसे अपने पिछले संसार का मोह त्यागना ही उचित है। तात्पर्य यह है कि यदि ग्रहस्थी में पति-पत्नी दोनों अपना-अपना कर्तव्य निभाएं तो कहीं भी आपसी सम्बन्धों में दरार नहीं आयेगी तथा समाज उन्नति के पथ पर

आगे बढ़ेगा। किन्तु अज्ञानतावश हम अपने कर्तव्य को भूलकर दूसरे को दोषी ठहराते हैं। उदाहरण के लिए- मैं केवल अपने पति के लिए कर्तव्य करूंगी। मेरे माता-पिता के लिए मेरा भाई नानक उत्तरदायित्वों को निभाएगा, क्योंकि उनके लिए अब मेरा उत्तरदायित्व नहीं है। यदि ऐसा कुछ है तो वह मेरे पति द्वारा सास-ससुर के लिए बनता है। क्योंकि वह अब मेरे पति के भी माता-पिता हैं। ठीक इसी प्रकार अब मेरा पति तथा सास-ससुर की सेवा में ही कल्याण है।

सुलक्खणी – अब पूरी बात मेरी समझ में आ गई है। मैं ही भूल में थी। वास्तव में अज्ञानता की दीवार ही हमारे बीच में खड़ी है। जिसे मैं आज ही तोड़ डालूंगी। परन्तु आप भी मेरी सहायता करें। अपने भइया से कहें कि मैं प्रायश्चित करती हूँ। **नानकी** - ठीक है। मैं सब सम्भाल लूंगी। परन्तु तुम्हें भी वैसे ही आचरण करना होगा - जैसा कि मैंने तुम्हें समझाया है।

आज नानकी जी गम्भीर मुद्रा में बैठी विचार मग्न हैं तभी उनकी घरेलू दासी 'तुलसां' आकर उनसे कुशल क्षेम पूछती है तथा गम्भीरता का कारण जानना चाहती है? **नानकी जी** - तुलसां तुम अभी मोदी खाने जाओ और मेरा संदेश मेरे भइया को देकर आओ कि तुम्हारी बहन तुम्हें याद कर रहीं हैं। **तुलसां जी**, सत्य बचन। तभी वह मोदीखाने जा कर नानक जी को दीदी का संदेश देती है कि आप को आज आप की दीदी नानकी जी ने याद किया है। यह संदेश प्राप्त कर नानक जी संध्या समय बहन जी के घर पर पहुँच जाते हैं। तथा नम्रतापूर्वक विनती करते हैं कि आपने कैसे याद किया? **नानकी जी** - भईया, बहुत दिन हुए आप मिले नहीं, बस यूँ ही मिलने को मन कर रहा था। आज कल कहाँ व्यस्त रहते हो जो दिखाई ही नहीं पड़ते? **नानकी जी** - दीदी, ऐसी तो कोई बात नहीं। मेरे पास आप के लिए समय ही समय है। बस मैं तो सतसंगियों में रहता हूँ। **नानकी जी** - वह सब तो ठीक है परन्तु कुछ समय घर-गृहस्थी में भी दिया करो। वह भी तो उस प्रभु के बनाये रंग हैं। उन का भी आप पर कुछ अधिकार है। **नानक देव जी** - आप ठीक कहती हैं। परन्तु घर पर मेरा मन नहीं रमता। **नानकी जी** - बात मन रमने की नहीं। बात सैद्धांतिक है। हर गृहस्थी को समय अनुसार घर पर ही जाना चाहिए। वैसे भी मेरी बडी इच्छा होती हैं तेरे बच्चे हों मैं उन्हें लोरियां देकर खिलाऊँ। मेरी रीझ भगवान जाने कब पूरी होगी ! **नानक जी** - दीदी, आप चिन्ता न करे जैसा आप कहेंगी वैसा ही होगा। मैं आप की आज्ञा का उल्लंघन कभी भी नही कर सकता।

श्री चन्द जी का जन्म तथा मोदीखाने की जांच

समय व्यतीत हुआ। नानक देव जी के यहाँ एक पुत्र ने जन्म लिया जिस का नाम उन्होंने श्री चन्द रखा। तब आप की आयु 25 वर्ष थी। "नानक जी के यहाँ पुत्र ने जन्म लिया है", यह समाचार पूरे सुलतानपुर में फैल गया। सभी लोग दीदी (बेबे) नानकी जी को बधाइयाँ देने आने लगे। भिखारियों का तो जमघट ही नानक जी के यहाँ लगा रहता। सुलक्खणी जी ने भी सभी को उपहार बांटे, जिस से दूर-दूर चर्चा होने लगी। यह देख कर कुछ ईर्ष्यालु लोग फिर से दौलत खान को बार-बार कहने लगे, "तुम्हारा मोदी बहुत धन व्यर्थ में नष्ट कर रहा हैं अत: आप तुरन्त मोदी खाने का हिसाब करवाओ।" क्योंकि हिसाब हुए लगभग दो वर्ष हो चुके थे, नवाब भी विचार में पड़ गया कि बात तो ठीक ही है, अत: एक विशेष निरीक्षक दल हिसाब के लिए भेज ही देता हूँ जिस से सब भ्रम दूर हो जाएंगे। कुछ दिनों में निरीक्षण दल ने सभी प्रकार का हिसाब देख भाल लिया तथा अन्तिम चिटठा (रिपोर्ट) तैयार कर लिया, जिस के अनुसार नानक जी के 321 रुपये के लगभग सरकारी खज़ाने में अधिक बनते थे। जब नानक जी का फिर से पक्ष भारी रहा तो चुगल खोर चुप्पी साधे खिसक गये। अब नानक जी का सरकारी दरबार में भी मान-सम्मान बढ़ गया। नानक जी मोदी खाना चलाने लगे। इस अवधि में गुरू जी द्वारा तैयार करवाई जा रही धर्मशाला लगभग तैयार हो गई थी। अब इसी में दोनों समय कीर्तन के अतिरिक्त प्रभु के गुणों की व्याख्या करते, जिस के अनुसार सभी को कर्म-काण्डों से छुटकारा प्राप्त कर निराकार ज्योति की आराधना करने की प्रेरणा करते तथा मूर्ति-पूजा का खण्डन कर रोम-रोम में रमे राम की उपासना पर बल देते। यह सरल नियमावली जन साधारण के मन को बहुत प्रभावित करती एवं वह फोकट के झंझटों से छुटकारा पा कर वास्तविक श्रुति-स्मरण का आनंद प्राप्त करते। जब गुरू देव जी ने योग की जटिल क्रियाओं से मुक्त कर सहज से जीवन में सभी उपलब्धियों के विषय में ज्ञान दिया तो दूर-दूर से जिज्ञासु आने लगे। सभी के मन की शंकाएं निवारण कर गुरू जी उन को बताते : प्रभु कभी भी किसी विशेष वेष-भूषा (भेख-आडम्बर) से खुश नहीं होता। वह तो ह्रदय के सत्य की भाषा ही जानता है तथा वह न ही कहीं जंगलों पहाड़ों या दुर्गम घाटियों में विराज मान है, वह तो अन्त:करण में है। प्राणी मात्र

को तो उस के अनुभव रूपी दर्शनों के लिए हृदय की मैल रूपी दीवार ही हटानी है। यह सब ज्ञान प्राप्त करने पर कुछ श्रद्धालु गुरू जी से अनुरोध करते कि वह कभी उनके गाँव, नगरों में भी पधारें जिस से अन्य जिज्ञासु भी लाभ उठा सकें जो कि यहाँ आप तक पहुँचने में असमर्थ हैं। यह सुन गुरू जी इस विषय पर गम्भीरता से विचार करते, किन्तु महसूस करते कि अभी यह सब सम्भव नहीं। क्योंकि उन्हों ने स्वयं को सरकारी कार्य रूपी बन्धन डाला हुआ है, जिस से इतनी सहजता से छुटकारा प्राप्त नहीं हो सकता। इन निमन्त्रणों के उत्तर में गुरू जी कह देते 'करतार भली करेगा', समय आयेगा जब इन बन्धनों को तोड़कर कुछ समय के लिए गृहस्थ से मुक्ति प्राप्त कर दूर-दूर उस प्रभु का संदेश देने को प्रस्थान करना होगा। इस प्रकार दोनों समय नित्यकर्म की भाँति धर्मशाला में संगत एकत्रित होती जो कि गुरू जी के उपदेश श्रवण कर के अपने जीवन को सफल करते। गुरुदेव सदैव नाम स्मरण पर ही बल देते तथा कहते :

गुरमुखि रोम रोम हरि धिआवै ।।

नानक गुरमुखि साचि समावै ।।

राग आसा, पृष्ठ 941

भावार्थ - हे मनुष्य ! तुझे किसी कर्म-काण्ड की आवश्यकता नहीं। तुम तो उस प्रभु को प्रत्येक क्षण भज सकते हो, वह तो हर समय तुम्हारे अंग-संग है। केवल उस के अस्तित्व की याद ही सिमरन है तथा दीन-दुखियों की सेवा ही उस की सेवा है। हमारा अहंकार ही हमारा बन्धन है। हमें उस प्रभु की लीला में ही हर समय प्रसन्नचित रहना चाहिए तथा उस में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए।

लक्खमी दास जी का जन्म तथा घर त्यागने की योजना

गुरू नानक देव जी के यहाँ दूसरे पुत्र का जन्म हुआ तो उस का नाम उन्होंनें लक्खमी दास रखा। अब वह मन ही मन एक विशेष योजना बनाने में लीन हो गये। वह विचारने लगे कि अब वह समय आ गया है जब मैं लम्बे समय के लिए उस प्रभु का संदेश जन-जन तक पहुँचाने के लिए भ्रमण करने के लिए जा सकता हूँ। क्योंकि मेरे गृहस्थ

आश्रम के सब कार्य लगभग पूर्ण हो चुके हैं तथा मैंने अपनी गृहस्थी की नींव दृढ़ कर ली है। अत: आप इस योजना को कार्य-रूप देने की युक्ति पर विचार करने लगे क्योंकि घर त्यागते समय बहुत सी कठिनाइयां सामने खड़ी दिखाई दे रही थीं। इस लिए उन्होंने नवाब से कह कर मोदीखाने की विशेष जांच करवाने का आदेश करवा लिया क्योंकि इस से पहली विशेष जांच को लगभग तीन वर्ष होने वाले थे। वास्तव में आप जानते थे कि मैंने बिना हिसाब एवं बिना किसी कारण पद से त्याग पत्र दिया तो लोक निन्दा होगी कि कहीं घोटाले के कारण मोदी ने संन्यास तो नहीं ले लिया। अत: जांच हुई तब 760 रुपये लाभ के रूप में आप के पक्ष में निकले। अब दूसरी समस्या सामने यह थी कि रिश्तेदारों के मन से मोह-जाल कैसे तोड़ा जाए तथा वह आत्म-निर्भर होकर कैसे जीवन जीयें एवं मन को शान्त कर उस प्रभु के आदेश को धारण करें। समाज के कल्याण हेतु प्रचार दौरे करना। इस कार्य के लिए उपयुक्त वातावरण तैयार कर के अनिश्चित समय के लिए घर परिवार से खुशी-खुशी विदाई लेना। जो कि सहज में सम्भव नही मालूम होती थीं। अत: कोई नाटकीय ढंग प्रयोग में लाना ही इस समस्या का समाधान था। जिस से परिवार को किसी अक्स्मात् घटना से आघात हो तथा वह सब प्रभु लीला जान कर सन्तोष में रहें। इस कार्य के लिए आप ने दृढ़ संकल्प लेकर पहले से निर्धारित योजना अनुसार स्वयं का लापता होने का समाचार फैलाने की युक्ति प्रयोग में लाई। जैसे ही मोदी खाने की जांच के परिणाम की घोषणा हुई तभी आप ने आपना त्याग-पत्र नवाब को भेज दिया तथा कहा मैं अब उस प्रभु की ही नौकरी करूँगा।

भविष्य का कार्यक्रम

अगली प्रभात: को आप जब स्नान करने वेईं नदी पर निजी सेवक के साथ पहुँचे तो आपने कपड़े सेवक को देकर नदी में प्रतिदिन की तरह गोता लगाया किन्तु लौट कर नहीं निकले सेवक ने बहुत प्रतीक्षा की परन्तु गुरुदेव तो लौट कर आये ही नहीं अत: उसने इस घटना की सूचना गुरू परिवार को जाकर दे दी। जैसे ही यह सूचना फैली तो समस्त सुल्तानपुर की संगत तथा लोग नदी पर उमड़ पड़े। उस दिन नदी में बाढ़ के कारण कुछ पानी अधिक था परन्तु इतना भी नहीं था जिस में व्यक्ति बह जाए। फिर भी

दूर-दूर तक नदी के दोनों छोरों पर देख भाल हुई। यह समाचार जब नवाब को मिला तो उसने गोता खोर मंगवा कर जाल लगवाए परन्तु नानक जी का कहीं कोई पता न चला। अन्त में सब हार कर वापस घर लौट आए। अब ईर्ष्यालु लोगों ने किवदन्तियां फैलानी प्रारम्भ कर दीं कि शायद नानक जी को मोदीखाने में बहुत बड़ा घाटा हुआ है अत: उन्होंने आत्म-हत्या कर ली है। कोई कहता बाढ में बह गये हैं। कोई कहता किसी घड़ियाल ने निगल लिया होगा। इस प्रकार समस्त सुल्तान पुर नगर में शोक छा गया। इस दुर्घटना की सूचना सुलक्खणी जी ने तुरन्त अपने मायके बटाला नगर भेजी परन्तु नानकी जी को इस पर विश्वास ही नहीं था। उनका कहना था कि उनका भाई कभी डूब ही नहीं सकता। अत: उन्होंने अपने पिता कालू जी को यह सूचना नहीं भेजी। जब नानक जी का कहीं अता-पता न मिला तो दूसरे दिन लोग शोक प्रकट करने परिवार के पास आये किन्तु दीदी नानकी जी बिल्कुल शान्त चित-अडोल थीं उन्होंने किसी को भी विलाप नहीं करने दिया। उनका कहना था कि मेरा भाई कभी डूब नहीं सकता वह तो समस्त मानव कल्याण के लिए आया है। वह स्वयं कैसे डूब सकता है? इस घटना में भी उन का अवश्य कोई रहस्य छिपा होगा। दूसरा दिन भी व्यतीत हो गया किन्तु नानक जी का कोई पता नहीं चला। तीसरे दिन अकस्मात नानक देव जी सन्यासी वेष में 'न कोई हिन्दू न कोई मुसलमान' का नारा लगाते हुए एक वीरान स्थान पर प्रकट हो गये। यह समाचार जंगल की आग की तरह चारों तरफ फैल गया, सभी नर-नारी गुरुदेव के दर्शनों को आये तब उन की स्वांगियों जैसी वेष-भूषा देखकर सभी लोग प्रश्न सूचक मुद्रा से नानक जी को देखने लगे कि यह सब क्या है? किन्तु नानक जी ने किसी के भी प्रश्न का उत्तर नहीं दिया। जब दौलत खान को उन के जीवित होने का समाचार मिला तो उसने अपने कर्मचारी भेज कर नानक जी को बुला भेजा परन्तु नानक जी ने आने से इन्कार कर दिया तथा कहा कि मैंने नवाब की नौकरी छोड़ दी है अत: मैं अब उस के हुक्म का बंधा हुआ नही हूँ इस लिए मैं नहीं आता। यह सब जानकर नवाब दौलत खान ने नानक जी के पास विनम्रता पूर्वक प्रार्थना कर भेजी की आप अपने खुदा के लिए मुझे दीदार देने तशरीफ लायें। यह संदेश पाकर नानक जी नवाब के दरबार में पहुँचे किन्तु झुक कर सलाम नहीं किया। इस पर नवाब स्वयं उठकर नानक जी से दस्त-पन्जा ले (हाथ मिलाकर) खुशामदीद कहने लगा। यह सब देखकर वहाँ पर पहले

से बैठे काज़ी तथा अन्य अधिकारीगण कुछ परेशान हो उठे तथा उन्होंने नवाब को उकसाना शुरू किया कि नानक गुस्ताखी कर रहा है। वह आप का मुलाज़िम है फिर भी सलाम नहीं करता और ऐसे ही कह रहा हैं कि *'न कोई हिन्दू न कोई मुसलमान'* यह सुन कर नवाब ने नानक जी पर प्रश्न किया कि यदि तुम्हारी दृष्टि में हिन्दू-मुस्लिम का भेद-भाव नहीं रहा तो तुम कौन हो? तब नानक जी ने कहा मैं तो उस प्रभु का एक इन्सान मात्र हूँ। तब काज़ी कहने लगा कि ठीक ऐसा ही है तो तुम हमारे साथ मस्जिद में नमाज पढ़ने चलो, क्योंकि अब जुम्मे की पेशी की नमाज़ का समय हो रहा है। नानक जी ने यह प्रस्ताव तुरन्त स्वीकार कर लिया तथा उन लोगों के साथ मस्जिद में पहुँच गये।

मस्जिद में नमाज़

जब सब लोग नमाज़ अदा करने लगे तो गुरुदेव केवल खड़े रहे तथा पास में नमाज़ अदा कर रहे नवाब एवं काज़ी इत्यादि लोगों को ध्यान पूर्वक देखने लगे। कुछ ही देरी में नानक जी ने सब भाँप लिया कि नमाज़ियों का ध्यान कहीं और है, अत: वह हंस पड़े जब नमाज़ समाप्त हुई तो नवाब ने नानक जी पर प्रश्न किया 'मोदी तुम तो कहते थे मैं नमाज़ पढ़ूँगा परन्तु तुम तो खड़े रहे हो। नमाज़ क्यों नहीं गुज़ारी?' **नानक जी**-मैं किस के साथ नमाज़ पढ़ता। **नवाब**-मेरे साथ पढ़ते, मैं जो नमाज़ पढ़ रहा था। **नानक जी**-नहीं, बिलकुल नही, आप नमाज़ पढ़ ही नहीं रहे थे क्योंकि आप का मन नमाज़ में था ही नहीं। वह तो दूर काबुल नगर में अच्छी नस्ल के घोड़े खरीद रहा था। आप का शरीर ही यहाँ पर नमाज़ पढने का स्वांग कर रहा था। यह सत्य जान कर नवाब शांत हो गया परन्तु काज़ी कहने लगा-नानक तुम मेरे साथ नमाज़ पढ़ लेते। **नानक जी**-काज़ी साहब, आप का ध्यान भी नमाज़ में नहीं था। आप विचार रहे थे कि कहीं घर में घोड़ी का नव-जात बच्चा, पास के कूएं में न गिर जाए। यह सत्य जान कर काज़ी हैरान-परेशान हुआ। परन्तु वह कटु सत्य को झुठलाने के लिए आना कानी करने लगा किन्तु नवाब ने उसे कहा अब रहने भी दो, जो व्यक्ति मेरे हृदय की जान सकता है क्या वह तेरे हृदय की नहीं जान सकता। तब नवाब ने नानक जी को फिर से मोदी का कार्य

भार सम्भालने को कहा परन्तु नानक जी ने दो टूक उत्तर देकर साफ इन्कार कर दिया। तब उस ने कहा – वह रुपये जो हिसाब अनुसार तुम्हारे पक्ष में है, ले जाओ। तब नानक जी कहने लगे। उन रुपयों को ज़रूरतमन्दों में बांट दे। इस प्रकार मस्जिद से गुरुदेव जी दीदी नानकी के यहाँ लौट आये जो कि सब को सांत्वना दे रही थी कि आप किसी प्रकार की चिन्ता न करें क्योंकि नानक जी के प्रत्येक कार्य में एक रहस्य छिपा रहता है।

नानक देव जी के डूबने की सूचना पाते ही उन के सास – ससुर सुलतानपुर पहुँच गये। इस बीच दीदी नानकी जी ने नानक जी से लापता होने का रहस्य जानना चाहा तो नानक जी ने बताया कि मैं अपने गुप्त वास में प्रभु चरणों में लीन था। जिस से मैं निधारित कार्य कर्म को व्यवहारिक रूप दे सकूँ। जैसे ही मूल चन्द जी को ज्ञात हुआ कि वास्तव में नानक संन्यास ले रहा है, इसी लिए ही यह सब उसने नाटक रचा है, तो वह आग – बबूला हो गये तथा लगे नानक जी को समझाने बुझाने और उन पर दोषारोपण करने लगे कि तुमने परिवार तो बढ़ा लिया है परन्तु कर्त्तव्य से भाग रहे हो। इस के उत्तर में नानक जी कहने लगे। वास्तव में मैंने गृहस्थ त्यागा नहीं है। मैं तो उस प्रभु का संदेश देने तथा दीन – दुखियों का दर्द बांटने जा रहा हूँ। अब मेरा परिवार यह छोटा सा सीमित दो बेटों तक नही है अत: मैं अपने शेष परिवार की देख – भाल करने जा रहा हूँ। मैं बार – बार लौट कर आता रहूँगा। यह सुन कर मूलचन्द जी ने कहा वह तो ठीक है परन्तु तुम्हारे इस परिवार के जीवन निर्वाह के लिए तुमने साधन जुटाए हैं? तब नानक जी ने गम्भीरता से उत्तर दिया। मेरा मुख्य उद्देश्य धन अर्जित करना नहीं है फिर भी घर में इनके लिए पर्याप्त धन साधन है। इस प्रकार आप जी ने अपना परिवार ससुर मूलचन्द जी के संरक्षण में सौंप दिया। गुरू नानक देव जी अब घर त्याग कर तथा अपने परम मित्र भाई मरदाना जी को साथ लेकर सुल्तानपुर नगर से अनिश्चित मार्ग की ओर चल पड़े। उस समय आप के पास समान के नाम पर एक पोथी थी, जिस में आप जी ने अपनी कुछ एक रचनाएं लिखी हुई थी बाकी कोरी थी तथा भाई मरदाने के पास एक सुन्दर नई रबाव थी जो कि गुरुदेव ने उन्हीं दिनों उसे नई बनवा कर दी थी। जिस से वह प्रतिदिन कीर्तन किया करता था। चलते समय भाई मरदाना जी ने प्रश्न किया, गुरुदेव हम कहाँ जा रहे हैं? तो गुरुदेव कहने लगे। वह करतार जहाँ ले जाए। तब दीदी नानकी जी ने आप से विनती की कि मुझे जब आप के दर्शनों की इच्छा हो तब मैं कैसे कर पाऊंगी?

उस समय आप ने उन को वचन दिया कि जब आप याद करेंगी तभी मैं हाजिर हो जाऊँगा। नानक जी के चले जाने के बाद मूलचन्द जी ने नवाब दौलत खान के आगे विनती की कि नानक जी के रुपये उनके परिवार को दिये जाए। तब वह कहने लगा मुझे तो मोदी ने कहा था कि वह रुपये फ़कीरों को खैरात में बांट दिये जाए। तब इस बात का कोई निर्णय नहीं हो पाया। अत: मूलचन्द जी की बात के तथ्य को ध्यान में रखकर नवाब ने उन रुपयों में से आधे फ़कीरों को तथा आधे परिवार के सदस्यों के लिए भेज दिये।

द्वितीय अध्याय

प्रथम उदासी

'भाई लालो जी'

सैदपुर (प० पंजाब)

गुरू नानक देव जी सुल्तान पुर लोधी से लम्बा सफर तय कर सैदपुर (सय्यद पुर) नगर में पहुँचे। वहाँ पर उन को बाजार में एक बढ़ई लकड़ी से तैयार की गई वस्तुएं बेचता हुआ मिला जो कि साधु-संतों की सेवा किया करता था। जिस का नाम लालो था। उस ने नानक जी को अपने यहाँ ठहरने का निमन्त्रण दिया। गुरू नानक देव जी ने यह निमन्त्रण स्वीकार कर के भाई मरदाना सहित उस के घर जा पधारे। भाई लालो समाज के मध्य वर्ग का व्यक्ति था जिस की आय कठोर परीश्रम करने पर भी बहुत निम्न स्तर की थी तथा उसे हिन्दू वर्ण-भेद के अनुसार शूद्र अर्थात नीच जाति का माना जाता था। इस गरीब व्यक्ति ने गुरुदेव की यथा शक्ति सेवा की जिस के अन्तर्गत बहुत साधारण मोटे अनाज, बाजरे की रोटी तथा साग इत्यादि का भोजन कराया। मरदाने को इस रूखे-सूखे पकवानों में स्वादिष्ट व्यंजनों जैसा आनन्द मिला। तब भाई मरदाना ने गुरुदेव से प्रश्न किया कि यह भोजन देखने में जितना नीरस जान पड़ता था सेवन में उतना ही स्वादिष्ट किस तरह हो गया है? तब गुरुदेव ने उत्तर दिया, "इस व्यक्ति के हृदय में प्रेम है, यह कठोर परीश्रम से उपजीविका अर्जित करता है। जिस कारण उस में प्रभु कृपा की बरकत पड़ी हुई है। यह जान कर भाई मरदाना सन्तुष्ट हो गया। तब गुरुदेव ने सतसंगत करने के लिए भाई मरदाना को रबाब बजा कर कीर्तन करने को कहा। जैसे ही ऊँचे स्वर में गुरुदेव ने शब्द का आलाप किया, तैसे ही धीरे-धीरे मधुर ध्वनि सुन कर अडौस-पड़ौस के लोग भी बाणी सुनने के लिए भाई लालो के यहाँ इकठ्ठे होने लगे। जैसे ही कीर्तन समाप्त हुआ तैसे ही गुरुदेव के सम्मुख श्रोताओं की भीड़ उमड़ पड़ी और गुरुदेव से प्रश्न कर के अपनी-अपनी शंकाओं का निवारण करने के लिए विचारविमर्श करने लगे। श्रोतागण तो मनमोहक कीर्तन से इतने प्रभावित हुए कि वे गुरुदेव से अनुरोध करने लगे कि आप यहीं कुछ दिन ठहरें ताकि हम अपनी हृदय की दर्शनों की प्यास बुझा सके। यह

अनुरोध गुरुदेव ने सहर्ष स्वीकार कर लिया तथा श्रोताओं के प्रेम-भाव से बन्धकर कुछ दिन वहीं रहने का निर्णय लिया। पहले तो भाई लालो जी के आंगन में ही सुबह-शाम मरदाना जी कीर्तन प्रारम्भ करते थे किन्तु जिज्ञासुओं की भीड़ अधिक हो जाने के कारण गुरुदेव ने वहीं, भाई लालो के घर के पिछवाड़े एक खुले स्थान में संगत इकट्ठी करनी शुरू कर दी। गुरुदेव द्वारा सहज-सरल, जाति-पाति रहित, सभी एक सम, समाज का दृष्टि कोण, जन साधारण को बहुत भाता। इस लिए प्रत्येक व्यक्ति के हृदय में वर्ण-भेद से ऊपर नये समाज की कल्पना को लेकर कोतुहल उत्पन्न होता। वह मन ही मन इस नये समाज की सृजना के विषय में उठे प्रश्नों का समाधान ढूँढता तथा अन्य समाज पीडित लोगों को इस की सूचना देकर उन्हें गुरुदेव के चरणों में लाने का प्रयास करता। देखते ही देखते गुरुदेव के पास एक अपार जनसमूह एकत्रित होने लगा। जिस की सूचना वहाँ के ब्राह्मण वर्ग को मिली। वे तुरन्त इस नई विपत्ति का सामना करने के लिए योजना-बध युक्ति ढूँढने लगे। उन में से कुछ एक तो गुरुदेव के प्रवचन सुनने हेतु स्वयं संगत में पहुँचे तथा उन्होंने गुरुदेव के विषय में पूर्ण जानकारी एकत्रित की तथा वह विचारने लगे कि यदि नानक जी द्वारा प्रचारित प्रणाली से वर्ग विहीन समाज अस्तित्व में आ गया तो उनकी रोज़ी-रोटी का क्या होगा? अत: उन्होंने स्वार्थ सिद्धि को ध्यान में रखते हुए नानक जी को क्षति पहुँचाने का अनुचित निर्णय लिया। वह किसी उपयुक्त समय की ताक में रहने लगे। दैववश यह अवसर उनको बहुत जल्दी ही हाथ लग गया। यद्यपि ब्राह्मण वर्ग गुरुदेव की विचार धारा का कटु आलोचक था किन्तु वह मन ही मन गुरुदेव के प्रवचनों में छिपे सत्य-ज्ञान को झुठला नहीं पा रहा था उन के कथन में जीवन को सहज-सरल ढंग तथा बंधुत्व से जीना सिखाया जा रहा था। जिस में दूसरों से बिना कारण घृणा, छुआ-छूत करना मानवता के प्रति अपराध बताया जा रहा था। गुरुदेव ने जैसे ही महसूस किया कि हम जिस उद्देश्य के लिए वहाँ आये थे वह कार्य तो वहाँ पर रंग ला रहा है तो उन्होंने जनसमूह के स्नेह को देखते हुए सैदपुर में चार से पाँच सप्ताह ठहरने का कार्यक्रम बनाया। तब मरदाना जी विनती करने लगे, "हे गुरुदेव ! यदि आप आज्ञा दें तो मैं इस बीच अपने घर हो आऊँ, क्योंकि मैं तो सुलतानपुर से आप के साथ ही यहाँ सीधा चला आया हूँ, जैसा कि आप जानते हैं बहुत समय से मैं परिवार को मिलने नहीं गया।" अत: गुरुदेव ने मरदाने को तलवण्डी भेज दिया तथा कहा

शीघ्र लौट आना। मरदाना जी के चले जाने के पश्चात्–उन्हीं दिनों मलिक भागो नाम का स्थानीय प्रतिष्ठित अधिकारी जो कि भ्रष्टाचार के कारण बहुत धनाढय हो गया था उस ने अपने यहाँ ब्रह्म–भोज का आयोजन किया जिस में सभी वर्गो के लोगों को क्रमश: तथा साधु, सन्यासी, पीर–फ़कीरों एवं गण मान्य सज्जनों को विशेष रूप से निमंत्रण भेजकर आमंत्रित किया। उस का विश्वास था कि उसके यज्ञ में प्रत्येक प्राणी भोजन करे तब ही वह अनुष्ठान सफल होगा। यज्ञ की सम्पूर्णता के लिए कोई साधु फ़कीर भोजन किये बिना न रह जाए। यह विशेष आदेश दिया। तभी मुख्य पुरोहित जी ने मलिक जी से निवेदन किया कि उनके नगर में नानक नाम का एक साधु बहुत दिनों से आया हुआ है जो कि बेदी कुल का खत्री है किन्तु वह एक शूद्र (बढ़ई जाति) के घर में रहता है तथा वर्ण–आश्रम को न मानने का उपदेश करता है। उसने तो धर्मकर्म सब भ्रष्ट कर दिया है। उसे भी निमंत्रण दिया गया था परन्तु एक वह ही नहीं आया उस का कहना है कि यह यज्ञ तो वास्तव में बड़प्पन का प्रदर्शन मात्र है, धर्म नहीं। तथा खत्री वंश का होकर भी वह एक नीच के गृह का भोजन सेवन तो करता है परन्तु यज्ञ में आने का विद्रोह करता है। **मलिक भागो**– "यदि ऐसा है तो उसे बल पूर्वक मेरे सम्मुख उपस्थित करो।" यह आदेश प्राप्त होते ही वह लोग नानक जी को खोजकर बल पूर्वक ले आये। तब मलिक भागो ने नानक जी से प्रश्न किया। **मलिक भागो**– "देखने में तो तुम बहुत कुलीन परिवार के मालूम होते हो। एक शूद्र के गृह का भोजन तो करते हो किन्तु मेरे यज्ञ का नहीं, इस का कारण बताओ?" **नानक जी**, "मलिक साहब, पहले यह बताए कि शास्त्रों में किसी व्यक्ति को बल पूर्वक भोजन कराने से मनोवंछित फल की प्राप्ति होने की बात कहीं लिखी हैं?" **मलिक**–नही तो ! **नानक जी**–तो मुझे क्यों बल पूर्वक यहाँ बुलाया है। मलिक–मेरे यहाँ आप को भोजन करने में क्या आपत्ति है? जब कि आप स्वय् स्वर्ण जाति के होने पर भी एक नीच बढई के यहाँ नित्य भोजन करते हैं। **नानक जी**–आप प्रथम यह बताने का कष्ट करेंगे कि बढई नीच जाति का कैसे हो गया है तथा हम ऊँच जाति के कैसे हो गये? क्या परमेश्वर ने हमारी शरीरिक बनावट में कोई अन्तर रखा है? **मलिक**–ऐसा तो नही है ! नानक जी–यदि ऐसा नही है तो इस का यह अर्थ हुआ कि हम जाति–पाति का झूठा मनगढ़न्त ढोंग रचते हैं जो कि मानवता के नाम पर एक बहुत बड़ा अपराध है। **मलिक भागो**–फिर आप ही बताए

कि नीच कौन है तथा ऊँचा कौन है? **नानक देव जी**–उस प्रभु ने सब को एक सा बनाया है। वास्तव में नीच वह है जो नीच कार्य करता है जिस के कार्यो से समाज पीड़ित होता है तथा भ्रष्टाचार फैलता है। इस के विपरीत वहीं व्यक्ति श्रेष्ठ है जिस के कार्य से समाज में सुख शांति तथा समृद्धि बढ़ती है। मेरे इस दृष्टिकोण के अनुसार भाई लालो अपने कार्य से समाज की सेवा कर के सभी के हित में अपनी उपजीविका परीश्रम से अर्जित करता है। इस से किसी का भी अनिष्ट होने का प्रश्न नहीं उठता किन्तु अधि कांश बडे कहलाने वाले लोग ठीक इस के विपरीत समाज विरोधी कार्यो में संलग्न हैं। जिस से भ्रष्टाचार फैलता है तथा जन–साधारण का जीवन कष्टमय हो जाता है। इस लूट–पाट से समाज में अमीरी–गरीबी की, न पाटी जाने वाली खाई और अधिक बढ़ जाती है। जिस से असंतोष की भावनाएं बढ़ती जाती हैं। परीणाम स्वरूप समाज विरोधी तत्व जन्म लेते हैं जिस से कानून व्यवस्था में बाधाएं उत्पन्न होती हैं। मलिक **भागो**– आप ही बताएं कि उपजीविका कैसे अर्जित करनी चाहिए? **नानक जी**–बस मैं तो यही जानता हूँ कि व्यक्ति भले ही निर्धन हो परन्तु जो सत्य के पथ पर चलकर अपनी उपजीविका कमाता है तथा सन्तोष में रहता है। वही श्रेष्ठ है प्रभु–परमेश्वर भी उसी व्यक्ति के अंग–संग रहता है। अत: उस की कृपा दृष्टि भी ऐसे लोगों पर ही रहती है।

नीचा अंदरि नीच जाति नीची हू अति नीचु ।।

नानकु तिन कै संगि साथि वडिआ सिउ किआ रीस ।।

जिथै नीच समालीअनि तिथै नदरि तेरी बखसीस ।।

राग सिरी, पृष्ठ 15

वस्तुत: जो लोग अपने अधिकारों का दुरुपयोग कर जनता को डरा–धमका कर स्वार्थ–बस अनुचित कार्य कर धन प्राप्त कर धनी बनते हैं वही वास्तव में समाज विरोधी तत्व हैं। इन्हीं लोगों ने अपने काले कारनामों पर पर्दा डालने के लिए एक विशाल दानी का बाहरी स्वरूप बना कर समाज में भ्रम पैदा कर रखा है कि वह ऊँच है तथा परीश्रमी वर्ग नीच है। जिस के बल पर वे यह सब जग दिखावा कर रहे होते हैं, परन्तु आध्यात्मिक दुनिया में यह सब मिथ्या है। वहाँ तो वही स्वीकार होगा जो सत्य के पथ पर चलते हुए अपने लिए परीश्रम से धन कमाता है। **मलिक**– आप मेरा अपमान कर रहे

हैं? **नानक जी**–मलिक उत्तेजित न हो, यह तो कटु–सत्य है। जो लोग परीश्रम न कर दूसरों का धन ऐंठते है तथा ऐश्वर्य–पूर्ण जीवन जीते हैं वे गरीब जनता का खून चूसते हैं। इसके विपरीत श्रमिक वर्ग के लोग सत्य के मार्ग पर चलते हुए परीश्रम से धन कमाते हैं वह दूध तुल्य हैं। देखो! प्रत्यक्ष को प्रमाण की आवश्यकता नहीं तुम सदैव अशान्त रहते हो इस के विपरीत श्रमिक वर्ग सदैव प्रसन्नचित रहता है, क्योंकि उन में सन्तोष की भावनाएं हैं।

जे रतु लगै कपड़ै जामा होए पलीतु ।।

जो रतु पीवहि माणसा तिन किउ निरमलु चीतु ।।

राग माझ, पृष्ठ संख्या 140

मलिक भागो–आप के कथन में सत्य दिखाई देता है। परन्तु मैंने तो यह सब यज्ञ अपने उद्धार के लिए किया हैं। क्या इस यज्ञ के पश्चात् भी मुझे मोक्ष प्राप्त नहीं होगा? **नानक जी**–मोक्ष तो केवल प्रभु कृपा के पात्र बनने से मिल सकता है। उस के लिए पहले सच्चे–गुरू के ज्ञान की अति आवश्यकता है। **मलिक भागो**–मेरी अभिलाषा तो केवल इस भव सागर से पार उतरने की है। मैं इस कार्य के लिए आप को अपना आध्यात्मिक गुरू मानता हूँ। अत: आप मेरा मार्ग दर्शन करें। **नानक जी**–वह प्रभु सभी में विराजमान है अत: प्राणी मात्र की सेवा ही, उस की कृपा के पात्र बनने का मार्ग है। जब वह सभी में विद्यमान है तो कोई ऊँच कोई नीच कैसे हो गया? इस का सीधा सा अर्थ है जन्म से कोई भी ऊँचा या नीचा नहीं। यह सब मनुष्य के कर्मो के ऊपर निर्भर है कि वह कैसे कार्य करता है। यदि वह सद्गुणों से जीवन जीता है तो वह ऊँच है नहीं तो दुर्गुण उसे स्वयं नीच ही बना देते हैं। भले ही वह तथाकथित स्वर्ण जाति का ही क्यों न हो।

हाकिम जालिम खान सैदपुर (प० पंजाब)

श्री गुरू नानक देव जी मलिक भागो के यहाँ से विजयी होकर जब वापस लोटे तो कुछ दिन पश्चात् वहाँ के स्थानीय फ़ौजदार (नवाब) जालिम खान का लड़का बिमार हो गया। बहुत उपचार करने पर भी वह ठीक नहीं हो पाया अत: हकीमों ने उसे जवाब दे दिया और कहा–अब दवा–दारू के स्थान पर अल्लाह के कर्म पर सब कुछ निर्भर है आप इबादत करें। इस पर अहिलकार मलिक भागो ने सुझाव दिया कि स्थानीय पीर फ़कीरों से अल्लाह की दरगाह से मंनत मनवाई जाए क्योंकि फ़कीरों की ज़ुबान में बहुत तासीर होती हैं यह बात सुनते ही जालिम खान ने हुक्म दिया कि सभी पीर, फ़कीर पकड़ कर लाए जाएं। आदेश का तुरन्त पालन हुआ। नगर के सभी पीर, फ़कीरों को पकड़ लिया गया। इन फ़कीरों में श्री गुरू नानक देव जी भी गिरफ़्तार कर लिए गये। सभी फ़कीरों को सम्बोधित होकर जालिम खान ने कहा–आप लोग मेरे बेटे के लिए खुदा से दुवा मांगें। यदि मेरा लड़का तन्दरुस्त हो गया तो मैं आप लोगों को खुश कर दूंगा, नहीं तो तुम सब पाखण्डी हो। यह सुनते ही गुरुदेव ने कहा–अल्लाह की दरगाह में ज़ोर–ज़बर की दुआ (अरदास) कबूल नहीं होती। वहाँ तो प्रेम–भक्ति अथवा सच्चे दिल की पुकार ही सुनी जाती है। इस लिए तुम्हारा बेटा ठीक नहीं हो सकता। फौजदार जालिम खान को गुरुदेव की तर्क संगत बात उचित लगी। उसने तुरन्त सब फ़कीरों को रिहा कर दिया।

राय बुलार जी के निमन्त्रण पर तलवण्डी (पंजाब)

जब मरदाना तलवण्डी नगर अपने परिवार से मिलने घर पहुँचा तो मेहता कालू जी तथा राय बुलार जी को भी यह सूचना तुरन्त मिल गई। उन्होंने मरदाना जी को बुला भेजा। जब मरदाना जी उन से मिले तो उन्होंने कहा–नानक कहाँ है? मालूम हुआ है कि वह अपना कार्य त्याग कर देशाटन पर निकल पड़ा है।

मरदाना जी– आप को ठीक ही सूचना मिली है। वह अब जनहित के लिए परमार्थ के मार्ग पर चल पड़े हैं, अत: स्थान–स्थान पर लोक सर्म्पक अभियान चला रहे हैं।

मेहता कालू जी–वह तो ठीक है किन्तु उस के परिवार का क्या होगा?

मरदाना जी–उन्होंने यह कार्य बहन नानकी जी तथा ससुर मूलचन्द जी को सौंप दिया है।

मेहता जी– अब हम बूढे हो गये हैं हमने उस पर बहुत सी आशाएं बांधी थी कि वह हमारे बुढ़ापे का सहारा बनेगा परन्तु वह तो हमें मझधार में छोड़ गया।

राय बुलार जी–हे मरदाना ! क्या तुम एक बार नानक को हमसे मिलवाने के लिए यहाँ ला सकते हो। मैं उन के दीदार करना चाहता हूँ, न जाने कब, मुझे अब अल्लाह मियां का बुलावा आ जाये क्योंकि यह शरीर अब जवाब दे रहा है।

मरदाना जी–मेरे कहने से आयें न आयें कुछ कह नहीं सकता। यदि आप ने उन को बुलाना ही है तो किसी दूसरे व्यक्ति को मेरे संग सन्देश देकर भेजें तो वह अवश्य ही आयेंगे।

राय बुलार–बात ठीक है। मैं उन के बचपन के मित्र 'बाला' को तुम्हारे संग यह विशेष संदेश दे कर भेजता हूँ कि वह जहां भी जाएं ठीक है परन्तु एक बार मुझे मिल कर जरूर जाएं क्योंकि इस शरीर का अब पता ठिकाना तो है नहीं। परिवार से मिलकर भाई मरदाना जी बाला को संग लेकर सैदपुर पहुँचे तो भाई बाला ने राय जी का सन्देश गुरुदेव को दे दिया। तब तक गुरुदेव जी को भाई लालो जी के यहाँ एक महीना होने को था। इसी बीच मलिक भागो के भोज की घटना घटित हो चुकी थी। अत: नानक देव जी ने न चाहते हुए भी राय बुलार जी के प्रेम के कारण घर लौटने का कार्यक्रम बना कर तलवण्डी की ओर चल पड़े। तब ही भाई लालो जी ने गुरुदेव से फिर कभी भी लौट कर आने का बचन लिया तथा सैदपुर वासियों ने गुरुदेव को विदाई दी। तलवण्डी पहुँच कर नानक देव जी नगर के बाहर ही एक कूएं पर आसन जमाकर विराजमान हो गये। तब पिता कालू जी, माता जी तथा चाचा लालू जी सभी उन को लेने के लिए आये। किन्तु

नानक जी उन के साथ घर नहीं गये। उन को सन्यासी वेष-भूषा में देखकर माता जी रुदन करने ..लगी परन्तु नानक जी शान्त चित रहे। इस पर राय साहब स्वयं नानक जी को लेने आये तब नानक जी ने झुक कर उन के चरन स्पर्श किए। तब राय जी नानक जी से रूठ गये तथा कहने लगे मैं तो आप की अगवाई करने आया था ताकि मैं अपने मुरशद के दीदार कर सकूँ परन्तु आप ने यह क्या किया, मुझे गुनहगार बना दिया है। मैं तो अब दोज़ख में जाऊँगा। मैं तब तक अपने आप को माफ नहीं कर सकता जब तक आप अपने चरण मेरे सिर पर नहीं धरते।

नानक जी- आप बड़े हैं मैंने कोई नई बात नहीं की यह मेरा फर्ज़ था, किन्तु राय बुलार साहब कहाँ मानने वाले थे। उन्होंने बा-अदब नानक जी को अपने घर में दावत दी तथा उन के चरण अपने सिर से बलपूर्वक स्पर्श करवाए। तब तलवण्डी का जन-समूह नानक जी को मिलने आया और पिता कालू जी ने नानक जी के आगे एक प्रस्ताव रखा कि आप यहीं रहें भले ही कोई ठीक व्यवहार करे या न करे परन्तु नानक जी ने इस के लिए खेद व्यक्त करते हुए अपनी असहमति प्रकट की। तब राय जी कहने लगे कोई ऐसा व्यापार कर लो जिस से आप का दूर प्रदेशों में आना-जाना होता रहे तथा परिवार से सम्बन्ध भी बना रहे। भले ही घोड़ों की सौदागरी अपना लो। तब नानक जी ने विश्व भ्रमण का अपना उद्देश्य बताते हुए राय साहब को बताया कि मैं समाज में नई चेतना के लिए कार्यरत हूँ। जिस के लिए मुझे विरोधी शक्तियों से संघर्ष करना है। यह तभी सम्भव है जब मैं अपना स्वार्थ त्याग कर निष्काम, एक ही लक्ष्य की प्राप्ति के लिए जूझूँ। गुरुदेव ने कुछ दिन पश्चात् तलवण्डी वासियों से विदाई ली तथा वहाँ से लाहौर के लिए प्रस्थान कर गये।

पशुओं का वध (लाहौर, पंजाब)

अपने प्रथम प्रचार के दौर में जब आप लाहौर नगर पहुँचे तो उन दिनों श्राद्धों के दिन थे। लाहौर पहुँच कर आपने जवाहरमल के चौहटे में एक कूएं के पास पीपल के नीचे अपना डेरा डाल दिया। जब प्रातः काल (अमृत बेला) का समय हुआ तो आप शौच-स्नान कर प्रभु चरणों में लीन हो गये। परन्तु कुछ लोग वहाँ पर पशुओं का वध

करने लगे। पशुओं की चीख-चिल्लाहट सुन कर गुरुदेव की समाधि में भारी बाधा उत्पन्न हो गई। अमृत बेला (प्रात:काल) निरर्थक होता जानकर आप जी बहुत क्षुब्ध हुए, परन्तु उस प्रभु की लीला देखकर कहने लगे-

असंख गलवढ हतिआ कमाहि ॥

असंख पापी पापु करि जाहि ॥

जपुजी साहब, पृष्ठ 3

जब आप ने देखा कि मुल्लां कलमा पढ़कर यह दावा कर रहे हैं कि उन्हें कुर्बानी का पुण्य प्राप्त हुआ है तथा मारे गये पशुओं को जन्नत नसीब हुई है तो गुरुदेव ने इस का कड़ा विरोध किया। अपने स्वार्थ के लिए जीवों की हत्या करना पाप है तथा यह सब उस समय दुगुना हो जाता है जब हत्याओं को उचित दर्शाने के लिए पुण्य मिलने का महत्व बताते हैं। आप ने कहा, "यह कैसी मान्यता है कि प्रभु के बनाये जीवों की हत्या को पुण्य मानकर अपने आप को धोखा दिया जाता है। परमात्मा सब जीवों के पिता है। कोई पिता अपनी सन्तान की हत्या से कैसे प्रसन्न हो सकता है?"

व्यापारी दुनी चन्द (लाहौर, पंजाब)

जब सूर्य उदय हुआ तो वहाँ का एक प्रसिद्ध व्यापारी दुनी चन्द पूजा के लिए ठाकुरद्वारे आया, तो उस ने लौटते समय गुरुदेव को एक सन्यासी जान कर अपने यहाँ पितृ-भोज पर आमन्त्रित किया। गुरुदेव ने उस का मार्ग दर्शन करने के लिए वहाँ सम्मलित होना स्वीकार कर लिया। आप ने उस के पितृ-भोज प्रारम्भ के समय उपदेश दिया कि पितृ लोक नाम का कोई अलग से स्थान नहीं है। प्रत्येक प्राणी को अपने कर्मो अनुसार यहीं पर दूसरा शरीर ध ारण कर के फल भोगना पड़ता है। यदि व्यक्ति सत्य कर्म करता है, तो हो सकता है वह प्रभु में लीन हो जाए जैसे सागर में गंगा समा जाती है अन्यथा वह पुन:-पुन: इस मृत्यु लोक में जन्म-मरण के चक्र में बंधा रहता है। यह आवागमन का चक्र तब तक समाप्त नहीं होता जब तक प्राणी स्वयं उस प्रभु की कृपा का पात्र नहीं बनता। वस्तुत: श्राद्ध करना एक कर्म-काण्ड मात्र ही है। इन कार्यो से मृत

आत्मा को कोई लाभ होने वाला नहीं, क्योंकि न जाने मृत आत्मा किस यौनि में शरीर धारण कर भ्रमण कर रही हो। यह भोज तो केवल ब्राह्मण वर्ग की उदर पूर्ति का साधन है। इस लिए माता पिता की सेवा उनके जीवन में ही करनी चाहिए। मृत्यु के पश्चात् सेवा कोई सेवा न होकर केवल जगत दिखावा ही है। यदि एक विश्वास के अनुसार मान भी लिया जाए कि कोई पितृ लोक है तो यहाँ से किया गया श्राद्ध-भोज पूर्वजों को मिलेगा। तब प्रश्न यह उठता है कि कुछ एक लोग जो भ्रष्टाचार से धन अर्जित कर के ब्राह्मणों को दक्षिणा में जो दान देते है तथा जो वस्तुएं चोरी की हैं अथवा दूसरों के धन माल की है, वह तो आगे पितृ-लोक में पहचान ली जाएंगी क्योंकि वहाँ तो सत्य तथा न्याय का बोल बाला है अत: ऐसे चोरी के माल को पहुँचाने वाले दलाल ब्राह्मण के हाथ काट दिये जाते हैं-

जे मोहाका घरु मुहै घरु मुहि पितरी देइ ।
अगै वस्तु सिञाणीऐ पितरी चोर करेइ ।।
वढीअहि हथ दलाल के मुसफी एह करेइ ।
नानक अगै सो मिलै जि खटे घाले देइ ।।

राग आसा, पृष्ठ संख्या 472

यह विनोद भरी बातें सुन कर गुरुदेव के तर्कों के आगे सब ही शान्त होकर अपनी भूल का प्रायश्चित करने लगे।

भाई मरदाना जी को सीख मिली (उपल गाँव, पंजाब)

श्री गुरू नानक देव जी जब लाहौर निवासियों से विदा लेकर प्रस्थान करने लगे तो भाई मरदाना जी ने प्रश्न किया। हे गुरुदेव जी! अब कहाँ जा रहे हैं? उत्तर में गुरुदेव कहने लगे, "भाई जी आप देख ही रहे है कि प्रजा ज्ञान हीन होने के कारण छल कपट से लूटी जा रही हैं। धर्म के नाम पर पाखण्डी लोगों ने कर्म-काण्ड का जाल बिछा रखा है अत: इस में से जन-साधारण निकल नहीं सकता, यदि कोई इन कर्म-काण्डों का विरोध करता है तो यह लोग उस व्यक्ति विशेष को अपनी उदर पूर्ति में बाधक जान कर

उस का दमन करने हेतु उस पर मनघडंत आरोप लगाते हैं। जैसे कि मुझे कहा गया है कि यह नास्तिक है, बेताला है, कुमार्गी है आदि। अत: जन–साधारण मे जागृति लाने के लिए हमें उन सभी स्थानों पर पहुँचना होगा जहां से यह पारवण्डवाद फैला कर जनता को गुमराह करते हैं। इस लिए हमें उन तथाकथित धर्म स्थलों को अपने प्रचार का क्षेत्र बनाना होगा तथा उन धर्म के ठेकेदारो से लोहा लेकर जनता का मार्ग दर्शन करना होगा।" मरदाना जी– "परन्तु। गुरुदेव जी, हम तो अकेले हैं तथा निहत्थे भी हैं। हम उन लोगों का सामना कैसे कर पायेंगे?" नानक जी– "भाई जी आप चिन्ता न करें क्योंकि हम अकेले नहीं हैं। हमारे संग, वह कर्त्ता पुरुष (करतार) स्वयं है। तथा हम लोग शास्त्रार्थ से युद्ध लड़ेगे अर्थात केवल विचार–विमर्श से समस्त मानव जाति का मन जीत कर उन में से भूले भटकों को सत्य के मार्ग पर चलने का दिशा–निर्देश ही देंगे जिस से उनके कार्य निष्फल न होकर भलीभूत हो। बस, यही हमारा वास्तविक लक्ष्य है।" मरदाना जी– "इस कार्य के लिए हमें सब से पहले कहाँ जाना चाहिए?" नानक जी– "हमें इस प्रकार अपनी योजना बनानी चाहिए कि हम उन सभी तथाकथित तीर्थ स्थलों पर ठीक उस समय पहुँचे जब वहाँ यात्री किसी विशेष उत्सव में भाग लेने के लिए उपस्थित होते हैं। इस प्रकार वहाँ पर एकत्रित भीड़ को सम्बोधन करने में हमें आसानी होगी तथा हमारा संदेश वहाँ से दूर–दूर पहुँच जाएगा क्योंकि वहाँ पर विभिंन–विभिंन स्थानों से लोग आकर इकट्ठे होते है।" भाई मरदाना–आप ठीक कहते हैं, लेकिन पहले कहाँ चला जाए? नानक जी–कुछ ही दिनों में बैसारवी के अवसर पर हरिद्वार में कुम्भ का मेला लगने वाला है। वहाँ पर श्रद्धालू तीर्थ यात्री पवित्र गंगा में स्नान के लिए दूर–दूर से आएंगे। अत: हमें वहीं पहुँच कर इस अवसर का लाभ उठाना चालिए। मरदाना जी–हां गुरुदेव जी, यही उचित रहेगा। इस प्रकार हरिद्वार को अपनी मंजिल मान कर नानक जी चल पड़े।

भाई मरदाना जी को शिक्षा उपल गाँव (पंजाब)

अगले पड़ाव पर मरदाना जी को भूख-प्यास सताने लगी। उन्होंने गुरू जी से निवेदन किया कि मुझे किसी निकटवर्ती गाँव से भोजन करने की आज्ञा दें। तब गुरुदेव कहने लगे भाई मरदाना हम अपने क्षेत्र से अभी अधिक दूर नहीं आए इस लिए सभी लोग हमें जानते हैं। आप पड़ोस के गांव में जाकर कहें कि मैं नानक का शिष्य हूँ, वह मेरे साथ हैं। हम हरिद्वार जा रहे हैं, अभी हमें भोजन चाहिए। मरदाना जी आज्ञा मान कर गांव में पहुँचे और लोगों से अनुरोध किया कि उसे भोजन करा दो वह गुरू नानक देव जी का शिष्य है। तब क्या था ! गांव के सभी लोगों ने नानक जी का नाम सुन कर मरदाना जी का बहुत आदर सत्कार किया तथा बहुत सी बहुमूल्य वस्तुएं उपहार स्वरूप भेंट में दी। यह सब वस्तुएं तथा वस्त्र इत्यादि इकट्ठे कर एक भारी बोझ के रूप में उठा कर मरदाना जी गुरुदेव के पास पहुँचे तथा कहने लगे, "आप के आदेशानुसार जब मैं एक गांव में पहुँचा तो आप का नाम सुनकर लोगों ने प्रसन्न होकर मेरा बहुत अथिति-सत्कार किया तथा यह वस्तुएं आप को भेजी हैं।" इस पर गुरुदेव मरदाना जी की अल्प बुद्धि पर हंस दिये तथा कहने लगे, " मरदाना जी आप ही बताएं हम इन वस्तुओं का क्या करेगें। अगर हमे वस्तुओं से ही मोह होता तो हम मोदीखाने के कार्य का त्याग ही क्यों करते?" क्या वहाँ पर हमे वस्तुओं की कमी थी? मरदाना जी-आप ठीक कहते हैं। मैं अल्पज्ञ हूँ, मुझे क्षमा करें परन्तु अब मैं इन वस्तुओं का किया करू? नानक जी-यह वस्तुएं यहीं पर त्याग दो। मरदाना जी-वह तो ठीक है किन्तु यह साहस मुझ में नहीं है कि मैं इन अमूल्य प्यार भरे उपहारों को यहाँ फेक दूँ। नानक जी-तो ठीक है जैसी तुम्हारी इच्छा है करो परन्तु हमें तो आगे अपनी मंजिल की ओर बढ़ना है। मरदाना जी-ठीक है मैं इन उपहारों के बोझे को उठाये चलता हूँ। अब मरदाना जी गुरुदेव के पीछे-पीछे चल पड़े। परन्तु शीघ्र ही थक गये, जिस कारण गुरू जी को रूकने के लिए आवाजें देने लगे। तब गुरुदेव ने कहा-भाई मरदाना अभी भी समय है माया का मोह त्यागो, इसे यहीं फेक कर सरलता से हमारे साथ चलो। परन्तु मरदाना जी ने बुझेमन से कुछ एक निम्न स्तर की वस्तुएं वहीं जरूरत मन्दो को बांट दी, किन्तु कुछ एक वस्तुएं बचा कर फिर से रख ली।

अब बोझा बहुत कम तथा काफी हल्का हो गया था। इस लिए मरदाना जी अब सरलता से, गुरू जी का साथ देते हुए चलने लगे। किन्तु कुछ दूरी पर जाने के बाद फिर वही दशा, मरदाना जी फिर पीछे छूट गये तथा थक गये। जिसे देख कर गुरुदेव ने मरदाना जी को पुनः कहा, "भाई यह बोझा त्यागो यह माया जाल है, जब तक इसे नही त्यागोगे तब तक कठनाईयों का वजन तुम्हारे सिर पर पड़ा रहेगा तथा तुम व्यर्थ में परेशान होते रहोगें। अतः त्याग में ही सुख है। एक बार कहना मान कर तो देखो।" मरदाना जी ने तब आज्ञा मान कर समस्त वस्तुएं जरूरत मन्दो में बांट दी तथा खाली हाथों में केवल रबाव उठाए गुरुदेव के पीछे चल पड़े। अब उन के सामने भारी भरकम बोझ की थकान की समस्या नहीं थी। अतः वह साधारण रूप में तीव्र गति से चले जा रहे थे। इस प्रकार गुरुदेव ने उन्हें समझाते हुए कहा– "भाई मरदाना, वास्तव में यह संसार, इस माया का बोझा ही सिर पर बिना कारण उठाये घूम रहा है, जिससे वह कदम–कदम पर थकान के कारण परेशान है। परन्तु मोह–वश उस का त्याग भी नहीं कर पाता और जीवन के सफर का आनन्द भी नहीं ले पाता। वास्तव में आनन्द तो माया–मोह के जाल को तोड़ कर उस के त्याग में ही है। मरदाना जी– आप ठीक कहते है परन्तु मैं अलपज्ञ हूँ। आप कृपा करे तो मैं सब समझ जाऊँगा। किन्तु यह बताने की कृपा करें कि बिना माया के निर्वाह कैसे सम्भव है? नानक जी–भाई, आप ने बात को ठीक से समझा ही नहीं है। मेरे कहने का तात्पर्य यह है कि व्यक्ति अपनी आवश्यकता अनुसार ही माया का उपयोग करे। माया को संग्रह करना, उस का गुलाम बनना है। जैसे कि आप ने बिना आवश्यकता के वस्तुएं सिर पर उठा ली थी। जब कि आप ने आवश्यकता अनुसार नये वस्त्र धारण कर लिए थे उस के अतिरिक्त वहीं पर त्याग कर चले आना चाहिए था। नये वस्त्र धारण करना यह आप की आवश्यकता थी परन्तु यह बोझा तो केवल लालच था, तृष्णा थी, जो कि आप को दुःखी कर रही थी। मरदाना जी–मैं अब जीवन के रहस्य को आप की कृपा से समझ रहा हूँ। अतः आप इसी प्रकार समय–समय पर मेरा मार्ग दर्शन करते रहें क्योंकि मैं अपने निम्न स्तर के संस्कारो का बंधा पग–पग पर डग–मगाता रहता हूँ। अतः आप यह बताएं कि वास्तव में माया क्या है? नानक जी–भाई, वह सभी सांसारिक वस्तुएं माया ही है जिन को पाने के लिए मन में लालसा उत्पन्न हो। इस माया का बहुत विस्तृत स्वरूप है– पत्नी, बच्चे, मकान, भूमि तथा अन्य बहुमूल्य सामग्री सब माया का ही रूप

है। इस का अनेक रूपों में प्रसार है। तात्पर्य यह कि वह सभी कुछ माया है जिसे प्राप्त करने की हम इच्छा करते हैं। यदि हम इस का उपयोग आवश्यकता अनुसार सन्तोषी होकर करे, तो यह मनुष्य की दासी बन कर उस की सेवा करती है। किन्तु हम तो बिना आवश्यकता केवल लोभ, लालच में अंधेहोकर इस को इकट्ठा करने के लिए भागते हैं, जिस से हम दु:खी होते है तथा हमारा जीवन कष्टमय हो जाता है। क्योंकि तृष्णा की तो कोई सीमा नही है। यह तृष्णा ठीक उसी प्रकार कार्य करती है जिस प्रकार अग्नि ईधन को जलाती चली जाती है। आग कभी भी ईधन डालने से शान्त नहीं होती, वह तो बढ़ती ही जाती है ठीक इसी प्रकार तृष्णा शान्त नहीं होती वह तो बढ़ती ही जाती है। भले ही आप समस्त मानव समाज की अमूल्य सामग्री इकट्ठी कर भण्डार भर ले।

कुम्भ मेला (हरिद्वार, उत्तर प्रदेश)

गुरू नानक देव जी धीरे-धीरे अपने लक्ष्य की ओर बढ़ते हुए एक दिन 'हरिद्वार' पहुँच गये। वहाँ कुछ दिनों में वैसाखी के शुभ अवसर पर मेला लगने वाला था। अत: आप ने एक रमणीक स्थल देख कर गंगा के किनारे रेत के मैदान में अपना डेरा स्थापित कर लिया। जनता दूर-दूर से पवित्र गंगा स्नान के लिए आ रही थी। मेले के कारण दूर-दूर तक साधु संन्यासियों के खेमे लगे दिखाई दे रहे थे। कहीं भी कोई रिक्त स्थान नहीं दिखाई दे रहा था। ऐसा जान पड़ता था कि सभी लोग गंगा स्नान के लिए पधारे हैं। अगली सुबह बैसाखी का शुभ पर्व था अत: ब्रह्ममुहूर्त में स्नान प्रारम्भ होना था इस लिए गुरुदेव ने हरि की पौड़ी नामक घाट पर सूर्य उदय होने के कुछ क्षण पहले गंगा स्नान के लिए अपना स्थान बना लिया। जैसे ही सूर्य की प्रथम किरण दिखाई दी गुरुदेव ने तुरन्त सूर्य की तरफ पीठ कर पश्चिम के ओर जल किनारों पर फेंकना आरम्भ कर दिया। इस आश्चर्य को देख कर वहाँ खड़ी भीड़ जो कि स्नान करने की प्रतीक्षा में थी चारो ओर इकट्ठी हो गयी अत: परम्परा के विपरीत कार्य देख कर कौतुहल वश गुरुदेव के निकट आ कर कहने लगे। "आप भूल में हैं पूर्व दिशा आप के पीछे है, पानी उस तरफ चढ़ाएं।" परन्तु गुरुदेव ने उन का कहा, अन-सुना कर दुगुनी गति से पानी

पश्चिम की ओर फैंकना आरम्भ कर दिया। यह सब देख कर एक व्यक्ति ने साहस कर पूछ लिया कि वह पानी कहाँ दे रहे हैं। गुरुदेव ने उत्तर न दे कर उस पर प्रश्न किया, "आप पानी कहाँ दे रहे हैं।" वे सब कहने लगे हम लोग तो अपने पूर्वजों को पितृ लोक में पानी दे रहे हैं। जो कि सूर्य के पास में हैं। गुरुदेव ने उन लोगों से फिर पूछा वह स्थान कितनी दूरी पर है? वे लोग कहने लगे वह स्थान लाखों कोस दूरी पर कहीं स्थित है। इस पर गुरुदेव ने पुन: उसी प्रकार पश्चिम की तरफ जल फेंकना जारी रखा। यह सब देख कर उन से न रहा गया। वे लोग गुरुदेव से फिर से पूछने लगे कि आप पानी कहाँ दे रहे हैं? तब गुरुदेव ने उत्तर दिया, "मैं पंजाब में अपने खेतों को पानी दे रहा हूँ क्योंकि वहाँ पर इन दिनों वर्षा नहीं हुई।" यह उत्तर सुन कर, वहाँ पर सभी लोग हंसने लगे। उस समय गुरुदेव ने पूछा, "इस में हंसने की क्या बात है?" कुछ लोग कहने लगे यहाँ से आपके खेत लगभग 300 कोस दूर हैं। अत: आप का पानी वहाँ कैसे पहुँच सकता है। जब कि यह पानी तो यहीं नदी में वापिस गिर रहा है। अब गुरुदेव ने कहा यही तो मैं आप को कहना चाहता हूँ कि यह फोकट कर्म-काण्ड न करें। आप का पानी भी नदी में गिर रहा है वह किसी पितृ लोक आदि स्थान पर नहीं पहुँचता। यह पितृ लोक वाली सभी बातें मन घढ़न्त तथा कौरी कल्पना मात्र है। वास्तव में कुछ चतुर लोगों ने अपनी उदर पूर्ति के लिए, जन साधारण को भ्रम में डाल कर गुमराह किया हुआ है। इन बातों का आध्यात्मिक जीवन से दूर का भी नाता नहीं है। यह सब कर्म निष्फल चले जाते हैं क्योंकि अंध विश्वास व्यक्ति को कूएं में धकेल देता है।" सभी लोग इस तर्क को सुन कर बहुत लज्जित हो रहे थे। उन्होंनें उसी समय पानी सूर्य की ओर उछालना बन्द कर दिया। यह घटना जंगल की आग की तरह सम्पूर्ण मेले में फैल गई। सभी बुद्धि-जीवी लोग गुरुदेव से आध्यात्मिक विचार-विनियम करने के लिए उन के खेमें में पहुँचने लगे। गुरुदेव ने सभी जिज्ञासुओं को एक ईश्वर में विश्वास करने तथा कर्म-काण्ड (फोकट कर्म) से मना करते हुए कहा कि यह शरीर आध्यात्मिक दुनियां में गौण है। वहाँ तो मन की शुद्धता को ही स्वीकार किया जाता है। केवल शरीर के गंगा स्नान से परमार्थ की आशा न करें।

वैष्णव साधु का खण्डन (हरिद्वार, उत्तर प्रदेश)

अगले दिन सुबह गुरुदेव ने अपने खेमे के बाहर भोजन व्यवस्था करने के लिए मरदाना जी को कहीं से आग मांग कर लाने को भेजा। वह निकट के एक खेमे के पास आग जलती देख कर, वहाँ से आग लेने पहुँचे। उस समय वहाँ पर एक कर्म काण्डी वैष्णव साधु भोजन तैयार कर रहा था। उस साधु ने पवित्र रसोई तैयार करने के लिए चूल्हे को गोबर से लीपा था तथा रसोई के चारों तरफ एक रेखा मंत्र पढ़ कर खीची थी। जिसे वे लोग कारी निकालना कहते थे। उन लोगों की मान्यताएं थी कि कारी खींचने से अर्थात चारो तरफ रेखा खींचने से कोई प्रेत आत्मा उस के भोजन का रस पान नहीं कर पायेगी। तभी मरदाना जी ने उस से अनुरोध किया, "कृप्या कुछ अंगारे देने का कष्ट करें, जिस से हम भी आग जला कर भोजन तैयार कर सकें।" तब वैष्णव साधु ने मरदाना जी को क्रोध से देखा और कहा, तुम मलेच्छ मालूम होते हो। तुम्हारी परछाई मेरे पवित्र भोजन पर पड़ गई है। वह भ्रष्ट हो गया है। मैं तुम्हें छोडूंगा नहीं। साथ ही वह साधु जलती हुई एक लकड़ी लेकर भाई मरदाना जी को मारने दौडा। यह देख कर मरदाना जी वापिस भाग लिए। मरदाना जी आगे-आगे और साधु भद्दी गालियां देता हुआ उन के पीछे-पीछे दोनों गुरुदेव के खेमे में पहुँच गए। तब मरदाना जी ने गुरुदेव जी से निवेदन किया कि उसे इस के प्रकोप से बचाएं। जैसे ही उस साधु ने गुरुदेव को देखा वह झेंपा तथा शिकायत भरे अन्दाज में कहने लगा, इस नीच जाति के व्यक्ति ने मेरी रसोई अपवित्र कर दी है। गुरुदेव ने उसे अपने पास बुलाया किन्तु तेज स्वर की गालियों तथा झगड़े की आवाज सुन कर चारों ओर भीड़ इकटठी हो गई। यह देखकर गुरुदेव ने सब को सम्बोधन करते हुए कहा, "इस साधु का कहना है, हमारा यह शिष्य नीच है, परन्तु यह सिद्ध करे कि यह किस प्रकार नीच है तथा वह स्वयं किस प्रकार ऊँच है?" अब साधु के पास कोई तर्क तो था नहीं। तभी गुरुदेव ने कहा-मैं बताता हूँ कि नीच व्यक्ति वह हैं जो बिना किसी कारण दूसरों को क्रोध में भद्दी गालियां देता है। क्योंकि उस के अन्दर चंडाल क्रोध का वास है तथा दूसरों के प्रति हृदय में दया नहीं। यह उस का कसाईपन है। बिना कारण दूसरों की निन्दा करनी यह कर्म हृदय में बस रहे चंडालि का है। वास्तव में यह कार्य बुद्धिवहीन डूम व्यक्ति जैसा है। जो बिना विचारे अंधविश्वास में उस प्रभु की सृष्टि का वर्गीकरण कर स्वयं को ऊँच तथा दूसरों को नीच

कहता है। जब कि प्रभु ने सब को शारीरिक दृष्टि से पूर्णतय एक जैसा बनाया है, वह तो सर्वव्याप्क है।

कुबुधि डूमणी कुदइया कसाइणि पर निंदा घट चुहड़ी मुठी क्रोधि चंडालि॥
कारी कढी किआ थीऐ जां चारे बैठीआ नालि ॥
सिरी रागु, पृष्ठ 91

राजा विजय प्रकाश (गढ़वाल, उत्तर प्रदेश)

यह प्रवचन सुन कर सब शान्त भाव से गुरुदेव से आग्रह करने लगे कि वह उन्हें इस विषय में विस्तार से समझाएं। तब क्या था, गुरुदेव ने समस्त दर्शकों को प्यार से बिठा कर सम्बोधित करते हुए कहा, "परमात्मा बाहरी पवित्रता पर नहीं रीझता, बल्कि वह तो उन व्यक्तियों पर रीझता है जो विकारों का त्याग कर ऊँचे तथा निर्मल गुणों को मन में धारण कर अपने आचरण को उज्ज्वल करते हैं। जन्म से कोई नीच या ऊँच नहीं होता, व्यक्ति के कर्म ही उसे नीच या ऊँच बनाते हैं। अत: सदैव प्रभु को प्रत्यक्ष मान कर कार्य करने चाहिए क्योंकि उस की ज्योति प्रत्येक व्यक्ति के हृदय में प्रज्वलित है।" गुरुदेव ने भाई मरदाना जी को रबाब बजाकर उपरोक्त पंक्ति गा कर संगत में सुनाने को कहा–कुबुधि डूमणी– – –उस समय गंगा स्नान के लिए गढ़वाल के राजा विजय प्रकाश हरिद्वार पधारे हुए थे। अत: उन्होंने गुरू नानक देव जी की स्तुति सुनी तो वह दर्शनों को आये। उन्होंने गुरुदेव के सामने अपने मन की कई शंकाएं रखी एवं आप से आप की जाति भी पूछी। इस के उत्तर में गुरुदेव ने उत्तर दिया, वह प्रभु ही मेरा साहब तथा पिता भी है। इस लिए मेरी कोई विशेष जाति नहीं मैं तो एक साधारण मानव मात्र हूँ।

तूं साहिबु हउ सांगी तेरा, प्रणवै नानकु जाति कैसी ॥
राग आसा, पृष्ठ. 358

अवतारवाद का खण्डन (कोटद्वार, उत्तर प्रदेश)

राजा विजय प्रकाश के अनुरोध पर आप उस की राजधानी श्री नगर गढवाल पधारे। परन्तु इसी बीच मेला समाप्त होने पर वहाँ से प्रस्थान कर कोटद्वार पहुँचे। वहाँ पर लोग बारह अवतारों की विभिन्न-विभिन्न मूर्तियां स्थापित कर उन की अलग-अलग मान्यताओं से पूजा अर्चना करने में व्यस्त थे। इस कारण जन-साधारण में एकता के स्थान पर अनेकता हो गई थी। सभी एक दूसरे को तुच्छ तथा स्वयं को वास्तविक भक्त मानकर अपने इष्ट को ही सर्वोतम देवता या अवतार समझते थे। अत: जनता की आपसी दूरी बढ़ती जा रही थी। यह सब त्रुटियां देखकर गुरुदेव ने समस्त पुजारियों को कहा, "वह साहब परम ज्योति तो एक ही है फिर कोई तुच्छ तो कोई बड़ा कैसे सम्भव है?"

साहिबु मेरा एको है। एको है भाई एको है ।।

राग आसा, पृष्ठ 350

अवतार वाद व्यक्ति को दुविधा में डाल कर वास्तविक लक्ष्य की प्राप्ति में बाधक बनता है क्योंकि जिस का जन्म हुआ है उस का मरण भी निश्चित है परन्तु जन्म मरण से ऊपर प्रभु आप है इस लिए उसे अ+काल पुरुष कहते है, अर्थात जो काल के चक्र में नहीं आता।जब तक उस काल रहित शक्ति की हम अराधना नहीं करते तब तक हमें मोक्ष प्राप्ति नहीं हो सकती, क्योंकि हमारा इष्ट स्वयं आवागमन के चक्र में बंधा हुआ होता है।

बदरी नाथ मन्दिर (चमोली, उत्तर प्रदेश)

श्री गुरू नानक देव जी गढ़वाल क्षेत्र में अलक नंदा नदी के किनारे-किनारे यात्रा करते हुए बदरी नाथ मन्दिर पहुँचे। ऋतु अनुसार वहाँ दर्शनार्थियों की पहले से ही बहुत भीड़ थी। उस में से बहुत से यात्री गुरुदेव का परिचय हरिद्वार में ही प्राप्त कर चुके थे। उन में से अधिकांश भगवे वस्त्र धारण किये हुए थे। अत: वे गुरुदेव से कीर्तन सुनने का अनुरोध करने लगे। गुरुदेव ने मन्दिर से कुछ दूरी पर एक रिक्त स्थान देखकर आसन लगाया और कीर्तन प्रारम्भ किया-

मिठ रसु खाई सु रोगि भरीजै कंद मूलि सुखु नाही ॥
नामु विसारि चलहि अन मारगि अंतकालि पछुताही ॥
तीरथि भरमै रोगु न छुटसि पड़िआ बिबादु भइआ ॥
दुविधा रोगु सु अधिक वडेरा माइआ का मुहताजु भइआ ॥
गुरमुखि साचा सबदि सलाहै मनि साचा तिसु रोगु गइआ ॥
नानक हरिजन अनदिनु निरमल जिन कउ करमि नीसाणु पइआ ॥

कीर्तन के पश्चात् गुरुदेव ने अपने प्रवचनों में कहा वास्तविक आनंद तो प्रभु नाम को हृदय में बसाने पर है, जो लोग प्रभु को हृदय में न बसा कर तीर्थो में भटकते हैं या कंद-मूल खाकर माया को त्याग देने का ढोंग रचते हैं और अपने आप को इन्हीं कार्यो के लिए धन्य मान लेते हैं, वे दुविधा के कारण लोक परलोक, दोनों को ही खो देते हैं।

कीर्तन तथा प्रवचन सुनने के पश्चात् कुछ श्रद्धालुओं ने अपने कडुवे अनुभव बताये जो कि मन्दिर में पुजारियों के सम्पर्क में आए थे। उन्होंने बताया कि सभी श्रद्धालू यथाशक्ति भेंट लेकर उपस्थित हो रहे थे। परन्तु पुजारीगण उनकी भेंट का मूल्यांकन कर भक्तजनों का वर्गीकरण कर रहे थे। जिन भक्तजनों की भेंट बहुमूल्य रतन थे अथवा बड़ी राशि थी, उनको आदर सम्मान से प्राथमिकता के आधार से प्रथम पंक्ति में बिठाया जा रहा था। इस के विपरीत जन-साधारण को जिन के पास फल-फूल इत्यादि थे, उन को द्वितीय श्रेणी में खड़ा कर प्रतीक्षा के लिए आग्रह किया जा रहा था। जैसे ही दूसरे पहर का समय हुआ। मन्दिर के किवाड़ बन्द कर दिये गये और कहा गया कि भगवान विश्राम कर रहे हैं। अत: चौथे पहर पुन: किवाड़ खुलेंगे तो बाकी के द्वितीय श्रेणी के भक्तजनों को दर्शन देंगे।

यह सब कुछ सुन कर गुरुदेव ने कहा-भगवान न माया का भूखा है न कभी सोता अथवा विश्राम करता है वह तो भक्तजनों के प्रेम का भूखा है तथा परम ज्योति होने के कारण शरीरिक कमजोरियों से ऊपर है।

गुरुदेव सुमेरु पर्वत (कैलाश) पर 'तिब्बत' सिद्ध मण्डली से गोष्ठी

श्री गुरू नानक देव जी, बदरी नाथ मन्दिर से सुमेरु पर्वत (कैलाश) की यात्रा के लिए प्रस्थान कर गये। आप को रास्ते में कुछ अन्य सन्यासी भी लिपूलेप दर्रे की ओर जाते हुए मिले जो कि मानसरोवर झील के स्नान के लिए तीर्थ यात्रा पर जा रहे थे। लिपूलेप दर्रा पार करने के पश्चात् तिब्बती क्षेत्र में आप टकलाकोट नामक नगर में पहुँचे। वहाँ आप जी ने कुछ दिनों के लिए पड़ाव डाला। उन दिनों वहाँ बौद्ध धर्म के अनुयायी रहते थे। वे लोग आप के युक्ति पूर्ण तर्क संगत विचारों से बहुत प्रभावित हुए। इस लिए निकटता होते देरी नहीं लगी। घानिष्ठता होने पर गुरुदेव ने उन के समक्ष सुमेरु (कैलाश) पर्वत पर चढ़ने का अपना विचार रखा। उन्होंने अपने पर्वतारोही विशेषज्ञ दल को गुरुदेव के साथ भेंट करवाई। इस दल के मुख्य सदस्य, गुरुदेव के साथ पर्वतारोहण के लिए चलने को तैयार हो गए। उन के नाम हासू लोहार तथा शीहां छीपा था। उन्होंने गुरुदेव के लिए मृगछाला के वस्त्र तैयार करवा कर दिये तथा नारियल के रेशों से जूते बनवाकर दिये जो कि बर्फ पर फिसलते नहीं। भादों माह में चलते समय अन्य सामग्री भी साथ ले ली, जैसे बर्फ काटने की कुल्हाड़ी, रस्से तथा अन्य खाद्य सामग्री सूखे मेवे इत्यादि।

गुरू जी ने पहले मानसरोवर झील का एक चक्कर लगाया जिस से उन्होंने प्रकृति के अद्भुत सौन्दर्य के साथ-साथ राज-हंसों को झील में कलोल करते देखा। फिर वे सुमेरु पर्वत पर चढ़ने लगे। इस पर्वत पर प्राचीन काल से ही भारत वर्ष के ऋषि-मुनि तपस्या करने आया करते थे, क्योंकि उस समय वह स्थान संसार से बिलकुल कटा हुआ था। वहाँ पर पहुँचने के लिए उन दिनों नेपाल-भारत सीमा के साथ-साथ काली नदी के किनारे-किनारे चलते हुए तवाघाट नामक स्थान से होकर जाते थे तथा दूसरा मार्ग बद्रीनाथ होते हुए मानसरोवर जाता था। वहाँ से फिर झील के उस पार कैलाश पर्वत पर पहुँचते जो कि समुद्र तल से 22000 फुट की ऊँचाइ पर है। वहाँ का तापमान साधारणतय शुन्य से कम ही रहता है। इस लिए यह प्रदेश निर्जन है, किन्तु लंगूर इत्यादि जीव पाए जाते हैं। इस पर्वत में प्रकृति ने अनेकों गुफाएं उत्पन्न की हुई हैं। जिन में

ऋषि-मुनि अपनी तप साधना में लीन रहते थे। उन के आहार का साधन, वहाँ की चट्टानों में से एक विशेष प्रकार का पदारथ निकलता रहता है जिसे शिलाजीत या मोमीयाई कहते हैं। यह बहुत पोष्टिक पदार्थ है। इस के सेवन से शरीर हष्ट-पुष्ट रहता है, क्योंकि यह तरल एवं प्रत्येक प्रकार के गुणों से भरपूर होता है। लंगूर भी इसी तरल पदार्थ को अपना भोजन बनाते हैं। इस पर्वत पर सदैव बर्फ जमी रहती है। वायु के कम दबाव के कारण कदम-कदम पर कठिनाइयां ही कठिनाइयां उत्पन्न होती हैं। इसी पर्वतमाला से सिन्धु नदी का उदगम् भी होता है।

जब गुरुदेव अपने साथियों के साथ वहाँ पहुँचे तो उस पर्वत की विशेष गुफाओं में कुछ तपस्वी मिले जो कि अपने को गुरू गोरख नाथ के शिष्य मानते थे। उन का वहाँ एकांत वास में तप करने का मुख्य उद्देश्य योग साधना द्वारा ऋद्धि-सिद्धि प्राप्त करना होता था अर्थात चमत्कारी शक्तियां प्राप्त कर वे सांसारिक लोगों से अपनी मान्यता करवाते थे। वे लोग अपने यहाँ गुरुदेव को देखकर आश्चर्य-चकित हुए तथा वे उन से प्रश्न करने लगे, "बाले ! अर्थात युवक तुम यहाँ पर किस शक्ति द्वारा पहुँचे हो? क्योंकि इस दुर्गम स्थान पर जन साधारण का पहुँच पाना कठिन ही नहीं असम्भव है।" इस के उत्तर में गुरुदेव ने कहा, "हमारे पास केवल प्रभु नाम का ही एक मात्र सहारा है कोई अन्य साधन तो है ही नहीं।" इस उत्तर से योगी बौखला उठे वे सोचने लगे वह युवक उन्हें बना रहा है। रहस्य को जानने के लिए उन्होंने गुरुदेव से एक विचार गोष्ठी का आयोजन किया, क्योंकि वे जानना चाहते थे कि इतनी अल्प आयु में इतनी प्रतिभा, इतना साहस,उन्हों ने किस प्रकार प्राप्त किया है। जबकि उन्हों ने कई वर्षो की घोर तपस्या करने पर कुछ एक नाम मात्र आत्मिक शक्तियों की प्राप्ति की है। योगिओं की इस मण्डली में लोहारिपा, चरपट, भंगर नाथ, संधर नाथ, गोपी चन्द, हनीफे इत्यादि प्रमुरव्य सदस्य थे।

लोहारिपा योगी ने गुरुदेव पर दूसरा प्रश्न किया, "आप का क्या नाम है? कौन सी जाति से सम्बन्ध रवते हो?"

गुरुदेव कहने लगे, "मैंने अपने अस्तित्व को मिटा डाला है, इस लिए अब मेरा नाम शून्य हो गया है तथा मेरी जाति कोई नहीं। क्योंकि मैं वर्ण-भेद को मानता ही नहीं। मेरे लिए समस्त मानव जाति एक सम है।"

इस पर योगी कहने लगे, "ठीक है चलो आप अपने विषय में कुछ नहीं बताना चाहते तो न सही परन्तु यह तो बताओ कि इन दिनों मृत्यु-लोक (संसार) में जन जीवन किस प्रकार चल रहा है?"

उत्तर में गुरुदेव कहने लगे, "आप अपना कर्त्तव्य भूल कर यहाँ पर्वतों की कन्द्राओं में छिपे बैठे हो जब कि आप को पीड़ित जन साधारण के उद्धार के लिए प्रयत्नशील होना चाहिए था। जब आप ने मानव समाज से नाता तोड़ ही लिया है तो उन के लिए चिंतित क्यों हो रहे हो?"

इस उत्तर से योगी बहुत झेंपे परन्तु फिर से अनुरोध करने लगे कि कुछ तो बताओ? इस पर गुरुदेव ने कहा-

कलि काती राजे कासाई धरमु पंख करि उडरिआ ॥

कूड़ु अमावस सचु चंद्रमा दीसै नाही कह चड़िआ ॥

राग माझ, पृष्ठ 145

मृत्यु लोक में इस समय शासक वर्ग कसाई का रूप धारण कर अधर्म के कार्यो में संलग्न है। प्रजा का शोषण हो रहा है। हर स्थान में झूठ का बोल बाला है, सच्च रूपी चन्द्रमा कहीं दिखवाई नहीं देता।

इस पर लोहारिपा योगी ने प्रश्न किया, "फिर आप ने हमारी तरह संन्यास क्यों ले लिया है? कारण बताओ तथा किस वस्तु की खोज में तुम यहाँ चले आए हो?"

किसु कारणि ग्रिहु तजिओ उदासी ॥

किसु कारणि इहु भेखु निवासी ॥

किसु वखर के तुम वणजारे ॥

किउ करि साथु लंघावहु पारे ॥

राग रामकली, पृष्ठ 939

उत्तर में गुरुदेव कहने लगे-

गुरमुखि खोजत भए उदासी ॥

दरसन कै ताई भेख निवासी ॥

साच वखर के हम वणजारे ॥

नानक गुरमुखि उतरसि पारे ॥   राग रामकली, पृष्ठ 939

गुरुदेव कहने लगे, "मैं तों सत्य का खोजी हूँ। अत: जब प्रभु दर्शन के लिए मन में वैराग्य उत्पन्न हुआ तो विवेक बुद्धि वाले महापुरुषों से विचार विमर्श के लिए चला आया हूँ। वास्तव में मैंने गृहस्थ का त्याग नहीं किया। यह सुनकर चरपट योगी बोला, "फिर आप का क्या विचार है, किस विधि से भव सागर से पार उतारा हो सकता है?"

दुनीआ सागरु दुतरु कहीऐ किउ करि पाईऐ पारो ॥

चरपटु बोलै अउधू नानक देहु सचा बीचारो ॥

राग रामकली,पृष्ठ 938

इस पर गुरुदेव बोले :-

जैसे जल महि कमलु निरालमु मुरगाई नैसाणे ॥

सुरति सबदि भवसागर तरीऐ नानक नामु वखाणै ॥

रहहि इकांति एको मनि वसिआ आसा माहि निरासो ॥

अगमु अगोचरु देखि दिखाए नानकु ता का दासो ॥

राग रामकली, पृष्ठ 938

जैसे कमल का फूल पानी में रहते हुए भी निरलेप रहता है। तथा मुरगाबी (पक्षी) पानी में गोते लगाती हुई भी भीगती नहीं। ठीक इस प्रकार प्राणी को मानव समाज में रहते हुए माया के बन्धनों से उपर रह कर भव सागर से पार हो जाना चाहिए। व्यक्ति को अपने हृदय में प्रभु की याद को सदैव रखते हुए, सांसारिक कार्य करते हुए, वैराग्य का जीवन जीना चाहिए। जो इस विधि से भवसागर पार करने का प्रयत्न करता है वही हमारा मित्र है हम उस के सखा है।

जीवन के इस रहस्य को सुनकर योगी गुरदेव से बोले, "हे युवक ! तुम्हारा गुरू कौन है? तथा तुम किस सिद्धांतवाद को मानते हो और कब से इस पर आचरण कर रहे हो?"

कवण मूलु कवण मति वेला ।।

तेरा कवणु गुरू जिस का तू चेला ।।

राग रामकली, पृष्ठ 942

इस के उत्तर में गुरुदेव कहने लगे, "जब से वायु मण्डल की उत्पति हुई है तब से मैं अपने सतगुरू की विचारधारा का अनुयायी हूँ। मैंने शबद को गुरू मानकर धुनि को सुरत में आत्मसात कर लिया है।"

पवन अरंभु सतिगुर मति बोला ।।

सबदु गुरू सुरति धुनि चेला ।।

राग रामकली, पृष्ठ 943

यह उत्तर सुनकर योगी पुनः गुरुदेव से कौतुहल वश पूछने लगे, "आपने सहज जीवन की प्राप्ति, इस अल्प आयु में कैसे की है? जब कि हम लम्बे समय की हठ साधना करने के पश्चात् भी मन की भटकन से मुक्ति नहीं पा सके। मन की चंचलता पर विजय प्राप्ति की आप की क्या युक्ति है?"

उत्तर में गुरुदेव कहने लगे-

अंतरि सबदु निरंतरि मुद्रा हउमै ममता दूरि करी ।।
कामु क्रोधु अंहकारु निवारै गुरु कै सबदि सु समझ परी ।।
खिंथा झोली भरिपुरि रहिआ नानक तारै एकु हरी ।।
साचा सहिबु साची नाई परखै गुर की बात खरी ।। 10 ।।

राग रामकली, पृष्ठ 939

मैंने अपने मन को गुरू शब्द द्वारा नियन्त्रण में कर लिया है जिस से अब पांचो विकार मुझे नहीं सताते यदि आप भी ऐसा चाहते हैं तो इस आडम्बरों भरे भेष तथा सामग्री-मुद्रा, खिंथा, झोली इत्यादि त्याग कर गुरू की सीख पर जीवन यापन करना सीख लें।

यह उत्तर सुनकर योगी आपस में विचार करने लगे कि युवक नानक देव बहुत प्रतिभावान है, इस को पराजित करना कठिन ही नहीं असम्भव है। यदि किसी युक्ति से इसे छल लिया जाए तो हो सकता है यह हमारा योग मत धारण कर लें। यदि ऐसा हो जाता है तो हमारे मत को इस प्रतिभावान युवक के माध्यम से समस्त विश्व में फैलाने में सहायता मिलेगी। अत: उन्होंने इस कार्य के लिए एक योजना बनाई। जब गुरुदेव के साथी भोजन व्यवस्था करने के लिए गए तभी उन्होंने गुरुदेव से नम्रता पूर्वक अनुरोध किया, "हे बाले ! हमारे लिए कष्ट करो। सामने वाले कुण्ड (तलाब)से इस कमण्डल में जल ले आओ।"

जब कमण्डल लेकर गुरुदेव वहाँ पहुँचे तो कुण्ड अमूल्य रत्नों (हीरे, मोती इत्यादि) से भरा पड़ा था। परन्तु गुरुदेव वहाँ से खाली कमण्डल ले कर लौट आए। योगी पूछने लगे कि वहाँ पर उन्होंने कया देखा इस पर गुरुदेव कहने लगे, " वहाँ अमूल्य रत्न बिखरे हुए पड़े थे। परन्तु मैं तो पानी लेने गया था, सो खाली कमण्डल ले आया हूँ, वास्तव में यह रत्न मेरे किसी काम के नहीं।"

यह उत्तर सुनकर योगियों का सारा अभिमान चूर-चूर हो गया, क्योंकि वे तो गुरुदेव को माया जाल में फंसाना चाहते थे। परन्तु गुरुदेव के व्यंग ने उन का पर्दाफाश कर दिया, क्योंकि वह रत्न उनकी एक करामात ही तो थी। कनीफा नाम के एक योगी ने गुरुदेव को अपने मत की श्रेष्टता बताते हुए कहा कि यदि वह योगी बन जाएं, कानों में मुद्रा तथा शरीर पर भस्म लगाकर मृग छाला या लंगोटी धारण कर लें तो उनकी बहुत मान्यता होगी तथा वह परम पद को प्राप्त हो जायेंगे। परन्तु गुरुदेव ने उत्तर दिया-

एको चीरा जानै जोगी ।।

कलप माइआ ते भए अरोगी ।। (जन्म साखी)

भाव कि उन्होंने कानों में छेद करने की अपेक्षा हृदय में छेद किया है जिस से हृदय की लालसा समाप्त हो गई है और वह माया मोह के रोगों से मुक्त हो गई है।

इस पर संघर नाथ योगी कहने लगा प्रभु प्राप्ति के लिए गृहस्थ त्याग कर योगी बनना अनिवार्य है, वह इस लिए कि सांसारिक झंझटों के रहते आराधना हो ही नहीं सकती।

मूल विटम को ग्रिहसथ पठानहु ।।

आस्रम अपर जि सारवा जानहु ।। **(जन्म सारवी)**

उत्तर में गुरुदेव ने कहा-संसार की उत्पत्ति का मूल स्रोत तो गृहस्थ है इस के बिना तो किसी के अस्तित्व की कल्पना भी नहीं की जा सकती। इस लिए गृहस्थ ही श्रेष्ठ आश्रम है। जहां सभी कर्तव्य निभाते हुए आराधना भी की जा सकती है। फिर वह पूछने लगा, "आप ने गृहस्थ में रहते माया कैसे त्यागी है तथा काम, क्रोध पर कैसे विजय पाई है?" उत्तर में गुरुदेव ने कहा-

सच जाण कर काल गवाइआ ।।

सुरति सबद सिउ तिआगी माइआ ।।

द्रिड़ विचार विकार सभ जीते ।।

त्रैगुण मेटे भए अतीते ।।

कहि नानक सुण संधर नाथ ।।

आउण जाण हुकम प्रभ साथ ।। **(जन्म सारवी)**

गुरुदेव ने कहा-मैंने सत्य की आराधना कर मृत्यु के भय से मुक्ति पाई है तथा सुरत को शबद के संग लीन कर माया पर विजय पाई है। मन के दृढ़ संकलप से विकारों पर विजय पाई है। इन तीन शुभ गुणों के धारण करने मात्र से मन से बैरागी बन गया हूँ परन्तु यह सब उस प्रभु की कृपा दृष्टि से हुआ है।

इस सिद्धांत को श्रवण कर योगी कहने लगे, "आप ने जो कहा है, हमने पहले कभी सुना-पढ़ा नहीं। अत: आप के विचार तो क्रांतिकारी जान पड़ते हैं जिस से समाज में हल-चल उत्पन्न हो सकती है।"

गुरुदेव कहने लगे, "हे योगियो, आप लोग हठ योग त्याग कर, मुझ जैसा सहज जीवन जीना आरम्भ कर दें तो त्रिसूत्री कार्यक्रम से सामाजिक जीवन जी कर हर्ष उल्लास का आनंद सदैव उठा सकते हैं। जिस से आप का तेज प्रताप बढ़ेगा।

सच नाम जप के तुम देखो दामन तै वड दमकै ॥
मानो दत जत कहि नानक घट-घट साहब चमकै ॥
(जन्म सारवी)

फिर योगी पूछने लगे, "आप सन्तुष्ट हैं, जिस से आप का अन्त:कर्ण शान्त, निर्भीक तथा निशछल सा जान पड़ता है परन्तु हमें कड़ी साधना के पश्चात् भी ऐसी अवस्था प्राप्त नहीं हुई। आप इस का रहस्य बताएं?"

भाणा मंनण चाख कर सादा ॥
त्रिपत भए स्री गुर परसादा ॥ (जन्म सारवी)

गुरुदेव ने उत्तर दिया-मैं प्रभु के प्रत्येक कार्य को प्रसन्नता पूर्वक स्वीकार करता हूँ तथा कभी भी उस के कार्यो में हस्तक्षेप नहीं करता। इस लिए मैं सदैव ही हर्ष-उल्लास में दिखाई देता हूँ। परन्तु यह अवस्था मुझे गुरू की कृपा से प्राप्त हुई है। यह ज्ञात होते ही सभी योगियों ने अपनी हठधर्मी त्याग कर पराजय स्वीकार कर ली और कहा नानक जी आप का मार्ग ही समस्त मानव कल्याण के लिए हितकारी है। अत: हम भी आप की प्रेरणा से प्रेरित हो गए हैं। इस पर गुरुदेव ने उनको सत्य मार्ग दृढ़ करवा कर, स्वयं वापस टकलाकोट पहुँच गये।

चण्डी देवी का खण्डन (अलमोड़ा उत्तर प्रदेश)

तत्पश्चात्, लिपूलेप दरा से वापस काली नदी के किनारे-किनारे दारचू ला पहुँचे जो कि नेपाल भारत सीमा पर स्थित है वहाँ से पिथौरा गढ़ से होते हुए अलमोड़ा नगर पहुँचे। उन दिनों अल्मोड़ा में चन्द जाति के राजा चन्डी देवी की पूजा के लिए मनुष्य की बलि भेंट में चढाते थे। गुरुदेव ने इस कुकर्म का बड़ा विरोध किया तथा कहा, "निर्जीव पत्थर की मूर्ति के लिए जो कि तुमने स्वयं निर्मित की है, एक जीवित सुन्दर स्वस्थ्य मनुष्य का वध करना, जिसे प्रभु ने स्वयं हम जैसा निर्मित किया है, कहाँ तक उचित है? इस प्रकार प्रभु कदाचित प्रसन्न नहीं हो सकता। अत: हमें सदैव प्राणी मात्र की सेवा करनी चाहिए क्योंकि हम उस प्रभु की बनाई जीवित मूर्तियां है। हम सब में प्रभु की अंश है। वह तो सर्वव्यापक हमारा पिता है हमें केवल उस अकाल पुरुष की ही पूजा करनी चाहिए।"

'तपोवन' नैनीताल घाटी (उत्तर प्रदेश)

जब आप पर्वतीय क्षेत्र से नीचे उत्तर कर मैदानो की ओर आ रहे थे, तो रास्ते में नैनीताल जिले की एक रमणीक घाटी में सिद्धि प्राप्त योगियों की मण्डली का स्थान तपोवन पड़ता था। वहाँ पर वे लोग अपनी-अपनी धूनी लगा कर आश्रम बना कर अपने इष्ट की हठ योग आसनों द्वारा आराधना किया करते थे। परन्तु कुछ एक ध्यान एकाग्र न हो पाने के कारण नशो का सहारा लेकर, मदहोश रहने को ही प्रभु भजन की संज्ञा देते थे तथा बहुत अभिमानी हो गये थे। भंग और धतूरा नशों की खुशकी के कारण आपस में बहुत क्रोध करते जिस के फल स्वरूप उन का परस्पर झगड़ा इत्यादि करने का स्वभाव बन गया था। वे लोग अपनी सिद्धियों का जन साधारण दिखावा कर उन से अनाज तथा आवश्यक वस्तुएं दान में प्राप्त करते रहते थे। जब गुरू नानक देव जी से इन लोगों का सामना हुआ तो गुरू जी ने उन लोगों की निम्न स्तर की दशा देख कर बहुत दुःख व्यक्त किया एवं कहा-जिन लोगों ने जनता का मार्ग दर्शन करना था वे यहाँ पर्वतों की कन्दराओं में छिपकर मदहोश पड़े हुए हैं। यहाँ तक कि आध्यात्मिक जीवन भी नष्ट कर चुके हैं। क्योंकि अहं भाव तथा क्रोध यह दो मूलभूत अवगुण, हमें प्रभु चरणों से दूर करते हैं। ऋद्धि-सिद्धि प्राप्त हो जाने से भी जीवन में कोई क्रांति आने वाली नहीं, बल्कि व्यक्ति भटक जाता है, तथा अपना मुख्य उद्देश्य, प्रभु चरणों में लीन होने का मार्ग भी खो देता है। गुरुदेव ने वहाँ पर एक रीठे के वृक्ष के नीचे अपना आसन जमाया तथा भाई मरदाना जी ने अधिक सर्दी के कारण अपने लिए कुछ लकड़ियां जंगल से इकट्ठी कर लीं, जिन को जला कर रात काटी जा सके परन्तु योगियों ने भाई जी को ईर्ष्यावश आग नहीं दी, जिस से वह अपनी धूनी जला सके। उन का विचार था कि ये नये सन्यासी ना जाने कहां से आ गये है? कहीं यहीं हमारे इस क्षेत्र पर कब्ज़ा न कर लें। गुरुदेव ने उन की नीच प्रविर्तियां देखकर भाई जी को दो पत्थर टक्करा कर अग्नि उत्पन्न करके सूखी घास जलाने को कहा। भाई जी ने ऐसा ही किया और वह अपनी धूनी जलाने में सफल हो गये, किन्तु अर्ध रात्री को बहुत भयंकर आंधी आई और उस के साथ घनघौर वर्षा हुई। जिस कारण सभी योगियों की धूनियां बुझ गई। केवल प्रभु

कृपा से गुरुदेव जी की धूनी में कुछ अंगारे बचे रहे। जिस से भाई जी ने पुनः अग्नि प्रज्वालित कर ली। यह देखकर योगी बहुत छटपटाये। वे सोचने लगे कि अब किस मुंह से गुरुदेव जी से आग मांगी जाए क्योंकि वे पिछली संध्या को भाई जी को स्वयं आग देने से इन्कार कर चुके थे। खैर वे मज़बूरी वंश गुरुदेव के समक्ष उपस्थित हुए और क्षमा याचना करते हुए आग की भीक्षा मांगने लगे। उदारवादी गुरुदेव जी ने उन की अवज्ञा को क्षमा करते हुए उन्हें तुरन्त आग दे दी। एवं भाई जी को रबाब बनाकर प्रभु स्तुति में कीर्तन करने का आदेश दिया-राग 'रामकली' सिद्ध योगियों का बहुत प्रिय राग है। जब मन पसंद राग में उन्होंने मधुर स्वर में कीर्तन सुना तो वे रह न सके। सभी बारी-बारी गुरुदेव के पास आ कर बैठ गये। तब गुरुदेव ने निम्नलिखित वाणी उच्चारण की -

पूरे गुर ते नामु पाइआ जाइ ।। जोग जुगति सचि रहै समाइ ।।

बारह महि जोगी भरमाए ।। संनिआसी छिअ चारि ।।

(सिद्धि गोष्ट) राग राम कली, पृष्ठ 941

यह शब्द सुन कर योगियों के मन में अपने विषय में भाँति-भाँति की शंकाए उत्पन्न हो गई। इस लिए उन को एहसास होने लगा कि वे बहुत त्रुटियों भरा जीवन जी रहे हैं एवं सत्य के मार्ग से भटक गये हैं वास्तव में वे मनमानी कर लक्ष्य प्राप्ति से बहुत दूर जा चुके हैं। जिन कर्मो को वे धर्म कहते हैं, वह तो कुकर्म हैं। अतः वे लोग गुरुदेव के समक्ष अपनी शंकाओ के समाधान हेतु निवेदन करने लगे कि आप वे उन्हें सफल जीवन की कोई युक्ति बताएं। गुरुदेव जी-आप लोग सत्य मार्ग से विचलित हो गये हैं, आप लोगों ने जो आडम्बर रच लिया है वह एक मात्र झूठा प्रदर्शन तथा मनमानी है इन बातों का प्रभु आराधना से कोई सम्बन्ध नहीं, केवल वेशभूषा परिवर्तन से जीवन में कोई क्रांति नहीं आती, उस के लिए तृष्णाओं का त्याग अति आवश्यक है। आप स्वयं इस बात के लिए अपने हृदय में झाँक कर देख सकते हैं। आप ने समाधि लगाने के नाम पर यह गलत नशों का जो सहारा लिया है वास्तव में भयंकर कुकर्म है। जो कि मनुष्य को अंधे कुएं में धकेल देता है। यदि वास्तव में योग कमाना चाहते हो तो अपने मन पर नियंत्रण रख कर पूर्ण गुरू के शब्दो की कमाई से ऐसा जीवन बितायें जो कि इच्छाओं रहित हो। यानि आप अपने को अस्तित्व विहीन बना लें। जैसे जीते जी मरना

नानक जीवतिआ मरि रहीऐ ऐसा जोगु कमाईऐ ॥

राग सूही, पृष्ठ 730

यह उपदेश सुनकर योगियों को अपनी भूल का एहसास हुआ। परन्तु कुछ एक योगी अपने अहं भाव में थे वे इतनी जल्दी अपनी पराजय स्वीकार करने को तैयार न थे। इस लिए वे गुरुदेव को उलझाने के लिए भाँति-भाँति के प्रश्न करने लगे। तभी मरदाना जी ने भूख के कारण गुरुदेव के समक्ष भोजन की इच्छा व्यक्त की। गुरुदेव ने मरदाने को कुछ कन्द-मूल खाने को कहा किन्तु वहाँ पर योगियों ने कुछ भी नहीं छोड़ रखा था। वहाँ की सभी खाद्य वनस्पति उन्होंने अपने पास संग्रह कर ली थी। अत: भाई मरदाना जी भूखे लौट आये। तब गुरुदेव ने मरदाना जी से कहा, "भाई बचन मानो, जिस वृक्ष के नीचे हम हैं इसी रीठे के फल सेवन कर अपनी भूख मिटाओ।" तब क्या था ! आज्ञा होते ही वह वृक्ष पर झट से चढ़ गये और रीठे खाने लगे। यह देखकर मरदाना जी अति प्रसन्न हुए कि सभी रीठे स्वादिष्ट तथा मीठे थे उन्होंने तुरन्त ही बहुत से रीठे गुरुदेव के लिए भी एकत्र कर लिए और नीचे उत्तर कर उनको भेंट किये तब गुरुदेव ने उन रीठों को प्रसाद के रूप में सभी योगियों में बंटवा दिया। परन्तु योगियों के मन में रीठों के मीठे होने पर शंका थी। अत: उन्होंने एक रीठे का सेवन कर परीक्षण किया वह तो वास्तव में मीठे हो चुके थे। यह आश्चर्य देख कर उन्होंने भी अपने लिए रीठे अन्य वृक्षो से तोड़ लिए किन्तु सब कुछ व्यर्थ था वह तो उसी प्रकार कड़वे थे जिस प्रकार उन को होना चाहिए था। अत: उन का अभिमान चूर-चूर हो गया तथा वे सभी नत-मस्तक हो कर प्रणाम करने लगे एवं अतिथि सत्कार न करने के लिए प्रायश्चित कर क्षमा याचना भी करने लगे। तब एक वृद्ध अवस्था वाले प्रमुख योगी ने गुरुदेव से आग्रह किया कि वे उनकी सम्प्रदाय के मुख्य महंत जो कि यहाँ से 20 कोस दूर गोरख मता नामक स्थान पर बडे मठ में विराजमान थे उन से अवश्य भेंट कर के उन्हें कृतार्थ करें।

'गोरख मता / नानक मता' नैनीताल का तराई क्षेत्र (उत्तर प्रदेश)

वहाँ से गुरुदेव घने पहाड़ी जंगलो से होते हुए जिला नैनीताल के तराई वाले क्षेत्र में गोरख मता नामक स्थान पर पहुँचे। वहाँ दूर-दूर छोटे-छोटे गांव थे। यह क्षेत्र विरान न हो कर कृषि आधारित क्षेत्र था जिस कारण योगियों की उदर पूर्ति के लिए उन्हें भिक्षा सहज मिल जाती थी। यदि कोई किसान भिक्षा में अनाज, मठ को न भेजता तो उस को योगी तप के बल से श्राप देने की धमकी देते थे। अत: लोग स्वयं श्राप के भय से सभी प्रकार की खाद्य सामग्री समय-समय पर आवश्यकता अनुसार उन्हें पहुँचाते रहते थे। वहाँ पहुँच कर गुरुदेव ने एक सूखे पीपल के पेड़ के नीचे अपना आसन जमाया तथा भाई मरदाना जी को कीर्तन करने का आदेश दिया। जब सरल भाषा में मधुर संगीत के साथ लोगों ने प्रभु स्तुति सुनी तो बहुत प्रभावित हुए। वहाँ के लोग, जो कि सत्य की खोज में योगियों के चक्र में उलझे हुए थे, गुरुदेव के पास वाणाी श्रवण करने हेतु एकत्र होने लगे। उस समय गुरुदेव ने जन समूह को उपदेश दिया कि व्यक्ति को गृहस्थ में रह कर अपने सभी कर्त्वय निभाते हुए, प्रभु भजन भी करते रहना चाहिए, वास्तविक में वही ही सन्यास है। घर त्याग कर या कोई विशेष वेशभूषा धारण करने से कोई व्यक्ति महान नहीं हो जाता। महान वही है जो अपनी जीविका स्वयं कमाए तथा परमार्थ के लिए दीन दुखियों की सहायता करता रहे। जो व्यक्ति ऐसा न कर के दूसरो के धन पर जीवन निर्वाह करता है तथा त्यागी होंने का ढोंग रचता है। वह प्रभु प्राप्ति कर ही नहीं सकता। क्योंकि वास्तविक त्याग मन का है, शरीर का नहीं, शरीर को बिना कारण कष्ट देने से आत्मा शुद्ध नहीं होती, तथा यह कार्य स्वयं को धोखा देना है। जब यह विचार जन-साधारण ने सुने तो उन को योगी, ढौंगी तथा कपटी दिखाई देने लगे जो कि उन के माल से ऐश्वर्य पूर्ण जीवन जी रहे थे एवं बिना परीश्रम के अपने आप को महान दिखा कर लोगों को वरदान-व-श्राप से भय भीत कर रहे थे। तब क्या था। कुछ व्यक्तियों ने योगियों की उन के यहाँ जाकर आलोचना कर दी कि वे लोग स्वयं ही पथभ्रष्ट हैं, दूसरों का क्या कल्याण करेंगे? यह सब जान कर योगी बहुत क्रोधित हुए कि ऐसा कौन है जो उनके विचारों का खण्डन कर रहा है तथा जनता को विपरीत शिक्षा दे रहा है। यदि वह

ऐसा करने में सफल हो गया तो उनकी जीविका का क्या होगा? उन्हें कौन पूछेगा? तभी उन के पास एक योगी तपोबन नामक स्थल से आ पहुँचा जिस ने उन को सब वार्ता कह सुनाई जो कि गुरू नानक जी के वहाँ पर विचार-विनिमय के समय घटित हुई थी कि नानक नाम के एक ऋषि हैं जो कि अपने शिष्य मरदाने के साथ संगीत में प्रभु स्तुति करते हैं। तो रीठे जैसा कड़ुवा फल भी मीठा हो जाता है। वह गृहस्थ आश्रम को बहुत महानता देते हैं तथा इसी आश्रम में तीन सूत्री कार्यक्रम के अन्तर्गत मनुष्य का कल्याण बताते हैं 1. किरत करो (परीश्रम करो) 2. वण्ड के छको, (बांट कर खाओ) 3. नाम जपो, (प्रभु चिन्तन करो)। योगी लोग-यदि ऐसा है तो हम अभी इसी समय उस की परीक्षा लेंगे कि वह बाँट कर कैसे खाता है? अत: वे लोग विचार के लिए गुरुदेव के पास उपस्थित हो गये। तो क्या देखते हैं कि कई वर्षो से सूखा पीपल का वृक्ष हरा होने की स्थिति में आ गया था तथा उस पर कोमल पत्तियां निकली हुई दिखाई देने लगी थीं। गुरुदेव के समक्ष होते ही उन्होंने आदेश-आदेश कहा तथा एक तिल का बीज भेंट में दिया। यह देखते ही गुरुदेव ने मरदाना जी को तुरन्त उस तिल को घोट कर सभी अतिथियों को पिला देने के लिए कहा। मरदाना जी ने गांव वालो की सहयता से उसे घोट कर सभी योगियों में बांट दिया। इस प्रकार योगियों ने अपनी पहली चाल विफल होती देखी। वहाँ की ग्राम निवासी स्त्रियों ने गुरुदेव के समक्ष भेंट में जो रसद रखी थी उस में आटा, शक्कर तथा घी इत्यादि था। गुरुदेव ने मरदाना जी को पुन: आदेश दिया कि त्रीभवनी बनाने में इस रसद का उपयोग करो। गांव वालो की सहायता से मरदाना जी ने घी में आटा भून कर तथा शक्कर पानी मिलाकर कड़ाह प्रसाद (हलवा) तैयार कर लिया। योगियों ने गुरुदेव से वाद-विवाद करना आरंभ कर दिया कि वह मानव समाज में श्रेष्ठ हैं क्योंकि वह जती-सती रहते हैं। जती-सती होना ही श्रेष्ठ होने की निशानी है। तब गुरुदेव ने उत्तर दिया कि भंगर नाथ यदि तेरी माता गृहस्थी न होती तो तेरा जन्म कहाँ से होता? तुम्हारे अनुसार यदि सभी लोग गृहस्थ त्याग कर सन्यासी बन जाएं तो संसार की उत्पत्ति कैसे होगी? यदि तुम लोगों को नारी जाति से इतनी घृणा है तो उन माताओं बहनों के हाथों से बने भोजन को क्यों खाते हो तथा उन ही गृहस्थियों के यहाँ जाकर भिक्षा क्यों मांगते हो? इन बातो का उत्तर योगियों के पास तो था नहीं, इस लिए वह शांत हो गये तथा गुरुदेव से कहने लगे आप ही बताएँ कि श्रेष्ठ कौन है? तब गुरुदेव

ने उत्तर दिया – श्रेष्ठ वहीं है जो अपने को प्रभु कृपा के पात्र बनाने के लिए किसी प्रकार का ढोंग नहीं रचता। वास्तविक योग तो मन का है। केवल योगी होने के चिन्हों से आध्यात्मिक प्राप्ति हो ही नहीं सकती। जैसे कि आप लोगों ने कानों में बड़ी – बड़ी मुन्द्रा पहनी है, शरीर पर गोदड़ी तथा हाथ में डण्डा (एक बांस जिसे आप सिंङ्गी कहते हैं), है। शरीर पर भस्म (राख) मल ली है। सिर मुडवा लिया है अथवा जटा – जूट धारण कर लिया है। यह सभी प्रकार के चिन्ह किसी रूप में भी प्रभु प्राप्ति के लिए सहायक नहीं। अत: शारीरिक दिखावे से जनता को तो भ्रम में डाला जा सकता है, प्रभु को नहीं। वास्तविक योगी वहीं व्यक्ति है जो भले ही गृहस्थ आश्रम में जीवन निर्वाह करता हो। परन्तु माया से निर्लेप हो। ठीक उसी प्रकार जैसे कमल का फूल जल में रहते हुए भी जल के स्पर्श से सदैव मुक्त रहता है। या मुर्गावी पानी में गोते तो लगाती है किन्तु भीगती नहीं।

जोगु न खिंथा, जोगु न डंडै जोगु न भसम चड़ाईऐ ।।

जोगु न मुंदी मूंडि मुडाइऐ जोगु न सिंङी वाईऐ ।।

अंजन माहि निरंजनि रहीऐ जोग जुगति इव पाईऐ ।।

राग सूही, पृष्ठ 730

गुरदेव जी कहने लगे – भले ही आप शमशान घाट में आसन जमाएं, भले ही दूर दराज प्रदेशो में भ्रमण करें या तीर्थो पर जा कर हठ साधना के लिए नशों का सेवन करें, बात तो बनेगी नहीं जब तक कि राम नाम की कमाई हृदय से नहीं की जाती। यह प्रवचन सुन कर, उन योगियों को अपनी त्रुटियां स्पष्ट दिखाई देने लगी तथा वे जनता के सामने फीके पड़ने लगे। उस समय एक योगी ने गुरुदेव से विनती की "हे गुरुदेव ! आप हम पर भी कृपा दृष्टि करें एवं हमें भी कोई युक्ति बताएं जिस से हमारा भी कल्याण हो"। योगियों की प्रार्थना पर गुरुदेव रीझ गए (प्रसन्न हुए) एवं उपदेश दिया – सर्व प्रथम, किसी पूर्ण पुरुष के मिलाप मे ही मन में वसी शंकाओं का समाधान होता है। उन्हीं के उपदेशों से मन की भटकना समाप्त होती है। जिस से अन्त:करण में अमृत नाम उत्पन्न होता है, फिर किसी बाहरी नशे की कोई आवश्यकता नहीं होती। व्यक्ति की सहज ही समाधि लगती है अर्थात् मन एकाग्र हो जाता है तथा हृदय रूपी घर

में परीक्षा होती है। जीवित रहते हुए भी इच्छा विहीन, त्यागी, अहं-विहीन, शून्य जीवन जीना ही वास्तविक योग है, जिस से बिना बाहिरी साजों के संगीत तुम्हारे अन्त:करण में सुनाई देगा, तभी निर्भय पदवी प्राप्त होगी।

जोगु न बाहरि मड़ी मसाणी जोगु न ताड़ी लाईऐ ॥

जोगु न देसि दिसंतरि भविऐ जोगु न तीरथि नाईऐ ॥

सतिगुरु भेटै ता सहसा तूटै धावतु वरजि रहाईऐ ॥

निझरु झरै सहज धुनि लागै घर ही परचा पाईऐ ॥

नानक जीवतिआ मरि रहीऐ ऐसा जोगु कमाईऐ ॥

(जन्म साखी)

योगियों ने गुरुदेव की बताई युक्ति को समझा तथा उस पर मनन किया परन्तु 'भूखे भजन न होत गोपाला' वाली स्थिति हो रही थी। योगियों ने भोजन की इच्छा व्यक्त की किन्तु वह मन ही मन सोच रहे थे कि वहाँ पर नानक जी उनका अतिथि सत्कार किस प्रकार करेंगे। क्योंकि वहाँ तो कन्द मूल-फल इत्यादि भी दिखाई नहीं दे रहे थे जिस से भूख मिटाई जा सके। उस समय गुरुदेव ने मरदाना जी से कहा, "आप ने जो त्रिभवनी तैयार की है, उसे लोगों में परोस कर इन की सेवा करे। भाई मरदाना जी ने गांव वालों की सहायता से तैयार किया गया हलवा (कड़ाह प्रसाद) पत्तों पर परोस कर, सभी योगियों को सेवन कराया। जिस को चखते ही वे गदगद हो उठे, क्योंकि ऐसा स्वादिष्ट व्यंजन उन्हें पहले कभी नहीं मिला। वास्तव में वह सोच रहे थे कि वे वृद्ध अवस्था वाले योगी हैं, न मालूम वे लोग उन्हें खिला भी सकेंगे कि नहीं। जब कड़ाह प्रसाद छक कर सभी सन्तुष्ट हो गये। तब योगियों ने मिलकर एक निर्णय लिया कि उनको नानक जी से ब्रह्म ज्ञान प्राप्त हुआ है। अत: उस स्थान का नाम गोरख मते से बदल कर नानक मता कर दिया जाए।

‘ऋण चुकता’ टांडा नगर (उत्तर प्रदेश)

वहाँ से गुरुदेव प्रस्थान कर अयोध्या नगर की ओर चल दिये। मार्ग में टांडा नाम का एक विशाल नगर था जहां गुरुदेव ने पड़ाव डाला। वहाँ पर किसी बड़े व्यापारी के यहाँ लम्बे समय के पश्चात् पहले बच्चे ने जन्म लिया था। अत: नगर वासी जो कि अधिकांश उसी परिवार से भाईचारक सम्बन्ध रखते थे, वे बहुत खुशियां मना रहे थे तथा बहुत मिठाईयां बांटी जा रही थी। गुरुदेव से आज्ञा प्राप्त कर भाई मरदाना जी भी नगर में गये तथा वहाँ पर सभी प्रकार के नृत्य तथा गाने, बाजाने से रंग रलियां मनाने का दृश्य देखा। किन्तु मरदाना जी की तरफ किसी ने भी ध्यान नहीं दिया, न ही उन को किसी ने भोजन आदि करने का आग्रह किया। इस प्रकार मरदाना जी निराश, भूखे प्यासे लौट आए। तब उन से गुरुदेव ने कहा, “प्रभु जो करता है भला ही करता है यदि आप वहाँ से मिठाई इत्यादि व्यंजन सेवन करते तो आप ने उस बालक के लिए अवश्य आर्शीवाद देना था। परन्तु वह बालक तो एक माया का छलावा भर है। उस ने जहां जन्म लिया है वहां पर उसने उस पिता रूपी व्यक्ति से पुराना ऋण चुकाना है। अत: वह बालक रूप होकर अपना ऋण लेने आया है। जैसे ही ऋण समाप्त होगा बालक शरीर त्याग कर पुन: लौट जाएगा। इस लिए आप का आर्शीवाद देना उचित नहीं था, क्योंकि साधु का कहा सत्य होता है उसे प्रभु भी मान्यता प्रदान करते हैं। किन्तु अब वह बालक विधाता की इच्छा अनुसार सहज ही लौट सकेगा। उस में आप का आशीर्वाद बाधक नहीं होगा, क्योंकि वह दिया ही नहीं गया।” तभी सूचना मिली कि नवजात शिशु की मृत्यु हो गई है।

‘दीवाली पर्व’ अयोध्या नगर (उत्तर प्रदेश)

कुछ ही दिनों में गुरू नानक देव जी अपने साथियों सहित यात्रा करते हुए अयोध्या पहुँचे। उन दिनों दिवाली पर्व के आगमन की तैयारियां हो रहीं थी। अत: नगर में बहुत धूम-धाम थी। सब लोग मन्दिरो में उपस्थित हो कर पूजा अर्चना में लगे हुए थे। विशेष कर लक्ष्मी पूजा पर अधिक बल दिया जा रहा था। यह देख कर मरदाना जी ने

गुरू जी को प्रश्न किया, "हे गुरुदेव ! यहाँ पर लोग श्री राम चन्द्र जी के स्थान पर लक्ष्मी पूजा को क्यों अधिक महत्व देते है? जब कि यहाँ इन दिनों केवल श्री राम जी ही की याद में उन के कार्यो को स्मरण कर दुष्ट प्रवृतियों से छुटकारा पाने का प्रयत्न करते हुए उन की पूजा करनी चाहिए थी। परन्तु इस के विपरीत यह लोग जुआ तथा मदिरा आदि के कारण स्वयं राक्षस बुद्धि के कार्यो में संलग्न है?" इस प्रश्न के उत्तर में गुरुदेव ने कहा, "भाई, राम जी के जीवन से लोगों ने सीख ही कब ली है? यह जो भक्त गण दिखाई दे रहे हैं वास्तव में राम भक्त नहीं, केवल माया (लक्ष्मी) भक्त है। किन्तु जो माया के पीछे भागता है उस से लक्ष्मी दूर भागती है। जब कि राम (नारायण) के पीछे जाने वाले को स्वयं नारायण गले लगाने के लिए आगे हो कर लेने आते हैं। परन्तु यह रहस्य सभी की समझ में आने वाला नहीं कि जब नारायण ही हमारे हो गये तो लक्ष्मी स्वयं हमारी हो जाएगी।" इस विषय पर वहाँ के भक्त गणो से जब विचार-विमर्श हुआ तो गुरुदेव ने कहा, "वास्तव में श्री रामचन्द्र जी की स्मृति में दिवाली मनाने का तात्पर्य यह है कि आप उन के दर्शाऐ मार्ग पर चलें, किन्तु आप ने तो उन की मूर्तियां बना कर उन के आदर्शो के विपरीत कार्य आरम्भ कर दिये हैं। उदाहरण के लिए उन्होंने शवरी के जूठे बेरों को सेवन कर, यह दिखाया था कि सभी मनुष्य बराबर सम्मान के अधिकारी है, किसी से भी घृणा नहीं होनी चाहिए। किन्तु आप ने आज भी शवरी के वंशज, तथाकथित शूद्रों को अपने मन्दिरों में प्रवेश पाने पर प्रतिबन्ध लगा दिया है। यह कैसी राम पूजा है? वास्तव में यह सब मन माने कार्य हैं। उन की पूजा नहीं, केवल उन का अपमान करने के बराबर है, कि हे महा पुरुषों जो आप ने हमें उपदेश दिया है, हम ठीक उस के विपरीत कार्य कर स्वयं को तुम्हारे शिष्य होने का स्वांग भरेंगे। यह सब कुछ यहीं तक सीमित नहीं, जबकि वे आप स्वयं (श्री रामचन्द्र जी) पितृ-भक्त तथा त्यागी थे और दानव प्रवृतियो को समाप्त करने के लिए समस्त जीवन संघर्षरत रहे। तथा उन पर विजय पा कर उन्होंने देव प्रवृतियों को प्रोत्साहित किया। किन्तु हम आप की आयोध्या लौटने की स्मृति में स्वयं दानव आचार-व्यवहार करेगें।" यह व्यंगात्मक उपदेश सुन कर सभी के सिर झुक गये तथा गुरुदेव से प्रार्थना करने लगे कि आप बताऐं कि हमारी कल्याण कैसे सम्भव है? उस समय गुरुदेव जी ने शब्द उच्चारण किया -

चेरी की सेवा करहि ठाकुरु नहीं दीसै ॥
पोखरु नीरु विरोलीऐ माखनु नही रीसै ॥

राग–गउड़ी, पृष्ठ 229

त्रवेणी घाट (चतुर दास पण्डित) प्रयाग (इल्लाहाबाद)

वहाँ से प्रस्थान कर गुरुदेव प्रयाग (इलाहबाद) पहुँचे। उन दिनों कार्तिक पूर्णमा का स्नान उत्सव था। अत: अपार जन समूह त्रवेणी घाट पर विशेष स्नान के महत्व का लाभ उठाने हेतु एकत्र हुए थे। गुरू नानक देव जी ने एक रमणीक स्थल पर आसन जमा कर मरदाना जी को कीर्तन करने को कहा। बस फिर क्या था ! अधिकांश भीड़ गुरुदेव के चरणो में उपस्थित हो कर प्रभु भजन का आनन्द लेने लगी।

लबु कुत्ता, कूड़ु चूहड़ा ठगि खाधा मुरदारु,
पर निंदा पर मलु मुखि सुधी अगनि क्रोधु चंडालु ॥
रसकस आपु सलाहणा ए करम मेरे करतार,
बाबा बोलीऐ पति होए ॥

सिरी राग, पृष्ठ 15

कुछ जिज्ञासुओं ने गुरुदेव से, जीवन कैसे सफल हो के विषय में प्रवचन सुनने चाहे। गुरुदेव ने उत्तर दिया–हमारा आचार–व्यवहार ही सब कुछ है। इसी पर निर्णय होगा–इस लिए हमें ऊँचे आचरण के साथ जीना सीखना चाहिए। भाव हमारी लालच की प्रवृति कुत्ते की आदत के समान है। झूठ बोलना नीच भंगी जैसा कर्म है दूसरों को ध ोखा देकर जीविका कमाना, मुर्दा खाने के बराबर है। दूसरों की निंदा करनी उस का मैला सेवन करने के समान है। बिना कारण क्रोध, चंडालों की आदत के बराबर है। इन रसों–कसों में पड़ कर हम स्वयं की प्रशंसा करते हैं किन्तु हमें वही बात बोलनी या कहनी चाहिए जिस से समाज में हमारी इज्जत बढ़े। गुरुदेव के समक्ष अपार जन समूह के कारण प्रस्थिति का अनुमान लगाने कुछ पण्डे लोग आये। उन में से एक जो कि उन का

मुखिया था, बौखला उठा। वह आश्चर्य में सोचने लगा कि यह नया साधु कौन आया है जो सब को अपनी तरफ आकृष्ट कर रहा है। हमारा तो धन्धा ही चोपट हो रहा है। हमारे निकट कोई भी नही आता। हमारी जीविका कैसे चले गी। सभी लोग कुछ सोच-विचार कर कोई युक्ति सोचने लगे जिस से गुरुदेव की तरफ से जन समूह को अपनी ओर आकृष्ट किया जा सके। तब एक पण्डित जिस का नाम चतुर दास था, गुरुदेव के निकट आकर जनता को सम्बोधन कर कहने लगा, "सभी भक्त जन ध्यान से देखें कि यह व्यक्ति अधूरा साधू है अतः इन के कीर्तन का कोई लाभ होने वाला नहीं क्योंकि इन्होंने न तिलक लगाया है न तुलसी माला ही पहनी है, न ही इन के पास सालग्राम है, तथा न ही चिमटा, करमण्डल इत्यादि धारण किया हुआ है। उस समय गुरुदेव ने उत्तर दिया-पण्डित चतुर दास जी आप ने जो साधु के लक्षण बताये है वह वास्तव में केवल बाहरी वेष-भूषा के चिन्ह मात्र है। इन चिन्हों का स्वांग रच कर जन-साधारण को धोखा देते देखे गये हैं। केवल इन चिन्हों के प्रयोग से कोई व्यक्ति श्रेष्ठ नहीं बन जाता जब तक कि वह प्रभु नाम की कमाई नहीं करता तथा अपना अंतःकरण विकारों से शुद्ध नहीं करता। अधिकाशं लोग उदर पूर्ति के लिए दूसरों पर, निन्दा रूपी कीचड़ फेंकने में व्यस्त रहते हैं किन्तु वह अपने गिरहवान में झांक कर नहीं देखते कि वह स्वयं आध्यात्मिक दुनिया में कहाँ खडे हैं। इस सत्य कटाक्ष को सुन कर पण्डित चतुर दास जी को अपनी वास्तविक आकृति दृष्टि गोचर होने लगी। तब गुरुदेव ने भाई मरदाना जी को रबाव बजाने के लिए कहा-भाई जी बसंत राग की मधुर धुन निकालने लगे जिस को गुरुदेव ने निम्नलिखित पंक्तियां में कलम बद्ध किया-

सालग्राम बिप पूजि मनावहु सुक्रितु तुलसी माला ।

राम नामु जपि बेड़ा बांधहु दइया करहु दइआला ।।1।।

काहे कलरा सिंचहु जनमु गवावहु।

काची ढहगि दिवाल काहे गचु लावहु।।

बसंतु हिडोल म० 1, पृष्ठ 1171

अर्थात मैं केवल राम नाम से ही प्रभु प्राप्ति में विश्वास करता हूँ। मेरे को दिखावे के चिन्हो की कोई आवश्यकता नहीं। केवल इन चिन्हों को धारण कर मोक्ष प्राप्ति का स्वपन देखना बंजर भूमि सींचने के समान है या यह कह सकते हैं कि कच्ची मिट्टी की दीवार से स्थाई भवन नहीं बन सकते। इसी प्रकार बाहरी चिन्ह, सालग्राम, तुलसी माला, तिलक आदि प्रभु प्राप्ति नहीं करा सकते। तात्पर्य यह है कि राम नाम को जो व्यक्ति नहीं अराधता उस का उद्धार हो ही नहीं सकता। ठीक उसी प्रकार, जिस प्रकार कोई मल्लाह अपनी नाव का रस्सा खोले बिना चप्पू चलाता रहे। अर्थात भले ही वह कई प्रकार के साधुओं वाले स्वांग रचता रहे। इन प्रवचनो के पश्चात् बहुत से जिज्ञासु गुरुदेव के चरणों मे विनती करने लगे कि हमें आप इन कर्म-काण्डों से मुक्ति कर के कोई सत्य मार्ग दर्शाऐं। उस समय पुनः गुरुदेव ने भाई मरदाना जी को रबाव बजाने का आदेश दिया तथा शब्द उच्चारण किया-

तीरथि नावण जाउ तीरथु नामु है।।

तीरथु सबद बीचरु अंतरि गिआनु है ।।

धनासरी मः 1 पृष्ठ 687

गुरुदेव कहने लगे। हे सत्य पुरुषों ! वास्तव में प्रभु के नाम की आराधना ही तीर्थो का सच्चा स्नान है तथा महा पुरुषों द्वारा दिये गये उपदेशों का मनन कर उस पर जीवन व्यतीत करना सच्चा ज्ञान है जो कि हमारा कल्याण करने में सहायक होगा। क्योंकि इन्हीं कार्यो से मन, चित, बुद्धि को एकाग्र कर लक्ष्य की प्राप्ति के लिए संयुक्त रूप से कार्य करना ही त्रिवेणी अथवा संगम स्नान है।

'अक्षयवट वृक्ष' (प्रयाग इल्लाहाबाद)

उन दिनों प्रयाग में एक विशाल बरगद का वृक्ष था, जिस का नाम अक्षय वट रखा हुआ था। कुछ पण्डों ने यह किवदन्तियां फैला रखी थी कि जो व्यक्ति अपनी सम्पूर्ण सम्पत्ति पण्डो को दान-दक्षिणा में दे कर इस वृक्ष की चोटी से कूद कर आत्म हत्या कर लेगा वह सीधा बैकुण्ठ धाम को जाएगा। यह मिथ्या प्रचार इतना जोरों पर था कि कई

धनी बहकावे में आ कर पण्डो के चंगुल में फंस कर अकसर आत्म हत्या करते देखे गये थे। अत: गुरू बाबा नानक देव जी जब वहाँ पहुँचे तो एक कुलीन परिवार से सम्बन्धित व्यक्ति कुछ पण्डो के जाल में फंस कर बैकुण्ठ धाम के झांसे में आ कर अपना समस्त धन इन लोगों पर न्यौछावर कर आत्म हत्या के लिए वृक्ष पर चढ कर कूदने को तैयार हो बैठा था। किन्तु ठीक समय पर गुरुदेव वहाँ पहुँच गये और उन्होंने उस व्यक्ति को मूर्खता करने से तुरन्त सावधान किया तथा पण्डों को फिटकारा कि तुम भोले भाले लोगों से धन ऐंठते हो तथा उन को गुमराह कर आत्म हत्या करने पर विवश करते हो। पहले तो पण्डे लोग अपनी चाल विफल होने पर लाल-पीले हो जाने की स्थिति में थे किन्तु गुरुदेव के तेज एवं वैभव को देख कर ठिठक गये। गुरुदेव के हस्तक्षेप से यह दुर्घटना होते-होते टल गई किन्तु वहाँ पर सभी दर्शकों के मन में बसे अंध विश्वास पर से ज्ञान द्वारा जागृति लाने के लिए गुरुदेव ने उपदेश देना प्रारम्भ किया कि यह हमारा शरीर अमूल्य निधि है। यह हमें पुन: प्राप्त नहीं हो सकता इस को बिना कारण नष्ट नहीं करना चाहिए। वास्तव में, यह विश्व, कर्म भूमि है यहाँ मनुष्य ने प्रभु नाम की कमाई करनी है, जो कि एक मात्र साधन है जिस से हम सभी आवागमन के चक्र से मुक्ति प्राप्त कर सकते है। अत: हमें किसी भी प्रकार की दुविधा में नहीं पड़ना चाहिए केवल सत्य के मार्ग पर चलने का सदैव प्रयत्न करते रहना चाहिए। उस समय गुरुदेव ने भाई मरदाना जी को रबाब बजाने को कहा तथा स्वयं वाणी उच्चारण करने लगे-

दुबिधा न पडउ हरि बिनु होरु न पूजउ मड़ी मसाणि न जाई।।

त्रिसना राचि न पर धरि जावा त्रिसना नामि बूझाई।।

राग सोरठि, पृष्ठ 634

जागीरदास हरिनाथ बनारस (उत्तर प्रदेश)

प्रयाग (इलाहबाद) से प्रस्थान कर गुरुदेव बनारस पहुँचे उन दिनों शिवरात्रि का मेला था। वहाँ पर लोगों में यह धारण फैला रखी गई थी कि शिवरात्रि पर्व पर यदि कोई दानी अपना सर्वत्र दान कर माया के बन्धनो से मुक्त हो कर तृष्णा पर विजय पा कर

शिव मन्दिर में रखे एबं एक विशेष प्रकार के आरे(करवत) से अपने शरीर के दो भाग करवा ले तो वह मोक्ष को प्राप्त होगा। इस अंध विश्वास के जाल में एक स्थानीय राजा (जागीरदार) हरिनाथ, बहला-फुसला लिया गया था। वास्तव में वह महानुभाव बैराग्य को प्राप्त हो चुके थे तथा संसार परित्याग कर परम पद् को प्राप्त करने की इच्छा रखते थे। जब इन्होंने अपने लड़के को अपना उतराधिकारी नियुक्त कर विशाल धन राशि दान-दक्षिणा में पण्डो को दे दी। तब पण्डो ने अपने बनाये षड्यन्त्र के अनुसार उन के मन में यह धारणा पक्की बना दी कि आरे (करवत) से कट कर मरने से परम पद तुरन्त प्राप्त हो सकता है। इस अभिलाषा की पूर्ति के लिए सब से सरल और एक मात्र उपाय यही था कि शिवरात्रि उत्सव पर यह कार्यक्रम निश्चित किया जाए। बनारस पहुँचने पर गुरू नानक देव जी को जब यह सूचना मिली तो वह इस जघन्य हत्या कांड को रोकने के लिए समय रहते वहाँ पर पहुँच गये। देखते क्या है कि राजा हरिनाथ करवत के नीचे बैठे हैं पण्डों ने तभी केवल एक बार धीरे से आरा (करवत) सिर पर चलाया जिस से खून के फौहारे चल पड़े किन्तु पण्डो ने पहले से निर्धारित षड्यन्त्र के अनुसार दूसरी बार आरा नहीं चलाया तथा हल्ला-गुल्ला मचा दिया कि पापी आ गया। पापी आ गया। जिस कारण यह आरा देवताओं ने थाम लिया है अब आगे चलता नहीं। अब यह तभी चलेगा जब राजा का पुत्र पुन: दान देवताओ की इच्छा अनुसार करेगा। यह सुन कर राजा हरिनाथ का उत्तराधिकारी कहने लगा, "पिता जी ने आप लोगों को लगभग सभी कुछ तो दे ही दिया है। अब तो शेष कुछ भी नहीं बचा जो कि आप को दे दूँ।" तब पण्डे कहने लगे-तुम्हारे पास अभी भी पिता पुरखी जागीर का अधिकार है, वह भी हमें दे दो। किन्तु युवराज कहने लगा यह कैसे सम्भव हो सकता है? दूसरी तरफ दर्द से कराहते हुए राजा हरिनाथ ने पुत्र से कहा, "हे पुत्र! मैं मंझधार में हूँ जल्दी से मुझे मोक्ष दिलवाओ।" तभी पण्डों ने युवराज को प्रेरित करते हुए कहा, "आप मिथ्या माया का मोह मत करें जल्दी से हमें वचन दें ताकि देवता लोग प्रसन्न हो कर आरे को फिर से चलने का आदेश दें।" इस भयभीत दृश्य को देख कर गुरुदेव ने गर्ज कर ऊँचे स्वर में कहा, "ठहरो-ठहरो यह अत्याचार मत करो। आरा (करवत) सिर से तुरन्त उठाओ तभी गुरुदेव ने युवराज से कहा नपुंसकों की तरह देखते क्या हो, इसी क्षण अपने पिता को इन जाल साजों के चुंगल से मुक्त करने का आदेश अपने कर्मचारियों (सिपाईयों) को दो। तब क्या था।

युवराज का माथा ठनका, वह तुरन्त सब स्थिति भांप गया एवं उसी क्षण पण्डों को पकड़ कर बन्दी बनाने का उसने आदेश दिया तभी राजा हरिनाथ का उपचार किया गया। घाव अधिक गहरा नहीं था अत: राजा का जीवन सुरक्षित कर लिया गया। इस प्रकार गुरू बाबा नानक देव जी ने समय पर हस्तक्षेप कर एक जघन्य अपराध को होते-होते बचा लिया। तभी समस्त जन समूह को सम्बोधन करते हुए गुरुदेव ने कहा हम लोग अंध विश्वास में मूर्खो जैसे कार्य कर रहे हैं। सभी को एक बात गांठ में बांध लेनी चाहिए कि बिना हरि भजन के किसी को भी छुटकारा नहीं मिल सकता, भले ही वह लाखों दान-पुण्य करे या किसी भी विधि-विधान अनुसार शरीर त्यागने की चेष्टा करें। मोक्ष तो इस कर्म भूमि पर अपने सभी प्रकार के कर्तव्य पालन करते हुए केवल आत्मा शुद्धि से ही प्राप्त होता है तात्पर्थ यह कि मन पर विजय पाने से ही वास्तविक मोक्ष है। अर्थात व्यक्ति को मन की तृष्णाओं पर अंकुश लगा कर जीवन व्यतीत करना चाहिए। इस घटना के पश्चात् बनारस में गुरुदेव को बहुत सत्कार मिलने लगा तथा गुरुदेव के दर्शनों को बहुत से विद्वान आने लगे। आध्यात्मिक वाद पर विचार विनमय करते समय सभी ने अपने मन की शंकाएं व्यक्त की तथा मुख्य मुद्दा यह बना कि वेद तो पुण्य एवं पाप की विचार धारा के सिद्धांत पर आश्रित है। जब कि आप इस प्रकार के विचारों को केवल एक व्यापार बताते हैं? वास्तव में प्रभु प्राप्ति का साधन क्या है? इस के उत्तर में गुरुदेव कहने लगे कि पाप-पुण्य का सन्तुलन करना, सब हिसाब-किताब व्यापार ही तो है। वास्तव में ऊँचा आचरण एवं प्रभु भजन में मग्न रहना ही सफल जीवन की कुंजी है। इस कार्य के लिए 'गुरू शब्द' से प्रेरणा लेनी चाहिए तथा मन की चंचल प्रवृत्तियों का दमन कर साधु-संगत का दामन थामना चाहिए।

सबद सहिज नही बुझिआ जनम पदारथ मन मुरव हारिआ ।।

स्थानीय विद्वानों से गोष्ठी बनारस (उत्तर प्रदेश)

इस कार्य के लिए गुरुदेव ने वहाँ एक धर्मशाला बनवाई एवं सत्संगत की स्थापना की। एक दिन कुछ विभिन्न मतावलम्बी लोग एकत्र हो कर गुरुदेव से प्रश्न करने लगे कि "कौन सा मत सफल है, जो कि प्रभु में सहज जीवन से अभेदता करवाने में सक्षम है?" क्योंकि उस समय अनेकों विचार धारा प्रचलित थीं जिस के अनुसार कोई तो कहते थे ग्रंथ पढ़ो, कोई कहते थे गृहस्थ त्याग कर, बनों मे तप करो। कोई कहता था तीर्थो का भ्रमण करो, कोई मूर्ति पूजा मे विश्वास करता था तो कोई निराकार प्रभु में विश्वास करता था तथा कोई कर्म-काण्डो में विश्वास करते थे इत्यादि। किन्तु उस प्रभु को कौन सा मार्ग तथा कर्म भाता है जिस से वह हम पर प्रसन्न हो तथा हमें उस की निकटता प्राप्त हो सके?

अवर न अउखधु तंतु न मंता।।

हरि हरि सिमरणु किलिविख हंता।।

(आसा महला 1), पृष्ठ 416

गुरुदेव ने उत्तर में कहा, "प्रभु का सम्बन्ध मन से है शरीर से नहीं, शरीर तो नाशवान है" अत: आध्यात्मिक दुनियां में इस का महत्व गौण है। हम जो भी धार्मिक कार्य करें उस में मन-चित का सम्मलित होना आवश्यक है। अत: हमें उस निराकार प्रभु अर्थात रोम-रोम में बसे राम को सुरति सुमिरन से ही आराधना चाहिए। इसके लिए किसी कर्म काण्ड या आडम्बर रचने की कोई आवश्यकता नहीं। क्योंकि प्रभु अन्त:करण की शुद्धता पर रीझता है, शरीर की नहीं। यह सब कार्य हमें गृहस्थ आश्रम में रह कर, अपने कर्त्तव्य पालन करते हुए नित्य प्रति करना चाहिए। यहीं वास्तविक धर्म है जिस के अन्तर्गत प्रभु प्राप्ति सम्भव है। बनारस नगर संतो, महापुरुषों के लिए भी प्रसिद्ध था। वहाँ पर समय-समय पर भक्तजन भक्ति का प्रचार-प्रसार करते चले आते थे। जिन में मुख्य रामा नन्द जी, परमा नन्द जी, कबीर जी, तथा रविदास जी इत्यादि हुए है, अत: इन महापुरुषों के यहाँ पर अपने-अपने आश्रम थे जो कि समय अनुसार उन के अनुयायी चला रहे थे तथा इन महापुरुषों के परलोक गमन के पश्चात् उन की वाणी को माध्यम

बना कर अपने-अपने पंथ चला रहे थे। गुरू नानक देव जी की विचार धारा में समानता देख कर क्रमश: सभी आप को मिलने आये, विचारों के आदान-प्रदान से सभी को सन्तुष्टि मिली जिस कारण परस्पर निकटता बढ़ती गई अत: सभी वर्ग के लोग गुरुदेव के सत्संग मे सम्मलित होने लगे। इस प्रकार गुरुदेव जहां अपनी वाणी, कीर्तन द्वारा उन को प्रतिदिन सुनाते, वहाँ उन से भी, कबीर, रविदास, रामानन्द, परमानन्द जी की प्रमुख रचनाएं सुनते। उन में जो आध्यात्मिक कसौटी पर खरी उतरती, गुरुदेव उन रचनायों को अपनी पोथी जो कि निर्माण अधीन थी, में उतार लेते थे।

'प्रकृति के अमूल्य उपहार' गंगा नदी का तट पर (पटना, बिहार)

जब गुरुदेव पटना नगर के निकट गंगा के तट पर पहुँचे तो वहाँ कुछ जिज्ञासु, गुरुदेव के पास उन के प्रवचन सुनने हेतु उपस्थित हुए। पहले भाई मरदाना जी ने शब्द गायन किया तत्पश्चात् गुरुदेव ने संगत को सम्बोधन करते हुए कहा कि यह समय अमूल्य है इस को व्यर्थ नहीं गवाना चाहिए। अपने श्वासों की पूंजी को सफल बनाने के लिए प्रयत्न करना चाहिए तथा प्रभु के लिए कृतज्ञ होना चाहिए जिस ने हमें इतनी सुन्दर काया प्रदान की है। हमें उस की प्रत्येक वस्तु उपहार स्वरूप मिली हुई है। अत: हम उस की दी गई किसी भी वस्तु की कीमत नहीं आंक सकते। यह पवन, जल इत्यादि ही ले लो. हम देखते है कि यह सब उस के अमूल्य विशाल भण्डार हमें प्राप्त है, जिस के बदले में हमें कुछ नहीं देना पडता। वे लोग जो किसी कारण वश इस काया में कमी अनुभव करते हैं अथवा विक्लांग है, यदि वे किसी भी कीमत पर इस काया में सुधार की इच्छा रखते है तो क्या सम्भव है? कदाचित नहीं। इस लिए उन लोगों को कटु अनुभव हो जाता है कि उस की प्रकृति के उपहारों का कोई विकल्प नहीं है, अत: हमें प्रत्येक क्षण सतर्क रहना चाहिए कि हम कोई भी अनुचित कार्य न करें। यह उपदेश सुन कर एक श्रद्धालु ने शंका व्यक्त करते हुए कहा गुरू जी-आप हमें पानी का मूल्य बताएं? गुरुदेव ने उस से पूछा कि हे भक्त जन ! आप क्या कार्य करते हैं? उसने उत्तर दिया-जी, मैं एक जागीरदार हूँ। गुरुदेव ने कहा-एक किसान तो पानी के महत्व को जानता है किन्तु हम आप की शंका के समाधान के लिए जीवन के यथार्थ को समझाने की चेष्टा करते

हैं। मान लो रास्ते के सफर में कहीं ऐसी परस्थिति आ जाए कि कहीं पानी ढूढ़ने से भी न मिले उस समय आप तथा पियास से अति वियाकुल हो तो ऐसे में एक प्याला पानी तुम्हें कोई कहीं से ला दे तथा तुम्हारे प्राण बचा ले, तो तुम उस व्यक्ति को क्या दोगे? ज़मीदार- (विचारते हुए)-यदि प्राण रक्षा तक नौबत आ जाए तो मैं उसे आधी सम्पति दे दूँगा। यह उत्तर सुन कर गुरुदेव कहने लगे कि मान लो वह पानी का प्याला शरीर के भीतर किसी कारण रूक जाए तथा उस की निकासी न हो पाए तथा दर्द के कारण तुम्हारा बुरा हाल हो तो ऐसे में कोई व्यक्ति उपचार से तुम्हें सामान्य स्थिति में ला दे तो आप उसे क्या देगें। इस पर वह जमीदार कहने लगा कि मैं उसे अपनी बाकी की आधी सम्पति भी दे दूँगा। तब गुरुदेव ने निर्णय दिया, इस का अर्थ यह हुआ कि एक प्याला पानी की कीमत तुम्हारी पूरी सम्पति हुई न। यह दृष्टांत सुन कर और गुरुदेव की विचार धारा से प्रभावित हो कर 'सीख' धारण करते हुए सभी चले गये। किन्तु भाई मरदाना जी ने गुरुदेव से प्रश्न किया कि 'सभी जानते है यह शरीर हमारी अमूल्य निधि है, फिर क्यों कर लोग इस के साथ नशे तथा विकार कर के खिलवाड़ करते हैं? गुरुदेव जी-भाई मरदाना सभी मनुष्यों को इतनी योग्यता भरी दृष्टि प्राप्त नही हुई, वह इस शरीर रूपी अमूल्य रत्न को कौड़ी बदले व्यर्थ गवाने में व्यस्त है अर्थात जिस डाली पर बैठे है उसी को काटने में लीन है। इस लिए अज्ञानता वंश मनुष्य दु:खी है। यदि आप को इस में संदेह है तो आप एक परीक्षण कर के देख सकते है कि सभी को एक सी दृष्टि प्राप्त नहीं होती। प्रत्येक व्यक्ति अपनी बुद्धि अनुसार वस्तु की कीमत आंकता है, भले ही वह बहुमूल्य रतन ही क्यों न हो। मरदाना जी-यह कैसे सम्भव है? वस्तु का जो वास्तविक मूल्य है वह सभी के लिए है। फिर भिन्न-भिन्न व्यक्ति एक ही वस्तु का मूल्य अलग-अलग कैसे मान लेगे? उस समय गुरुदेव ने मरदाना जी को कहा-वह देखो सामने रेत में कोई वस्तु चमक रहीं है, आप उसे उठा लाओ। मरदाना जी ने ऐसा ही किया। वह चमकीली वस्तु एक चमकीला रत्न था। मरदाना जी को गुरुदेव ने आदेश दिया भाई जी इसे नगर में जा कर अधिक से अधिक मूल्य पर बेच कर दिखाओ।

'सालस राय जौहरी' (पटना, बिहार)

यह आज्ञा प्राप्त कर भाई मरदाना निकट के नगर पटना में पहुँचे। उन्होंने वह सुन्दर रतन एक सब्जी के विक्रेता को दिखाया। उस ने कहा यह सुन्दर पत्थर का टुकड़ा है, मेरे किसी काम का नहीं। परन्तु सुन्दर है, मैं बच्चों के खेलने के लिए ले लेता हूँ। अत: आप अपनी आवश्यकता अनुसार मुझ से बदले में सब्जी ले सकते हैं। परन्तु मरदाना जी सोचने लगे कि गुरुदेव ने तो इसे अमूल्य बताया है। मैं कहीं और दूसरे व्यापारियों को दिखाता हूँ। वह एक हलवाई की दूकान पर गये ओर रतन दिखाया। उस दुकानदार ने कहा ठीक है, यह अति सुन्दर पत्थर है परन्तु मेरे किसी काम का तो है नहीं। यदि तुम इसे बेचना ही चाहते हो तो मैं तुम्हें पेट भर भोजन-मिठाई आदि खाने को दे सकता हूँ। इस पत्थर को मैं अपने तराजू पर लगाऊंगा। फिर वे एक कपड़े की दुकान पर गये उसे उन्हें एक जोड़ा वस्त्रों का देना स्वीकार किया। अत: वहाँ से भी मरदाना जी पूछते-पूछते आगे एक जौहरी सालस राय की दुकान पर पहुँचे। उस के कर्मचारी 'अधरका' ने उस रतन को देखा तथा बहुत प्रभावित हुआ। कहने लगा, "मैं इस रतन को अपने मालिक को दिखा कर इस का वास्तविक मूल्य बता पाऊंगा। क्योंकि यह रतन असमान्य है। पहले कभी ऐसा रतन देखा नहीं गया।" जब सालस राय ने वह रतन देखा तो सिर झुका कर रतन को प्रणाम किया तथा कहा, "यह रतन नहीं कुदरत का करिश्मा है। इस के भीतर के प्रकाश पुंज एक विशेष प्रकार का प्रतिबिम्ब बनाते है जिस में संकलित है कि (दर्शन भेंट 100 रुपये)। अत: यह अमूल्य है मैं इसे खरीदने योग्य नहीं हूँ। मैं तो इस की दर्शन भेंट ही दे सकता हूँ।" उस ने मरदाना जी का भव्य स्वागत एवं भोजन इत्यादि से अतिथि सत्कार कर कहा, "यह रतन आप लौटा ले जाए मुझ से इस की दर्शन भेंट स्वीकार करके अपने स्वामी को दे दें।" किन्तु मरदाना जी का उत्तर था कि मैं यह धन राशि बिना कारण स्वीकार नहीं कर सकता क्योंकि आप ने हमारा रतन खरीदा ही नहीं। अत: मैं यह रुपये क्यों ले लूँ। सालस राय के विवश करने पर मरदाना जी ने वह रुपयो की थैली गुरुदेव तक पहुँचानी स्वीकार कर ली। जब यह थैली ले कर गुरुदेव के समक्ष उपस्थित हुए तो गुरुदेव ने वहीं बात मरदाना जी से कही कि जब उस ने हमारा

रतन खरीदा ही नहीं तो हम उस का धन बिना कारण क्यों स्वीकार करें। अत: यह धन लौटा दो। मरदाना जी थैली को लोटाने सालस राय के पास आए। सालस राय और अधरका जी ने सोचा कि इस रतन का स्वामी या तो कोई महान धनवान है, जिस के लिए यह बहुमूल्य पदार्थ साधारण सी वस्तु है या कोई महा पुरुष होगा जो धन सम्पति के मोह से विमुख है। तब सालस राय ने अपने सेवक अधरके को कहा, "ठीक है तुम इस धन को लेकर मरदाना जी के साथ इन के गुरू जी के पास पहुँचो मैं कुछ उपहार लेकर तुम्हारे पीछे आ रहा हूँ।" पहले अधरका गुलाम गुरुदेव के सन्मुख हुआ, उस ने चरण बन्दना कर वह रतन तथा 100 रू० की थैली गुरू जी को अर्पित की। गुरुदेव जी ने उस पर प्रश्न किया – तुम क्या कार्य करते हो? अधरका – जी मैं रतनों का परीक्षण करता हूँ। गुरुदेव जी – तब तो तुमने इस अमूल्य जीवन रूपी रत्न का भी परीक्षण किया होगा? अधरका – जी, मैं अभी तक तो इन कंकर पत्थरो के परीक्षण में ही खोया रहा हूँ। मुझे आप दृष्टि प्रदान करें जिस से मैं इन कंकर पत्थरों से उपर उठकर, जीवन रूपी अमूल्य निधि का निरीक्षण कर पाऊ तथा अपने बहुमूल्य श्वासो का सदोपयोग कर सकूँ। गुरुदेव जी – तुम विवेकशील हो, जीवन के महत्व को जानते हो किन्तु तुम्हें केवल मार्ग दर्शन की आवश्यकता है। तभी सालस राय भी अपने सेवकों के साथ वहां पर जा पधारे तथा उन्होंने डण्डवत प्रणाम कर प्रार्थना की, "हे गुरुदेव ! आप यह तुच्छ भेंट स्वीकार करें।" गुरुदेव जी – भक्तजन यह रुपयों की थैली किस लिए दे रहे हों? सालस राय – जी, यह तो आप के रतन की दर्शन भेंट है। गुरुदेव जी – तो तुम रतनो के पारखी हो? सालस राय – जी हां। गुरुदेव जी – तो इस मनुष्य जन्म रूपी रतन को तुमने खूब परख कर कसौटी पर कसा होगा? सालस राय – नहीं महाराज मैं तो केवल यह चमकीले पत्थर ही परख-परख कर इकट्ठे करता रहा हूँ। गुरुदेव जी – आखिर इन कंकर पत्थरो का करोगे क्या? जब श्वासों की अमूल्य पूंजी ही समाप्त हो जाएगी? सालस राय – जी यह तो मैंने कभी सोचा ही नहीं? गुरुदेव जी – अभी भी समय है अपनी दृष्टि बदलो, वास्तविक जौहरी बनो, अपना जन्म सफल करना ही मनुष्य का मुख्य लक्ष्य है। अत: चूकना नहीं। स्वयं की पहचान ही हमें अमूल्य निधि प्रदान करती है। हमें अपने अंत:करण में छिपे उस प्रभु के अंश को खोजना चाहिए, ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार तुम रतनों में से प्रकाश के पुंज को खोजते हो? सालस राय – जी, आप ने मुझ पर कृपा

की है जो मुझे जागृत कर जीवन का लक्ष्य बताया है। मैं आप के बताए मार्ग अनुसार अपने भीतर उस प्रभु के अंश रूपी रतन की खोज में जुट जाऊंगा। गुरुदेव जी-सालस राय तुम महान हो परन्तु तुम्हारा सेवक अधरका तुम से भी महान है क्योंकि वह इस रहस्य को पहले से ही जानता है। इस लिए वह आध्यात्मिक दुनियां में तुम से भी आगे है, अत: उसे अपना पथ प्रदर्शक मानो। इसी में तुम्हारा कल्याण होगा। सालस राय-जी, आप की जैसी आज्ञा। इस प्रकार गुरू नानक देव जी ने पटना नगर के एक धनी को धन के मोह से हटा कर जीवन का वास्तविक रहस्य बताया तथा वहाँ कुछ महीने ठहरे। सालस राय और अधरका जी को गुरू दीक्षा दी तथा पटना में अपनी 'मंजी' (धर्म प्रचार केन्द्र) स्थापित की। इस मंजी का प्रथम उपदेशक भी सालस राय को ही नियुक्त किया और उसे आदेश दिया कि उसके देहान्त के पश्चात् उसका सेवक अधरका धर्म प्रचार केन्द्र का मुख्य अधिकारी होगा।

सैय्यद शेख वजीद सूफी हाज़ीपुर (बिहार)

यहाँ से प्रस्थान कर गुरू नानक देव जी पटना नगर की ओर बढ़ने लगे, रास्ते में भाई मरदाना जी ने एक पालकी देखी जिसे छ: कहार उठाए लिए जा रहे थे। गरमी में ये कहार पसीने से तर थे। उन्होंने एक वृक्ष की छाया में पालकी को कंधों से उतार कर रखा तब उस में से एक अमीराना ठाट बाट वाला सूफ़ी फ़कीर निकला। वह बड़ा हृष्ट-पुष्ट था और उसने रेशमी वस्त्र धारण किये हुए थे। कहारों ने उसके लिए गालीचे बिछा दिए तथा तकिए लगा कर रख दिए। जब वह लेटकर उन गालीचों पर सोने लगा तो वे कहार उस के पांव दबाने और पंखा करने लगे। वह सैय्यद शेख़ वजीद सूफ़ी था। यह दृश्य देख कर भाई मरदाना से न रहा गया उसने गुरुदेव से पूछा। हे गुरुदेव! खुदा एक है या दो? गुरुदेव ने भाई जी की दुविधा को समझाते हुए उत्तर दिया-खुदा तो एक ही है। यह उत्तर सुनकर भाई मरदाना जी कहने लगे। गुरुदेव जी! मुझे यह तो समझाइए कि ये कहार जो गरमी में पसीने से तर-बतर होकर पालकी को उठाए हुए थे और अब उस स्वामी के हाथ-पांव दबा रहे हैं उनको किसने उत्पन्न किया है और यह

मोटा-ताजा सूफी जो पालकी में चढ़कर आया है तथा फिर पांव दबवाने लग गया है, उसे किसने जन्म दिया है? गुरू जी ने उत्तर दिया "मरदाना जी', संसार में सब नंगे आते हैं और नंगे ही जाते हैं। प्रभु मनुष्यों के कर्म देखता है। उनकी अमीरी गरीबी नहीं, जो गरीबों का रक्त पीते हैं, चाहे वे दरवेशों के चोगे पहन कर घूमते रहें उन का अन्त बुरा ही होता है। जो परीश्रम करते हैं किन्तु धर्मात्मा भी हैं प्रभु उन पर कई प्रकार से अनुग्रह करता है।" गुरुदेव जी, शेख वजीद के पास गए और उसे समझाया कि सूफी दरवेशों को ऐश्वर्य का जीवन शोभा नहीं देता। मुहम्मद साहिब ने भी कहा है, " गरीबी पर मुझे गौरव है।" इस प्रकार का शाही जीवन और गरीबों को दुख देकर स्वयं सुख का भोग करना सूफी मत वालों को शोभा नहीं देता। सूफी दरवेश का जीवन तो शेख फरीद की तरह जपी-तपी और सरलता का जीवन होना चाहिए। "शेख वजीद गुरुदेव के चरणो में गिरा और उसने प्रतिज्ञा की कि वह धीरे धीरे यह सुखप्रद जीवन त्याग देगा।

पण्डों को उपदेश (गया जी, बिहार)

श्री गुरू नानक देव जी बनारस से प्रस्थान कर चन्दरोली, रास्ते होते हुए गया नगर पहुँचे। यहाँ फलगू नदी के तट पर हिन्दू तीर्थ है। उन दिनों वहाँ पर एक किंवदन्ति प्रसिद्ध थी कि एक राक्षस ने विष्णु को प्रसन्न कर उन से वर मांगा कि जो उसके दर्शन करे, उसे मोक्ष को प्राप्ति हो। इसी मान्यता के आधार पर हिन्दू यात्री वहाँ आकर अपने पितरो की गति करवाने के लक्ष्य को लेकर पण्डों को पिंड (जौं के आटे के लड्डू) दान में देते थे। जिस के साथ बहुत सी धनराशि दक्षिणा रूप में भी देन

कर्म काण्ड मात्र है जिस से केवल पण्डों की जीविका चलती है। वास्तव में मृत प्राणी को इस से कोई लाभ होने वाला नहीं। उन दिनों पितृ पक्ष का मेला लगा हुआ था। अत: गुरुदेव ने भाई मरदाना जी को रबाब बजाने को कहा तथा स्वयं निम्नलिखित शब्द गायन किया-

दीवा मेरा एकु नामु दुखु विचि पाइआ तेलु ॥

उनि चानणि ओहु सोखिया चूका जम सिउ मेलु ॥

लोका मत को फकड़ि पाई ॥

लख मड़िआ करि एकठे एक रती ले भाहि ॥ रहाउ॥

राग आसा, पृष्ठ 358

अर्थात – एक प्रभु की वाणी ही मेरा दीपक है। उस में दु:ख रूपी तेल जल रहा है। प्रभु नाम – रूपी दीये ने दु:ख का नाश कर दिया है। जहां ईश्वर – भक्ति होती है वहाँ यम की भी पहुँच नहीं होती, मेरे मित्रो ! मेरे विश्वास को समझो। जिस प्रकार लकड़ी के बड़े ढेर को आग की एक छोटी सी चिनगारी स्वाह (राख) कर देती है उसी प्रकार पापों के ढेर को नाश करने के लिए हरिनाम की एक चिनगारी ही काफी है। परमात्मा ही मेरे श्राद्ध का पिण्ड और पत्तल है एवं उसी करतार का सत्य नाम ही मेरी मरणोपरान्त की क्रिया है। इस मृत्यु लोक में एवं परलोक में, वर्तमान में एवं भविष्य में प्रभु नाम ही मेरा आधार है। ....हे प्रभु ! आप की आराधना ही गंगा और बनारस है। आत्म चिन्तन ही काशी में बहने वाली गंगा का पवित्र स्थान है। इस पवित्र स्थान को तभी पाया जा सकता है जब मन भगवान भजन में लीन हो जाये।

गुरुदेव के इस उपदेश से पण्डे और अपार जन समूह, बहुत प्रभावित हुए। अत: वहाँ पर संगत के सहयोग से गुरुदेव ने एक धर्मशाला बनवाई। जहां नित्य प्रति सत्संग होने लगा तथा जिस में कर्मकाण्डो का त्याग कर सत्य की खोज की व्याख्या होने लगी। पण्डा – पुजारियों के समूह ने भी गुरुदेव के चरणो में अपने उद्धार के लिए प्रार्थना की। गुरुदेव ने उत्तर दिया आप लोग भविष्य में सदाचारी जीवन व्यतीत करे। इसी में आप लोगों का भी कल्याण होगा।

भिक्षु देवगृह (बुद्ध गया, बिहार)

श्री गुरू नानक देव जी वहाँ से प्रस्थान कर बुद्ध गया पहुँचे जहां उन दिनों देवगृह नामक भिक्षु बुद्ध धर्म का मुख्य प्रचारक था। परन्तु सदियों से बौद्ध प्रभाव प्राय: वहां लुप्त हो चुका था और बदले में माध्वाचार्य सम्प्रदाय तथा वैष्णवो का बहुत प्रभाव बना हुआ था। भिक्षु देवगृह गुरुदेव की सत्संगत में उन के प्रवचन सुनने प्रतिदिन पहुँचता था अत: गुरुदेव से वह इतना प्रभावित हुआ कि गुरू जी का अनिन्य भक्त बन गया। गुरुदेव ने गया नगर में सत्संगत के लिए एक धर्मशाला की स्थापना करवाई जिस में मुख्य प्रचारक देवगृह को ही नियुक्त किया क्योंकि उस भक्त ने गुरू जी की आज्ञा अनुसार विवाह करवा कर गृहस्थ आश्रम धारण कर लिया। वहाँ से गुरू नानक देव जी नालन्दा तथा राजगृह गए। यह स्थान गया नगर से थोड़ी दूरी पर हैं। वहां पर गर्म पानी के तीन स्त्रोत थे किन्तु ठंडे पानी का स्त्रोत कोई न था। यहाँ के लोगों की आवश्यकता को ध्यान में रख कर गुरुदेव ने शीतल जल के एक स्त्रोत के लिए सत्संगत द्वारा प्रभु चरणो में प्रार्थना की जिस की सफलता पर नगर में शीतल जल उपलब्ध हो गया। रजाउली नगर जो कि वहां निकट ही है उस में एक सूफी दरवेश काहलन शाह निवास करते थे। वह भी गुरुदेव की स्तुति सुन कर स्वयं भेंट करने पहुँचे। विचार विनिमय के पश्चात् वह इतने अधिक प्रभावित हुए कि उन्होंने गुरुदेव को अपने स्थान (मकबरे) पर आमन्त्रित किया तथा कई दिन तक टहल-सेवा की। गुरुदेव के प्रवचनों को जन-साधारण तक पहुँचाने के लिए वह बड़े-बड़े कार्य कर्मो का आयोजन करने लगे जिस से वहाँ पर बड़ी संगत नाम से एक संस्था का जन्म हुआ इस सत्संग के स्थान को लोगों ने पीर नानक शाह की वड़ी सगंत कहना शुरू कर दिया। आज भी गुरुदेव के पदार्पण के स्थान पर सदैव धूनी जलती रखी जाती है।

‘युवक पाली को आर्शीवाद’ रास्ते में (चैबासा, बिहार)

पटना नगर से प्रस्थान कर गुरू नानक देव जी उड़ीसा प्रांत के एक नगर पुरी के लिए चल पड़े। आप जी ने एक रात हरे भरे खेतों में पड़ाव किया। मरदाना जी को रबाब बजाने एवं प्रभु स्तुति गायन करने को कहा कीर्तन की मधुर ध्वनि सुनकर खेतों का रखवाला युवक (पाली) आप के निकट आ बैठा तथा मन एकाग्र कर शब्द में सुरति जोड़ कर वाणी श्रवण करता रहा। जब भाई मरदाना जी कुछ थकावट अनुभव करने लगे तो उस युवक ने अनुभव किया कि ये साधु भूखे हैं। अत: भोजन की व्यवस्था की जाए, वह खेतों में से चने के पोधों को उखाड़ कर भून लाया और गुरुदेव को अर्पित कर सेवन करने का आग्रह करने लगा। गुरुदेव उस की सहृदयता से बहुत प्रभावित हुए तथा उन्होंने उसे आशीर्वाद दिया। तुमने तो सुलतानो वाला विशाल हृदय पाया है। इस लिए तुम्हें सुलतान होना चाहिए। वह युवक समस्त रात्रि गुरुदेव के निकट बैठकर भजन बन्दगी करता रहा किन्तु भोर होने से पूर्व गुरुदेव ने उसे कहा, “बेटा तुम अब घर जाओ, विधाता तुम पर प्रसन्न होने वाला है।” यह आज्ञा पा कर वह युवक अपने नगर को लौट चला। जब वह अपने स्वामी जागीरदार के यहाँ पहुँचा तो उस का देहान्त हो गया था। उस जागीर दार की कोई सन्तान तो थी नहीं, इस लिए उस ने मृत्यु से पहले अपनी वसीयत लिखवाई कि उसका सभी धन-सम्पति उसके सेवादार को दे दी जाए क्योंकि वह उसकी दृष्टि में स्वामी भक्त तथा हर दृष्टि से योग्य था। जब यह वसीयत पंचायत ने देखी तो उन्होंने युवक को तुरन्त जगीरदार का उतराधिकारी बना दिया। गुरुदेव का आशीर्वाद रंग लाया। बाद में यही युवक उन्नति करते-करते सुलतान (शेरशाह सूरी) बन गया। श्री गुरू नानक देव जी स्थान-स्थान पर पड़ाव करते-करते अपनी मंजिल की ओर अग्रसर हो रहे थे।

‘बसते रहो तथा उजड़ जाओ’ रास्ते में (चाईबासा बिहार)

गुरुदेव जी एक दिन एक गांव में पहुँचे। वहाँ पर विश्राम तथा जल-पान करने के लिए कुएं पर गए तो उन के साथ वहाँ के निवासियों ने अभद्र व्यवहार करना शुरू कर दिया और अकारण ही व्यंग कस कर ठिठौलीयां करने लगे। यह उपहास भाई मरदाना जी को बहुत बुरा लगा किन्तु गुरुदेव शांतचित, अडोल रहे। वहाँ पर किसी भी व्यक्ति ने गुरुदेव जी का अतिथि सत्कार तक न किया। जब गुरुदेव प्रातः काल वहाँ से आगे बढ़ने लगे तो जाते समय कहा यह गांव सदैव बसता रहे। अगले पड़ाव पर आप जी एक ऐसे गांव में पहुँचे। जहां के लोगों ने आप को देखते ही पूर्ण सत्कार दिया। रात भर आप के प्रवचन सुने तथा प्रभु स्तुति में कीर्तन भी श्रवण किया। वहाँ की स्त्रियों ने गुरुदेव के लिए भोजन इत्यादि की भी व्यवस्था कर दी तथा कुछ दिन वहीं ठहरने का गुरुदेव से अनुरोध करने लगे। भाई मरदाना जी गांव वासियों की सत्यवादिता, सदाचारिता तथा प्रेमाभक्ति की भावना से बहुत प्रभावित हुए। सभी गांव वासी गुरुदेव को विदा करने आए। किन्तु जाते समय गुरुदेव ने कहा यह गांव उजड़ जाए। भाई मरदाना जी के हृदय में शंका उत्पन्न हुई; उन से रहा न गया। उन्हों ने कौतूहल वंश गुरुदेव से पूछा। आप के पास अच्छा न्याय है। जहां अपमान हुआ उन लोगों के लिए आपने वरदान दिया कि बसते रहो किन्तु जिन लोगों ने अतिथि सत्कार में कोई कोर-कसर नहीं रखी उन को आप ने श्राप दे दिया कि यह गाव उजड़ जाए। इस प्रश्न के उत्तर में गुरुदेव ने कहा भाई यदि उस पहले वाले गांव का कोई व्यक्ति उजड़ कर किसी दूसरे नगर में जाता तो उसकी कुसंगति से दूसरे लोग भी बिगड़ते। अतः उन का वहीं बसे रहना ही भला था। जहां तक अब इस गांव की बात है यह भले पुरुषों का गांव है। यदि यह उजड़ कर कहीं ओर बसेंगे तो वहाँ भी अपनी अच्छाइयां ही फैलाएंगे, जिस से दूसरों का भी भला ही होगा।

'डाकुओं का उद्धार' रास्ते में (केन्दुझरगढ़, उड़ीसा)

श्री गुरू नानक देव जी ने अपना लक्ष्य हिन्दू तीर्थ 'पुरी' को बनाकर आगे की यात्रा प्रारम्भ की हुई थी। उन का मुख्य उद्देश्य था कि आषाढ़ माह में जगननाथ की रथ यात्रा पर्व पर होने वाले मेले में पहुँच कर कोटि-कोटि जन समूह से सीधा सम्पर्क करना एवं उन्हें मानवता का संदेश देकर, एक ईश्वर का बोध कराना, जो कि सर्व-व्यापक है। अत: वे दूर्गम तथा विषम पठारी क्षेत्रों से होते हुए चल रहे थे। चलते-चलते एक स्थान पर उनका सामना डाकुओं से हो गया। डाकुओं के मुखिया ने गुरुदेव के मुख-मण्डल के तेज को देख कर अनुमान लगाया कि यह कोई अमीर व्यापारी है परन्तु साधु वेष धारण कर उन लोगों से बचकर निकलना चाहता है। अत: उन्होंने गुरुदेव को जान से मार डालने की धमकी दी किन्तु गुरुदेव के विचलित होने का तो प्रश्न ही नहीं था। इस पर गुरुदेव मुस्कराने लगे तथा कहा, "ठीक है, भाई लोगो हम मरने के लिए तैयार हैं। किन्तु हमारी अन्तिम इच्छा है कि हमारे शवों का दाह-संस्कार कर देना। जिस से शवों का अपमान न हो। अत: आप पहले हमारे को जलाने के लिए आग का प्रबन्ध कर लें।" इस अनोखी मांग को सुनकर पहले तो डाकू चकित हुए, परन्तु उन्होंने सोचा यह कोई ऐसी मांग नहीं जो कि सहर्ष मरने वालों की पूरी न की जा सके। इसी लिए दो डाकू आग के लिए दूर से दिखाई देने वाले धूएं की ओर चल पड़े। वहाँ पर पहुँच कर देखा कि गांव के लोग एक शव की अंत्योष्टि क्रिया कर रहे थे तथा सभी लोग मृत प्राणी के दुष्कर्मो की निन्दा कर रहे थे कि यदि उस व्यक्ति ने अपराधी जीवन न जीया होता तो आज उसे यूँ इस प्रकार मृत्यु दण्ड न मिला होता। वह डाकू वहाँ से वापस आ कर गुरुदेव के चरणों में गिर पड़े तथा कहने लगे, "हजूर हमें क्षमा करें। आप महापुरुष हैं। यदि हमने आप की हत्या कर दी तो लोक-परलोक में हमारी निन्दा होगी और धर्मराज के न्यायालय में जो दण्ड मिलेगा सो अलग। अत: आप हमारी प्रार्थना स्वीकार कर हमें अपनी मर्यादा अनुसार शिष्य बना लें क्योंकि हमने सदा घोर पाप किए हैं। सत्य गुरू जी हम प्रतिज्ञा करते हैं कि हम आगामी जीवन सदाचार सहित व्यतीत करेंगे। अत: हमारे पापों का नाश करो।" तब गुरुदेव ने कृपा दृष्टि की, तथा कहा, "जब तुम लोग इस व्यवसाय को त्याग दोगे तो प्रभु तुम्हारी क्षमा याचना स्वीकार करेंगे। अब तुम कृषि कार्य करो और धन सम्पति गरीबों में वितरण कर दो। दीन-दुखीयों की सेवा में समय लगाओ।" इस प्रकार गुरू नानक देव जी ने डाकुओं के एक समूह को प्रभु भक्ति के नाम रंग में रंग दिया, जिस से डाकुओं के जीवन में क्रांति आ गई।

चैतन्य भारती का उद्धार (कटक, उड़ीसा)

श्री गुरू नानक देव जी लम्बी यात्रा करते हुए उड़ीसा प्रांत के कटक नगर में पहुँचे। कटक का तत्कालीन राजा, देवी का उपासक था। जब उसने गुरुदेव के दर्शन कर उन के निराकार प्रभु की उपासना के प्रवचन सुने तो उस ने देवी, देवताओं की आराधना त्याग दी। यह देखकर उस का गुरू 'चैतन्य भारती' बहुत क्रोध में आया। उसने अपनी तान्त्रिक शक्तियों से गुरुदेव को मार देने की धमकी दी। किन्तु गुरुदेव शान्त हृदय से स्थिर होकर बैठे रहे। उस ने दो-तीन दिन तक उसने अपनी मन्त्र शक्ति चलाई किन्तु उस की एक न चली। गुरू बाबा जी के कीर्तन की मधुर ध्वनि की गूंज जब उस के कानों में पहुँचती तो उस का क्रोध धीमा हो जाता एवं उस की तान्त्रिक शक्तियां इन आध्यात्मिक ध्वनियों के सम्मुख नाकारा हो कर रह जातीं। अन्त में चैतन्य को अपनी भूल का एहसास हुआ। अत: प्रायश्चित में उस ने एक छोटा सा पौधा गुरुदेव की सेवा में भेंट रूप में प्रस्तुत किया। यह पौधा इस बात का प्रतीक था कि वे मित्रता की नीव रखते हैं, क्योंकि प्रकृति की समस्त शक्तियां आप के आधीन हो चुकी हैं। अत: वह शरणागत हुआ। उस का पौधा वहीं पृथ्वी में गाड़ दिया गया जो वृक्ष के रूप में विद्यमान है।

रथ यात्रा (पुरी नगर, उड़ीसा)

श्री गुरू नानक देव जी कटक से आगे अपने निर्धारित कार्यक्रम के अन्तर्गत 'पुरी' पहुँचे। गुरुदेव के लिए वह मेला उन के अपने सिद्धांतो के प्रचार करने का एक स्वर्ण अवसर था जहां भी मूर्ति पूजा या कर्म काण्ड-रीतियों का प्रचलन होता गुरुदेव वहां पर ही उन के नियमों के विरुद्ध कुछ ऐसी बातें कर देते जिन्हें देखकर वे पण्डे, पुजारी विवशता के कारण वाद-विवाद के लिए तैयार हो जाते। परन्तु गुरू नानक देव जी का तेजस्वी व्यक्तित्व और उनकी ज्ञान पूर्ण वाणी, उनके सत्योपदेश, उन की निर्भय आलोचना, कट्टर पन्थियों के एक-एक अन्याय-अत्याचार और धूर्तता को नंगा कर

देते। उनके सम्मुख जीवन तत्व की वास्तविकता को इस प्रकार निखार कर रख देते कि वे निरूत्तर हो जाते। सभी प्रकार के ज्ञान विज्ञान से पूर्ण गुरू बाबा इन पण्डा पुजारियों की वाद-विवाद में कोई बात न चलने देते और न ही आचार-विचार की पूर्णता में। उनकी संगीतमय वाणी जीवन के परम तत्व को कठोर से कठोर हृदयो में उत्तर जाती और इस नये सुझाव के अधीन सभी विरोधी मौन हो जाते। सभी का काया कल्प हो जाता। जब जगन्नाथ पुरी में गुरुदेव पहुँचे तो उन दिनों जगन्नाथ (कृष्ण जी) की रथ यात्रा निकालने का पर्व निकट था। अत: भारी संख्या में श्रद्धालू मेले में सम्मिलित होने पहुँच रहे थे। गुरुदेव ने समुद्र तट पर एक रमणीक स्थल चुन कर अपना खेमा लगाया तथा पर्यटकों को आकर्षित करने के लिए कीर्तन प्रारम्भ कर दिया। जल्दी ही आप के आस-पास भारी भीड़ इकट्ठी हो गई। तब गुरुदेव ने शब्द (वाणी) का गायण प्रारम्भ कर दिया।

दूजी माइआ जगत चित वासु ॥ काम क्रोध अहंकार बिनासु ॥
दूजा कउणु, कहा नही कोई ॥ सभ महि एकु निरंजनु सोई ॥
राग गाउड़ी, पृष्ठ 223

जगत नाथ मन्दिर

मधुर संगीत सुनकर बहुत से भक्तजन आप के आस-पास बैठ गए। कीर्तन समाप्त होने पर आप ने श्रद्धालुओं को सम्बोधित होकर कहा कि एक मात्र जगन्नाथ स्वयं प्रभु-परमेश्वर है जो कि सर्व व्यापक है। अत: यह एक नन्हीं सी मूर्ति कैसे जगन्नाथ हो सकती है। जिसे हम में से ही किसी कारीगर ने बनाया है। यदि हम इस नन्ही सी मूर्ति को जगन्नाथ मान लेते है तो इस का निर्माता कारीगर, वह तो इस सृष्टि से उपर कोई और प्रभु हो गया। लोगों ने परम्परा के विरुद्ध गुरुदेव के प्रवचन में सत्य पर आधारित तर्क संगत दृष्टान्त सुने, तो बहुत प्रभावित हुए। परन्तु स्थानीय वातावरण के विपरीत विचार, सभी को असहनीय महसूस हो रहे थे। अत: वह आपस में कानाफूसी

करने लगे। यह बात जंगल की आग की तरह फैल गई कि एक साधु पंजाब से आया है जो अपने साथियों के साथ मिल कर कीर्तन करता है तथा अपने प्रवचनों में मूर्ति पूजा का खण्डन कर रहा है तथा कह रहा है कि यह अधूरी मूर्ति जो कि कृष्ण जी की बताई जाती है, जगन्नाथ नहीं हो सकता क्योंकि जगन्नाथ अर्थात समस्त जगत का स्वामी वह सर्व व्यापक प्रभु स्वय् है। ईश्वर का निर्माण पत्थर या मिट्टी से नहीं किया जा सकता, जो कि अयोनि है। परमात्मा कण-कण में निवास करते हैं। वही सब मनुष्यों के इष्टदेव हैं और उन्हीं का स्मरण आत्म शक्ति के लिए आवश्यक है। इस घटना की सूचना स्थानीय शासक, राजा प्रताप रूद्रपुरी को भी मिली वह बहुत विद्वान मनुष्य था। अत: उसने निर्णय लिया की गुरुदेव जी से प्रत्यक्ष वाद-विवाद हो तो सत्य जाना जाए। वह स्वय् गुरुदेव के दर्शनों की अभिलाषा लेकर जगन्नाथ के मन्दिर में पहुँचा। उसने गुरुदेव को संध्या की आरती में सम्मिलित होने का निमन्त्रण भेजा। जिस को प्राप्त कर के ठीक आरती के समय गुरुदेव मन्दिर के प्रांगण में पहुँचे किन्तु आरती में सम्मिलित नहीं हुए। वे अपने शिष्यों के साथ वहीं बैठे मूक दर्शक बने रहे। आरती समाप्त होते ही वहाँ के पुजारियों तथा प्रशासनिक अधिकारीयों ने गुरुदेव को घेर लिया तथा कहा, "आप आरती में सम्मिलित क्यों नहीं हुए?" इस के उत्तर में गुरुदेव ने कहा, "मैं तो अपने विशाल जगन्नाथ की आरती में प्रत्येक क्षण सम्मिलित रहता हूँ। उस की आरती कभी समाप्त नहीं होती तथा वह निरंन्तर चलती ही रहती है।" यह सुन कर पुजारी पूछने लगे-वह आरती कहाँ हो रही है हमें भी दिखवाए। इस के उत्तर में गुरुदेव ने कहा, "'गगन रूपी थाल में सूर्य और चद्रमा रूपी दीपक जल रहे हैं। गगन के सितारे उस थाल में जड़े हुए मोती हैं।'" मलयानिल धूप-बती का कार्य कर रहा है और पवन विराट-स्वरूप भगवान के सिर पर चंवर झुला रहा है। इस संदर्भ में आप जी ने वाणी उच्चारण प्रारम्भ कर दी-

गगन मै थालु रविचंदु दीपक बने तारिका मण्डल जनक मोती ।।
धूपु मलआनलो पवणु चवरु करे सगल बनराइ फूलन्त जोती ।।
कैसी आरती होइ भव खण्डना तेरी आरती ।।
अनहता सबद वाजंत भेरी।। रहाउ ।।

राग धनासरी, पृष्ठ 663

गगन रूपी थाल में सूर्य और चँद्रमा रूपी दीपक जल रहे हैं। गगन के सितारे उस थाल में जड़े हुए मोती है। मलयानिल (दक्षिण में चंदन के पेड़ों की सुगंध) धूप-बत्ती का कार्य कर रहा है और पवन विराट स्वरूप भगवान के सरपर चँवर कर रहा है। पूरी वनस्पति भगवान के अर्पित फूल हैं। इसके अतिरिक्त (हे भय नाशक प्रभु) भगवान जी (आपकी) कैसी आरती हो। उस की आरती तो स्वयं प्रकृति कर रही है ! अनहद शंख नाद किया जा रहा है। इस विराट् रूप, में आपके हजारों नयन है। परन्तु निर्गुण स्वरूप में आप की एक भी मूर्ति नहीं है। विराट स्वरूप भगवान के हजारों पवित्र चरण है परन्तु निर्गुण पारब्रह्म का एक भी पैर नहीं है। निर्गुण स्वरूप में हे प्रभु ! आप बिना नाक के हैं परन्तु इस विराट स्वरूप में आप के हजारों नाक है। आप की यह लीला देखकर कि कर्त्तव्य विमूढ़ हो गया हूँ। हे जीव ! सब जीवो में उसी ज्योति-स्वरूप-परमात्मा की ज्योति है और उसी ज्योति के कारण सब को प्रकाश की प्राप्ति होती है। गुरू की कृपा से ही उस ज्योति का अनुभव होता है। जो जीव उस परमात्मा को भाता है उस की आरती स्वीकार की जाती है। हरि के चरण कमलों का आनन्द-रस प्राप्त करने के लिए मेरा मन तड़पता है और दिन-रात मुझे प्रभु दर्शन की प्यास रहती है। हे प्रभु ! मुझ प्यासे पपीहे को अपनी कृपा की स्वांति बूँद देने का कष्ट करें। इस से मेरे मन में आप के पवित्र नाम-रूपी अमृत का निवास होगा। इस व्याख्या को सुन कर राजा प्रताप रूद्रपुरी बहुत प्रसन्न हुआ। अतः उस ने गुरुदेव से दीक्षा की याचना करने का मन बनाया। तब गुरुदेव ने वहां हजारो भक्तो के साथ राजा प्रताप रूद्रपुरी को भी दीक्षा दे कर कृतार्थ किया। इस राजा ने गुरुदेव की याद में समुद्र तट पर, जहां उन्होंने अपना खेमा लगाया था, एक सुन्दर सी धर्मशाला (सत्संग भवन) बनवाई जिस में प्रतिदिन निराकार प्रभु की स्तुति होने लगी।

पारवण्डी साधु (पुरी, उड़ीसा)

श्री गुरू नानक देव जी एक दिन पुरी नगर में समुद्र तट पर विचरण कर रहे थे कि एक साधु मदारी की तरह मजमा लगा कर ऊँचे स्वर में किसी अज्ञात दृश्यों की झलक प्रस्तुत कर रहा था। कौतूहल वश गुरुदेव तथा उन के साथी भाई मरदाना भी उस भीड़ में वहीं खड़े हो कर, उस साधु का भाषण (कमैन्ट्री) सुनने लगे, जिस ने आखें मूँद रखी थीं। वह दर्शकों को बता रहा था कि उस ने एक विशेष प्रकार की आत्मिक शक्ति प्राप्त की है, जिस के अन्तर्गत उसे अन्तर ध्यान होने पर सभी लोगों के यथार्थ दर्शन होते हैं। जिस को वह अपनी दिव्य दृष्टि से देखकर सुना सकता है। इस प्रकार वह, इन्द्र लोक, शिव लोक, विष्णु पुरी, ध्रुव पुरी इत्यादि की काल्पनिक कथाएं रच-रच कर लोगों को सुनाता रहता था। लोग उस की कथन शक्ति से प्रभावित हो कर उस के सामने रखे लोटे में श्रद्धानुसार यथा शक्ति सिक्के डालते रहते थे। वह आंखे मूँदकर स्वांग रचते हुए काल्पनिक कहानियाँ कुछ इस प्रकार सुना रहा था -

ढोंगी साधु-मुझे इस समय विष्णु पुरी के दर्शन हो रहे हैं। भगवान विष्णु जी सर्प पर आसन लगाए हैं इस समय उन को नारद जी मिलने आये हुए हैं वह उन से विचार-विमर्श कर रहे हैं कि भगवान जी ने अभी-अभी किसी कारण वश लक्ष्मी माता जी को बुला भेजा है। अत: वह पधार रहीं हैं इत्यादि-इत्यादि। जन साधारण, काल्पनिक दृश्यों को वास्तविक जान कर बहुत प्रभावित हो रहे थे कि तभी गुरुदेव ने सभी जन समूह को चुप रहने का संकेत किया तथा भाई मरदाना जी को, वह लोटा सामने से उठाकर साधु के पीछे रखने को कहा। भाई जी ने चुपके से ऐसा ही कर दिया। जब कुछ समय पश्चात् साधु ने आंखे खोली तो वहाँ पर अपना लोटा न देखकर बहुत घबरा गया तथा पूछने लगा कि मेरा लोटा किस ने उठाया है? कौन है जो साधुओं के साथ मसखरियां करता है? तब गुरुदेव ने कहा, "आप नाराज न हो आप को तो दिव्य दृष्टि मिली हुई है। अत: आप स्वयं अन्तर ध्यान होकर अपना लोटा ढूँढ़ लें क्योंकि वह तो इसी मात लोक में ही है। वह किसी दूसरे लोक में तो पहुँच नहीं सकता।" यह तर्क सुनकर ढोंगी साधु बहुत छटपटाया क्योंकि वह इस समय पूर्णत: चुंगल में फँस चुका था।

अब उसे कुछ कहते नहीं बन रहा था अतः वह सभी जन-समुह को कोसने लगा। यह देख कर सभी लोग हंसने लगे कि अब साधु बाबा की पोल खुल गई थी। अतः उस के ढोंग का अब परदा-फास हो चुका था। उपयुक्त समय देखकर गुरुदेव ने कहा, "साधु बाबा क्यों ढोंग रचते हो? तुम्हें तो अपने पीछे पड़ा हुआ लोटा भी दिखाई नहीं देता परन्तु बातें करते हो इन्द्र लोक, विष्णु लोक की जिन का कि अस्तित्व भी नहीं। केवल तुम्हारी कोरी कल्पना मात्र है।" सत्य का एहसास कर ढोगी साधु बाबा बहुत लज्जित हुए तथा उस ने तुरन्त स्वीकार कर लिया कि यह ढोंग तो मेरी जीविका का साधन मात्र है। वास्तव में मुझे कुछ भी दिखाई नहीं पड़ता, मैं तो काल्पनिक कहानियां सुनाने का अभ्यास किये रहता हूँ। तब गुरुदेव ने उसे उपदेश दिया कि केवल अपनी जीविका के लिए आध्यात्मिक जीवन को मिथ्या कहानियों का प्रचार कर नष्ट न करें। यह तो दुगुना पाप है क्योंकि जन-साधारण इन को सत्य मान कर भटक जाता है।

अखी त मीटहि नाक पकड़हि ठगण कउ संसारु ॥ रहाउ ॥

आंट सेती नाकु पकड़हि सूझते तिनि लोअ ॥

मगर पाछै कुछ न सूझै इहु पदमु अलोअ ॥

राग धनासरी, पृष्ठ 663

कलयुगी पण्डा (पुरी, उड़ीसा)

जगन्नाथ मन्दिर का मुख्य पण्डा जिस का नाम कलियुग था, वह गुरू बाबा नानक देव जी की बहुमुखी प्रतिभा देखकर दुविधा में पड़ गया। एक तरफ उस का अपना सिद्धांत मूर्ति पूजा था तथा दूसरी तरफ गुरुदेव द्वारा दर्शाया सत्य मार्ग, एक अकाल पुरुष (निराकार ज्योति) की पूजा थी। वह निर्णय नहीं ले पा रहा था कि अब किस मार्ग पर दृढ़ता से पहरा दिया जाए। यदि वह अपने मार्ग पर चलता है तो इस फोकट मार्ग से सभी कर्म निष्फल चले जाते हैं और यदि गुरुदेव की आज्ञा से धन सम्पत्ति का त्याग करता है जो कि उस की जीविका और वैभव के साधन भी हैं तब भी कठिनाई है। अतः वह

अन्त में इस निर्णय पर पहुँचा कि एक बार फिर से गुरू नानक देव जी की परीक्षा ली जाए तथा जाना जाए कि वह वास्तव में करनी कथनी के शूरवीर हैं या उन्होंने अकस्मात ही हमें प्रभावित किया है? ऐसा विचार कर मुख्य पुजारी, पण्डा कलियुग ने एक योजना बना डाली कि जब कभी गुरुदेव एकान्त में समुद्र तट पर हो खराब मौसम में जब ज्वार आ रहा हो, उन को भयभीत करने के लिए उन पर हमला कर दिया जाए जिस से उनके आत्म विश्वास की परीक्षा हो जाएगी कि वह निराकार प्रभु में कितनी आस्था रखते हैं? एक दिन समुद्र में ज्वार आने वाला था किन्तु गुरुदेव, भाई मरदाना सहित समुद्र तट पर अपने खेमे के बाहर विचरण कर रहे थे कि तभी कुछ अज्ञात भद्दी अकृति वाले लोगों ने दूर से उन पर आग के गोले फैंकते हुए भंयकर ध्वनियां उत्पन्न करनी शुरू कर दी। किन्तु यह आग के गोले गुरुदेव के निकट नहीं पहुँच पाए। इस के पश्चात् ज्वार के कारण समुद्री तूफान चलने लगा जिस से भीषण वर्षा होने लगी। भयंकर तूफान, आँधी, मूसलाधार वर्षा, घनघोर बादलों के छा जाने से दिन में ही रात जैसा अन्धकार छा गया। गुरुदेव ने भाई मरदाना से कहा, "भाई जी आप रबाब बजा कर कीर्तन आरम्भ करें करतार भली करेगा।" मरदाना जी कहने लगे, "हे ! गुरुदेव तूफान के कारण यहाँ पर कीर्तन असम्भव है क्योंकि शरीर ही तूफान से उड़ा जा रहा है। तब गुरुदेव ने कहा, "आप हुक्म माने सब ठीक हो जाएगा।" जैसे ही मरदाना जी ने रबाब थामी तूफान थमने लगा कीर्तन प्रारम्भ होने पर सब शान्त हो गया तथा फिर से उजाला हो गया। आप जी कीर्तन करने लगे। –

एकु अचारु रंगु इकु रूपु ।। पउण पाणी अगनी असरूपु ।।

एको भवरु भवै तिहु लोइ ।। एको बूझै सूझै पति होइ ।।

राग रामकली, पृष्ठ 930

तभी चट्टानों के पीछे से कलियुग पण्डा प्रकट हुआ। उस ने गुरुदेव को शीश झुका कर नमस्कार किया तथा रत्नों से भरा एक थाल भेंट में आगे धर दिया और कहने लगा मेरी यह तुच्छ सी भेंट आप स्वीकार करें। गुरुदेव ने रत्नों को देख कर कहा, "पण्डा जी यह धन पदार्थ हमारे किसी काम के नहीं है। हम तो त्यागी साधू है हमारा एक मात्र लक्ष्य एक प्रभु का नाम जपना एवं जपवाना है। अत: हम इसी लिए कर्म

काण्ड़ों का खण्डन करते हैं क्योंकि इन क्रियाओं से प्राप्ति न होकर व्यक्ति व्यर्थ में अमूल्य समय नष्ट करता है।" अत: उन्होंने वाणी उच्चारण की -

मोती त मंदर ऊसरहि रतनी त होहि जड़ाउ ॥
कसतूरि कुंगू अगरि चन्दनि लीपि आवै चाउ ॥
मतु देखि भूला वीसरै तेरा चिति न आवै नाउ ॥
हरि बिनु जीउ जलि बलि जाउ !
मैं अपणा गुर पूछि देखिआ अवरु नाही थाउ ॥ रहाउ ॥

सिरी राग, पृष्ठ 14

गुरुदेव ने कहा- "हे ! कलियुग, मैं अनित्य सुन्दरता को नहीं चाहता। मैं तो नित्य पदार्थ, जो पारब्रह्म परमेश्वर है उसी का नाम चाहता हूँ। अनित्य वस्तु स्थिर नहीं होती और जो स्थिर नहीं होती है, दु:ख का कारण बनती है। क्योंकि इस में मिथ्या अभिमान उत्पन्न हो जाता है जो कि मनुष्य की अधोगति का कारण बनता है।" जब कलियुग पण्डे (मुख्य पुजारी) को यह एहसास हो गया कि गुरुदेव वास्तव में धन-धान्य और राजकीय ऐश्वर्य से निर्मोहित हैं तो वह दंग रह गया। तथा गुरुदेव से कहने लगा, "गुरू जी यह समय छल कपट का है आध्यात्मिक दुनिया में सब से अधिक छल, साधु का स्वांग रच कर किया जा रहा है। अत: मैंने इस लिए यह धुष्टता की है आप मुझे क्षमा करें। मैं आप के दर्शाये मार्ग पर चलूंगा तथा अपनी सम्पूर्ण सम्पति आप के सिद्धांतों के प्रचार-प्रसार पर खर्च कर दूँगा अत: मुझे गुरू दीक्षा दें। मैं आप का शिष्य होना चाहता हूँ।" गुरुदेव जी, कलियुग पण्डे पर अति प्रसन्न हुए और उसे उस समस्त क्षेत्र का प्रचारक नियुक्त कर दिया। कुछ लोगों ने, जो वहाँ के स्थानीय निवासी थे, कलियुग पण्डे से प्रेरणा पा कर गुरुदेव के समक्ष विनती की कि वहां पर खारा पानी है। यदि मीठे पानी का कोई प्रबन्ध कर दें तो इस क्षेत्र का कल्याण हो जाएगा। गुरुदेव ने इस याचना पर, एक बावली खोदने का आदेश दिया जहां वह स्वयं बैठ कर कीर्तन किया करते थे, उस बावली में से मीठा जल निकला जिस से उन लोगों की अभिलाषा पूर्ण हो गई। वह मीठे जल का स्रोत गुरुदेव की स्मृति में आज भी विद्यमान है। उन्हीं दिनों भक्त चैतन्य

पुरी नगर की यात्रा पर थे। अत: वहाँ पर उन को श्री गुरू नानक देव जी के दर्शन करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। उन्होंने गुरुदेव से आध्यात्मिक विषयों पर बहुत विचार-विनिमय किया तथा निराकार उपासना का उपदेश धारण किया। गुरुदेव कुछ मास, पुरी नगर में ठहर कर, वहाँ से पूर्व दिशा में, बंगाल तथा आसाम की तरफ प्रस्थान कर गए। आप जी चलते-चलते कलकत्ता पहुँचे।

शाह सुजाह- हावड़ा (बंगाल)

श्री गुरू नानक देव जी यात्रा करते एक स्थान पर पहुँचे जिस का नाम मुर्शिदाबाद था। वहाँ पर गुरुदेव न पानी के एक स्रोत के निकट रात भर ठहरने का निश्चय किया कि वहाँ पर शाह सुजाह कवि जी आ पहुँचे। जल ग्रहण करने के पश्चात् जब वह घर लौटने लगे तो उन की दृष्टि गुरू नानक देव जी पर पड़ी जो उस समय भजन बंदगी में व्यस्त थे। सुजाह के हृदय में विचार आया कि यदि इन महापुरुषों को मैं अपने घर पर विश्राम करने के लिए कहूँ तो इन्हें सुविधा होगी। अत: उन्होंने गुरुदेव से आग्रह कर अपने साथ घर पर रात भर ठहरने के लिए स्वीकृति प्राप्त कर ली। गुरुदेव उस की निष्काम सेवा से अति प्रसन्न हुए। भोजन उपरान्त मरदाना जी ने कीर्तन किया। तत् पश्चात् सुजाह ने रात भर गुरुदेव से आध्यात्मिक विचार गोष्ठी की वास्तव में सुजाह जानना चाहते थे कि गृहस्थ जीवन में रहते मुक्ति कैसे प्राप्ति हो? जिज्ञासा यह थी कि गृहस्थ में माया मोह इत्यादि के प्रभाव से ऊपर कैसे उठा जाए। गुरुदेव ने उन की शंकाओं का समाधान करते हुए कहा मनुष्य को अपनी मृत्यु सदैव याद रखनी चाहिए तथा यह मान कर कार्य करते रहना चाहिए कि वह पृथ्वी पर एक अतिथि है न जाने कब बुलावा आ जाए। इस प्रकार माया, मोह के प्रभाव से बचा जा सकता है। इस के अतिरिक्त एक निराकार प्रभु को सर्व व्यापक जान कर, उस के भय में जीवन व्यतीत करना चाहिए। गुरुदेव जब प्रात:काल विदाई लेने लगे तो सुजाह की प्रेमावस्था देखकर आप ने उन्हें ब्रह्म-ज्ञान की ज्योति प्रदान कर दी और आगे के लिए चल पड़े। रास्ते में भाई मरदाना जी ने गुरुदेव से प्रश्न पूछा कि हे ! गुरू जी आप के अनेक सिक्ख (शिष्य) हुए हैं जिन्होंने आप की बहुत अधिक तन-मन धन से सेवा की है किन्तु आप

उन पर इतने नहीं रीझ पाये जितने इस सुजाह पर रीझ पाये हैं? इन को तो आपने ब्रह्मज्ञान की आत्मिक अवस्था प्रदान कर दी है जो कि अमूल्य निधि है। इस के उत्तर में गुरुदेव कहने लगे, भाई मान लो हमारे पास तीन दीपक हैं, एक में तेल, बत्ती दोनो हैं, दूसरे में केवल बत्ती है, तेल नहीं, और तीसरे में बत्ती तेल दोनो नहीं, अब ऐसे में आप बताएं कि कौन सा दीपक जलाने पर प्रकाशमान होगा? भाई मरदाना जी कहने लगे, प्रश्न सीधा है, पहला दीपक ही प्रकाश मान होगा क्योंकि उस में दोनो आवश्यक वस्तुएं हैं। दूसरा दीपक जलने पर एक बार तो अवश्य जलेगा। परन्तु बहुत जल्दी तेल न होने के कारण टिम-टिमा कर बुझ जाएगा। तीसरा तो जले गा ही नहीं, उस ने प्रकाश मान क्या होना है। उत्तर पाकर गुरुदेव ने बात को स्पष्ट किया कि जिस प्रकार एक दीपक इन में से प्रकाश मान हो सकता है क्योंकि उस में तेल बत्ती दोनों है ठीक इसी प्रकार शाह सुजाह में पहले से ही प्रभु नाम की कमाई रूपी तेल तथा प्रतिभा रूपी बत्ती दोनों विद्यमान हैं। हमने तो उसे केवल ज्ञान रूपी ज्योति प्रदान की है। जिस से वह स्वय् ही प्रकाशमान हो उठे हैं। अर्थात ज्ञान ज्योति वहीं सफल कार्य कर सकती है जहां जिज्ञासु नाम की कमाई करने के लिए हृदय से तैयार हो तथा ज्ञान रूपी प्रसादि तभी प्राप्त होगी जब व्यक्ति आत्म समर्पण कर अपना अंह (अभिमान) त्याग कर सेवा में जुट जाए।

बड़ी संगत, छोटी संगत (कलकत्ता, बंगाल)

श्री गुरू नानक देव जी पूर्व दिशा में आगे बढ़ते-बढ़ते कालीघाट कलकत्ता में जा पहुँचे। यह क्षेत्र उन दिनों घोर बियाबान जंगलों से घिरा हुआ था। बरसात के मौसम में कीचड़ तथा मच्छरों के कारण बिमारियां फैली हुई थी अत: जन-जीवन अस्त-व्यस्त था। गरीबी, भुखमरी, विकराल रूप धारण किये हुए थी। गुरुदेव ने वहां के नागरिकों की दुर्दशा देखी तो उन का मन भर आया। बस्ती बहुत गंदी होने के कारण लोगों का जीवन पशुओं समान था। बस्तियों में गंदे पानी की निकासी न होने के कारण बदबू, मक्खी, मच्छर इत्यादि कीटाणुओं का साम्राज्य था। मलेरीया, हैज़े के कारण लोग मर रहे थे। निराशा के कारण सभी लोग मन हार चुके थे, अत: धैर्य और पुरुषार्थ छोड़ कर भाग रहे थे दूसरी तरफ सम्पन्न, समृद्ध लोग ऐश्वर्य का जीवन जी रहे थे उन को निम्न वर्ग से

कोई सरोकार नहीं था, पर उन का उद्देश्य केवल शोषण करना ही था। अपने किसी भी कर्मी के दुख-सुख की भागीदारी से वह कोसों दूर थे अत: वहाँ पर दो वर्गो में एक विकराल खाई थी। एक अति निम्न स्तर का जीवन जीने वाले तथा दूसरी तरफ समृद्धि से ऐश्वर्य का जीवन जीने वाले। विचार धारा ऐसी बन चुकी थी कि यह सब पूर्व कर्मो का फल है। अत: भाग्य में जो लिखा है मिलेगा। यह सब देख, सुनकर गुरुदेव ने दीन-दुखियों की सहायता करने के लिए संघर्ष करने की योजना बनाई। गुरुदेव ने सभी वर्गो को विश्वास में लेने के लिए घर-घर जा कर जागृति लाने के लिए उन का यहाँ दिल-हिला देने वाले दृश्य प्रस्तुत किये तथा वहाँ पर जल्दी ही सेवा समिति की स्थापना कर दी। जिन्होंने घर-घर जा कर बिमारों भूखों की सेवा करना अपना उद्देश्य बना लिया। जल्दी ही निष्काम सेवा की लहर सारे कालीघाट तथा निकट के कस्बों, 'चुटानी' और 'गोविन्दपुर' में भी फैल गई। नित्य प्रति गुरुदेव अपने प्रवचनो से स्थान-स्थान पर जा कर दीन-दुखियों के लिए लोगों को प्रेरणा देते कि सभी मानव जाति एक समान है। सभी को रोटी, कपड़ा, मकान इत्यादि जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं की सामग्री उपलब्ध होनी चाहिए। यदि कष्ट में कोई व्यक्ति एक दूसरे के काम नहीं आता तो इस जीवन को धिक्कार है। दीन-दुखियों की सेवा ही वास्तव में सच्ची पूजा है। गुरुदेव के नेतृत्व में गरीबी के विरुद्ध जन अन्दोलन प्रारम्भ हो गया। गुरुदेव ने उस समय एक निर्णय लिया कि बिमारियों का कारण हमारी गंदी बस्तियां है। अत: इन को त्याग कर नई आधुनिक बस्तियां बनाई जाएं इस कार्य के लिए कुछ भूमि लेकर, एकत्रित चन्दे से नव निर्माण का कार्य प्रारम्भ कर दिया। देखते ही देखते सभी मजदूर इस कार्य में अपनी सेवाएं अर्पित करने लगे, जिस से एक सुन्दर बस्ती तैयार हो गई जिस में गुरुदेव ने पुनर्वास कार्य प्रारम्भ कर दिया। जो मजदूर बीमारी के कारण मर गए थे या अस्वस्थ थे या जिन की आय के साधन न के बराबर रह गये थे, उन को उस नई वस्ती में प्राथमिकता दी गई। जो पुरानी गंदी वस्ती थी उस कर खाली करा के उन झुग्गी-झोपडीयों को आग लगा दी। इस प्रकार गुरुदेव ने वहाँ पर अपनी क्रांति कारी विचार धारा से जन-जीवन में एक आन्दोलन प्रारम्भ कर दिया। सभी वर्गो के हृदय पर गुरुदेव शासन कर रहे थे। गुरुदेव जहां भी जाते जन-साधारण हाथ-जोड़ कर आज्ञा पालन करने के लिए तत्पर रहने लगे। इस समय गुरुदेव, मिल जुल कर रहने अथवा बांट कर खाने के

महत्व को जन-जन में सिखा रहे थे। इस कार्य को आगे बढ़ाने के लिए कालीघाट में एक विशाल धर्मशाला बनवाई तथा वहाँ पर सेवा समितिओं को संगत रूप दिया, धीरे-धीरे चुटानी और गोविन्द पुर कस्बे में भी धर्मशाला बनवा कर गुरुदेव ने सत्संग की स्थापना की, जो कि बाद में बड़ी संगत तथा छोटी संगत के नाम से प्रसिद्धि प्राप्त कर गई। आप जी की प्रेरणा से प्रत्येक वर्ग के लोग नित्य-प्रति जाते। प्रवचन तथा कीर्तन सुनने के पश्चात् समाज सेवा कर पीड़ित लोगों को राहत पहुँचाने में जाते, जिस से एक आदर्श समाज की स्थापना हुई। गुरुदेव यहाँ लगभग एक वर्ष रुक कर आगे ढाका के लिए प्रस्थान कर गए।

भाई भूमिया जी (जैस्सोर, बंगला देश)

श्री गुरू नानक देव जी आगे यात्रा करते जिला जैस्सोर में पहुँचे। वहाँ पर एक बहुत बड़ा जमींदार था जिसे लोग प्यार से बूमिया जी अर्थात भूमि का स्वामी कहते थे। वास्तव में वह एक विशाल हृदय का स्वामी था। अत: दीन दुखियों की सेवा के लिए सदैव तत्पर रहता था। उस व्यक्ति ने अपने यहाँ जन-साधारण के लिए लंगर (भंडारा) चला रखा था कि कोई भी उस क्षेत्र में भूखा नहीं सोएगा। अत: सभी जरूरत-मंद लोग बिना किसी भेद-भाव अन्न-वस्त्र ग्रहण कर सकते थे। आस-पास के क्षेत्रों में इस की बहुत प्रसिद्धि थी। गुरुदेव जब उस कस्बे में पहुँचे तो उस के कानों में भी गुरुदेव के प्रवचनों की महिमा पहुँची। वह तुरन्त ही गुरुदेव की मण्डली में जा पहुँचा तथा निवेदन करने लगा कि आप मेरे घर में भी पधारें। मैं आप की सेवा का सौभाग्य प्राप्त करना चाहता हूँ। भूमियां के आग्रह को देखते हुए गुरुदेव ने प्रश्न किया कि वह क्या कार्य करते हैं तथा उस की आय का क्या साधन है जिस से वह लंगर चला रहे हैं? इस प्रश्न को सुनकर भूमियां संकोच में पड़ गया, क्योंकि लंगर के विशाल खर्च के कारण वह आवश्यकता पड़ने पर कभी-कभार डाका डाला करता था। उत्तर न मिलने के कारण गुरुदेव ने कहा-हम आप के यहाँ नहीं जा सकते क्योंकि आप वृत (परीश्रम) कर आय नहीं जुटाते। यह सुन कर भूमियां बहुत निराश हुआ तथा अपने गुरुदेव के चरण पकड़

लिए। कहने लगा, "हे गुरुदेव ! मैं आप की प्रत्येक आज्ञा का पालन करूँगा। बस एक बार मेरे घर पर भोजन ग्रहण करें, इस पर गुरुदेव ने कहा सोच लो बचन मानना बहुत कठिन कार्य है। भूमियां ने आश्वासन दिया आप आज्ञा तो करें। तब गुरुदेव ने कहा, "भ्रष्टाचार से अर्जित धन त्याग दें।" यह वचन सुन कर भूमियां चौंककर कहने लगा, "गुरुदेव इतनी कठिन परीक्षा में न डालें इस के अतिरिक्त कोई भी वचन मुझे कहोगे मैं मान लूँगा।" गुरुदेव ने उस की कठिनाई को समझा और कहा, "ठीक है यदि तुम हमारा पहला बचन नहीं मानना चाहते हो कोई बात नहीं किन्तु उस एक के स्थान पर अब तीन बचनों का पालन करना होगा।" भूमियां सहमत हो गया। गुरुदेव ने कहा, "हमारा पहला वचन है कि तुम झूठ नहीं बोलोंगे।" भूमियां ने कहा सत्य वचन जी, ऐसा ही होगा। तब गुरुदेव ने कहा दूसरा वचन है गरीबों का शोषण न करोंगे, न होते देखोंगे। तीसरा बचन है जिस का नमक खाना, उसके साथ दगा नहीं करना। भूमियां ने यह तीनो बचन सहर्ष पालन करने स्वीकार कर लिए। गुरुदेव ने फिर कहा, "किन्तु अभी जो भोजन हमें कराओंगे वह धन तुम परीश्रम कर कमा कर लाओगे। भूमियां ने इस बात के लिए भी स्वीकृति दे दी और स्वयं जंगल में जा कर वहाँ से ईधन के योग्य लकड़ियों का गठ्ठरा लाकर बाजार में बेचा, उस के मिले दामों से रसद ला कर भोजन तैयार कर, गुरुदेव को सेवन कराया। गुरुदेव सन्तुष्ट हुए तथा आर्शीवाद दिया। तुम्हारा कल्याण अवश्य होगा। गुरुदेव के जाने के कुछ दिन पश्चात् भूमियां को यथा पूर्वक लंगर चलाने के लिए धन की आवश्यकता पड़ी तो वह सोचने लगा कि अब धन कहाँ से प्राप्त किया जाएं, गरीबो का शोषण तो करना नहीं है। अत: उसने स्थानीय राज-महल में चोरी करने की योजना बनाई। एक रात राज कुमारों जैसी वेषभूषा धारण कर के सुन्दर घोड़े पर सवार होकर राज महल में पहँच गया। वहाँ पर उसको संतरी ने ललकारा कि कौन है? इस ललकार को सुनकर भूमियां ने सोचा, झूठ नहीं बोलना अत: तुरन्त उत्तर दिया मैं चोर हूँ। उसका यह उल्टा उत्तर सुनकर संतरी भयभीत हो गया। तथा सोचा कोई माननीय व्यक्ति होगा। और उसकी रूखी भाषा से नाराज हो गया है। अत: संतरी ने कहा, "महोदय ! क्षमा करें आप अन्दर जा सकते हैं।" भूमियां जी ने अन्दर जा कर खज़ाने तथा भण्डारों के ताले तोड़कर अभूषणों की भारी गठरी बाँधी, जब चलने लगा तो मन में आया, कुछ खा लिया जाए अत: रसोई घर में वहाँ धुन्धले प्रकाश में एक तश्तरी में रखे पदार्थ को

खाया जो कि नमकीन था। जैसे ही उसने पदार्थ सेवन किया, वैसे ही वहीं गुरुदेव को दिये बचन की उसे याद हो आई कि नमक हरामी नहीं बनना। बस फिर क्या था सभी अमूल्य पदार्थ वहीं छोड़कर वापस घर को चला आया। दूसरे दिन जब सुबह राजकर्मचारीयों ने चोरी की सूचना दी तो राजा ने जांच करवाई परन्तु वहाँ तो कुछ भी चोरी नहीं हुआ था। राजा को आश्चर्य हुआ कि कौन व्यक्ति हो सकता है जो ऐसी जगह चोरी करने का दुरसाहस कर सकता है? ढूँढो उसे ! सिपाहियों ने शक के आधार पर कई निर्दोष व्यक्ति को दण्डित करना तथा पीटना शुरू कर दिया। जब इस बात की जानकारी भूमियां को मिली तो उन से न रहा गया। वह सोचने लगा कि गुरू जी को बचन दिया है कि गरीबों का शोषण नहीं होने दूँगा अत: उसके बदले में कोई गरीब बिना कारण क्यों दण्ढ पाए। उस से वह अन्याय सहन नहीं हो पाएगा इस लिए उसे अपना अपराध स्वीकार करने के लिए राजा के पास उपस्थित होना चाहिए। उसने ऐसा ही किया। परन्तु राजा उस के सत्य पर विश्वास ही नहीं कर पा रहा था, कि भूमियां जी चोर हो सकता है। राजा का कहना था कि वह बहुत दयावान है अत: गरीबों के कष्ट देख नहीं पाया, जो उन को मुक्त करवाने के लिए सहानूभूति रूप में खुद को प्रस्तुत किया है। तब भूमियां ने गवाह के रूप में संतरी को प्रस्तुत किया जिस से राजा की शंका मिट गई तथा सभी निर्दोष लोगों को मुक्त कर दिया गया। किन्तु अब राजा भी भूमियां के जीवन से इतना प्रभावित हुआ कि उस ने भी गुरू नानक देव जी के उपदेशों के प्रचार के लिए एक धर्मशाला बनवा दी जिस में प्रतिदिन सत्संग होने लगा। राजा गुरू नानक देव का परम भक्त बन गया। उस के यहाँ संतान न थी, उस के इस दुख को देखते हुए सत्संग में एक दिन विचार हुआ कि राजा के लिए गुरू-चरणों में राजा के लिए संतान की कामना की जाए। अत: समस्त संगत ने एक दिन मिलकर प्रभु चरणों में प्रार्थना की कि हे भगवान ! आप कृपा कर, हमारे राजा के यहाँ एक पुत्र का दान देकर उसे कृतार्थ करें। प्रार्थना स्वीकार हुई परन्तु राजा के यहाँ पुत्र के स्थान पर पुत्री ने जन्म लिया। राजा ने नवजात शिशु को लड़को की तरह पालन-पोषण करना प्रारम्भ कर दिया क्योंकि उस का विश्वास था कि संगत ने मेरे लिए पुत्र की कामना की थी। अत: यह बालक पुत्र ही है पुत्री नहीं। समय व्यतीत होने लगा, बालक के युवा होने पर उस का रिश्ता एक लड़की के साथ तै कर दिया गया। जब राजा बारात लेकर अपने समधी के यहाँ जा रहा था तो रास्ते के जंगल में एक हिरण दिखाई

दिया जिस का शिकार करने के लिए राज कुमार (दूल्हे ने) जो कि वास्तव में लड़की थी, ने पीछा किया जिस कारण वह बारातियों से बिछुड़ गया। दुल्हे को भटकते हुए कुछ साधु भजन करते दिखाई दिये। वह उन के पास रास्ता पूछने पहुँचा तथा शीश झुकाकर प्रणाम किया। साधु ने कहा आओ बेटा बस क्या था ! दुल्हे की काया कलप हो कर, वह नारी से नर; पुरुष रूप हो कर वास्तविक दुल्हा बन गया। जब बारात का स्वागत हो रहा था तो किसी चुगल खोर ने वधू पक्ष को सूचित किया कि दूल्हा तो पुरुष नहीं, नारी है। इस पर बधू पक्ष वालों ने दूल्हे की परीक्षा लेने के लिए एक योजना बनाई उन्होंने कहा हम फेरे होने से पहले दूल्हे को अपने यहाँ स्नान करवाना चाहते है क्यो कि यह हमारी प्रथा है। जब स्नान कराया गया तो वहाँ तो नारी से नर रूप काया कल्प हो चुका था।

ढाकेश्वरी मन्दिर (ढाका, बंगला देश)

श्री गुरू नानक देव जी जिला जैस्सोर छोड़कर ढाका के लिए प्रस्थान कर गए। उन दिनों वहाँ घने जंगल हुआ करते थे तथा जंगलों में 'ढाकेश्वरी देवी' नाम से एक मन्दिर प्रसिद्ध था। इस ढाकेश्वरी मन्दिर के निकट का गांव ढकेश्वरी गांव कहलाता था परन्तु वहां अधिक आबादी नहीं थी। इस का कारण एक यह भी था कि वहाँ नदियों के जल के अतिरिक्त मीठे पानी का कोई और स्रोत न था जो भी पानी वहाँ उपलब्ध था वह खारा था। जब गुरुदेव वहाँ पहुँचे तो उन दिनों ढाकेश्वरी मन्दिर में वार्षिक उत्सव था। अत: अपार श्रद्धालु वहाँ पूजा-अर्चना के लिए पहुँच रहे थे। गुरुदेव ने भी मन्दिर के निकट डेरा लगा लिया और कीर्तन आरम्भ कर दिया कीर्तन के आकर्षण से बहुत भीड़ इकट्ठा हो गई। उस समय गुरुदेव शब्द उच्चारण करते हुए कहने लगे :-

चेतन हो के जड़ को मानै सो दुख पावे दूही जहाने ।।

वाट ना पावैं औझड़ जाही भरमे भूला भटका खाहीं ।।

(जन्म साखी)

वार्षिक उत्सव होने के कारण वहाँ दूर-दूर से साधु सन्यासी तथा सिद्ध लोग आए हुए थे। वे अपने-अपने खेमे लगा कर लोगों से पूजा के बहाने धन एकत्र करने में लगे हुए थे। इन में मुख्य रूप में लुटिया सिद्ध, मैल नाथ, रवि दास, नारायण दास, चांद नाथ इत्यादि थे। गुरुदेव के मधुर कीर्तन श्रवण करने आई भीड़ को देख कर उन लोगों को एहसास होने लगा कि वे तो भटके हुए मनुष्य हैं परम पिता परमेश्वर तो सर्वव्यापक है वह तो पत्थर की मूर्ति हो ही नहीं सकता अत: वे सभी गुरुदेव से आग्रह करने लगे कि वे उन्हें इस विषय में विस्तार पूर्ण ज्ञान दें। तब गुरुदेव ने अपने प्रवचनो में कहा-कि:-ईश्वर का, जो अयोनि है, पत्थर या मिट्टी से निर्माण नहीं किया जा सकता। परमात्मा कण-कण में निवास करते हैं। वही सब मनुष्यों के इष्टदेव है और उन्ही का स्मरण, आत्म-शक्ति के लिए आवश्यक है। हमें अपने हृदय में ही उसे खोजना चाहिए क्योंकि वह सर्व व्यापक है। इस लिए संसार से भागने की भी कोई आवश्यकता नहीं है। हम उस प्रभु की बनाई चेतन मूर्तियां हैं वह स्वयं घट-घट में विद्यमान है परन्तु हमारे द्वारा निर्मित जड़ मूर्ति में वह नहीं हो सकता। जब हम स्वयं चेतन है तो हमें जड़ मूर्ति से क्या मिलेंगा जो कि हमारी स्वयं की उत्पति है। इस लिए हमें अंध विश्वास के अंधेरे में नहीं भटकना चाहिए। इस प्रकार के कार्य व्यर्थ में समय गवाने के बराबर है तथा हमारा प्रत्येक कार्य निष्फल चला जाता है अत: हमें सत्य की खोज जागरूक हो कर करनी चाहिए।

अंधे गूँगे अंध अंधारु पाथरु जे पूजहि मुगध गवार ।।

ओहि जा आपि डुबे तुम कहा तरणहारू ।।

राग बिहागडा, पृष्ठ 556

गुरुदेव के प्रवचनो की धूम मच गई। सभी जन समूह, गुरुदेव की शिक्षा धारण करने आने लगे। कुछ भक्तजनों ने गुरुदेव को उपहार स्वरूप शक्ति का प्रतीक खण्डा भेंट में दिया जो कि वह ढकेश्वरी देवी के लिए लाए थे। गरूदेव जी ने उन की भेंट इस शर्त पर स्वीकार कर ली कि यह अगामी जीवन में निराकार प्रभु (एकीश्वर) की उपासना में व्यतीत करेंगे। कुछ भक्तजनों ने गुरुदेव की सेवा में निवेदन किया कि वहां पर मीठे जल का अभाव है यदि उनकी समस्या हल हो जाए तो वह वहाँ पर धर्मशाला बनवा कर उनके उपदेशों के अनुसार नित्य प्रति सत्संग कर निराकार उपासना का

प्रचार-प्रसार करेंगे। तब गुरुदेव ने स्थानीय पाँच कुलीन व्यक्तियों को संगत में मिला कर प्रभु चरणों में प्रार्थना करने को कहा। जब प्रार्थना समाप्त हुई तो गुरुदेव ने उसी खण्डे से, जो उन्हें भक्तों द्वारा भेंट में मिला था, कुँआ खुदवाना प्रारम्भ किया। जैसे ही संगत कुँआ खोदते हुए पानी तक पहुँची तो वहाँ मीठे जल का स्रोत मिल गया। सभी की खुशी का ठिकाना न रहा। अत: उसी दिन सत्संग के लिए वहां धर्मशाला की आधार शिला रखी गई।

झंडा वाढ़ी (बढ़ई) (चाटो ग्राम, बंगला देश)

ढाका से प्रस्थान कर श्री गुरू नानक देव जी 'चाटो ग्राम' पहुँचे। वहाँ पर झंडा नामक एक बढ़ई बहुत प्रसिद्ध था। वह प्रतिदिन प्रात:काल हरि यश करता था। उस ने एक मण्डली बना रखी थी जिस में नगर के कुलीन वर्ग के लोग भी हरि यश में सम्मिलित होने आते थे। उन लोगों में एक व्यक्ति स्थानीय राजा का भांजा इन्द्रसैन भी था। वह लोग बिना किसी आडम्वर के, हृदय से एकीश्वर की आराधना करते थे, और बिना किसी भेद भाव के सभी को आराधना में निराकार उपासना के लिए प्रेरित किया करते। बाकी समस्त दिन भाई झंडा, बढई का कार्य कर परीश्रम से अपनी उपजीविका कमाता था तथा जरूरत-मंदो की सहायता करना अपना परम कर्तव्य समझता था। इन लोगों को जब मालूम हुआ कि नगर में कोई महापुरुष आये हुए है जो कि प्रभु स्तुति कीर्तन द्वारा करते हैं तथा उन के प्रवचनों की विचारधारा उन से मिलती है तो वे गुरुदेव से मिलने चले आए। गुरुदेव ने उन का भव्य स्वागत किया और कहा, "झंडा भाई वास्तव में हम आप से मिलने ही आए हैं क्योंकि हमारा दृष्टि कोण एक ही है जिस कार्य को हम कर रहे हैं आप भी प्रभु हुक्म से उसी के प्रचार-प्रसार की चेष्टा कर रहे हैं अत: हमारा उद्देश्य एक है।" झंडा जी, गुरुदेव से स्नेह पा कर गद्-गद् हो गए उन के नेत्रों से प्रेम मय आंसू ध ारा प्रवाहित हो चली। झंडा जी ने गुरुदेव को अपने यहाँ रहने का निमंत्रण दिया जो कि गुरुदेव ने सहर्ष स्वीकार कर लिया। गुरुदेव के पधारने से वहाँ नित्य प्रति सत्संग होने लगा। दूर-दूर से संगत कीर्तन तथा प्रवचन सुनने के लिए मन में आने लगी यह सूचना जब स्थानीय राजा सुधर-सैन को मिली तो वह विचारने लगा कि ऐसे लोकप्रिय पुरुष को

पहले मुझ से मिलना चाहिए था क्योंकि मैं यहाँ का राजा हूँ। उस ने अभिमान में आकर गुरुदेव को अपने सिपाहिओं द्वारा बुला भेजा। जब राजा के भांजे इन्द्रसैन को सिपाहियों का झन्डा बढई के यहाँ जाने का पता लगा तो वह तुरन्त हस्तक्षेप करने राजा के पास पहुँचा तथा उसे समझाते हुए कहा कि महापुरुषों के दर्शनों के लिए स्वयं को नम्रता धारण कर जाना चाहिए और वहाँ निवेदन कर उन की कृपा के पात्र बनना चाहिए, जिस से तुम्हारा भी कल्याण होगा अभिमान तथा बड़पन दिखाने से कुछ भी प्राप्ति नहीं हो सकती। जल्दी ही राजा को अपनी भूल का एहसास हुआ, वह स्वयं कुछ उपहार लेकर गुरुदेव के दर्शनों के लिए पहुँचा तब वहाँ सत्संग में कीर्तन हो रहा था। तथा गुरुदेव निम्नलिखित वाणी का गायन कर रहे थे :-

कोई भीखकु भीखिआ खाइ ॥ कोई राजा रहिआ सभाइ ॥

किसही मानु किसै अपमानु ॥ ढाहि उसारे धरे धिआनु ॥

तुझ ते वडा नाहीं कोई – – – –

राग आसा, पृष्ठ 354

यह रचना सुनकर सुधर सैन का हृदय मोम की तरह पिघल गया तथा सभी प्रकार का राज अभिमान जाता रहा। वह गुरुदेव की शरण में आ पड़ा। गुरुदेव ने उस की नम्रता देखकर उसे कण्ठ से लगाया और वरदान दिया। परफुल्लित हो ! कुछ दिन बाद यह बरदान सत्य सिद्ध हुआ। राजा सुधर सैन की सभी निकटवर्ती 18 रियासतें जो कि अपने को स्वतन्त्र मानती थी, धीरे-धीरे सुधर सैन के अधिकार को स्वीकार करने लगी। इन्द्रसेन ने भक्ति दान की याचना की, कृपा सिन्धु सत्यगुरु ने कहा, "जिसने मन पर विजय प्राप्त कर ली उसने सब कुछ प्राप्त कर लिया। जिसने प्रेम साधना के आधीन नाम स्मरण किया उसने अकाल पुरुष का सामीप्य अनुभव किया। यदि तुम न्याय और धर्म का पल्लू नहीं छोड़ोगे, तो तुम्हारा कल्याण होगा।" गुरुदेव ने झंडा जी द्वारा अतिथी सत्कार देख कर अति प्रसन्नता व्यक्त की तथा कहा, "तुम धन्य हो जो अपने कल्याण के साथ, जन साधारण के कल्याण के लिए सत्य की खोज में प्रतिदिन हरि यश करते हो, तुम्हारे-हमारे विचारों में लगभग समानता है। तुम परमपद को प्राप्त करोगे, क्योंकि तुम्हारे प्रत्येक कार्य निष्काम तथा निस्स्वार्थ सेवा-भाव से हैं।" तभी गुरुदेव ने उसे दिव्य

दृष्टि प्रदान की, उस का अंत:करण प्रकाशमान हो उठा। सभी ने गुरुदेव से गुरू दीक्षा के लिए कामना की। अत: गुरुदेव ने झंडावाढ़ी (बढ़ई), इन्द्रसेन, राजा सुधर सेन, राजा मधर सैन इत्यादि लोगों को भी जन-साधारण के साथ दीक्षित किया और अपना शिष्य बना कर कृतार्थ किया और बचन किया कि वहाँ सत्संग सदैव होते रहना चाहिए इस लिए उन्होंने वहां पर एक विशाल धर्मशाला बनवाई, जिस में गुरुमति का प्रथम प्रचारक झंडा जी को नियुक्त किया। राजा सधुर सैन के प्रेम के कारण आप ने लगभग तीन माह गुरुमति दृढ़ करवाने का कार्य स्वयं किया। तत् पश्चात् जाते समय झंडे जी को यह कार्यभार सम्भालने को कहा अर्थात आप जी ने झंडा बढ़ई को वहाँ के लिए मंजी प्रदान कर उतराधिकारी बनाया।

'राजा देव लूत' (नागा पर्व, नागालैंड)

चिटगांव से प्रस्थान कर श्री गुरू नानक देव जी कई महत्वपूर्ण स्थानों से होते हुए तथा कई लोगों से मिलते हुए आदिवासी क्षेत्र में पहुँचे। वहाँ पर दो कबीलों का परस्पर झगड़ा सदैव बना रहता था। अधिक शक्तिशाली कबीले का सरदार देवलूत नाम का व्यक्ति था जो कि वास्तव में बहुत क्रूर था। वह विरोधी पक्ष के व्यक्तियों को बहुत बेदर्दी से मौत के घाट उतार देता था जिस के कारण दोनो पक्षों में प्रतिशोध की भावना से समय-असमय गुरीला युद्ध होता ही रहता था तथा वे एक दूसरे को क्षति पहुँचाने की होड़ में लीन रहते थे। जिस से उस क्षेत्र का विकास न हो सके। प्रत्येक क्षण अनिश्चितता के कारण खेती-बाड़ी इत्यादि भी नहीं हो पाती थी। इस लिए भोजन का एक मात्र साधन कन्दमूल फल तथा शिकार ही थे। वस्त्र इत्यादि के लिए साधन, धन, इत्यादि न जुटा पाने के कारण नर-नारी केवल जन्नेद्रियां ढकने के लिए घास या पत्तों का प्रयोग करते थे। जब गुरुदेव वहाँ पहुँचे तो देवलूत कबीले के व्यक्ति झट से इन को पकड़ कर अपने सरदार के पास ले गए। उन का विचार था कि शायद गुरू नानक देव जी तथा उन के साथी कहीं विरोधी पक्ष के सहयोगी तो नहीं? देवलूत अपनी विकराल आकृति के कारण पहले ही भयंकर दिखाई देता था। उपर से वह क्रोध में गरजने लगा किन्तु गुरुदेव को

शान्त भाव में देखकर चकित हो गया। गुरू जी ने उसे अपनी मीठी वाणी में समझाने का प्रयत्न किया कि वे उसके यहाँ अतिथि आए हैं। उसका अतिथियों से व्यवहार अच्छा नहीं। गुरुदेव की वैभव शाली प्रतिभा से वह बहुत प्रभावित हुआ और उसने गुरुदेव के लिए भोजन की व्यवस्था तुरन्त करने को कहा और गुरुदेव से विचार विमर्श करने लगा। गुरुदेव ने उसे समझाया कि उसके दुखों का कारण आपसी कलह-कलेश है। यदि वह सुलझा लिया जाए तो वे सब मिलकर एक बहुत बड़ी शक्ति बन सकते हैं, जिस से उनके जीवन स्तर में एक क्रांति आ सकती है तथा वे बिना किसी भय के एक स्थिर जीवन व्यतीत कर सकते हैं जिस से वे सब प्रगति के मार्ग पर चल पड़ेंगे। जैसे कि मैदानी क्षेत्र के लोग, वहाँ पर शान्ति होने के कारण बहुत आगे निकल गये हैं तथा वह लोग सभ्य कहलाते है। गुरुदेव का यह कथन देवलूत को अच्छा लगा। वह गुरुदेव से कहने लगा, "मैं भी बहुत लम्बे समय से चली आ रहीं आपसी लड़ाई से तंग आ गया हूँ। वास्तव में हम भी शान्ति चाहते हैं। परन्तु यह कैसे सम्भव हो सकती है? क्योंकि हमारे में शत्रुता कभी भी समाप्त होने वाली नहीं बल्कि बदले की भावना प्रत्येक क्षण बढ़ती जाती है। जिस कारण दोनो पक्षों पर विपत्तियों का पहाड़ गिरा हुआ है। कोई भी दिन चैन से नहीं गुजरता।" गुरुदेव कहने लगे, "हम, दोनों कबीलों का परस्पर समझौता करवाने की चेष्टा करते हैं। यदि तुम हमारी शर्तें स्वीकार करते हों तो यह असम्भव भी सम्भव हो सकता है।" देवलूत कहने लगा-वे शर्तें क्या होंगी? गुरुदेव का उत्तर था-बस विरोधी पक्ष के कबीलों को भी अपने जैसे जीने का अधिकार देना है, उन से दुर्व्यवहार नहीं करना। मुख्य झगड़ा तो एक दूसरे से घृणा करने का है जब आप उन को जीने का समान अधिकार देगें। तो झगड़े स्वयं समाप्त हो जाएंगे। देवलूत ने इस तथ्य पर सहमति प्रकट की।

इस तरह एक दिन उस के सिपाही विरोधी कबीले के कुछ व्यक्तियों को पकड़ कर ले आए और देवलूत से कहा, "यह लोग हमारी बस्तियों को जलाने आये थे। परन्तु हमने समय रहते इन्हे पकड़ लिया है।" यह सुनते ही देवलूत ने उनके लिए मृत्यु दंड की घोषणा तुरन्त कर दी किन्तु गुरुदेव ने हस्तक्षेप किया और कहा, "नहीं ! यहीं पर तुम भूल कर रहे हो। यही वह समय है जिस का लाभ उठाते हुए तुम दोनों कबीलों का लम्बे समय से चला आ रहा झगड़ा सदा के लिए समाप्त कर सकते हो।" देवलूत पूछने लगा,

"अब मुझे क्या करना चाहिए?" गुरुदेव ने उसे परामर्श दिया कि उन कैदियों से बहुत भद्र व्यवाहर किया जाए तथा उन का मन जीता जाए, इस के पश्चात् इन्ही लोगों के हाथों संदेश भेजकर विपक्षी कबीले के सरदार तथा उनके सहयोगियों से समझौते की वार्ता चलाई जाए। आशा है इस अच्छे कार्य में सफलता अवश्य मिलेगी। देवलूत को गुरुदेव का सुझाव अच्छा लगा। उस ने कैदियों से बहुत अच्छा व्यवहार किया तथा उन्हे गुरुदेव से मिलाया। गुरुदेव ने उन कैदियों को समझाया बुझाया कि परस्पर प्यार से मिलजुल कर रहने में ही सब का भला है। वे सब एक समझौते के लिए अपने कबीले को सहमत करें। यह प्रस्ताव उन को भी अच्छा लगा। वास्तव में वे भी ऐसा चाहते थे। अत: वे भी तुरन्त मान गये। इस लिए उन को स्वतन्त्र कर दिया गया ताकि वह अपने कबीले को इस कार्य के लिए प्रेरित कर सकें। कुछ दिन बाद गुरुदेव की मध्यस्ता में दोनों पक्षों की सभा हुई। गुरुदेव से प्रेरणा पा कर देव लूत ने बहुत उदारता का परिचय दिया। अत: विपक्षी कबीले ने भी आतंक न करने का आश्वासन दिया तथा शपथ ली की यदि उन्हें समानता से जीने का अधिकार मिल जाए तो वे प्रतिशोध की भावना का त्याग कर देगें। गुरुदेव ने अपनी देखरेख में दोनो कबीलों का मिलन करवाया तथा सभी ने भ्रातत्व की भावना से जीने की इच्छा व्यक्त की। इस प्रकार आदिवासी नागा पर्वतीय क्षेत्र की लम्बे समय से चली आ रही आपसी शत्रुता (गृह युद्ध जैसी परिस्थिति) सदैव के लिए समाप्त हो गई। वे लोग अगामी जीवन में उन्नति के पथ पर चलने लगे। गुरुदेव ने अपना आगे प्रस्थान का कार्यकर्म बनाया ।

पद्मा (नूरशाह) – गोलाघाट (कामरूप/आसाम)

श्री गुरू नानक देव जी चिटा गाँव से त्रिपुरा (अगरतला) होते हुए नागा पर्वतों के राजा देवलूत को सत्य समाज के सिद्धांत दृढ़ कराते हुए आसाम के गोलाघाट जिले में पहुंचे। नगर के बाहर गुरुदेव ने डेरा लगाया। भाई मरदाना जी ने भोजन की व्यवस्था की इच्छा व्यक्त करते हुए गुरुदेव से नगर में जाने की आज्ञा मांगी, किन्तु गुरुदेव ने मरदाना जी को सावधान किया कि यहाँ के लोग तान्त्रिक विद्या जानते हैं। अत: परदेसी व्यक्ति को पहचानते ही उस से अनुचित व्यवहार करते हैं तथा वहाँ पर स्त्रियां शासन-व्यवस्था

करती हैं। इस लिए यहाँ पर राज शक्ति का दुरुपयोग होता है, यानी पुरषों का दमन किया जाता है। यह सभी जानकारी प्राप्त कर भाई मरदाना जी कहने लगे, "यह सब कुछ जो आप बता रहे हैं ठीक है। परन्तु भोजन बिना कार्य चल नहीं सकता। उस के लिए तो नगर में जाना ही पड़ेगा। परन्तु मैं सावधानी से रहूँगा।" जब भाई जी नगर में पहुँचे तो वहाँ एक कुंए पर कुछ स्त्रियां जल भरती हुई दिखाई दी। भाई जी उनके पास गए तथा विनम्रता से कहने लगे, "मुझे प्यास लगी है। जल पिला दें।" मरदाना जी की भाषा तथा वेषभूषा देखकर स्त्रियां आपस में विचार करने लगी कि वह आगन्तुक है। अत: यह उनका शिकार है। उस व्यक्ति से अनुचित लाभ उठाया जाए। उन में से एक ने मरदाना जी को जल पान कराया और कहा, "आप मेरे साथ मेरे घर चलें। मैं आप को भोजन कराऊंगी।" मरदाना जी ने उस के छल को नहीं समझा। भोजन के लिए उस के घर पहुँच गया। उस स्त्री ने भाई जी को भात परोस दिया, जिस में कुछ नशीला पदार्थ मिला दिया। उस से मरदाना जी अपनी सुध-बुध खो बैठे। जैसे ही मरदाना जी को नशा हुआ। उस स्त्री ने एक धागा जो कि तान्त्रिक विद्या के मन्त्र पढ़कर तैयार किया हुआ था। मरदाना जी के गले में बांध दिया। इस धागे में वशीकरण मन्त्रों का प्रभाव था। जिस से व्यक्ति परतन्त्र होना स्वीकार कर लेता है। अर्थात स्वयं को दूसरो का शिकार (बकरा) बनने देता है। किसी बात का विरोध नहीं करता एक आज्ञाकारी सेवक की तरह सब कार्य करता है। जब भाई मरदाना जी वापस नहीं लौटे तो गुरुदेव जी स्वयं भाई मरदाना की खोज खबर लेने नगर पहुँचे। कुएं के पास से बच्चों से उन्हें मालूम हुआ कि एक आगन्तुक को एक महिला अपने यहाँ भोजन कराने ले गई थी। गुरुदेव वहाँ पहुँचे परन्तु उस महिला ने गुरुदेव के पूछने पर कि उनका व्यक्ति उनके यहाँ आया था साफ इन्कार कर दिया तथा किवाड़ लगा कर स्वयं कुएं पर घड़ा उठाकर पानी लेने चली गई। वहाँ उस ने अन्य तान्त्रिक स्त्रियों को इकट्ठा किया और कहा, "एक और आगन्तुक पहले आगन्तुक की खोज खबर लेने आया हुआ है। हमें उसे भी अपने बस में कर लेना चाहिए किन्तु वह पहले व्यक्ति की तरह सीधा-सादा नहीं, बहुत तेज चतुर दिखाई देता है इस लिए हमें अपनी मुखिया से सहायता लेनी चाहिए।" यह विचार बना कर वे सभी गुरुदेव के गले में तान्त्रिक धागा डालने पहुँची। उन्हे गुरुदेव ने ललकारा और कहा, "तुम शरीर रूप में तो नारियां हो परन्तु तुम्हारे कार्य कुतियों जैसे हैं।" इस सत्य को

सुनकर सब को शर्म का एहसास हुआ किन्तु क्रोध के मारे उन्होंनें अपनी मुख्य नेता नूरशाह को बुला भेजा ताकि प्रतिशोध लिया जा सके। इस बीच सभी स्त्रियों ने अपनी सभी प्रकार की तान्त्रिक शक्ति प्रयोग करने का भरसक प्रयत्न किया किन्तु गुरुदेव पर वे सभी मन्त्र-तन्त्र असफल सिद्ध हुए। उन का कोई भी वार काम नहीं आया। तब गुरुदेव ने अपने एक सेवक को कहा, "इसी घर के किवाड़ खोल कर भाई मरदाना को अन्दर खोजो" ऐसा ही किया गया भाई जी एक कोने में शून्य अवस्था में अचेत पड़े हुए थे। भाई जी को बाहर लाया गया। गुरुदेव ने आदेश दिया कि जल लेकर भाई मरदाना जी के मुहं पर वाहगुरू शब्द उच्चारण करते हुए छींटे दो तथा उन के गले में पड़े हुए धागे को तोड़ डालो। ऐसे ही किया गया भाई जी फिर से सुचेत हो गए जैसे किसी ने उन्हें गहरी नींद से उठाया हो। गुरुदेव ने भाई जी को रबाब थमा कर कहा भाई जी लो और कीर्तन आरम्भ करों यहाँ तो अब हमें शब्द से लड़ाई जीतनी होगी। गुरुदेव ने शब्द उच्चारण किया :-

गुणवंती सहु राविआ निरगुणि कूके काइ ।।

जे गुणवंती थी रहै ता भी सहु रावण जाइ।।

मेरा कंतु रीसालू की धन अवरा रावे जी।। रहाउ ।।

राग वडहंस, पृष्ठ 557

यहाँ की मुख्य जादूगरनी नूरशाह थी जिस का वास्तविक नाम पद्मा था उस के पिता नरेन्द्र नाथ थे वह धानपुर के एक सूफी मुसलगान फ़कीर के शिष्य हो गए थे। वह सूफी तांत्रिक सिद्धियों में कुशल था। नरेन्द्र नाथ पर इस सूफी का इतना प्रभाव पड़ा कि वह और उस की पुत्री पद्मा ने इसका शिष्यत्व ग्रहण कर लिया। उस सूफी फ़कीर का नाम नूरशाह था। जब उस सूफी नूरशाह की मृत्यु हो गई तो उसकी जादूगरी का आडम्बर और उस का डेरा पद्मा ने सम्भाल लिया। इस तरह लोग पद्मा को ही नूरशाह कहने लग गए थे। जब नूरशाह (पद्मा) वहाँ पहुँची उस समय भाई मरदाना जी रवाब बजा रहे थे तथा गुरुदेव स्वयं कीर्तन कर रहे थे। पद्मा संगीत प्रेमी थी। अत: मधुर करुणा प्रिय संगीत और वाणी जो उस के लिए उपदेश रूप में थी सुन कर स्तब्ध: रह गई। वह पत्थर की मूर्ति बनी कीर्तन में खो गई। जब कीर्तन समाप्त हुआ तब उसे स्वयं की सुध हो

आई। उस के सामने एक तेजस्वी एवं कलाधारी पराक्रमी पुरुष विद्यमान थे। उस की तान्त्रिक विद्या के यन्त्र मन्त्र के सभी शस्त्र व्यर्थ हो गए थे। उस की सम्पूर्ण मायावी कलुषित शक्ति छिन्न-भिन्न होकर रह गई थी। जब वह अपने को निर्बल अनुभव करने लगी तो गुरुदेव की शरणागत हो कर क्षमा की भीख मांगने लगी अत: उसने कहा, "हमारे सिर पर पापों के घड़े भरे पड़े है। हमें इन से मुक्त कीजिए।" गुरुदेव ने उसे कहा, "अपनी शक्ति का दुरुपयोग तो विनाशता को दावत देनी होती है। यदि अपना भला चाहती हो तो मानव कल्याण के लिए कार्य करो। जिस से प्रभु प्रसन्न होंगे। तुम तथा तुम्हारे सब साथियों का भी भला इसी में है कि तान्त्रिक विद्या त्याग कर यहाँ पर हरि यश के लिए सत्संग की स्थापना करो, जिस में प्रतिदिन राम-नाम की उपासना हो?" नूरशाह पद्मा ने गुरुदेव की आज्ञा का पालन करना तुरन्त स्वीकार कर लिया। वह जानती थी कि आखिर बुरे काम का बुरा नतीजा होता ही है, क्यों न वे समय रहते किसी महापुरुष की छत्र-छाया में यह गलत मार्ग त्याग कर भला जीवन व्ययीत करें। जिस से उन सब का अन्त अच्छा हो। गुरुदेव ने सत्संग की स्थापना करवा कर वहाँ पर पद्मा को गुरुमति दृढ़ करवाने के लिए प्रचारक नियुक्त किया तथा एक धर्मशाला बनवाई।

कामारव्या मन्दिर ('गोहाटी', आसाम)

श्री गुरू नानक देव जी कामरूप से होते हुए गोहाटी नगर में पहुँचे। वहाँ पर एक पर्वत की चोटी पर कामारव्या देवी का मन्दिर है। कहा जाता है कि वह मन्दिर शिव की पत्नी सती के गुप्त अंग के वहाँ गिरने से अस्तित्व में आया है। वहाँ पर स्थानीय लोग गुप्त इन्द्री अर्थात योनि मार्ग (भग) की पूजा करते हैं। अत: वहाँ वाम-मार्ग का प्रचार होता है। इस लिए उस स्थान को योनिपीठ भी कहा जाता है। वह मन्दिर वाम मार्गियों के मत, तंत्र शास्त्र के अनुसार शिव-उपासको द्वारा चलाया हुआ है। ये लोग धर्म तथा आचरण से गिरे हुए कर्मो को धर्म का आवश्यक अंग समझते हैं। मन्दिरों में मांस मदिरा, और मैथुन पवित्र समझे जाते हैं। वहाँ बहुत सी पर्वत-धारायें हैं। उन दिनों उन में विभिन्न कबीलों का अपना-अपना शासक था। जर-जोरू और जमीन की मलकियत के

लिए इन कबीलो में परस्पर झगड़े होते थे। उन की धार्मिक बोली (कोड वर्ड) भी भिन्न भिन्न प्रकार से थी। वे माँस को 'सुध', मदिरा (शराब) को 'तीरथ', शराब के प्याले को 'पद्म' कलाल को 'दीक्षित', वेश्यागामी को 'प्रयाग गामी' तथा व्याभिचारी को 'योगी' कहते थे। वृे इन कर्मो को मुक्ति का साधन मानते थे। अपनी संगत को भैरवी चक्र कहते थे और इन भैरवी चक्रो में नशो का सेवन तथा खुले तौर पर व्यभिचार किया जाता था। गुरुदेव ने वहाँ के पुजारियों को ललकारा और कहा, "यदि यही कुकर्म धर्म है। तो अधर्म की क्या परिभाषा होनी चाहिए? किसी पूजनीय स्थल से कुकर्म के लिए मार्ग खोलना घोर अनर्थ है। अत: स्वय् को धोखा देना है। प्रभु के समक्ष सभी को अपने कर्मो का लेखा जोखा देना ही है। इस तरह धर्म की आड़ लेकर तुम बच नहीं सकते।" गुरुदेव का प्रश्न था, "तुम्हारे किंवदंन्ती अनुसार शिव पत्नी के शरीर के भिन्न-भिन्न अंगो के गिरने से जो पवित्र स्थान उत्पन्न हुए। सभी में एक मर्यादा तथा एक उपासना प्रणाली चाहिए। किन्तु पश्चिम से पूर्व तक फैले हुए इन मन्दिरों में केवल तुम्हारे यहाँ ही माँस, मदिरा, व्यभिचार को मान्यता है जब कि जम्मू क्षेत्र में ठीक इस के विपरीत देवी के पुजारी एक उच्च प्रकार का त्यागी (परहेजगार)जीवन जीते हैं। अर्थात (माँस, मदिरा, व्याभिचार की वहाँ पर बहुत सख्ती से मनाही है। ऐसे में अब आप ही बताएँ कि आप में से कौनसे सत्य मार्ग का राही हैं। अर्थात कौन ठीक है और कौन गलत। स्वाभाविक है एक तो अवश्य ही गलत है, क्योंकि परस्पर विरोधी सिद्धांत तो कदाचित एक मंजिल में पहुँचा नहीं सकते। जब कि समस्थ महापुरुषों का मत है कि उच्चे आचरण के बिना प्रभु प्राप्ति हो ही नहीं सकती। न ही आध्यात्मिक दुनियां में कोई ऐसा मनुष्य प्रवेश पा सकता है क्योंकि वहाँ पर ऊँचा आचरण ही एक मात्र सब कुछ है। गुरुदेव के इन तर्को का पुजारी वर्ग कोई उत्तर न दे पाया। इस प्रकार वे सभी पराजित होकर गुरुदेव की शरण में आए और प्रार्थना करने लगे कि उन्हें सत्य का मार्ग दिखाएं। गुरुदेव ने इन विषम परिस्थितियों में कहा, "शुद्ध आचरण ही मनुष्य को सत्य मार्ग पर ले जाता है। अत: सत्याचरण ही सर्वोत्तम है।"

सचहु ओरै सभु को उपरि सचु आचारु ॥

सिरी राग, पृष्ठ 62

सत्य बोल लेने मात्र से ही समाज का कल्याण नहीं हो जाता। समाज के कल्याण के लिए अति आवश्यक है कि मनुष्य उसी सत्य के अनुसार अपना आचरण भी बनायें। पण्डित देवी प्रसाद बोस ने गुरुदेव के समक्ष याचना की कि हे ! गुरुदेव उसे वे अपना शिष्य बनाएं। इस पर गुरुदेव ने उन्हें गुरू दीक्षा दे कर कृतार्थ किया तथा कहा आप यहाँ पर गुरूमत का प्रचार प्रसार किया करें।

पुजारी शंकर देव (धूबड़ी, आसाम)

श्री गुरू नानक देव जी चिटागाँव से नागालैंड, कामरूप, गोलाघाट गोहाटी इत्यादि स्थानों से होते हुए धूवड़ी पहुँचे। वहाँ पर वैष्णव सम्प्रदाय का एक पूजनीय स्थल था जिस में श्री शंकर देव नाम के एक पण्डित मुख्य पुजारी थे जो कि असीम श्रद्धा भक्ति से उपासना करते थे। गुरुदेव ने उस की श्रद्धा पर बहुत प्रसन्नता व्यक्त की, किन्तु उसे समझाया, "जहां आप में अपार श्रद्धा है अगर उस के साथ ज्ञान भी सम्मिलित कर लें तो आप पूर्ण हो जाएंगे। क्योंकि बिना ज्ञान के अंधी श्रद्धा कूएं मे धकेल देती है।" यह सुनकर पण्डित शंकर देव जी गुरुदेव से प्रश्न पूछने लगे-हे ! मान्यवर कृपया आप मुझे मेरी त्रुटियां बताएं तथा मेरा मार्ग दर्शन करें। इस पर गुरुदेव ने कहा-जो आप के पास ज्ञान के स्रोत, पवित्र आध्यात्मिक ग्रंथ हैं आप को उन की पूजा करनी चाहिए। अर्थात उन्हीं के ज्ञान का प्रचार-प्रसार ही वास्तविक पूजा है। तथा ज्ञान के स्रोत, ग्रंथो का सम्मान ही वास्तविक उपासना है। यदि हम ज्ञान के स्थान पर निर्जीव मूर्तियों पर व्यर्थ में समय नष्ट करेंगे तो यह हमारा कर्म-काण्ड निष्फल चला जाएगा। अत: हमें सावधानी से सोच विचार कर आध्यात्मिक मार्ग पर चलना चाहिए। पण्डित शंकर देव जी गुरुदेव की इस रहस्यमय सीख से बहुत प्रभावित हुए। उन्होंने उस दिन से मूर्ति पूजा त्याग दी और बिना मूर्ति के ज्योति स्वरूप, निराकार अकाल पुरुष की उपासना का प्रचार करने लगे, तथा उन्होंने ज्ञान प्राप्ति को ही अपना लक्ष्य बना लिया और उसी ज्ञान पर अधारित आचरण बना लिया।

पारो नगर – (भूटान देश)

श्री गुरू नानक देव जी आसाम के धूबडी नगर से भूटान देश की प्राचीन राजधानी पारो में पहुँचे। उन दिनों थिम्पो एक छोटा सा गांव हुआ करता था। वहाँ पर बुद्ध धर्म का प्रचार बहुत जोरों पर था। प्रत्येक बड़े कस्बे में मठों की स्थापना हो चुकी थी। अत: लोग अहिंसा परमो धर्म के उपदेश के अनुसार जीवन जीने का प्रयास करते थे। किन्तु जन साधारण मांसाहारी होने के कारण वे इस सिद्धांत को अपना नहीं पा रहे थे। इस लिए उन्होंने एक नई युक्ति बनाई जिस से जीवों का बध न करना पड़े तथा वे लोग पाप के भागीदार न बनें और मांस प्राप्ति भी सहज में हो जाए। इस कार्य के लिए वे लोग मवेशियों को पर्वतों की चोटीयों पर ले जा कर भयंकर आवाजों से भयभीत कर भगाते थे। जिस से मवेशी सन्तुलन खो कर चट्टानों से रूड़क कर खाईओ मे गिर कर मर जाते थे। तब मरे हुए पशुओं को काट-काट कर घर में ला कर उन का मांस सुखाकर या बर्फ मे दबाकर धीरे-धीरे प्रयोग में लाते रहते थे। गुरुदेव ने इस कार्य पर आपत्ति की और भूटानी जनता से कहा, "तुम लोग अहिंसक होने का ढोंग रचते हो। जब कि तुम क्रूर हत्याएं करते हो। तुम्हारे पाखण्ड से जीव तडप-तडप कर मरते हैं और उन को कई गुणा अधिक पीड़ा सहन करनी पड़ती है। इस प्रकार तुम पापों के भागीदार हो। तुम्हारा अहिंसा परमों धर्म का सिद्धांत अपने आप में झूठा सिद्ध हो जाता है। वह सर्व शक्तिमान कहीं दूर नहीं, वह तो सर्व-व्यापक है उस के घर न्याय अवश्य होगा क्योंकि वह हमारे सब कार्य देख रहा है। यदि आप लोग यह सोचते हो कि केवल बड़े जीव का वध करना ही हत्या है। तो यह भी तुम्हारी भूल ही है। वह प्रभु तो सूक्ष्म से सूक्ष्म प्राणी में भी एक समान रूप में विद्यमान है। यहाँ तक कि अनाज के दानों में भी जीवन है। कहाँ तक कहा जाए, पानी जिस के बिना हम कदाचित जीवित नहीं रह सकते। उस में भी असंख्य सूक्ष्म जीवाणू हैं जो कि खुरदबीन की सहायता से ही देखे जा सकते हैं।"

जेते दाणे अंन के जीआ बाझु न कोइ ॥

पहिला पाणी जीउ है जितु हरिआ सभु कोइ ॥ राग आसा, पृष्ठ 472

तात्पर्य यह है कि अहिंसक होने का ढोंग रचना व्यर्थ है। वास्तविकता यह है कि हमें प्रभु की लीला को समझ कर प्रकृति के नियमों के अनुसार जीवन व्यतीत करना चाहिए।

गंगटोक नगर (सिक्कम)

श्री गुरू नानक देव जी भूटान की जनता से विदा लेकर पड़ोसी राज्य सिक्कम में काली पोंग से होते हुए गंगटोक पहुँचे तो वहां पर आप की भेंट लामा लोगों से हुई जिन के हाथों में चरखियां थी और वे उन्हें घुमा रहे थे, उन चरखियों मे बन्धे घुंघरू, संगीत जैसी ध्वनी उत्पन्न कर रहे थे। उन का विश्वास है कि किसी विशेष वस्तु को घुमाने भर से प्रभु भजन प्रारम्भ हो जाता है। जिस प्रकार माला के मनके फेरने भर से लोग अपने को भजन में व्यस्त मान लेते हैं। परन्तु गुरुदेव ने उन से असहमति प्रकट की और कहा प्रभु लीला में तो उन्हें सब कुछ घूमता हुआ तथा चक्र लगा कर परिक्रमा करता हुआ दिखाई देता है। यह सब कुछ प्रभु भजन कदाचित नहीं है। लामा लोगों ने अपने विश्वास अनुसार जगह-जगह पानी के झरनों पर घराट की विधि अनुसार पानी के वेग से चलने वाली चरखियां (रोलर) बना रखी थी। जिनके साथ घुंघरू बांधे हुए थे। जो कि स्वय् बिना रुके घूमती रहती थी। उन का चरखियों के बारे में मत था कि वह धरती को एक रस प्रभु चिन्तन में जोड़े हुए हैं। अत: उस में विघन नहीं पड़ना चाहिए। परन्तु गुरुदेव उन के भोले पन पर हंस दिये और कहने लगे, "प्रभु से सम्बन्ध, हृदय से स्मरण (याद) करने भर से, जुड़ जाता है। यह हाथ में चरखी नुमा लटटू घूमाने से नहीं। यह क्रिया केवल यान्त्रिक है, जिस से आप अपने को धोखा दे रहे हैं।" तब गुरुदेव ने शब्द उच्चारण किया।

लाटू माधाणीआ अनगाह ॥ पंखी भउदीआ लैनि न साह ॥
सूऐ चाड़ि भवाईअहि जंत ॥ नानक भउदिआ गणत न अंत ॥

राग आसा, पृष्ठ 465

गुरुदेव के तर्क के आगे सब लामा निरूतर हो गए। तथा गुरुदेव के चरणों में गिर कर गुरू दीक्षा के लिए प्रार्थना करने लगे। गुरुदेव ने उन्हें कहा, "भजन करना शारीरिक क्रिया नहीं है। यह तो मन की एक विशेष अवस्था है। जिस में व्यक्ति अपने प्यारे की याद में खोया रहता है। कभी कभार तो व्यक्ति अपनी सुध भी खो बैठता है। इस कार्य के लिए कोई विशेष समय, विशेष स्थान तथा विशेष साधन की सामग्री इत्यादि का भी कोई महत्व नहीं। साधक का मन कभी भी एकाग्र हो सकता है। बस साधक को अपने आप को समर्पित कर प्रार्थना करनी है। जिस से वह कृपा के पात्र बन सकें तभी 'गुर प्रसादि' अर्थात प्रभु की कृपा दृष्टि गोचर होती है।"

चुंगथांग (सिक्कम)

गुरुदेव वहाँ से प्रस्थान कर तिसता नदी के किनारे होते हुए चुंगथांग गांव पहुँचे। यह स्थान लाचेन तथा लाचँग नामक दो नदियों का आपस में मिलन स्थल है उस के आगे उन के वहाव को तिसता नदी के नाम से पुकारा जाता है। वास्तव में वह स्थल रमणीक है, अत: एक विशाल चट्टान के ऊपर जा कर गुरुदेव विराजमान हो गये विराजे तथा भाई मरदाना जी कीर्तन करने लगे। फिर क्या था, वहाँ गांव वासियों की कोंतुहल-वश भीड़ इकट्ठी हो गई। परदेशी महापुरुषों को देखकर स्थानीय गुम्फा (मठ) के लामा भी ज्ञान चर्चा करने को आए। सभी के आग्रह पर गुरुदेव ने कीर्तन पुन: जारी करवा दिया। जिस का उन के मन पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा :-

रे मन ऐसी हरि सिउ प्रीति करि जैसी जल कमलेहि ॥

लहरी नालि पछाड़ीऐ भी विगसै असनेहि ॥

जल महि जीअ उपाइ कै बिनु जल मरणु तिनेहि ॥

मन रे किउ छूटहि बिनु पिआर ॥

गुरमुखि अतरि रवि रहिआ बखसे भगति भंडार ॥ रहाउ ॥

राग आसा, पृष्ठ 59

तभी एक लामा ने गुरुदेव से प्रश्न किया, "आप कृप्या बताए कि हम प्रभु भजन या चिन्तन किस प्रकार किया करें जब कि आप माला फेरना या लट्टू को चक्र रूप में घुमाना एक कर्म काण्ड या पाखण्ड मानते हैं।" तब गुरुदेव ने उपरोक्त रचना के अर्थ बताए कि उन्हें प्रभु से उसी प्रकार स्नेह करना चाहिए जिस प्रकार कमल का फूल जल से प्यार करता है या मछली पानी के बिना जी नहीं सकती ठीक इसी प्रकार से भक्त को प्रभु से प्यार करना चाहिए अर्थात प्रत्येक क्षण उस की याद में रहना चाहिए। गुरुदेव के लिए कई श्रद्धालु खाद्य पदार्थ तथा उपहार लाए। खाद्य पदार्थ गुरुदेव ने भाई मरदाना को दे कर कहा कि वह संगत में उस को प्रसाद रूप में बांट दे। इस प्रकार प्रतिदिन श्रद्धालुओं के अनुरोध पर सत्संग होने लगा। और गुरुदेव के प्रवचनों को श्रवण करने दूर-दूर से

जिज्ञासु आने लगे। जन साधारण में से बहुत लोगों ने आप से गुरू दीक्षा ली और आध्यात्मिक शंकाओ के समाधान प्राप्त कर, आप के परामर्श अनुसार जीवन जीने का संकल्प लेकर गुरुमति जीवन जीने लगे। स्थानीय निवासियों के पास अनाज की कमी के कारण उनको माँस आहार पर अधिक निर्भर रहना पड़ता था अत: आप ने उन की समस्या के समाधान हेतु वहाँ के किसानों को पंजाब की भांति विकसित धान उगाने की विधी स्वयं उन के साथ खेतो में हल चलाकर तथा बुआई कर सिखाई। जिस से वह भी अनाज के मामले में आत्म निर्भर हो सकें। स्थानीय जनता में आप परम प्रिय हो गए। जिस कारण वे लोग आप को नानक लामा कह कर पुकारने लगे। आप द्वारा बनवाई गई धर्मशाला का नाम भी उन्होंने नानक लामा सत्संग रखा। कुछ दिन सिक्कम के चुंग थांग कस्बे मे रहने के पश्चात् गुरुदेव ने तिब्बत जाने का कार्यक्रम बनाया। स्थानीय जनता से विदाई लेकर आप लाचूंग से तत्ता पानी नामक झील से होते हुए पर्वतों के उस पार तिब्बत की ओर प्रस्थान कर गए।

ल्हासा नगर (तिब्बत)

श्री गुरू नानक देव जी अपने अगले पड़ाव तिब्बत की राजधानी ल्हासा नगर की तरफ चल दिये। ल्हासा में उन दिनों बौद्ध धर्म का प्रचार सम्पूर्ण रूप में हो चुका था। परन्तु बोद्धों मे दो अलग-अलग सम्प्रदाय होने के कारण वे लोग आपसी फूट का शिकार थे। पहला सम्प्रदाय अपने को करमा-पा कहलाते हैं। यह लोग निराकार प्रभु की उपासना में विश्वास रखते हैं तथा लाल टोपी पहनते हैं। दूसरा सम्प्रदाय अपने को गैलू-पा कहलाता है तथा पीली टोपी धारण करता है। यह लोग साकार उपासना मे विश्वास करते हैं अत: महात्मा बुद्ध जी की मूर्ति बनाकर उस की पूजा करते हैं। गुरुदेव जब वहाँ पहुँचे तो करमा-पा सम्प्रदाय के लोग उदारवादी होने के कारण, उनकी बिकय्ता बहुत जल्दी गुरुदेव से निकटता बन गई, क्योंकि विचार धारा में समानता अधिक थी। गुरुदेव ने उन्हें बताया, "आप केवल जीव आत्मा की शुद्धि की बात कहते हैं परन्तु जीव आत्मा की उत्पति कहाँ से हुई तथा उस ने कहाँ विलय होना है। इन सब

बातों के लिए आप शान्त हैं। वास्तव में जीव आत्मा अमर है। इस की उत्पति परमात्मा से हुई है। तथा इस का विलय शुद्धि-करण के पश्चात् ही परम तत्व में होगा। जिस की आप चर्चा नहीं करते। जब तक आप परमतत्व को नहीं मानते आप की साधना अधूरी है तथा फल की प्राप्ति नहीं हो सकती क्योंकि बिना लक्ष्य निर्धारण के निशाना सदैव चूक जाता है। हम जो प्रकृति देख रहे हैं यह परम-तत्व के बिना उत्पन्न नहीं हुई इस सभी कुछ में वह स्वयं विलीन है क्योंकि वह एक मात्र इस का कर्त्ता है जो कि अपनी कृति में स्वयं् रमा हुआ है।

आतम महि रामु राम महि आतमु चीनसि गुर बीचारा ॥
अंम्रित वाणी सबदि पछाणी दुख काटै हउ मारा ॥ १ ॥
नानक हउमै रोग बुरे ॥
जह देखा तह एका बेदन आपे बखसै सबदि धुरे ॥ रहाउ ॥
(जन्म साखी)

यह उपदेश करमा-पा. समुदाय के मन को जीत गया। उन के लामा तथा भिक्षुक आप के तर्को के सामने झुक गए तथा आगे के लिए मार्ग दर्शन पाने की इच्छा करने लगे। इस के विपरीत गैलू-पा साकार उपासना त्याग नहीं पाए क्योंकि इस में उन लामा लोगों का व्यक्तिगत स्वार्थ छिपा था कि यदि ऐसा हो गया तो हमारी पूजा कैसे होगी तथा हमारी जीविका के साथ हमारा सम्मान सत्कार आदि भी जाता रहेगा। अत: वह गुरुदेव के दर्शाए मार्ग पर चलने को तैयार नही हुए और अपनी मनमानी से मूर्ति पूजा जिस में व्यक्ति विशेष का बोध होता था, उस में जुटे रहे। पहले से ही दोनों सम्प्रदायों में सिद्धांतो की भिन्नता थी। गुरुदेव के सम्पर्क से करमा-पा वर्ग के लोग गुरुदेव के अनुयायी बन गए जिस कारण गैलू-पा अर्थात पीली टोपी वाले वर्ग के लोग ईर्ष्या करने लगे जिस कारण दोनों पक्षो में मन मुटाव पहले से अधिक हो गया इस के साथ ही गैलू-पा वर्ग अर्थात पीली टोपी वालो की राजनैतिक शक्ति बढ़ गई। उन का लहासा पर पूर्ण अधिकार हो गया। जिस से उन्होंने अपने प्रतिद्वंदी करमा-पा वर्ग के लोगों को मार दूर भगा दिया। इस प्रकार नानक जी के अनुयायी राज्य-शक्ति विहीन होने के कारण बिखर कर रह गए तथा अपने अस्तित्व का प्रकटावा नहीं कर पाए परन्तु वे आज भी जहां कहीं भी है गुरू नानक देव जी की बाणी पढ़ते हैं उन को आदर से नानक लामा पुकार कर याद करते हैं।

चीन – (शंघाई नगर)

श्री गुरू नानक देव जी तिब्बत के विभिन्न स्थानों पर निरांकार ज्योति की उपासना का प्रचार करते हुए चीन की प्रमुख बन्दरगाह शंघाई की ओर चले गए। वहाँ पर गुरुदेव ने देखा कि जन-साधारण नशे के रूप में अफीम का प्रयोग करते हुऐ भटक रहे थे उनका जीवन, जीवन नहीं रहा बल्कि गफलत की गहरी नींद में सोया मनुष्य, पशु समान हो गया था। अत: गुरुदेव ने नशों के विरुद्ध अभियान चलाना प्रारम्भ कर दिया। जिस से समाज में जागृति आनी शुरू हो गई। आप का परीश्रम रंग लाया जिस से वहाँ पर विवेकी पुरुषों ने आप का साथ देकर एक जन-अंदोलन प्रारम्भ कर किया, इस कार्य में आप को बहुत बड़ी सफलता मिली विशेष कर स्त्री वर्ग आप का ऋणी बन गया क्योंकि उस अंदोलन से उन को बहुत बड़ी राहत मिली। गुरुदेव ने वहाँ पर चिर-स्थाई कार्यक्रम चलाने के लिए निरांकार की उपासना के लिए धर्मशाला बनवाई, जिस में नित्यप्रति सत्संग होने लगा। गुरुदेव ने वहाँ के समाज के समक्ष एक लक्ष्य रखा कि प्रत्येक व्यक्ति को आत्म निर्भर होना चाहिए अर्थात किसी दूसरे का मोहताज या गुलाम नहीं होना चाहिए। यदि व्यक्ति मोहताज या गुलाम हो तो उस की अपनी स्वतंत्र विचार-धारा नहीं हो सकती भले ही वह गुलामी राजनैतिक, धार्मिक समाजिक, आर्थिक अथवा स्वयं् की खरीदी हुई, किसी नशों की हो। जब तक व्यक्ति हर दृष्टि से स्वावलम्बी नहीं होगा तब तक समाज मे उस का कोई स्थान नहीं होता। इस लिए वही व्यक्ति जागरूक है जो सदैव आत्मनिर्भर होने की चेष्टा मे लीन रहता है। एक जागरूक समाज के निर्माण के लिए सत्संग की अति आवश्यकता है क्योंकि सत्संग ही वह स्थान है जिस में हम परस्पर प्रेम भावना से रहना सीख सकते हैं तथा इसी कार्य के लिए दूसरो को प्रेरित कर सकते हैं। इस प्रकार के आदर्श व्यक्तियों का संगठन ही समाज की सब से बड़ी शक्ति होती है। जो कि हमारे दुखों का नाश करने में सहायक सिद्ध होता रहा है।

नानकिंग नगर – (चीन)

श्री गुरू नानक देव जी शंघाई बन्दरगाह में एक धर्मशाला बनवा कर वहाँ पर सत्संग की स्थापना कर के आगे वहाँ के एक प्रमुख नगर, जो कि उस समय एक व्यापारिक नगर था, उस में पहुँचे जिसे आजकल नानकिंग कहते हैं। चीनी लोगों के अनुसार जब गुरुदेव वहाँ पधारे तो जन-साधारण उन की प्रतिभा से इतना प्रभावित हुआ कि उन्होंने अपने नगर का नाम बदल कर श्री गुरू नानक देव जी के नाम पर रख लिया। वहाँ गुरुदेव ने रूढ़ीवादी विचारों तथा भ्रमों के विरुद्ध आंदोलन चलाया। समानता के अधिकारों की बात समाज के सामने रखी, पूँजीवाद के शोषण के विरुद्ध जागृति लाने के लिए तीन-सूत्री कार्यक्रम को जनता के सम्मुख रखा। किरत करो, वण्ड छको तथा नाम जपो। जिस कारण गुरुदेव को भारी सफलता मिली और जल्दी ही वे लोकप्रिय हो गए। वहाँ पर भी गुरुदेव ने धर्मशाला बनवा कर सत्संग की स्थापना की। श्री गुरू नानक देव जी लगभग पांच वर्ष चीन में रहे फिर वहाँ से सीधे वापस ल्हासा होते हुए नेपाल की राजधानी काठमंडू पहुँचे।

नोट – चीनी भाषा की अनभिज्ञता के कारण हमारे इतिहासकारों ने गुरू देव जी की चीन यात्रा पर खामोशी धारण कर रखी थी। परन्तु सन 1950 में जब पण्डित जवाहर लाल नेहरू चीनी प्रधान मंत्री चूऐनलाई से पीकिंग में मिले तो उन्होंने पण्डित जी को बताया कि उनके सांस्कृतिक सम्बंध बहुत पुराने एवं घनिष्ट हैं क्योंकि गुरू नानक देव जी यहाँ पर आध्यात्मिक उपदेश देने लगभग 450 वर्ष-पूर्व आए थे। उन की विचार धारा की अमिट छाप आज भी हमारे समाज में देखी जा सकती है तथा उन की कुछ यादगारें हमारे संग्राहालयों में आज भी सुरक्षित रूप में पड़ी हुई हैं। उन की शिक्षा का ही परीणाम है कि आज भी हमारे यहां कुछ विशेष जन जातियां केश धारण करती हैं।

पशुपत्ति मन्दिर – (नेपाल की राजधानी काठ मंडू)

श्री गुरू नानक देव जी चीन से लौटते समय फिर से ल्हासा आए तथा वहाँ से आगे नेपाल की राजधानी काठमंडू के लिए प्रस्थान कर गए। वहाँ पहुँच कर आप जी ने पशुपत्तिनाथ मन्दिर के निकट बाघमती गंगा के किनारे अपना खेमा लगाया। वहाँ पर पर्यटक भी आते रहते थे। भाई मरदाना जी को हुक्म हुआ कि वह कीर्तन आरम्भ करें। भाई जी ने कीर्तन आरम्भ कर दिया। मधुर वाणी के आकर्षण से धीरे-धीरे, जन-समूह इक्ट्ठा होने लगा। वहाँ पर पशुपत्तिनाथ मन्दिर का गोसाई भी आप का यश सुनकर आप के दर्शनों को आया :-

विसमादु नाद विसमादु वेद।। विसमादु जीअ विसमादु भेद ।।

विसमादु रूप विसमादु रंग।। विसमादु नांगे फिरहि जंत ।।

राग आसा, पृष्ठ 463

कीर्तन समाप्ति पर कुछ जिज्ञासुओं ने गुरुदेव से अपनी शंका के समाधान के लिए प्रश्न किए। जिस से उन की आध्यात्मिक रुकावटें दूर हो सकें। जब गुरुदेव प्रवचन कर रहे थे, तो पशुपतिनाथ मन्दिर के गोसाई ने प्रश्न किया-आप जी केवल निराकार उपासना में विश्वास बनाए हुए हैं किन्तु हमें तो दोनो में कोई अन्तर मालूम नहीं होता क्योंकि भक्त को तो उसे आराधना है भले ही वह किसी विधि अनुसार आराधना करें? गुरुदेव जी-सभी जीव हैं जिसे उस ने स्वय् बनाया है तथा स्वय् उन में विराजमान है। जिस से उन में चेतनता स्पष्ट दिखवाई देती है, किन्तु वह सभी वस्तुएं जड़ हैं जिन को हमने बनाया है। क्योंकि वे चेतन नहीं, इस लिए वे वस्तुएं या मूर्तियां प्रभु का सगुण स्वरूप भी नहीं हो सकती। अत: हमारी जड़ वस्तुओं के प्रति श्रद्धा भक्ति निष्फल चली जाती है। क्योंकि हम विचार से काम नहीं लेते और हम स्वय् उस प्रभु के बनाए चेतन जीव हैं। हमें जागृति होनी चाहिए कि जब हम स्वय् चेतन हैं तो हम जड़ को क्यों पूजें। गोसाई-आप की बात में तथ्य अवश्य है परन्तु हमारे शास्त्रों अनुसार नारद जी ने कहा है कि प्रभु को पूजने के लिए उन के अस्तित्व की काल्पनिक स्वरूप मूर्ति बना लेनी

चाहिए तथा पूजा प्रारम्भ कर देनी चाहिए। गुरुदेव जी-बिना विचार किये गलत साधन प्रयोग करने से व्यक्ति भटकेगा ही तथा परीश्रम भी व्यर्थ जाएगा। ज्ञान के प्रयोग बिना कार्य करना अंधे व्यक्ति की तरह कार्य करना है। जो मूर्ति हमारी बात न सुन सकती है न उत्तर देकर कोई समाधान कोई बता सकती है जब वह स्वयं भी डूबती है तो हमें कहाँ भव सागर से पार करेगी। यदि बुद्धि पर थोड़ा बल देकर विचार करें ताकि समस्त विश्व के पशुओं का पति यह मूर्ति कैसे हो सकती है। क्योंकि पशु तो असंख्य हैं तथा असंख्य जातियां उप जातियां है। अत: इस मूर्ति को समस्त पशुओं का स्वामी कहना मिथ्या है।

हिंदू मूले भूले अखुटी जांही ॥
नारदि कहिआ सि पूज करांही ॥
अंधे गुंगे अंध अंधारु ॥
पाथरु ले पूजहि मुगध गवार ॥

राग बिहागड़ा, पृष्ठ 556

बन्धूआ मजदूरों को मुक्ति रुहेलखण्ड (कानपुर में)

श्री गुरू नानक देव जी नेपाल से लौटकर रुहेलखण्ड पहुँचे। वहाँ पर एक बहुत बड़ा व्यापारिक केन्द्र था। जहां पर पशु मंडी लगाई जाती थी। लोग क्रय-विक्रय (खरीद-फरोख्त) करने के लिए दूर-दूर से आते थे। अत: व्यापार के कारण स्थानीय जन जीवन खुशहाल था। किसानों-व्यापारियों तथा अमीर लोगों को खेतीहर मज़दूरों, घरेलू नौकरों और दासों आदि की भी अति आवश्यकता रहती थी। इस लिए वहाँ के लोग बन्धूआ मज़दूरों की तलाश में रहते थे। कुछ असामाजिक तत्व भी गरीब लोगों की मज़बूरी का अनुचित लाभ उठाते हुए, उन को बहला-फुसला कर अच्छी मज़दूरी का लालच देकर आदिवासी क्षेत्रों से लाकर बन्धुआ मज़दूरी के लिए बेच देते थे। इस प्रकार कुछ अवांछनीय तत्व बच्चों तथा स्त्रियों को बेचने के घृणित कार्य में संलगन रहते थे। गुरुदेव जब भीड़ भाड़ वाले पशु मेला क्षेत्र में भाई मरदाना जी के साथ कीर्तन कर रहे थे

तो वहां, आप के पास एक बिलखती हुई महिला आई और आप के समक्ष प्रार्थना करने लगी कि उसके बच्चों को एक दलाल अच्छी मज़दूरी पर काम दिलवाने के बहाने यहां ले आया था। उस ने बच्चों को यहाँ बेच दिया है अब उन का कोई पता ठिकाना नहीं मिल रहा। ना जाने वे किस हाल में होंगे? कृप्या आप मेरी सहायता करें तथा उस दलाल से मालूम करवा दें कि वे कहाँ पर हैं?

गुरुदेव जी, इस दुखान्त को सुनकर गम्भीर हो गए और कहने लगे, "आप धैर्य रखें हम इस सामाजिक कलंक को मिटाने के लिए कुछ कर देखते हैं। परन्तु इस काम में कुछ समय अवश्य लगेगा।" यह अश्वासन प्राप्त कर वह महिला कहने लगी, "ठीक है, मुझे तो मालूम करना है मेरे बच्चे कुशल मंगल तो है न।" इस पर गुरुदेव ने भाई मरदाना जी को कुछ रहस्य-मय बात बताई तथा आदिवासीओं जैसी वेष-भूषा पहन कर दलालों के आगे, अनजान व्यक्ति बनकर निकल गए। आदिवासी वेष में देखते ही दलालों ने उन्हें अपना शिकार समझ कर घेर लिया और कहा, "अरे तू कहाँ भाग गया था। तू तो हमारा दास है।" वे जल्दी ही गुरुदेव को पकड़ कर मंडी में बेचने के लिए ले गए। गुरुदेव ने भी कोई प्रतिरोध न किया। मंडी में गुरुदेव की बोली लगाई गई। हष्ट-पुष्ट होने के कारण उनके दाम बहुत उँचे लगने लगे अन्त में एक अमीर व्यक्ति ने उन को घोड़ों के मूल्य पर खरीद लिया तथा ले जाकर एक पीर को भेंट में प्रस्तुत कर दिया। पीर जी प्रसन्न हुए। गुरुदेव उसकी गुलामी करने लगे। पीर जी जो कहते वह सब कुछ तुरन्त कर देते। घंटों का कार्य मिनटों मे निपटा देते। पीर जी आश्चर्य चकित होने लगे कि ऐसा आज्ञाकारी दास उन्होंने पहले कभी नहीं देखा जो कि मन लगा कर काम करता हो और बदले में किसी बस्तु की इच्छा भी न करता हो।

एक दिन भोर के समय एकान्त में गुरुदेव गाने लगे :

मुल खरीदी लाला गोला मेरा नाउ सभागा ॥
गुर की बचनी हाटि बिकाना जितु लाइआ तितु लागा ॥
तेरे लाले किआ चतुराई ॥
साहिब का हुक्मु न करणा जाई ॥

राग मारू म० १, पृष्ठ ९९१

भावार्थ : हे ! प्रभु मैं आप की आज्ञा अनुसार बिक गया हूँ। मैं भाग्यवान हूँ क्योंकि तेरे आदेश को पालन करने का शुभ अवसर प्राप्त हुआ है। आप जिस कार्य में मुझे लगाओगे मैं उस को करने का प्रयत्न करूंगा परन्तु मैं अल्पज्ञ हूँ क्योंकि मुझे सूझ-बूझ कम है अत: मुझ से अपने स्वामी की आज्ञा पालन पूर्णत: करने में कोर-कसर रह जाती है।

गुरुदेव के गाने की मधुर धुन से आकर्षित हो कर पीर जी ने गुरुदेव की वाणी में अपने मन को जोड़ लिया। शब्द की समाप्ति पर उस ने गुरुदेव के नूरी चेहरे के दीदार किए तो वह जान गया कि वह कोई साधारण व्यक्ति नहीं, तथा वह सोचने लगा कि गुलाम के रूप में कौन हो सकता है? जो कि वास्तव में तेजस्वी है। अत: उस ने गुरुदेव पर प्रश्न किया, "आप कौन हैं? आप का मेरे यहाँ गुलाम बनकर आने का क्या रहस्य है?" उत्तर में गुरुदेव ने कहा, "पहचानने का प्रयत्न करो, तुम्हारी चेष्टा व्यर्थ नहीं जाएगी।" कुछ सोचते हुए, पीर कहने लगा, "मैंने नानक नाम के एक फ़कीर की बहुत उपमा सुनी है, कहते हैं उस के कलाम में जादू की तासीर है कहीं आप वही तो नहीं? जिसे लोग नानक निरंकारी कहते हैं।" उत्तर में गुरुदेव ने कहा-आप ने ठीक पहचाना है। पीर ने गुरुदेव पर प्रश्न किया, "जब आप नानक निरंकारी फ़कीर हैं तो आप पशुओं की तरह क्यों बिके हैं, क्या आप को मालूम नहीं था कि यहाँ अजनबी लोगों को दास बना लिया जाता है?"

गुरुदेव जी-मालूम था, इसीलिए दास बन कर आया हूँ कि दासों की दास्तान जानी जाए, फिर इस बुराई के लिए अंदोलन प्रारम्भ किया जाए।

पीर-क्या आप को पूरा भरोसा है कि आप इस नेक कार्य में सफल हो जाएंगे?

गुरुदेव जी-हां, मैं पूर्ण विश्वास के साथ इस बुराई के विरुद्ध समाज में जागरुकता लाने के लिए आंदोलन आरंभ करने के लिए गुलाम बना हूँ। क्योंकि मुझे मालूम है नेकी करना इन्सान का काम है और बुराई करना शैतान का काम है। मैं समाज में नेकी के असूल की लड़ाई लड़ूंगा।

पीर यह सुनकर गुरुदेव के चरणों में गिर गया। उस ने अपने सभी नामवर पठानों को जो कि उस के मुरीद थे बुला भेजा और गुरुदेव से उन को नेक आचरण करने का उपदेश दिलवाया कि कोई इन्सान दूसरे इन्सान को जानवरों की तरह गुलाम नहीं रख सकता क्योंकि यह बात खुदा प्रस्ती के खिलाफ है। यह सुन कर सब ने गुलामों को आज़ाद कर दिया।

माई जसी (आगरा, उत्तर प्रदेश)

श्री गुरू नानक देव जी कानपुर से प्रस्थान कर आगरा नगर पहुँचे वहाँ एक माता, जिस का नाम जसी था प्रभु दर्शन की अभिलाषा लिए हुए बहुत लम्बे समय से भजन बन्दगी में व्यस्त रहती थी। परन्तु उस की इच्छा अनुसार उसे प्रभु के साकार दर्शन की चाहत बनी हुई थी। जब कि वह जानती थी कि प्रभु तो सर्व व्यापक है, वह तो रोम-रोम में रमे राम हैं। वह अपनी अभिलाषा अनुसार प्रभु को अपने सामने बैठाकर सेवा करना चाहती थी इस कार्य के लिए उसने बहुत लगन से कपड़े का एक थान बुना ताकि वह उस कपड़े से वस्त्र बना कर अपने प्रभु को भेंट कर सके। किन्तु प्रभु तो उस ने देखे ही नहीं थे। अत: वस्त्र किस आकार के बनाए जाएँ यह उस के सामने समस्या थी। अन्त में उस ने प्रभु को थान ही भेंट में दे देने का निश्चय किया। वह प्रत्येक क्षण आराधना में रहने लगी। कभी-कभार तो वह बिरहा में रूदन भी करने लग जाती। उस की सच्ची मानसिक अवस्था को देख कर एक दिन दिव्य जयोति स्वरूप प्रभु प्रसन्न हुए और उन्होंने अपना साकार रूप धारण कर श्री गुरू नानक देव जी के रूप में उस के द्वार पर सत्यकरतार-सत्यकरतार की ध्वनी का प्रसारण करते हुए दस्तक दी। वह आराधना में लीन, दर्शनों के लिए व्याकुल, नेत्रों में जलधारा लिए हुए उठी, जब द्वार खोला, गुरुदेव के तेजस्वी रूप के दर्शन-दीदार पाते ही सुध-बुध खो बैठी, और चरणों में गिर पड़ी। जब उसे सुचेत किया गया। तो वह बोली, "मैं जब-जब आराधना में लीन होती थी। तो इसी प्रकाशमय पराक्रमी पुरुष के दर्शन किया करती थी। किन्तु मैंनें तो शपथ ली थी कि जब तक आप प्रत्यक्ष नहीं प्रकट होते तब तक मैं अपना हठ नहीं

छोड़ूँगी। आज मेरे अहो-भाग्य जो स्वयं् प्रभु रूप हो कर मेरे घर में पधारे हो।" माता जी द्वारा, प्रेम से तैयार किया गया, थान गुरुदेव ने सहर्ष स्वीकार कर उस के वस्त्र धारण किए और माता जी को कृतार्थ किया। माता जसी के आग्रह पर गुरुदेव कुछ दिन उन के पास रहे और प्रतिदिन कीर्तन प्रवाह चलता रहा। जिसे श्रवण करने के लिए संगत दूर-दूर से इकट्ठी होने लगी। कीर्तन के पश्चात् गुरुदेव का प्रवचन होता जिस से जन-साधारण लाभांवित होने के लिए उमड़ पड़ते।

इआनडीए मानड़ा काइ करेहि ॥
आपनड़ै घरि हरि रंगो की न माणेहि ॥
सहु नेड़ै धन कमलीए बाहरु किआ ढूढेहि ॥

राग तिलंग, पृष्ठ 722

गुरुदेव कहते-हे जीव आत्मा ! प्रभु तो सदैव तेरे संग-साथ है। तुझे वह केवल इस लिए अनुभव नहीं होता क्योंकि तेरे और प्रभु के बीच अभिमान की दीवार है। उसे त्याग कर नम्रता में आ जाने से तो वह स्वामी तुझे अपने ही अन्दर दृष्टिगोचर हो सकता है। वास्तव में उसे कहीं बाहर खोजने की आवश्कयता नहीं। तब आगरा में सत्संग की स्थापना करवा कर, गुरुदेव ने पंजाब वापसी के लिए आगे मथुरा के लिए प्रस्थान किया।

केशव देव मन्दिर - (मथुरा, उत्तर प्रदेश)

श्री गुरू नानक देव जी आगरा से मथुरा के केशव देव मन्दिर के निकट जा बिराजे। उन दिनों केशव देव मन्दिर एक छोटा सा भवन था। गुरुदेव ने भाई मरदाना जी को कीर्तन करने का आदेश दिया। मधुर वाणी सुन कर वहाँ का पुजारी तथा बहुत से भक्तगण, जो कि तीर्थ यात्रा पर आए हुए थे, गुरुदेव के पास जा कर बैठ गए। कीर्तन की समाप्ति पर भक्तजनों ने अपनी जिज्ञासा व्यक्त की कि हे ! गुरुदेव, वे लोग वहाँ

मथुरा में कल्याण हेतु यात्रा करने आए हैं। परन्तु उनका मन बहुत खिन्न हुआ है और उनकी श्रद्धा भावनाओं को बहुत ठेस पहुँची है। क्योंकि वे जहां भी गए हैं वहीं पर झूठ को ही प्रधान पाया है। उन को भगवान का तो भय है ही नहीं, जिन लोगों ने धर्म का प्रचार करना था वह स्वय् अधर्म के कार्यो में, विनाश के मार्ग पर चल रहे हैं। यह सब सुन कर गुरुदेव कहने लगे-भक्तजनों बात यह है, आप लोग इन को जो रुपये दान दक्षिणा में देते हों वह धन इतना अधिक होता है कि यह लोग उस धन का दुरोपयोग करना प्रारम्भ कर देते हैं जिस से इन का मन मलीन हो जाता है तथा धीरे-धीरे संस्कार भ्रष्ट बन जाते हैं वास्तव में जो लोग परीश्रम न कर, दान में मिले रुपयों से (अय्याशी) विलासिता का जीवन व्यतीत करते हैं, वे आचरण से गिर जाते हैं। पुजारी-बात यह है कि यह समय कलयुग का है इस लिए चरित्र-वान होना सम्भव नहीं। गुरुदेव जी-पुजारी जी, आप अपने को धोखा देने के लिए मन में झूठा भ्रम पाले बैठे हैं। वास्तव में कल युग क्या है? किसी विशेष वस्तु का नाम है? नहीं ! वह मन की एक अवस्था का नाम है। जहां बुरी विचार धारा के लोग होंगें तथा कुसंगत करेंगे। वहाँ कलहकलेश अर्थात वहाँ कल युग है। जहां शुभ विचारों वाले लोग सत्संग करेंगें वहीं सत्य युग है। आप ही बताएं, सत्य युग या कलयुग में प्रकृति ने अपना कोई स्वरूप बदल लिया है। आकाश, सूर्य, चन्द्रमा, तारे, बनस्पत्ती इत्यादि में कोई परिवर्तन नहीं हुआ और नदियां नाले भी नहीं बदले। वास्तव में हमारी विचार धारा मे अन्तर आ गया है। तात्पर्य यह कि-जिस प्रकार कोई अपनी आजीविका कमाएगा वैसा ही उस के विचार बनेंगे तथा वैसे ही आचरण करेंगा। यानी जैसा कोई अन्न खाएगा वैसा ही उस का मन होगा। गुरुदेव ने तब शब्द उच्चारण किया-

सोई चंदु चड़हि से तारे सोई दिनीअरु तपत रहे ॥

सा धरती सो पउणु झुलारे, जुग जीअ खेले थाव कैसे ॥ 1 ॥

रामकली, पृष्ठ 902

जिज्ञासु जन-हे ! गुरुदेव आप हमें कल्याण के लिए मार्ग बताएं? गुरुदेव जी-जीवन में सहज भाव से सभी कार्य करें। प्रकृति के नियमों को समझ कर उस में समाएं। प्रभु को प्रत्येक स्थान पर उपस्थित जान कर उस के भय में जीना ही कल्याणकारी है-

सहजि मिलै मिलिआ परवाणु। ना तिसु मरणु न आवणु जाणु ।।
ठाकुर महि दासु दास महि सोइ। जह देखा तह अवरु न कोइ ।।
(जन्म सारवी)

मजनू दरवेश – (दिल्ली)

श्री गुरू नानक देव जी मथुरा से दिल्ली यमुना नदी के किनारे एक रमणीक स्थल पर पहुँचे। वहाँ पर एक सूफी फ़कीर रहता था। इस दरवेश की कुटिया एक पठारी टीले पर स्थित थी। उस दरवेश के मन में प्रभु दर्शनों की एक मात्र इच्छा थी। जिस के लिए वह प्रत्येक क्षण आराधना में लीन रहने लगा था। भोजन व्यवस्था ठीक से न होने के कारण उस का शरीर सूख कर हडिड्यों का एक ढाँचा भर रह गया था। उस मस्ताने फ़कीर के इश्क हकीकी दावे को देखकर लोग प्यार से उसे मजनू दरवेश कहते थे। एक दिन वह दर्शन दीदार की अभिलाषा लिए भजन बंदगी में लीन था तो गुरू नानक देव जी ने उस की झोपडी का द्वार खट-खटाया और रबाब की मधुर धुन में सत्यकरतार, सत्यकरतार की गूँज की। उसने उठ कर द्वार खोला और दीदार करते ही गुरुदेव के चरणों में गिर कर कहने लगा, "हे ! अल्लाहीनूर आप ने आखिर मुझ गरीब की भी सुन ही ली, मुझ पर कृपा कर दीदार देने का कष्ट उठाया है, मुझे क्षमा करें मैंनें आप को निजि़ स्वार्थ के लिए तकलीफ दी है।" गुरुदेव ने उसे कण्ठ लगाकर स्नेह से चूम लिया और उस के आंसू पोंछ सांतवना देते हुए कहा, "तुम्हारा प्रेम हमें यहाँ आने के लिए व्याकुल कर रहा था। हम भी आप से मिलकर खुशी का अनुभव कर रहे हैं।" दरवेश मजनू की भक्ति रंग लाई। उस की अभिलाषा पूर्ण हुई। गुरुदेव ने उस के सिर पर कृपा दृष्टि का हाथ रखा तथा उसे दिव्य-ज्योति प्रदान कर उस के कपाट खोल दिये, जिस से उसे आध्यात्मिक ज्ञान हो गया। मजनू जी के अनुरोध पर गुरू जी कुछ दिन के लिए वहां ही ठहर गए।

सम्राट इब्राहीम – (दिल्ली नगर)

मजनू के टिल्लों पर ठहरे गुरूजी और मरदाना सुबह शाम कीर्तन किया करते और यमुना के तट पर आने वाले लोग भी कीर्तन श्रवण करने बैठ जाते। जिस से गुरुदेव की ख्याति दूर-दूर तक फैल गई। सत्संग होने लगे, गुरुदेव प्रवचन करते, जन-साधारण अपनी-अपनी शंकाओं का समाधान पा कर संतुष्ट होकर लौटते जाते। एक दिन कीर्तन के समय उँच्चे स्वर में रूदन की आवाज आने लगी। कीर्तन में बाधा पड़ने के कारण गुरुदेव ने रूदन का कारण जानना चाहा, तो ज्ञात हुआ कि सम्राट का हाथी अकस्मात मर गया है। इस लिए महावत तथा उस का परिवार सम्राट के क्रोप के भय से रो रहे हैं। गुरुदेव ने जब यह बात जानी तो मरे हाथी को देखने स्वयं चले गये। आषाढ की तपत घाम और गर्मी के कारण हाथी अचेत हो गया था। गुरुदेव ने हाथी को देखकर महावत का धैर्य बंधाया तथा कहा करतार भली करेगा। जाओ प्रभु का नाम लेकर इस हाथी पर जल के छींटे दो। भगवान ने चाहा तो यह हाथी उठ बैठेगा। महावत ने गुरुदेव की आज्ञा मान कर जल तुरन्त गुरुदेव को ला दिया। गुरुदेव ने सत्यकरतार-सत्यकरतार कह कर हाथी पर महावत से जल के छीटे लगवाए, हाथी उठ बैठा। यह घटना जंगल की आग की तरह समस्त दिल्ली नगर में फैल गई। सम्राट इब्राहीम लोधी पुन: जीवित हाथी को आप देखने आया तथा गुरुदेव से कहने लगा-यह हाथी आपने जीवित किया है? इस के उत्तर में गुरुदेव ने कहा-वह अल्लाह ही स्वयं समस्त प्राणीयों को जीवन देने वाला अथवा मारने वाला है। दवा फ़कीर की, रहम अल्लाह का-

मारै जीवाले सोई, नानक एकस बिन अवर ना कोई ।।

जीवन और मृत्यु प्रभु आज्ञा में है। हम उस की इच्छा में कोई विध्न डालने के लिए तैयार नहीं। किन्तु इस उत्तर से सम्राट संतुष्ट नही हुआ, वह तर्क करने लगा तथा कहने लगा-ऐ फ़कीर मैं दवा की तासीर तब जानूगा, जब आप खुदा से फिर दुआ मांगे कि यह हाथी फिर से मर जाए। सम्राट की इच्छा अनुसार वहाँ पर खड़े सभी लोगों ने गुरुदेव के साथ, प्रभु चरणों में प्रार्थना की, कि हाथी मर ही जाना चाहिए। प्रार्थना समाप्त होते ही

हाथी जमीन पर ढेर हो गया। यह देखकर सम्राट बहुत प्रसन्न हुआ तथा गुरुदेव से कहने लगा–ठीक है फ़कीरों की दुआ में तासीर है। मैं मानने लगा हूँ। परन्तु आप मेरा हाथी पुन: जीवत कर दें। इस के उत्तर में गुरुदेव ने कहा–यह कोई मदारी का खेल नहीं, अब यह हाथी कभी भी जीवित नही हो सकता। सम्राट ने पूछा–क्यों? क्या अब दुआ काम नहीं करेगी। इस के उत्तर में गुरुदेव ने कहा–अल्लाह के मारे को, भक्तजन जीवत करवा सकते हैं। परन्तु भक्तजनों के मारे को, अल्लाह जीवित नहीं कर सकता। सम्राट ने पूछा–इस का अर्थ क्या हुआ। गुरुदेव ने कहा–अल्लाह अपने भक्तों की सदैव लाज रखता है। अल्लाह के बांधे हुए को भक्तगण प्रार्थना से छुड़वा सकते हैं। किन्तु जिस को भक्तों ने बांध दिया, उसे प्रभु नहीं छोड़ता। सम्राट प्रसन्न होकर कहने लगा आप मुझे कोई सेवा का अवसर दें। आप को धन चाहिए तो बताएं। गुरुदेव ने कहा–हमारी मांग केवल प्रभु दर्शनों की है। इस के अतिरिक्त और कोई तृष्णा नहीं। बस हमारी फ़कीरी ही हमारा अपार धन है। इस घटना के पश्चात, गुरुदेव के दर्शनों के लिए जन साधारण उपहार लेकर आने लगा। जिस से बहुत धन इकट्ठा हो गया। उस धन से गुरुदेव ने दिल्ली में एक स्थान पर पानी की कमी से पीड़ित जनता के लिए एक कुंआ बनवा दिया। जिसे आज भी लोग नानक प्याऊ के नाम से जानते हैं।

शेख शरफ – (पानीपत, हरियाणा)

श्री गुरू नानक देव जी दिल्ली से पंजाब लौटते समय पानीपत नगर में ठहरे। उन दिनों पानीपत में शेख शरफ़ नामक फ़कीर बहुत प्रसिद्धि पर था। यह शेख अपने पूर्वज फ़कीर बूअली कलन्दर उर्फ शेख सरफउदद्दीन की मजार पर निवास करता था तथा उस की पूजा अपने मुरीदों सहित किया करता था। जन–साधारण में इन की खयाति एक कामिल फ़कीर के रूप में थी। अत: लोग दूर–दूर से मन्नते मांगने मजार पर आते थे। एक दिन शेख शरफ का मुरीद शेख टटीहरी पानी लेने पनघट पर पहुँचा तो वहाँ पर उस ने बहुत भीड़ देखी जो कि शांत एकाग्र होकर गुरुदेव के कीर्तन श्रवण का आनंद ले रही थी। वह भी पानी ले जाना भूलकर, कीर्तन श्रवण करने लगा। उस के मजार पर गाए जाने वाली कवालियां फीकी मालूम होने लगी। वह सोचने लगा कि यदि गुरुदेव भी मजार

पर चलें तो उस क्षेत्र में उनकी धाक जम जाएगी। इस लिए वह कीर्तन समाप्ति पर गुरुदेव से मिला, उस ने बहुत अदब से सलाम-ए-लैकम कहा किन्तु उत्तर में गुरुदेव ने उसे कहा-सलाम-अलेक। मुरीद कुछ चकित हुआ तथा उस ने पूछा कि सलम-अलेक का क्या अर्थ हुआ तो गुरुदेव ने उत्तर दिया-आप ने हमें कहा है सलाम-ए लैकम, अर्थात आप को शान्ति मिले किन्तु हमने आप को कहा है आप को वह अल्लाह शांति प्रदान करें, क्योंकि शांति केवल और केवल एक मात्र अल्लाह ही दे सकता है। पानी लेकर मुरीद टटहिरी वापस पहुँच कर अपने मुरशद शेख शरफ को गुरुदेव से मिलाने ले आया। शेख शरफ ने गुरुदेव, जी पर अनेक प्रश्न किये तथा कहने लगा-आप ने लम्बे-लम्बे केश क्यों धारण किये हुए है जब कि सभी उदासी वर्गो में सिर मुंडवा लेते हैं। उत्तर में गुरुदेव ने कहा-मैने, माया त्यागी है गृहस्थ नहीं। मैं संसारिक व्यक्ति हूँ। वास्तव में केश तो सुन्दरता के प्रतीक हैं। तथा मनुष्य को प्रकृति का अद्भुत उपहार है यदि केश न होते तो मनुष्य कुरूप होता। मूंछे, पुरुष तत्व की प्रतीक हैं अर्थात वीरता (शौर्य) की प्रतीक हैं, दाढ़ी दैवी गुणों की प्रतीक है। दाढ़ी एवं मूंछे प्रकृति के नियमों अनुसार केवल बालिग होने पर पुरुषों को ही प्रदान की गई हैं स्त्रियों को नहीं। प्रकृति के इस रहस्य को हमें समझना चाहिए। तथा हमें उस का अनुसरण करना चाहिए। शेख शरफ के आग्रह पर गुरुदेव उस के डेरे पर गए। जहां उन के पूर्वज फ़कीरों के मजार थे किन्तु गुरुदेव ने मजार की पूजा पर भारी आपत्ति की और कहा जो लोग अंध विश्वास में मुरदों की पूजा करते हैं। उन की इबादत को फल नहीं लगता और उन का परीश्रम निष्फल चला जाता है। पूजा केवल निराकार ज्योति स्वरूप शक्ति (अल्लाह) की करनी चाहिए, किसी व्यक्ति विशेष की नहीं। यहीं सुनहरी सिद्धांत इस्लाम का भी है। जिस पर पहरा देना आप का काम है। शेख ने अपनी भूल स्वीकार की और कहा-आप मेरा मार्ग दर्शन करें ताकि मेरा कल्याण सम्भव हो सके। तत् पश्चात् उन्होंने शरीअत, तरीकत तथा मारफत के विषय में अपनी शंकाओं का समाधान किया। इसके उत्तर में गुरुदेव ने कहा चार कतेबों की काण छोड़ें, शरहा, शरीयत (बाहरी कर्मकाण्ड) न माने। तरीकत, मारफत (भक्ति और ज्ञान) पर श्रद्धा और विश्वास से आचरण करें। आप विरक्त और त्याग वृति के दरवेश हैं। इस लिए वैराग्य में उतावला पन नहीं होना चाहिए "सहज पके सो मीठा होय" आप को धैर्य की अति आवश्यकता है। अत: प्रभु ज्योति दर्शन की प्राप्ति

का मार्ग सहज का मार्ग है, इस में हठ से कुछ नहीं होता, न हीं उतावलापन से। शेख शरफ कहने लगे। गुरुदेव आप मुझे कुछ नियम दृढ़ करा दें-जिस से प्रभु का अनुग्रह प्राप्त हो-गुरुदेव ने कहा द्वैत को त्याग दे, दमन, अत्याचार के विरुद्ध अपनी आवाज बुलंद करें, नम्रता ग्रहण करो। सभी कर्मो के बंधनो से मुक्त हो जाओगे। शाह शरफ सन्तुष्ट हो गया तब गुरुदेव ने वाणी उच्चारण करते हुए कीर्तन प्रारम्भ कर दिया।

जीवत मरै जागत फुनि सोवै जानत आपु मुसावै ।।
सफन सफा होइ मिले खालक कउ तउ दरवेसु कहावै ।।
तेरा जन है को ऐसा दिलि दरवेस ।।
सादी गमी तमक नाही गुसा खुदी हिरसु नहीं एस ।।

(जन्म साखी)

नारी जाति का सम्मान – (करनाल, हरियाणा)

श्री गुरू नानक देव जी पानीपत से प्रस्थान कर करनाल पहुँचे। आप ने अपने स्वभाव अनुसार समाज के निम्न वर्ग (ठठेरा लोगों) के मोहल्ले में ठिकाना किया आप जी ने एक पीपल के वृक्ष के नीचे प्रतिदिन कीर्तन करना प्रारम्भ कर दिया, कीर्तन के पश्चात् जिज्ञासुओं के लिए प्रवचन भी करते, जिस कारण वहाँ पर धीरे-धीरे संगत बढ़ने लगी। एक पीड़ित महिला ने आप के पास फरियाद की कि उसे परिवार के मुख्य स्दस्य बहुत सताते हैं तथा हीन दृष्टि से देखते हैं क्योंकि उसने उन की इच्छा अनुसार लड़कों को जन्म नहीं दिया बल्कि लड़कियां ही जन्मी हैं। यह सुनकर गुरुदेव ने उसे धैर्य बन्धया और कहा-सब कुछ उस प्रभु के हाथ में है। कल आप अपने पति और सास को प्रेरित कर हमारे पास लाएं। दूसरे दिन वह महिला अपने पति तथा सास को साथ ले आई। गुरुदेव ने तब कीर्तन करते समय यह शब्द उच्चारण किया।-

भंडि जमीऐ भंडि निंमीऐ भंडि मंगणु वीआहु।

भंडहु होवै दोसती भंडहु चलै राहु ॥

भंडु मुआ भंडु भालीऐ भंडि होवै बंधानु ॥

सो किउ मंदा आखीऐ जितु जंमहि राजान ॥

राग आसा, पृष्ठ 473

कीर्तन के पश्चात् संगत में प्रवचन करते समय गुरुदेव ने कहा–महिलाएं, समाज की शक्ति हैं। हमें महिलाओं को हीन दृष्टि से देखकर उन की निंदा नहीं करनी चाहिए, क्योंकि महिलाएं ही माता के रूप में सभी की जननी है समाज जिन की निन्दा करता है अर्थात भण्डता (निरादर) है वहीं 'भंड' बड़े-बड़े महापुरुषों तथा चक्रवर्ती राजाओं-महाराजाओं को भी जन्म देती है। यदि हम सच्चे हृदय से विचारें तो 'भंड' अर्थात महिलाओं के बिना इस मानव समाज की कल्पना भी नहीं की जा सकती। प्रत्येक स्थान पर स्त्री की अति आवश्यकता है यदि हमारी इच्छा अनुसार सब के यहाँ लड़के ही जन्मे तो फिर यह संसार आगे कैसे चलेगा। अत: प्रकृति के कार्यो में हस्तक्षेप करना उचित नहीं। उस की रजा में ही राज़ी रहना चाहिए। इसी में सब का भला है। यह सीख सुनकर, उस महिला के पति तथा सास अपने भाग्य पर सन्तुष्ट हो गए और उन्होंने शपथ ली कि वे दोबारा इस बात को लेकर कभी भी व्यंग नहीं करेंगे। गुरुदेव कुछ ही दिनों में सूर्य ग्रहण के मेले के कारण कुरूक्षेत्र मेले के लिए प्रस्थान कर गए।

सूर्य ग्रहण – (कुरूक्षेत्र, हरियाणा)

श्री गुरू नानक देव जी लोक-उधार करते हुए सूर्य ग्रहण के अवसर पर कुरूक्षेत्र में पहुँच गए। वहाँ पर पहले से ही अपार जन समूह पवित्र स्थान के लिए उमड़ पड़ा था। अत: गुरुदेव ने सरोवर के किनारे कुछ दूरी पर अपना आसन लगाया तथा भाई मरदाना को साथ लेकर कीर्तन में जुट गए। मधुर संगीत में प्रभु स्तुति सुनकर चारो ओर से तीर्थ यात्री, कीर्तन सुनने के लिए गुरुदेव की तरफ आकर्षित होने लगे।

बिनु सतिगुर किनै न पाइओ बिनु सतिगुर किनै न पाइआ ।।
सतिगुर विचि आपु रखिओनु करि परगटु आखि सुणइआ ।।

राग आसा, पृष्ठ 466

यात्रियों ने हरि-यश सुना और गुरुदेव से अपनी-अपनी शंकाओं के समाधान हेतु विचार-विमर्श करने लगे कि मनुष्य को अपने कल्याण के लिए कौन सा उपाए करना चाहिए जो कि सहज तथा सरल हो? इस के उत्तर में गुरुदेव ने सब को सम्बोधित करके कहा कि मानव को सर्व प्रथम किसी पूर्ण पुरुष के उपदेशों पर अपना जीवन व्यापन करना चाहिए। क्योंकि वहीं उसे साधारण मानव से देवता अर्थात ऊँचे आचरण का बना देता है। जिस प्रकार एक बढ़ई एक साधारण लकड़ी को इमारती समग्री में बदल देता है या एक शिल्पकार एक साधारण पत्थर को मूर्ति में, तथा एक स्वर्णकार सोने की डली को एक सुन्दर आभूषण में बदल देता है। उसी तरह सत्गुरू भी मनुष्य के जीवन को नियमबद्ध कर उसे ऊँची आत्मिक अवस्था का बना देता है। उसी समय, गुरुदेव के प्रवचन सुनने वहाँ पर एक राज कुमार अपने परिवार सहित पहुँचा और गुरुदेव के चरण-र्स्पश कर संगत में यथा स्थान पर बैठ गया। उस ने विनम्रता-पूर्वक विनती की-आप मेरा भी मार्ग दर्शन करे। गुरुदेव ने कहा-आप अपनी समस्या बताएं? राज कुमार बताने लगा-हे ! गुरुदेव जी, मेरा नाम जगत राय है। मैं हांसी रियासत के राजा अमृत राय का बेटा हूँ। इन दिनों हम पराजित हो गए हैं। हमारा राज्य हमारे चचेरे भाईयों ने छीन लिया है। कृप्या कोई युक्ति बताएं जिस से मुझे मेरा राज्य पुन: प्राप्त हो सके। गुरुदेव ने उत्तर दिया-बेटा अपनी प्रजा का मन जीतना ही सब से बड़ी युक्ति है। यह तभी सम्भव हो सकता है जब तुम एक आदर्श वादी व्यक्ति बन कर प्रजा के सेवक के रूप में उभरो, सुख दुख में उन के साथ, हाथ बटाने के लिए तत्पर रहें। आप अपने ऊँचे आचरण का परिचय दें जिस से जन-साधारण का तुम पर विश्वास बन जाए कि आप उन के साथ सदैव न्याय पूर्ण व्यवाहर करेंगे और किसी निर्दोष का दमन नहीं होने देंगे। आप पुन: विजयी हो सकते हो अन्यथा नहीं। यह सीख धारण करते हुए राज कुमार ने आवासन दिया-हे गुरुदेव जी, आप की जैसी आज्ञा है मैं वैसे ही आचरण करूगां। किन्तु आप मुझे कृप्या इस समय आशीर्वाद दें। गुरुदेव ने कहा-यदि तुम शपथ लेते हो कि तुम सदैव न्यायकारी तथा प्रजा का सेवक हो कर राज्य करोगे तो हम समस्त संगत के साथ

तुम्हारी विजय के लिए प्रभु चरणों में प्रार्थना करते हैं। राज कुमार ने तब गुरुदेव से कहा–मैं रास्ते में एक मृग का शिकार कर के लाया हूँ जो कि मेरे रथ में पड़ा हुआ है मेरी तरफ से उसे तुच्छ सी भेंट स्वीकार करें। उत्तर में गुरुदेव कहने लगे–बेटा, हम त्यागी हैं इस लिए तुम्हारी भेंट स्वीकार नहीं कर सकते। यदि तुम सेवा ही करना चाहते हो तो जन–साधारण के लिए यहाँ लंगर का प्रबन्ध कर दो। इस पर राज कुमार ने कहा–जो आज्ञा गुरुदेव, मैं अभी अनाज का प्रबन्ध करता हूँ तथा उस ने बाजार से एक बोरी चावलों की मंगवा भेजी। जिस को गुरू जी ने एक विशाल देग में पकाने के लिए, एक चूल्हे पर धर दिया। जैसे ही आग जलाई गई। धूआ दूर–दूर तक दिखाई देने लगा। उस समय सूर्य ग्रहण प्रारम्भ हो चुका था। हिन्दू मान्यताओं के अनुसार सूर्य अथवा चन्द्र ग्रहण के समय आग जलाना अथवा खाना पकाना वर्जित है क्योंकि उन का मानना है कि उस समय ग्रहण के प्रभाव से भोजन अपवित्र हो जाता है। अतः आग जलाना अपशगुन माना जाता है। जैसे ही आग अथवा धुआँ दिखाई दिया तो वहाँ के पुजारी लोग आपत्ति करने हेतु इकट्ठे होकर आ पहुँचे। उनके प्रमुख पण्डित नानूमल जी थे और वह स्वयं को कलयुग का अवतार मानते थे। वास्तव में वह प्रसिद्ध विद्वान तथा शास्त्रार्थ में सिद्धहस्त थे। उन का नाम संयोगवश ही नानू मल था, उन्होंने भविष्य पुराण के एक अध्याय में यह पढ़ लिया था कि आगामी समय में एक पराक्रमी तथा तपस्वी महामानव विश्व भ्रमण, मानव कल्याण हेतु करेगें जिस का नाम नानक होगा। बस फिर क्या था। उन्होंने स्वयं को वही पुरुष घोषित कर दिया उधर विडंबना यह थी कि वास्तविक नानक जी भी वहाँ पर पहुँच गये थे। जैसे ही गुरू नानक देव जी के पास वह प्रतिनिधि मण्डल विरोध करने पहुँचा तो किसी चुगलखोर ने पण्डित नानू से कहा कि यह लोग तो हिरण का मांस पक्का रहे हैं। इस बार सभी पण्डित क्रोधित होकर लड़ाई–झगड़ें पर उतर आये किन्तु गुरुदेव ने शान्त चित होकर उन को विचार–विमर्श का आग्रह किया। नानू मल पण्डित ने तब यह चुनौती स्वीकार कर ली। वह वाद–विवाद करने लगा कि आप लोग कैसे धार्मिक पुरुष हो, जो पवित्र तीर्थ स्थल पर, सूर्य ग्रहण के समय मृग–मांस पक्का रहे हैं? यह सुनकर गुरुदेव कहने लगे। आप मुझे यह बताने की कृपा करें कि पवित्र तीर्थ स्थल पर भोजन पकाना कैसे अर्द्धम का कार्य हो गया है? पण्डित नानू–हमारा विरोध तो केवल सूर्य ग्रहण के समय आग जलाने से था परन्तु आप ने तो

मांस भी पकाया है जिस से पवित्र तीर्थ स्थल की मर्यादा भंग हो गई है तथा वातावरण भी दूषित हो गया है। नानक जी-पहली बात यह है कि आप का विरोध निराधार है, क्योंकि सूर्य ग्रहण या चन्द्र ग्रहण इत्यादि यह सब ग्रहों की गति से होने वाली सामान्य प्रतिक्रिया भर है। इस से आग जलाने या भोजन तैयार करने से आप को क्या आपत्ति है? पण्डित नानू-हमारी मान्यताओं के अनुसार ग्रहण के समय अग्नि जलाना या भोजन तैयार करना वर्जित है, क्योंकि हम मानते हैं कि ग्रहण की प्रतिक्रिया से भोजन अपवित्र हो जाता है? नानक जी-आप की मान्यताएं सब मिथ्या हैं, क्योंकि इन सब में कोई तथ्य तो है नहीं। बाकी रही भोजन की बात तो वह भी अपवित्र हमारा ही होगा, आप का नहीं। आप को किस लिए आपत्ति है? नानू पंडित-निरूत्तर होकर, सोचते हुए हमें तो आप के मांस पकाने से आपत्ति है कि आप ने एक सन्यासी होकर यहाँ की मर्यादा भंग की है? नानक जी-आप मांस से इतनी घृणा क्यों करते हो जब कि आप के वेदों शास्त्रों के अनुसार प्राचीन काल में यज्ञों में पशुवध कर के उन का मांस आहार रूप में प्रयोग में लाना लिखा है। जब यज्ञ में मांस सेवन पवित्र है तो यहाँ मांस पकाना अपवित्र क्यों कर हो सकता है? वास्तव में मांस के लिए झगड़ा करना मूर्खो का कार्य है ज्ञानिओं का नहीं। क्योंकि हमारा शरीर भी मांस का ही बना हुआ है, इस के अतिरिक्त दूध-घी इत्यादि भी मांस से बने पशु अथवा माता से उत्पन्न होते हैं।

मासु मासु करि मूरखु झगड़े गिआनु धिआनु नही जाणै ॥
कउणु मासु कउणु सागु कहावै किसु महि पाप समाणे ॥
गैंडा मारि होम जग कीए देवतिआ की बाणे ॥
मासु छोडि बैसि नकु पकड़हि राती माणस खाणे ॥

राग मलार, पृष्ठ 1289

नानू मल पण्डित के पास अब कोई तर्क संगत तथ्य तो था नहीं, इस लिए वह निरूतर होकर केवल एक बात पर ही दबाव डालने लगा कि यह स्थान पवित्र है, यहाँ आप को मांस नहीं पकाना चाहिए था। तब गुरुदेव ने कहा आप बहकावे में आ गए हैं हमने तो जन साधारण के लिए केवल लंगर लगाने के लिए चावल ही पकाए हैं। प्रत्यक्ष

को प्रमाण की आवश्यकता नहीं होती यदि शंका हो तो स्वयं देग का ढक्कन उठाकर देख सकते हैं। अब नानू मल पण्डित का यह अभिमान कि वह शास्त्रार्थ का दक्ष है वह भी टूट गया था। अत: वह गुरुदेव के चरणों में नतमस्तक होकर, शीश झुका कर, क्षमा याचना करने लगा। इस पर गुरुदेव ने उसे गले लगा लिया तथा कहा–मैं मांसाहार के पक्ष में नहीं हूँ। परन्तु वह लोग जो केवल मांस न सेवन कर मानव समाज में अत्याचार करते हैं तथा निर्दयता से गरीबों का शोषण करते हैं एवं यहाँ पर जीव हत्या के विपरीत अहिंसा का कि पाठ पढ़ाना चाहते हैं। हम उन को दर्शाना चाहते है कि वे मांसाहारी लोग उन शाकाहारी लोगों से कहीं अच्छे हैं जो निशछल निष्कपट जीवन जी कर दूसरों को सुख देते हैं।

पण्डों को शिक्षा – पेहेवा (पिहोआ, हरियाणा)

श्री गुरू नानक देव जी कुरूक्षेत्र के सूर्य ग्रहण मेले से लोटते हुए पेहेवा के तथाकथित पवित्र सरोवर पर पहुँचे वहाँ पर पण्डों ने दंत–कथाएं प्रसिद्ध कर रखी थी कि वहाँ पर एक महिला के कान की बाली सरोवर में स्नान करते समय गिर गई तो उस ने यह मान कर मन को समझा लिया कि वह बाली उसने दान दक्षिणा में दे दी तभी वह बाली विकसित होकर रथ के पहीए जैसी हो गई। अत: दान दिया जाना चाहिए जिस से आप को यहाँ मात लोक में दिया दान कई सो गुना बढ़कर स्वर्ग लोक में मिलेगा। यह सुनकर गुरुदेव ने कहा–ठीक है : फिर तो पाप उस से भी कई गुना फलना फूलना चाहिए। अत: हमे पहले अपने–अपने हृदय में झांक कर देखना चाहिए कि हमने कितने पाप किये हैं। यदि वह भी इसी गति से विकसित हो गए तो हमारा क्या होगा? यह सुन कर पंडे निरूत्तर हो गए, इस लिए गुरुदेव से पूछने लगें कि राजा पृथू जिस की याद मे यह स्थान है, उसने अपने पितृों की आत्म–शान्ति के लिए पृथू–ऊदक नामक पनघट बनवाया है। इस कूँएं पर स्नान का महत्व हमें प्राप्त होगा या नहीं। गुरुदेव ने उत्तर दिया।

जिसु जल निधि कारणि तुम जगि आए सो अम्रितु गुर पाही जीउ ।।
छोडहु वेसु भेखु चतुराई दुबिधा इहु फलु नाही जीउ ।।

राग सोरठि, पृष्ठ 598

तात्पर्य यह है कि आप जिस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए यह कर्म काण्ड कर रहे हैं वह केवल गुरू-कृपा के पात्र बनने से ही प्राप्त हो सकता है। जब तक पूर्ण गुरू की शिक्षा पर जीवन यापन नहीं करेंगे तब तक सभी कर्म निष्फल रहेंगे। क्योंकि बिना गुरू के कर्म शून्य के बराबर है। गुरू ही उन सब कर्मो को फलीभूत होने के लिए मार्ग दर्शन करता है अर्थात शून्य के आगे एक लगाने का कार्य करता है। अत: कर्म काण्डों में समय नष्ट न कर प्रभु चिंतन में ध्यान लगाएं। जिस से हमें पूर्ण गुरू की प्राप्ति हो सके। इसी में सब का भला है। गुरुदेव यहाँ से प्रस्थान कर सरसा नगर चले गए।

सूफी फ़कीरों को परामर्श– (सरसा, हरियाणा)

श्री गुरू नानक देव जी पेहेवा से होते हुए जींद पहुँचे। वहाँ से सरसा पधारें वहाँ पर उन दिनों सूफी फ़कीरों का गढ था। जिस मे अग्रहणी ख्वाजा अबदुल शकूर थे, जो कि कामिल मुरशद के रूप में ख्याति प्राप्त कर रहे थे। इन की अलौकिक शक्तियों की धाक जन साधारण के मन पर पड़ी हुई थी। अत: मन्नतें मांगने के लिए लोगों की अपार भीड़ का उन के यहाँ तांता लगा रहता था। जिस कारण पूजा के धन का खूब दुरोपयोग होने लगा था। गुरुदेव ने जब इन की मानसिकता देखी तो ख्वाजा अबदुल शकूर से कह उठे-आप केवल अपनी निजी मानता तथा अभिमान के लिए उस प्रभु के कार्यो में हस्तक्षेप कर आत्मिक शक्ति का दुरोपयोग कर रहे हो। इस से किसी का भला होने वाला नहीं, वास्तविक प्रभु आराधना या इबादत, 'राजी विच रज़ा' में जीना है। सभी दीन-दुखियों को प्रभु हुक्म मानने का उपदेश देना ही सच्चे फ़कीरों का कार्य होना चाहिए। इस बात पर अबदुल शकूर गुरुदेव से सहमत न हुए एवं उन के सहयोगी फ़कीर, बहावल उल हक, शाहि वाहल़ फरीदउद्दीन, जलालउद्दीन, तथा जती मल इत्यादि गुरुदेव से इसी विषय पर विचार-गोष्ठी करने आए। गुरुदेव ने कहा-आप पहले ऋद्धि, सिद्धि प्राप्त करने के लिए साधना रूपी कठिन परीश्रम करते हों फिर उस से प्राप्त आत्मिक बल का प्रदर्शन कर पूजा का धन इकट्ठा करते हों यह सभी कुछ एक तिज़ारत अर्थात व्यापार नहीं तो और क्या है? वास्तविक फ़कीरी स्वयं निष्काम होकर नाम जपना तथा दूसरों को जपाना है, इसी में सभी का कल्याण है। जब वे लोग गुरुदेव

के तर्क से पराजित हो गए तो वे अपनी श्रेष्ठता सिद्ध करने के लिए, गुरुदेव को उपवास रखने की चुनौती देने लगे। किन्तु गुरुदेव ने कहा–उपवास करना हमारा सिद्धांत ही नहीं, हमारा मार्ग तो सहज मार्ग है। इस में किसी भी प्रकार का हठ स्वीकारीय नहीं। किन्तु फ़कीरों की मण्डली को अपनी श्रेष्ठता का प्रदर्शन करना था वे कहने लगे हम तो 40 दिन तक भूखे प्यासे घोर तप कर सकते हैं। आप हमारे साथ इस प्रकार की साधना कर दिखाएं तो जाने। पांचो फ़कीरो ने एक–एक घड़ा पानी का तथा चालीस दाने जौ के लिए और इबादत के लिए (40 दिन का चिल्ला) अपनी–अपनी कोठरियों मे चले गए। किन्तु गुरुदेव वहीं प्रतिदिन भाई मरदाना जी के संग मिलकर कीर्तन करते। जब संगत मिल बैठती तो प्रवचन करते–यह मानव जीवन अमूल्य है इस में समय नष्ट नहीं करना चाहिए, न जाने मृत्यु कब आ जाये। अत: प्रत्येक क्षण, उस प्रभु की आराधना में व्यतीत करना चाहिए। जिस से हमारा प्रत्येक श्वास सफल हो। मैं तो उन्हीं कार्यो को मान्यता देता हूँ। जो जन–साधारण गृहस्थ में रह कर, सहज रूप में कर सके। अत: मनुष्य को साधारण परिस्थितियों में रह कर, अपना–अपना कर्त्तव्य निभाते हुए, प्रभु भजन करना चाहिए। वही प्रभु चरणों में स्वीकारीय है। कर्म–काण्ड नहीं। चालीस दिन पश्चात् जब चिल्ले का समय सम्पूर्ण हुआ तो पांचो फ़कीर निढाल अवस्था में मिले। किन्तु गुरुदेव तो अल्प आहार तथा अल्प निन्द्रा लेने के कारण बिल्कुल स्वस्थ तथा तेजोमय थे। तब तक जनता को भी फ़कीरों का कर्म–काण्ड तथा पाखण्ड समझ में आ गया था।

बहन से पुनर मिलन–(सुलतानपुर, पंजाब)

श्री गुरू नानक देव जी सरसा से सुनाम और संगरूर होते हुए अपनी बहन नानकी जी के यहाँ सुलतानपुर पहुँचे। बहन नानकी उस समय अपने भाई की मीठी याद में बैठी, अपने आप से ही कुछ बात कर रही थी कि बहुत लम्बा समय हो गया है न जाने भइया जी कब वापस लोटेंगे। उन के तो दर्शनों को भी तरस गई हूँ। अत: वह रोटियां सेंकने लगी, कि एक के बाद एक रोटियां फूलने लगी। तभी उन के मन में विचार उत्पन्न हुआ कि काश उनका भाई आ जाए तो मैं उसे गर्मा–गर्म रोटियां बना बना कर पहले की

तरह खिलाऊँ। इतने में उन की नौकरानी तुलसां भागी-भागी आई तथा कहने लगी बीबी जी आप के प्यारे भइया नानक जी आए हैं। उन्होंने कहा-कहीं तू मुझ से ठठोली तो नहीं कर रही हो। इतने में नानक जी सत्यकरतार-सत्यकरतार की ध्वनि करते द्वार पर आ पधारे। तब नानकी जी भागी-भागी आई और गुरुदेव का भव्य स्वागत करते हुए अन्दर ले आई। तुलसा ने चारपाई बिछा दी। भाई मरदाना तथा गुरुदेव उस पर बिराज गए। उस समय गुरुदेव के बड़े पुत्र (बाबा) श्रीचन्द जी घर पर आए। जो कि अपनी फूफी के पास ही रहते थे, अब उन की आयु लगभग 16 वर्ष होने को थी। बहन नानकी जी ने उन्हें परिचय देते हुए कहा-बेटा यह आप के पिता नानक देव जी, मेरे छोटे भाई हैं। यह जानते ही (बाबा) श्रीचन्द जी ने तुरन्त ही पिता जी के चरण र्स्पश किये। गुरुदेव ने उन्हें कण्ठ से लगा लिया तथा माथा चूम लिया। इस प्रकार पिता-पुत्र का पुर्न मिलन लगभग 12 वर्ष के अन्तराल में हुआ। यह मिलन देखकर नानकी जी कहने लगी- (बाबा) श्रीचन्द भी बिलकुल तुम्हारी आदतों का स्वामी है। यह भी तुम्हारी तरह साधू सन्यासियों की संगत में रहना पसंद करता है, तथा घर गृहस्थी के किसी काम में कोई रुचि नहीं रखता। मैंने भी इस पर अपनी इच्छा कभी नहीं थोपी। कुछ ही देर में भाई जयराम जी भी अपना काम काज निपटा कर घर लौटे, तो नानक जी से मिलकर गद्‌गद हो गए। नानक देव जी वापस लौट आए हैं। यह समाचार समस्त नगर में फैल गया फिर क्या था नवाब दौलत खान गुरुदेव से मिलने स्वयं आया और उस ने झुक कर चरण स्पर्श किये, किन्तु गुरुदेव ने उन्हे बहुत आदर मान दिया। नवाब कहने लगा-दुख इस बात का है कि मैंने आप की महिमा को पहले क्यों नहीं जाना तथा आग्रह करने लगा कि मुझे अपना शिष्य बनाए। गुरुदेव ने उस की प्रार्थना स्वीकार कर ली और गुरू दीक्षा देकर नवाब को नाम-दान देकर कृतार्थ किया। इस प्रकार सभी मित्र तथा सत्संगी गुरुदेव को मिलने आए और कहने लगे-आप द्वारा तैयार कराई गई धर्मशाला में हम सत्संग का प्रवाह जारी रखे हुए हैं। अतः आप उस स्थान की शोभा बढ़ाएं। फिर क्या था, गुरुदेव ने लगभग 12 वर्षो बाद धर्मशाला में पहुँच कर भाई मरदाना जी सहित सवयं कीर्तन किया। तत्पश्चात् अपने प्रवचनो में कहा-सब को धैर्य रखना चाहिए तथा अपना कर्त्तव्य पालन करते हुए, नाम-वाणी का इसी प्रकार प्रवाह चलाते रहना चाहिए, क्योंकि मैं आप के अनुरोध पर यहाँ नहीं ठहर सकता। मुझे तो अभी बहुत से देश-देशांतरों में जाना है। मेरा कार्य अभी अधूरा पड़ा हुआ है। कुछ दिन बहन नानकी जी के यहाँ रुक कर गुरुदेव अपने माता पिता जी से मिलने तलवण्डी नगर को चले गये।

परीवार से पुनर मिलन – तलवण्डी से पक्खों के रंधावे ग्राम

श्री गुरू नानक देव जी सुलतानपुर की संगत तथा बहन नानकी जी से आज्ञा लेकर तलवण्डी पहुँचे। गुरुदेव ने भाई मरदाना जी को कहा – आप अपने घर जाएं तत् पश्चात् मेरे माता पिता जी से भी मिलें परन्तु मेरे विषय में किसी को भी कुछ बताने की आवश्यकता नहीं, बस शांत रहना। मैं यहाँ नगर के बाहर विराने में एकान्त वास करना चाहता हूँ। भाई मादाना ने शंका व्यक्त की – गुरुदेव यह कैसे सम्भव है कि मैं घर जाऊ और आप के विषय में न बताऊँ जब कि सभी लोग आप के बारे में ही पूछेंगे? गुरुदेव कहने लगे – जहां तक हो सके मौन ही रहना। भाई मरदाना जी पहले अपने परिवार से मिलने गए, तत् पश्चात् माता तृप्ता जी को मिले। माता जी ने उन को अकेला देखकर कई तरह के प्रश्न पूछे, किन्तु मरदाना जी चुप्पी साधे रहे। माता जी ने मरदाना जी की मुस्कुराहट से अनुमान लगा ही लिया कि नानक वहाँ पर आया तो होगा ही परन्तु साधु – वेश के कारण घर पर आने से कतराता होगा। अत: उन्होंने मेहता कालू जी के घर पर लौटते ही, कुछ खाद्य वस्तुएं साथ ले ली और नानक जी को खोजने निकल पड़े। उन को जल्दी ही एक विरान स्थान पर नानक जी मिल गए। माता – पिता को देखकर नानक जी ने उन का भव्य स्वागत करते हुए चरण स्पर्श किये, माता जी ने नानक जी को आलिंगन में लेकर घर पर चलने का आग्रह किया किन्तु नानक जी घर चलने पर सहमत नहीं हुए। इतने में राय बुलार जी, खबर पाते ही नानक जी से मिलने वहाँ पहुँच गये। नानक जी ने उन का भी भव्य स्वागत किया किन्तु वह गुरुदेव के चरण स्पर्श करना चाहते थे। परन्तु गुरुदेव ने उन को झुकने से पहले ही थाम लिया। उन्होंने कहा – बेटा मैं अब वृद्धा अवस्था में हूँ। न जाने कब अल्लाह मियां का बुलावा आ जाए, इस लिए मैं तुझे देखकर अपना मन तृप्त करना चाहता हूँ। अत: आप को मेरे घर पर चलना चाहिए। गुरुदेव उन के स्नेह के आगे झुक गए और उन के साथ उन के घर पर पहुँचे। तलवण्डी के सभी निवासी राय जी के यहाँ, गुरुदेव के दर्शनों के लिए उमड़ पड़े। गुरुदेव ने अपने प्रवचनों से सभी की शंकाएं निवारण की तथा नाम वाणी का महत्व बताया कि मानव जीवन का मुख्य प्रयोजन आवा – गमन से छुटकारा पाना है। अत: उस के लिए एक मात्र साधन प्रभु नाम ही है जो वाणी अथवा कीर्तन श्रवण करने से सहज प्राप्त हो जाता है।

इस लिए सत्संग में आना अति आवश्यक है। उन दिनों गुरुदेव के महल सुलक्खणी जी अपने मायके पक्खो के रंधावे नगर, अपने छोटे बेटे लक्खमी दास के साथ रहने गई हुई थी। अत: कुछ दिन तलवण्डी निवास करने के पश्चात, गुरुदेव अपने ससुराल, भाई मरदाना जी सहित पहुँचे। पत्नी तथा बच्चों के लिए यह अत्यंत प्रसन्नता का शुभ अवसर था पूरे 12 वर्षो के पश्चात् मिलन हुआ था। बाबा मूलचन्द जी उन दिनों वहाँ के पटवारी थे। परन्तु वृद्ध अवस्था को प्राप्त हो चुके थे। वहीं के चौधरी अजीते रंधावे ने प्रार्थना की- आप यही पर स्थाई निवास स्थान बनायें, गुरुदेव ने उसे आश्वासन दिया-हम इस सुझाव पर ध्यान पूर्वक विचार करेंगे। मूलचन्द जी ने कहा-बेटा। मेरे उत्तराधिकारी तुम ही हो क्योंकि मेरी केवल एक ही बेटी है। अत: मेरे देहावसान के पश्चात् सब कुछ तुम्हारा ही है। इस लिए धन की चिन्ता न करो। यहाँ कहीं भी भूमि खरीद कर कृषि कार्य करो। यह सुन कर गुरुदेव ने कहा, "पिता जी ठीक है मैं आप की इच्छा अनुसार यहीं कहीं अपना स्थाई निवास बना लूँगा। इस कार्य के लिए आप पड़ोस में ही भूमि खरीदने की व्यवस्था करें। किन्तु मैं देशाटन का बाकी रहता कार्य निपटा लूँ तभी स्थाई रूप से किसी एक स्थान को अपना निज़ी स्थान बनाऊंगा।" इस पर मूलचन्द जी ने कहा, "ठीक है मैं तुम्हारे लिए रावी नदी के तट पर आबाद क्षेत्र में कोई भूंमि तुम्हारे लिए खरीद रखूँगा। क्योंकि यहां बहुत कम दामो में भूंमि मिलने की सम्भावना है।"

चीन (तिब्बत)
भूटान
अफगानिस्तान
पाकिस्तान
नेपाल
भारत
अरब सागर
बंगाल की खाड़ी
दूसरी यात्रा सन् 1510 से 1516
• यात्रा का प्रारंभिक केन्द्र
सुलतानपुर
तलवंडी
दीपालपुर
पाक पटन
बठिंडा
हिसार
रिवाडी
बीकानेर
अजमेर
जयपुर
आबू
उज्जैन
इन्दौर
खण्डवा
भीम उडयार
सावर मती
बड़ोदरा
सूरत
नासिक
दौलताबाद
नादेड़
पुणे
पालीटाणा
बिदर
हैदराबाद
विजय वाड़ा
रंग पट्टम
पणजी
कुडापा
तिरुपति
बेंगलूर
मैसूर
कांचीपुरम
पाण्डेचेरी
नागापट्टनम
तंजोर
मदुराय
रामेश्वरम
अनुराधापुरा
ट्रिंकोमली
बैटीकुला
कतरगामा
कोचीन
त्रिवेन्द्रम
कुमारी अन्तरीप
मटिया कलम
कवालालम्पुर
सिंगापूर

तृतीय अध्याय
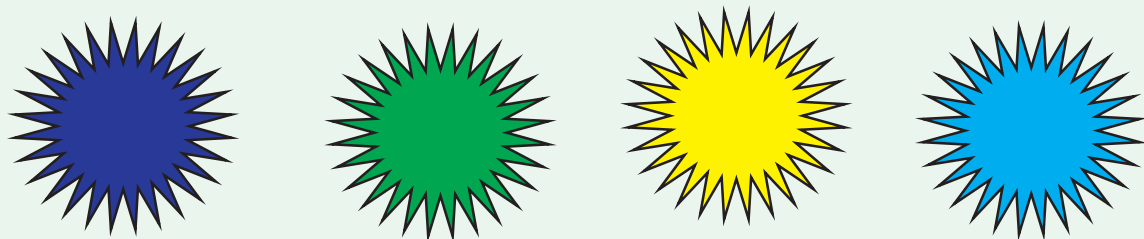
यात्रा दूसरी

शाह सुहागिन

(दीपालपुर, प० – पंजाब)

श्री गुरू नानक देव जी अपने परिवार तथा अपने ससुर मूल चन्द जी से आज्ञा लेकर पक्खो के रन्धावे ग्राम से सन् 1509 के अन्त में दक्षिण भारत तथा अन्य देशों की यात्रा पर निकल पड़े। (श्री लंका, इण्डोनेशिया, मलेशिया, सिंगापुर इत्यादि)। आप जी वहां से लाहौर होते हुए पंजाब के एक नगर दीपालपुर के निकट पहुँचे। वहाँ एक स्थान पर आप ने बहुत भीड़ इकट्ठी देखी। पूछने पर पता चला कि वहाँ एक फ़कीर है जो कि शाह सुहागन नाम से प्रसिद्ध है। उस का कहना है कि उसे पूर्णिमा की रात को अल्लाह मियां स्वयं मिलने आते हैं। अत: वह बहुत सुन्दर सेज बिछा कर तथा स्वयं बुरका डालकर एक कमरे में बन्द हो जाता और अपने मुरीदों को आदेश देता कि कोई भी अन्दर नहीं आएगा। क्योंकि उस के पति परमेश्वर उस से मिलने आने वाले हैं। इस लिए कोई उन के मिलन में बाधा न डाले। इस प्रकार सुबह होने पर वह जन समूह को दर्शन देता तथा कहता कि उसे अर्द्ध रात्रि को अल्लाह मियां मिले थे इस लिए मैं उसकी सुहागिन पत्नी हूँ।

यह किस्सा जब गुरुदेव को ज्ञात हुआ तो उन्होंने कहा यह सब कुछ पाखण्ड है। अल्लाह मियां कोई शरीर-धारी व्यक्ति नहीं, वह तो एक ज्योति हैं, शक्ति हैं, जो अनुभव की जा सकती है। वह तो समस्त ब्रह्मांड में विद्यमान हैं। कोई भी ऐसा स्थान नहीं जहाँ पर वह न हो। इस लिए एक दम्पति की तरह का मिलन होना बिलकुल झूठी बात है। फिर क्या था, कुछ एक मनचले युवकों ने तुरन्त इस बात की परीक्षा लेने के लिए बलपूर्वक उस कोठरी का दरबाजा तोड़ दिया, जहां शाह सुहगिन ने अल्लाह मियां से मिलन होने की अफवाह फैला रखी थी। दरवाजा खुलने पर लोगों ने शाह सुहागिन को रंगे हाथों व्याभिचार करते पकड़ लिया। किन्तु गुरुदेव ने बीच बचाव करके पाखण्डी फ़कीर को लोगों से पिटने से बचा लिया। इस घटना के पश्चात् समस्त नगर में शाह सुहागिन की निन्दा होने लगी। शाह सुहागिन की आय का साधन चौपट हो गया।

कुष्ट रोगी का उपचार – (दीपालपुर, प० पंजाब)

इस घटना के पश्चात् गुरुदेव दीपालपुर के लिए चल पड़े। जब आप वहाँ पहुँचे तो वर्षा हो रही थी। बादलों के कारण समय से पहले ही संध्या हो गई, शीत लहरों के कारण जन जीवन शून्य सा हो गया था। सभी लोग अपने–अपने घरों में दरवाजे बन्द कर विश्राम कर रहे थे। अत: गुरू जी को कहीं भी कोई ऐसी जगह नहीं मिली जहां रैन बसेरा किया जा सके। अत: गुरुदेव ने भाई मरदाना जी को कहा–चलो और आगे बढ़ते चलो। हमें एक भक्त याद कर रहा है। आज हम उस के यहाँ ठहरेंगे। भाई जी मन ही मन में सोच रहे थे कोई विशेष भक्त होगा जिस के यहाँ गुरुदेव ठहरना चाहते हैं, चलो, भूख बहुत लगी है वहीं जाकर भोजन करेंगे। परन्तु गुरुदेव तो धीरे–धीरे पूरे नगर को पार कर गए, कहीं रुके नहीं। अन्त में एक वीरान स्थल में एक टूटी सी झौंपडी दिखाई दी, जिस में टिम–टिमाता हुआ एक दीपक जल रहा था। गुरुदेव वहीं रुक गये तथा आवाज लगाई– "सत्करतार–सत्करतार"।। अन्दर से दर्द से कराहने की आवाज आई और उस ने कहा, "आप कौन हैं? मैं बिमार, कुष्ट रोगी हूँ, मुझे संक्रामक रोग है, अत: मेरे निकट किसी का आना उस के लिए हितकर नहीं है।" किन्तु गुरुदेव ने उत्तर दिया– "तुम इस बात की चिन्ता न करो, हम तुम्हारी सहायता करना चाहते हैं।" उत्तर में कुष्ट रोगी ने कहा–जैसी आप की इच्छा है, परन्तु मेरे निकट बदबू के कारण कोई भी रुक नहीं पाता।

गुरुदेव ने उस झौंपडी के भीतर अपना थैला इत्यादि रखा तथा भाई मरदाना जी से कहा–आप रबाब बजाकर कीर्तन प्रारम्भ करें, मैं आग जला कर इस कुष्ट के उपचार के लिए पानी उबाल कर दवा तैयार करता हूँ। तब गुरुदेव ने वहाँ पड़े हुए मिट्टी के बर्तन में पानी उबाला तथा थैले में से निकाल कर उस में एक विशेष रसायन मिलाया। इस रसायन के गुनगुने पानी से गुरुदेव ने उस कुष्ट रोगी के घाव धो कर मरहम–पट्टी कर दी। कुष्ट रोगी का दर्द शान्त हो गया। वह आराम अनुभव करने लगा तथा भाई मरदाना द्वारा किए जा रहे कीर्तन में उस का मन जुड़ने लगा। उस समय गुरुदेव ने बाणी उच्चारण की –

जीउ तपतु है बारो बार ॥ तपि तपि खपै बहुत बेकार ॥

जै तनि बाणी विसरि जाइ ॥ जिउ पका रोगी विललाइ ॥

राग धनासरी, पृष्ठ 661

अगले दिन कुष्ट रोगी ने गुरुदेव से कहा- आप ने मुझ पर बहुत बड़ा उपकार किया है, मुझ जैसे पीड़ित की आप ने पुकार सुनी है। वास्तव में तो मेरे निकट भी कोई नहीं आता। बदबू तथा संक्रामक रोग के भय से मेरे लिए खाना बाहर से ही फैंक कर, मेरे परिवार के सदस्य चले जाते हैं।

भाई मरदाना जी ने कुष्ट रोगी से पूछा- "यह रोग आप को किस प्रकार हो गया?" उत्तर में कुष्ट रोगी ने कहा-मैं युवा अवस्था में दीपालपुर के एक गाँव का जमींदार था। धन की अधिकता के कारण मैं विलासिता में पड़ गया। अत: मैं अपने अधि कारों का दुरोपयोग कर मन-मानी करने लगा। जिस से कई अबलाएं मेरी वासना का शिकार हुई। मैंने कई सति औरतों का सतित्व भंग किया। उन्हीं औरतों के श्राप से मुझे कुष्ट रोग हो गया। गुरुदेव ने कहा, "प्रकृति का यह अटल नियम है जो जैसा कर्म करेगा, वैसा ही फल पाएगा।"

जेहा बीजै सो लुणै, करमा संदड़ा खेत ॥

जैसा बीजोगे वैसा ही फल पायोगे। बबूल के बीज बोने से आम के फल तो मिलेंगे नहीं। भले ही देखने में बबूल के फल भी अति सुन्दर दिखाई देते हैं। उन पर कहीं कांटे तो होते नहीं। परन्तु कांटे सूक्ष्म रूप में विद्यमान रहते हैं, जो कि समय आने पर, उस का आकार बड़े होने पर, ही दिखाई देंगे।

गुरुदेव ने आगे बात को समझाते हुए कहा-हमारे शरीर तथा मस्तिष्क की प्रकृति ने अदभुत रचना बनाई है। मनुष्य की अपनी विचारधारा का उस के शरीर पर उसी क्षण प्रभाव पड़ता है। हमारे मस्तिष्क में कुछ विशेष प्रकार की ग्रंथियां हैं जो कि हमारी विचारधारा पर प्रतिक्रिया स्वरूप उत्तेजित होकर एक विशेष प्रकार के तरल (हारमोनस) उत्पन्न करती हैं। उदाहरण के लिए जब हम भावुक होते हैं तो रूदन से आखों में आंसू उत्पन्न हो जाते हैं। जब हममें स्वादिष्ट भोजन का लोभ जागता है तो मुँह में पानी आ

जाता है। ठीक उसी प्रकार जब हम मन-मस्तिष्क एकाग्र कर प्रभु नाम में लीन हो जाते हैं तो उस समय मस्तिष्क में एक विशेष प्रकार की ग्रन्थियों द्वारा उत्पन्न रस, 'अमृत' होता है, जिस से व्यक्ति विशेषत: आनंदित होता है तथा व्यक्ति तेज-प्रतापी और नीरोग हो जाता है। किन्तु इस के विपरीत यदि कोई मनुष्य अपना ध्यान विकारों में केन्द्रित कर, उस में संलग्न रहता है, तो उस के मास्तिष्क में विष उत्पन्न होता है। जिस के विषाणुओं से शरीर असाध्य रोगों से पीड़ित हो जाता है।

यह सुनकर कुष्ट रोगी कहने लगा- हे ! गुरुदेव जी, आप ठीक कह रहे है। मैं धन-यौवन की आंधी में केवल विकारों की ही बातें सोचा करता था। यहाँ तक की संसारिक रिश्ते नातों का भी ध्यान नहीं करता था, बस एक ही धुन आठों पहर विलासिता की समाई रहती थी, जिस के परिणाम-स्वरूप धीरे-धीरे मेरे शरीर में विष उत्पन्न हो गया और जिस ने मेरा शरीर गलाकर कुष्ट बना दिया।

गुरुदेव ने कहा-यदि तुम प्रायश्चित करते हो तो हम तुम्हें अमृत प्रदान करेंगे जिस से विष का प्रभाव जल्दी समाप्त हो जाएगा और तुम नीरोग हो जाओगे। यह सुनकर कुष्ट रोगी ने उत्तर दिया - यदि आप मुझे इस असाध्य रोग से मुक्ति दिलवाएं तो मैं रहता जीवन सेवा-परोपकार में व्यतीत करूंगा। गुरुदेव ने तब उस से वचन लेकर, उसे मन एकाग्र कर प्रभु चरणों में लीन होने की विधि सिखाई तथा नाम दान दिया। जिस से प्रत्येक क्षण हरि-यश किया जा सके तथा कहा कि यही एक मात्र युक्ति है। शरीर में अमृत उत्पन्न करने की, जिस के आगे सभी प्रकार के विष तुरन्त प्रभाव हीन हो जाते हैं।

गुरुदेव ने कुछ दिन उस कुष्ट रोगी की मरहम-पट्टी जारी रखी तथा भाई मरदाना जी हरि-यश में कीर्तन का प्रवाह चलाते रहे। यह सब देखकर कुष्ट रोगी के परिवार के सदस्यों ने भी गुरुदेव का आभार व्यक्त करते हुए जल-पान की सेवा आरम्भ कर दी। अब कुष्ट रोगी का मन गुरुदेव की बताई विधि-अनुसार प्रभु चरणों में लीन रहने लगा। देखते ही देखते कुष्ट रोगी रोग मुक्त हो गया।

गुरुदेव अब आगे प्रस्थान करने लगे और उस से कहा-लोग आप से प्रश्न करेंगे कि आप किस प्रकार रोग मुक्त हुए हैं तो आप उत्तर में कह देना कि मुझे यहाँ के

स्थानीय फ़कीर शाह सुहागिन ने ठीक किया है। इस पर उस (कुष्ट रोगी) ने पूछा-गुरुदेव जी, ऐसा क्यों? उत्तर में गुरुदेव ने कहा-मैं नहीं चाहता कि मेरे कारण किसी की निन्दा हो या उस की जीविका का साधन छिन जाए।

गुरुदेव के वहाँ से प्रस्थान कर गये तब दीपालपुर के लोगों ने कुष्ट रोगी को स्वस्थ देखा और वे आश्चर्यचकित होने लगे कि यह कुष्ट रोगी असाध्य रोग से कैसे मुक्ति पा गया। पूछने पर वह (कुष्ट रोगी) सभी को बताता कि शाह सुहागिन ने उसे ठीक किया है। प्रत्यक्ष को प्रमाण की आवश्यकता तो थी नहीं। अत: लोग पुन: शाह सुहागिन की स्तुति करने लगे तथा उस की फिर से मान्यता होने लगी। किन्तु शाह सुहागिन यह जानता था कि उस ने कुष्ट रोगी को तो देखा तक नहीं। अत: वह एक दिन कुष्ट रोगी को मिलने दीपालपुर आया और उस ने उस से पूछा, "सच-सच बताओ तुम्हें किस ने ठीक किया है?" तब भी कुष्ट रोगी ने बताया कि उसे शाह सुहागिन ने रोग मुक्त किया है। यह सुनकर शाह सुहागिन फ़कीर ने कहा-शाह सुहागिन तो मैं ही हूँ किन्तु मैंने तो तुझे ठीक नहीं किया, फिर तुम्हारे झूठ के पीछे क्या रहस्य है? उसी कुष्टी ने तब कहा-वास्तव में मुझे बाबा नानक देव जी ने ठीक किया है, परन्तु मुझे उन का आदेश है कि मैं आप का नाम बताऊँ। ऐसा इस लिए कि वह चाहते थे कि आप की पहले की तरह प्रतिष्ठा पुन: बन जाए। यह रहस्य जान कर शाह सुहागिन के मन में गुरुदेव के प्रति रोष जाता रहा, और वह गुरुदेव की उदारता से बहुत प्रभावित हुआ। अत: वह स्वयं गुरुदेव को खोजने निकल पड़ा। लम्बी यात्रा के पश्चात् पाकपटन नामक स्थान के निकट उस की पुन: गुरुदेव से भेंट हुई। उस ने अपने पाखण्ड के लिए गुरुदेव से क्षमा याचना की। उस के पश्चाताप को देखकर गुरुदेव रीझ गए, तथा वास्तविक भक्त बनने की प्रेरणा देकर नाम-दान दिया और अपना अनुयायी मान कर भजन की युक्ति बताई कि इस चंचल मन पर किस प्रकार विजय पाई जाती है।

शेख ब्रह्म जी – (पाकपटन, प० पंजाब)

श्री गुरू नानक देव जी दीपालपुर से पाकपटन पहुँचे। वहाँ पर सूफी फ़कीर बाबा फ़रीद जी, जो बारहवीं शताब्दी में हुए हैं, का आश्रम था। उन दिनों उन की गद्‌दी पर उनके ग्यारहवें उत्तराधिकारी शेख़-ब्रह्म जी बिराजमान थे।

गुरुदेव ने नगर की चौपाल में भाई मरदाना जी को कीर्तन प्रारम्भ करने को कहा। कीर्तन की मधुरता के कारण बहुत से श्रोतागण इकट्‌ठे हो गए। गुरुदेव ने शब्द उच्चारण किया :-

आपे पटी कलम आपि उपरि लेखु भि तूं ॥

एको कहीए नानका दूजा काहे कूं ॥

राग मलार, पृष्ठ 1291

भीड़ को देखकर शेख ब्रह्म जी का एक मुरीद भी वहाँ पहुँच गया। उस ने गुरुदेव के कलाम को सुना, समझा और विचारने लगा कि यह महापुरुष कोई अनुभवी ज्ञानी है। इन की बाणी का भी तत्वसार उनके प्रथम मुरशद फ़रीद जी की बाणी से मिलता है, कि प्रभु केवल एक है उस के अतिरिक्त कुछ भी नहीं। जहां-तहां सब कुछ उसी का प्रसार है। जब वह वापिस आश्रम में पहुँचा तो उस ने यह बात शेख-ब्रह्म जी को बताई कि उनके नगर में कोई पूर्ण-पुरुष आए हुए हैं जो कि गा कर अपना कलाम पढ़ते हैं, जिस का भावार्थ अपने मुरशद फरीद जी के कलाम से मेल खाता है। यह जानकारी पाते ही शेख बह्म जी रह नहीं पाए, वह स्वयं दीदार करने की इच्छा लेकर आश्रम से नगर में पहुँचे। गुरुदेव द्वारा गायन किया गया कलाम उन्होंने बहुत ध्यान से सुना; बहुत प्रसन्न हुए तथा गुरुदेव से अपनी शंकाओं का समाधान पाने के लिए कुछ प्रश्न करने लगे। इस मानव समाज में बुद्धिजीवी कौन-कौन हैं? गुरुदेव ने उत्तर दिया-जो व्यक्ति मन से त्यागी हो परन्तु आवश्यकता अनुसार वस्तुओं का भोग करे। दूसरा प्रश्न था-सबसे बडा व्यक्ति कौन है? गुरुदेव ने उत्तर दिया-वह व्यक्ति जो सुख-दुख में एक सम रहे कभी भी विचलित न हो। उन का अगला प्रश्न था-सब से समृद्धि प्राप्त कौन व्यक्ति है? इस

के उत्तर में गुरुदेव ने कहा–वह व्यक्ति जो तृष्णाओं पर विजय प्राप्त कर सन्तोषी जीवन व्यतीत करे। उन का अन्तिम प्रश्न था–'दीन–दुखी कौन है?' इस के उत्तर में गुरुदेव ने कहा–वह व्यक्ति जो आशा–तृष्णा की पूर्ति के लिए दर–दर भटके। तद् पश्चात् गुरुदेव से शेख ब्रह्म जी के अनुयायी कमाल ने प्रश्न किया–हमें सम्मान किस युक्ति से मिल सकता है? तो गुरुदेव ने उत्तर दिया–दीन–दुखियों की निष्काम सेवा करने से आदर मान प्राप्त होगा। उन का दूसरा प्रश्न था–हम सब के मित्र किस प्रकार बन सकते है? उत्तर में गुरुदेव ने कहा–अभिमान त्याग कर मीठी बाणी बोलो।

गुरुदेव कुछ दिन शेख ब्रह्म जी के अनुरोध पर उन के पास पाकपटन में रहे। गुरुदेव वहां प्रतिदिन सुबह–शाम कीर्तन करते, अपनी बाणी उनको सुनाते तथा शेख फरीद जी की बाणी उन से सुनते। गुरुदेव ने इस प्रकार बाणी का आदान–प्रदान किया तथा वहाँ से शेख़ फ़रीद जी की बाणी संग्रह कर अपनी पोथी में संकलित की।

विदा करते समय शेख़ ब्रह्म जी ने गुरुदेव से प्रार्थना की, कि मुझे ऐसी कैंची प्रदान करें जिस से मेरा आवागमन का रस्सा कट जाए।

इस के उत्तर में गुरुदेव ने कहा सच की कैंची सारे बन्धन काट देती है।

सच की काती सचु सभ सारु ॥

घाड़त तिस की उपर अपार ॥

राग रामकली, पृष्ठ 956

गुग्गा का खण्डन
(बीकानेर, राजस्थान)

श्री गुरू नानक देव जी पाकपटन से अनूपगढ़ होते हुए बीकानेर पहुँचे। वहाँ पर उन्होंने नगर के बाहर एक वृक्ष के नीचे अपना डेरा लगा लिया तथा कीर्तन प्रारम्भ किया। जिसे सुनने के लिए जिज्ञासु एकत्रित हो गए। उन जिज्ञासुओं में कुछ लोग बैरागी भी थे। उन्होंने गुरुदेव की बाणी सुनकर अनुभव किया कि यह महापुरुष साधारण संतों की तरह के नहीं, उन की बाणी जीवन का तथ्य सार प्रदर्शित कर रही है। अत: इन महापुरुषों से आध्यात्मिक मार्ग का ज्ञान प्राप्त होने की संम्भावना है, इस लिए ज्ञान प्राप्ति के लिए निवेदन किया।

यह विचार लेकर एक बैरागी ने गुरू जी से प्रश्न किया– इस मृत्यु–लोक में मनुष्य के आने का क्या प्रयोजन है? उत्तर में गुरुदेव ने कहा–यह मनुष्य जन्म ही एक मात्र ऐसा जन्म है, जिस के स्थल हो जाने पर आवागमन का चक्र समाप्त हो जाता है।

दूसरा वैरागी बोला–यह मनुष्य जन्म किस प्रकार सफल किया जा सकता है? परमेश्वर की प्राप्ति किस विधि से हो सकती है?

जब लगु सबद भेदु नही आइआ तब लगु कालु संताए ॥
अन कोदरु घरु कबहू न जानसि एको दरु सचिआरा ॥
गुर परसाद्धि परम पदु पाइआ नानकु कहै विचारा ॥

राग भैरउ, पृष्ठ 1126

गुरुदेव ने उत्तर देते हुए मधुर बाणी में कहा–प्रभु का नाम ही एक मात्र जीवन सफल करने का साधन है परन्तु आराधना की युक्ति, शब्द–भेद का ज्ञान होना अति आवश्यक है। शब्द के बल पर ही मनुष्य उस सचिदानन्द के द्वार पर पहुँचता है तथा उस की भटकन समाप्त होती है। परन्तु यह सब कुछ प्रभु की कृपा के पात्र बनने से प्राप्त होता है। भावार्थ प्राणी को प्रत्येक क्षण उस प्रभु के दास बनकर जीवन जीना चाहिए।

इस पर बैरागी बोले–गुरुदेव आप ठीक कहते हैं परन्तु यहाँ के निवासी आप की विचारधारा के विपरीत आचरण करते हैं, वे अपने प्रत्येक गांव में गोगा नाम के एक राजपूत फ़कीर की कब्र बना कर उस की पूजा करते हैं। क्या ऐसा करने से किसी फल की प्राप्ति हो सकती है? इस के उत्तर में गुरुदेव ने कहा–किंवदन्तियों अनुसार तो गुग्गा नाम का व्यक्ति, जीवित रहते अपनी माता को प्रसन्न नहीं कर पाया क्योंकि उस की मंगेतर को उस के सौतेले भाई विवाह कर ले गये थे तथा सौतेली माता के श्राप से उस की मृत्यु हुई। ऐसे व्यक्ति मरने के पश्चात् किसी का क्या संवार सकते हैं जो स्वयं जीवन भर सांसारिक झमेलों से परेशान रहे हैं। खैर .... बात समझने की है कि सभी सुखों का दाता एक ही भगवान है जिसे हम अकाल पुरुष कहते हैं अर्थात जो अमर है, जो काल से ऊपर है।

करि किरपा राखहु रखवाले ।। बिनु बुझे पसू भए बेताले ।।

गुरि कहिआ अवरु नही दूजा ।। किसु कहु देखि करउ अन पूजा ।।

राग गउड़ी, पृष्ठ 224

दरगाह ख़्वाजा मूईद्दीन चिश्ती – (अजमेर, राजस्थान)

श्री गुरू नानक देव जी बीकानेर से कुछ दिन की यात्रा के पश्चात् अज़मेर पहुँचे। वहाँ पर प्रसिद्ध पीर खवाजा मुईनउद्दीन चिश्ती का मकबरा है। जिसे ख्वाजा साहब की दरगाह मान कर पूजा जाता है तथा बहुत लोग मनौतियाँ मानते हैं। गुरुदेव ने वहाँ पहुँच कर कीर्तन का प्रवाह प्रारम्भ कर दिया। दरगाह की जयारत करने वाले श्रद्धालु लोगों ने जब गुरुदेव की बाणी सुनी तो बहुत प्रभावित हुए। देखते ही देखते दरगाह की कव्वालियां सुनने आया जन-समूह गुरुदेव की ओर आकृष्ट हो गया। जिस से दरगाह सूनी हो गई। इस के विपरीत गुरुदेव के पास भारी जन समूह संगत रूप में एकत्र होने लगा। यह देखकर पीरखाने के मजावर विचलित हो उठे तथा गुरुदेव से उलझने चल पड़े किन्तु जनता की श्रद्धा देखकर उन से कुछ कहते न बना। उस समय गुरुदेव उच्चारण कर रहे थे :

ध्रिग तिनः का जीविआ जि लिख-लिख वेचहि नाउ ।।

खेती जिन की उजडै खलवाड़े किआ थाउ ।।

सचै सरमै बाहरे अगै लहहि न दादि ।।

राग सारंग, पृष्ठ 1245

इन पंक्तियों में गुरुदेव कह रहे थे कि हे धर्म के ठेकेदारो तुम लोग उस अल्लाह का नाम लिख-लिख कर ताबीज रूप में बेच रहे हो। ऐसे में जनता को मूर्ख बना कर जो लोग जीविका कमाते हैं, उनके शुभ कर्मों की भी खेती उजड़ जाती है। जब खेती ही उजड़ जाएगी तो खलियान में कुछ प्राप्ति की आशा करना व्यर्थ है। इस लिए सभी कार्य

सोच समझ कर करने चाहिए जिस से परीश्रम निष्फल न जाए। गुरुदेव की विचारधारा सुनकर मजावर कहने लगे-यह कैसे सम्भव है, हमें प्राप्ति न हो क्योंकि हम शरियत मुताबिक पाँचों कर्म-कलमा, निमाज़, रोज़ा, ज़कात और हज करते हैं। गुरुदेव ने इस के उत्तर में कहा-यह सब कार्य तुम शरीर से करते हो। इनको करते समय मन तुम्हारा मन तुम्हारे साथ नहीं होता। यदि मुसलमान कहलाना चाहते हो तो ये विधि अपनाओ :-

मिहर मसीति सिदकु मुसला हकु हलालु कुराणु ॥
सरम सुंनति सीलु रोजा होहु मुसलमानु ॥
करणी काबा सचु पीरु कलमा करम निवाज ॥
तसबी सा तिसु भावसी नानक रखै लाज ॥ १ ॥

राग माझ, पृष्ठ 140

गुरुदेव द्वारा सच्चे मुसलमान की वास्तविक परिभाषा जान कर संगत में से कुछ बुद्धिजीवी बहुत प्रभावित हुए। उन्होंने मुजावरों के पाखण्ड तथा आडम्बरों के विरुद्ध आवाज उठाई। जिस कारण वह गुरुदेव की शरण में आ गए तथा प्रार्थना करने लगे, हम फ़कीर लोग हैं, आप हमारे अवगुणों का परदा-फाश न करें।जिस से हमारी रोजी-रोटी चलती रहे। गुरुदेव ने तब उन्हें वास्तविक फ़कीर के लक्षण बताएं कि आप यदि ऐसा ही चाहते हैं तो अपने आचरण में फ़कीरी के लक्षण उत्पन्न करो।

नफुस शैतान, गुस्सा हराम, कच्च दुनियां, सच्च दरवेश ॥

अदल बादशाह, फ़ाजुल फ़कीरान ॥ मंजिल मुसाफरान, राजल काफ़रान॥

मिहर पीरां, सिहर कीरा, फ़कीरी सबूरी, ना सबूरी तां मक्कर ॥

(जन्म साखी)

पुष्कर तीर्थ – (अजमेर, राजस्थान)

श्री गुरू नानक देव जी मूइन-उद्-दीन चिश्ती के मकबरे से होते हुए वहाँ से चार कोस दूर हिन्दू तीर्थ पुष्कर पहुँचे। हिन्दू विचारधारा के अनुसार अठसठ तीर्थो में से अजमेर को भी एक माना जाता है। ऐसा भी माना जाता है कि वहाँ पर स्नान करना अनिवार्य है नहीं तो तीर्थ यात्रा अधूरी रह जाती है। गुरुदेव ने एक रमणीक स्थल पर मरदाना जी को कीर्तन प्रारम्भ करने को कहा तथा स्वयं उच्चारण करने लगे :-

नावण चले तीरथी मनि खोटै तनि चोर ॥

इकु भाउ लथी नातिआ दोइ भा चड़ीअसु होर ॥

बाहरि धोती तूमड़ी अंदरि विसु निकोर ॥

साध भले अणनातिआ चोर सि चोरा चोर ॥

राग सूही, पृष्ठ 789

मधुर बाणी सुनकर तीर्थ यात्रियों की भीड़ कीर्तन श्रवण करने के लिए धीरे-धीरे एकत्रित होने लगी। सभी लोग गुरुदेव से प्रवचन सुनाने के लिए आग्रह करने लगे। गुरुदेव ने तब कहा-हे भक्तजनो! ईश्वर की प्राप्ति तीर्थो के स्नान करने मात्र से नहीं होती, क्योंकि वह तो मन की पवित्रता पर रीझता है। हम केवल शरीर की पवित्रता तक सीमित रहते हैं और अपने को धन्य मान लेते हैं, जब कि हमें अपना ध्यान मन की शुद्धता पर केन्द्रित करना चाहिए, जो कि हम नहीं करते। प्राय: देखा गया है कि तीर्थो पर मन पवित्र करने के स्थान पर अपवित्रता हाथ लगती है क्योंकि मन चंचल है। उस को नियन्त्रण करना अति कठिन है। वास्तव में तीर्थो पर केवल शरीरिक रूप से स्नान करना वैसा ही है जैसे किसी तुमड़ी (एक विवेश प्रकार का कडवा फल) को स्नान करवाना। तुमड़ी को जल से धो देने से उस के अन्दर की विष नहीं जाती वह सदैव कडवापन लिए रहती है। इस लिए वास्तविक साधु तीर्थो के स्नान के बिना भी, यूं ही भले हैं क्योंकि तीर्थो के स्नान से उनके मन में विकार तो नहीं पैदा होते।

भाई मरदाना जी और कंदमूल–अजमेर से चित्तौड़गढ के रास्ते में (राजस्थान)

श्री गुरू नानक देव जी अजमेर से चितौड़गढ प्रस्थान कर रहे थे तो रास्ते मे विशाल वीराने रेगिस्तान से गुजरना पड़ा। वहाँ जन जीवन नाम मात्र को भी न था। अत: चलते–चलते भाई मरदाना को भूख–प्यास सताने लगी। उन्होंने गुरुदेव से अनुरोध किया कि उस से अब चला नहीं जाता कृपया पहले उसकी भूख–प्यास मिटाने का प्रबन्ध करें। गुरुदेव ने उन को सांत्वना दी और कहा–ध्यान से देखें कहीं न कहीं बनस्पति दिखाई देगी, बस वहीं पानी मिलने की सम्भावना है। भाई मरदाना को कुछ दूरी चलने के पश्चात् आक के पौधे उगे हुए दिखाई दिये। गुरुदेव ने उन्हें कहा–इन पौधों के नीचे ढूंढने पर एक विशेष प्रकार का फल प्राप्त होगा जो कि तरबूज की तरह पानी से भरा होता है। उस के पानी को पी कर प्यास बूझा लें तथा यहीं कहीं भूमिगत कंदमूल फल भी प्राप्त होगा जिसे अवश्यकता अनुसार सेवन कर भूख से तृप्ति प्राप्त कर सकते हो। भाई मरदाना ने ऐसा ही किया उन्हें यह दोनों प्रकार के फल आक के पौधों के मध्य भूमिगत मिल गए। किन्तु कंदमूल फल का कुछ भाग बचने पर पल्लू में बान्ध लिया। जब चलते–चलते उन्हें पुन: भूख अनुभव हुई तो उस फल को वह दोवारा सेवन करने लगे। परन्तु हुआ क्या? अब तो वह कंदमूल फल बहुत कडुवा हो गया था। गुरुदेव ने तब कहा–प्रकृति का कुछ ऐसा नियम है कि यह फल ताजा ही प्रयोग में लाया जा सकता है। काटकर रखने पर इस में रसायन क्रिया होने के कारण कडुवा–पन आ जाता है अर्थात–त्यागी पुरुषों को सन्तोष करना चाहिए। जिस ने आज दिया है वह कल भी देगा। यह बात ध्यान रख कर वस्तुओं का भोग करना चाहिए। अत: साथ में बांधने की कोई आवश्यकता नहीं।

अवतारवाद का खण्डन – (चित्तौड़गढ़, राजस्थान)

श्री गुरू नानक देव जी अजमेर से प्रस्थान कर चित्तौड़गढ़ की ओर बढ़े। रास्ते में विशाल वीरान होने के कारण कहीं भी बस्ती नहीं थी इस लिए पानी न मिलने के कारण भाई मरदाना जी को बहुत कष्ट उठाने पडे। अन्त में गुरुदेव चितौड़गढ़ पहुँच गए। वहाँ के नागरिकों ने बिना काफिले के वहाँ पहुँचने पर आश्चर्य व्यक्त किया तथा वहाँ पधारने का उद्देश्य पूछा। उत्तर में गुरुदेव ने कहा – हम केवल एक पारब्रह्म – परमेश्वर के उपासक हैं। अत: हम उसी के गुण गान करने के लिए विश्व – भ्रमण करने निकले हैं। यह सुनकर वहाँ की जनता ने कहा – हमारे यहाँ तो 24 अवतार माने जाते हैं तथा उन की पूजा की जाती है, जिस के लिए हमने पहले तीर्थकंर का स्तम्भ भी निर्माण कर रखा है और उसी की उपासना करते हैं। इस पर गुरुदेव ने भाई मरदाना जी को कीर्तन करने को कहा और गुरू जी ने बाणी उच्चारण की :–

एकम एकंकार निराला ॥
अमर अजोनी जाति न जाला ॥ अगम अगोचरु रूपु न रेखिआ ॥
खोजत खोजत घटि घटि देखिआ ॥ जो देखि दिखावै तिस कउ बलि जाई ॥
गुर परसादि परम पदु पाई ॥

राग बिलावलु, पृष्ठ 838

उपरोक्त बाणी सुनकर श्रोताओं ने बहुत से प्रश्न किये जिस का उत्तर गुरुदेव ने अपने प्रवचनों में इस प्रकार दिया :–

समस्त ब्रह्माण्ड का निर्माता एक प्रभु (ईश्वर) ही है, जो एक मात्र अमर, माता के गर्भ से जन्म न लेने वाला, जिस का रंग रूप नहीं, वह निराकार, ज्योति स्वरूप, प्रत्येक प्राणी मात्र में रमा हुआ है। इस के विपरीत अवतार तो माता की कोख से जन्म लेते हैं तथा वे अमर नहीं क्योंकि उन का मरण भी निश्चित है। अर्थात जो जन्म – मरण में आता है वह प्रभु (पारब्रह्म परमेश्वर) नहीं हो सकता क्योंकि वह आवागमन के चक्र में बंधा हुआ है।

नाथद्वार (पण्डों का ऐश्वर्य) – (उदयपुर, राजस्थान)

श्री गुरू नानक देव जी चितौड़गढ़ से प्रस्थान कर उदयपुर पहुँचे। यहाँ श्री कृष्ण जी का मन्दिर 'नाथ द्वार' नाम से प्रसिद्ध है। जन–साधारण अपार श्रद्धा के कारण धन सम्पदा भेंट करने में किसी से पीछे रहना नहीं चाहते। अत: वहाँ के पुजारी बहुत धनी थे। धन की अधिकता के कारण सभी पण्डे अभिमानी तथा ऐश्वर्य का जीवन जीने में ही व्यस्त रहते थे। पुजारियों ने जब गुरुदेव को देखा तो उन्होंने सोचा यह कोई साधारण साधु है, कोई सेठ–व्यापारी तो है नहीं, जिन से कुछ धन मिलने की सम्भावना हो। अंत: उन्होंने गुरुदेव को मन्दिर के निकट नहीं आने दिया। उल्टे कुछ रूखे शब्दों से सम्बोध न किया। भाई मरदाना जी ने उन को ध्यान से देखा तो महसूस किया कि वह लोग उन्हें तुच्छ जान कर दुर्यवहार कर रहे हैं। दुर्यवहार का रहन–सहन बहुत वैभव पूर्ण था। उन्होंने बहुत कीमती रेशमी वस्त्र धारण किए हुए थे तथा इत्र–फुलेल लगा कर हीरों की मालाएँ पहन रखी थी। इस प्रकार के धन के प्रदर्शन को भाई मरदाना ने धर्म–कर्म के विरुद्ध जान कर, गुरुदेव से प्रश्न किया– "हे गुरुदेव जी! इन पण्डों की मति धन के नशे में मलीन हो गई है। मनुष्य को मनुष्य ही नहीं समझते। जब कि उन का कर्तव्य है अभ्यागत का स्वागत करना तथा उन की सुख सुविधा का प्रबन्ध करना। किन्तु इन की प्रत्येक बात के पीछे स्वार्थ झलक रहा है। उत्तर में गुरुदेव ने भाई मरदाना को कीर्तन प्रारम्भ करने को कहा और शब्द उच्चारण करने लगे –

चोआ चंदनु अंकि चड़ावउ ।।
पाट पटंबर पहिरि हढावउ बिनु हरिनामु कहा सुखु पावउ ।।
किआ पहिरउ किआ ओढ़ि दिखावउ ।।
बिनु जगदीस कहा सुख पावउ ।। रहाउ ।।

राग गउड़ी, पृष्ठ 225

गुरुदेव का कीर्तन सुनने यात्रियों की भीड़ उमड़ पड़ी। सभी लगे हरियश सुनने। यह देखकर पण्डों को चिन्ता हुई कि यात्री कहीं सभी धन इन्हीं साधुओं को न अर्पित कर दें। इस उद्देश्य से वह इकट्ठे होकर विचार करने लगे कि गुरुदेव को वहाँ से कैसे हटाया जाए?

तभी एक जिज्ञासु ने गुरुदेव से प्रश्न किया- आप की बाणी अनुसार माया तुच्छ है। इस से सुख प्राप्त नहीं हो सकते, केवल हरिनाम में ही सुख छिपे पड़े हैं। परन्तु यहाँ पर तो चारों ओर माया का ही बोल बाला है। फिर हम किस बात पर विश्वास करें।

गुरुदेव ने अपने प्रवचनों में उत्तर दिया- "माया का जो भी प्रसार आप देख रहे हैं वह सुहावनी तो प्रतीत होता है किन्तु इस के पीछे समाप्त न होने वाला कलेश है। इस लिए इन को भोगते समय हृदय में नाम का वास होना अति आवश्यक है। यदि प्रभु नाम का अंकुश हम से छूट गया तो हाथी रूपी मन लोभ में भटकता फिरेगा, जिस में दुख ही दुख है।

जैनी साधु- (आबू पर्वत, राजस्थान)

श्री गुरू नानक देव जी उदयपुर से प्रस्थान कर आबू नगर पहुँचे। वहाँ जैन साधुओं के प्रसिद्ध मन्दिर हैं। गुरुदेव की जब जैन साधुओं से भेंट हुई तो उन के असामाजिक जीवन से गुरुदेव खिन्न हुए, क्योंकि जैन अहिंसा परमो-धर्म के चक्र में पड़कर, पानी का प्रयोग भी नहीं के बराबर करते थे। उन का विश्वास था कि स्नान करने से पानी में जीवाणु मर जाते हैं, इस से जीव हत्या हो जाती है। इस भ्रम के कारण वे साधु मलीन रहते थे, जिस के कारण उन के पास से दुर्गंध आती थी। इस के अलावा वे साधु अपनी विष्ठा भी तिनके से फैला देते थे कि कहीं कोई जीव विष्ठा में उत्पन्न होने पर मर न जाएं तथा सिर के बाल भी एक-एक कर नोच कर उखाड़ते रहते थे कि कहीं कोई जीव पसीने से न उत्पन्न हो जाए। जब भी कहीं आते-जाते तो पांव में जूता नहीं पहनते ताकि कोई जीव पांव के नीचे दबकर मर न जाए।

इस प्रकार के असामाजिक, अंधविश्वासी, भ्रम पूर्ण तथा अवैज्ञानिक दृष्टिकोण वाला जीवन देखकर गुरुदेव ने उन लोगों को बहुत फटकारा तथा कहा तुम्हारा मानव होना भी समाज के लिए एक कलंक है।

वहां पर जैन साधुओं के कई सम्प्रदाय थे। उन लोगों के अपने अलग-अलग विश्वास तथा मान्यताएं थी, जिस कारण उन सभी का जीवन एक सा न था। कई तो वस्त्र भी नहीं पहनते थे, कई अनाज का सेवन नहीं करते थे, कई मौन व्रत रखते थे तथा कई जूठन खा कर उदर पूर्ति को पुण्य कार्य समझते थे। उन सब को देखकर गुरुदेव ने अपनी वाणी में उन के प्रति शब्द उच्चारण किया -

बहु भेख कीआ ।। देही दुखु दीआ ।। सहु वे जीआ, अपणा कीआ ।।
अंनु न खाइआ, सादु गवाइआ ।। बहु दुखु पाइआ दूजा भाइआ ।।
बसत्र न पहिरै ।। अहिनिसि कहरै ।। मोनि विगूता ।। किउ जागै गुर ।। बिनु सूता ।।
पग उपेताणा ।। अपणा कीआ कमाणा ।।
अलुमलु खाई सिरि छाई पाई ।। मूरखि अंधै पति गवाई ।।
राग आसा, पृष्ठ 467

गुरुदेव ने उन साधुओं के साथ अपनी विचार गोष्ठियों में कहा- "तुम लोग बहुत भेष धारण करके पाखण्ड करते हो जिसका कि धर्म से दूर का सम्बन्ध भी नहीं। तुम्हारे ये कार्य केवल अपने शरीर को बिना कारण कष्ट देने के सवाए और कुछ भी नहीं। आध्यात्मिक प्राप्ति शून्य के बराबर भी नहीं। उन क्रियाओं से दुख भोगने के अतिरिक्त कुछ भी हाथ नहीं लगता। जो अनाज का त्याग करते हैं वे केवल स्वाद ही खोते है। जो वस्त्र धारण नहीं करते, वे बिना कारण गर्मी-सर्दी में कष्ट भोगते हैं। जो मौन रहते है अर्थात् किसी से बात-चीत नहीं करते वे गुरू विहीन जीवन जीते हैं। जो पांव में जूते नहीं पहनते, वे बिना कारण पांव में गड़ने वाले कंकर पत्थर, कांटों से कष्ट भोगते हैं। जो दूसरों का जूठन खाते हैं वे समाज की दृष्टि से गिर जाते हैं और अपना स्वाभिमान खो देते हैं।

गया जी का विकल्प स्थान – (भीम उडयार, गुजरात)

श्री गुरू नानक देव जी राजस्थान के आबू नगर से प्रस्थान कर गुजरात के भीम उड़यार नगर में पहुँचे। यह स्थान गया जी के विकल्प के रूप में पूजनीय माना जाता है। गुरुदेव ने वहाँ पर अपना डेरा नारायण सरोवर के किनारे डाल दिया तथा तीर्थ यात्रियों, (जो कि पित्तरों के लिए पिंडदान करके उन को पूजना चाहते थे) को वास्तविक पूजा, बताने का कार्यक्रम प्रारम्भ कर दिया। गुरुदेव ने भाई मरदाना को कीर्तन आरम्भ करने के लिए कहा और स्वयं शब्द उच्चारण करने लगे।

सुरती सुरति रलाईऐ एतु । तनु करि तुलहा लंघहि जेतु ।।

अंतरि भाहि तिसै तू रखु । अहिनिसि दीवा बलै ।।

ऐसा दीवा नीरि तराइ ।। जितु दीवै सभ सोझी पाइ ।।

राग रामकली, पृष्ठ 878

गुरुदेव ने अपने प्रवचनों में जन-साधारण में जागृति लाने के लिए कहा- "पानी के ऊपर एक दीपक जला देने मात्र से क्या होगा? जब तक मानव हृदय में ज्ञान रूपी प्रकाश नहीं होता, जिस ने कि उसे सभी प्रकार की सूझ प्रदान की है। जब मनुष्य को यह ज्ञान हो जाए कि उसके कर्म ही प्रधान हैं, वही उनके साथ जाऐंगे तथा उन्हीं के आधार पर निर्णय होगा तो वह कर्म-काण्डों में न पड़कर जीवन जीने की विधि सीखने पर ध्यान केन्द्रित करेगा। अर्थात वह अपनी सुरति प्रभु चरणों में एकाग्र करेगा जिस से तन भी पवित्र होकर स्वीकार्य हो जाता है।

दलदल क्षेत्र का पुनरवास– (लखपत नगर, गुजरात)

श्री गुरू नानक देव जी भीम उड़यार से लखपत नगर नामक स्थान पर पहुँचे। यह स्थल अरब सागर के निकट कच्छ की खाडी में स्थित है। अत: वहाँ पर छ: माह समुद्र का खारा पानी धरती पर फैल जाता है। किन्तु छ: माह धरती साधारण रूप में सूखकर वीरान सी पड़ी रहती है। कहीं–कहीं दलदल क्षेत्र की सी स्थिति बनी रहती है। इस लिए वहाँ पर जन संख्या बहुत कम है परन्तु समुद्र से व्यापार की दृष्टि से आवागमन बना रहता है। गुरुदेव के वहाँ पहुँचने पर लोगों ने अपनी कठिनाइयां उन के सामने रखी कि उनके घरों को अकसर समुद्री तूफानों के कारण बहुत क्षति उठानी पडती है। सदैवभय सा बना रहता है। इस लिए यहाँ प्रगति करना असम्भव है।

गुरुदेव ने उन्हें एक सुरक्षित स्थान चुन कर, वहाँ पर नया नगर बसा कर, स्थाई रूप से बस जायें। तथा परामर्श दिया कि हम सब मिलकर प्रभु चरणों में प्रार्थना करेंगे। तत्पश्चात् नये नगर की आधारशिला रखेंगे। सर्व–प्रथम इस नगर में एक धर्मशाला का निर्माण करना होगा, जिस में आए–गए अतिथि के लिए भोजन की व्यवस्था हो सके। इस प्रकार हम सब पर प्रभु–कृपा अवश्य ही होगी और हम प्रगति के पथ पर चल पडेंगे। गुरुदेव की बताई इस विधि से स्थानीय जनता ने कार्य प्रारम्भ कर दिया। जिस से नये नगर लखपत की उत्पत्ति सम्भव हुई तथा वहाँ की जनता का सपना साकार हो गया।

वाम मार्गीयों को उपदेश– (भुज नगर, गुजरात)

श्री गुरू नानक देव जी लखपत के निवासियों की कठिनाइयों का समाधान कर कच्छ रियासत के प्रमुख नगर भुज में पहुँचे। यह स्थान वाममार्गियों का केन्द्र था, जो कि आध्यात्मिक जीवन न जीकर व्याभिचार के जीवन को धर्म की संज्ञा देकर जन–साधारण को गुमराह कर रहे थे। गुरुदेव ने उन को फिटकारा और कहा–अपराधी जीवन जीने वाला व्यक्ति कभी भी सत्य के मार्ग का मुसाफिर नहीं हो सकता। अपराधी जीवन जीना अपने आप को धोखा देना है, जिस का अन्त पश्चाताप–पूर्ण

होता है। यदि कोई वास्तव में धार्मिक बनना चाहता है तो उसे पहले अपना मन जीतना होगा। मन पर विजय प्राप्त करने से संसार पर विजय स्वयं ही हो जाती है। जब तक हम चंचल प्रवृतियों के पीछे भागते रहेंगे, हमारी तृष्णा और बढ़ती रहेगी, जिस से हमें कष्टों के अतिरिक्त कुछ प्राप्त होने वाला नहीं। प्रभु मिलन का एक मात्र रास्ता अपनी तृष्णाओं पर अंकुश लगाना ही है।

आशा पूर्णनी देवी – (मांडवी नगर, गुजरात)

श्री गुरू नानक देव जी अपने साथियों सहित भुज नगर से मांडवी पधारे। वहाँ एक काली देवी का प्रसिद्ध मन्दिर था। जिसे स्थानीय निवासी आशा पूर्णी देवी कह कर पुकारते थे। उस मन्दिर की पुजारिन ने गुरुदेव के विषय में यात्रियों से बहुत कुछ सुन रखा था। जो लोग लखपत नगर से वहाँ लौटते, गुरुदेव की स्तुति में वे कहते कि गुरू नानक कलाधारी पूर्ण पुरुष हैं। अत: उन के तेज प्रताप के आगे सभी को झुकना ही पड़ता है, क्योंकि वह तर्क संगत जीवन जीने की युक्ति बताते हैं तथा अनावश्यक कर्म काण्डों, पाखण्डों से दूर रहने की प्रेरणा देते हैं। यह सब जान कर उस पुजारिन को अपनी जीविका की चिन्ता हुई कि यदि गुरुदेव यहाँ पधारें तो उन के उपदेशों के आगे मेरा तान्त्रिक पाखण्ड टिकने वाला नहीं। अत: इस से पहले कि वह मुझे पराजित करे तथा मेरे ढ़ोंग का भांडा फोड़ें, मैं ही उन से प्रार्थना कर अपनी सुरक्षा मांग लूँ। यह विचार कर वह उचित समय देखकर गुरुदेव के पास पहुँची। तब भाई मरदाना जी कीर्तन कर रहे थे तथा गुरू जी समाधि में लीन थे। वह पुजारिन भी कीर्तन की मधुरता से प्रभावित हुई और उस की सुरति भी शब्द में एकाग्र हो गई। अत: आनंद विभोर होकर सुन्न अवस्था में स्थिर हो गई। गुरुदेव ने तब ही शब्द उच्चारण किया –

बिनु गुर सबद न छूटसि कोइ ॥

पाखंडि कीनै मुकति न होइ ॥

राग बिलावलु, पृष्ठ ८३९

और शब्द की व्याख्या करते हुए गुरू जी ने अपने प्रवचनों में संगत को सम्बोधन करते हुए कहा, "पाखण्डी मनुष्य आवागमन के चक्र में बंधा रहता है तथा कर्म फल उसे भोगने ही होते हैं। जब कि सतगुरु की शिक्षा पर निःस्वार्थ और परोपकारी जीवन जीने वाला प्रभु चरणों में अपना स्थान बना लेता है।

यह सुनकर काली मन्दिर की पुजारिन गुरुचरणों में नतमस्तक हो गई तथा विनती करने लगी, "जैसा सुना था वैसा ही पाया है। किन्तु मेरी जीविका का साधन यही पाखण्ड है, मैं इसे त्याग दूँ तो मेरी जीवन क्रिया ही समाप्त हो जाएगी। हे गुरुदेव, मुझे इस दुविधा से मुक्ति दिलवाएं तथा मेरा मार्ग दर्शन करें।"

गुरुदेव ने उसे सांत्वना देते हुए कहा, "जो मनुष्य सत्य के मार्ग पर चलने का प्रयत्न प्रारम्भ कर देता है, प्रभु उस का साथ देते हैं। जीविका के समाप्त होने का तो प्रश्न ही नहीं उठता। वास्तव में तुम्हारी शंका निराधार है। तुम सत्य के मार्ग को अपना कर तो देखो, कुछ एक कठिनाइयां अवश्य आएंगी परन्तु जल्दी ही सब सामान्य हो जाएगा। यदि तुम उस सर्व शक्तिमान प्रभु पर अपना दृढ़ विश्वास बना लो तो वह अवश्य तुम्हारी सहायता करेंगे और अन्त में तुम विजयी होकर पाखण्डों के आडम्बर से छुटकारा प्राप्त कर एक ईश्वर के प्रचार-प्रसार में अपना योगदान डालने लग जाओगी था इन काल्पनिक देवी-देवताओं से छुटकारा प्राप्त कर बैकुण्ठ-धाम को प्राप्त कर सकोगी।"

इस आश्वासन को प्राप्त कर पुजारिन ने पूछा, "हे गुरुदेव मुझे अब क्या करना चाहिए?"

गुरुदेव ने तब कहा, "एक धर्मशाला बनवाकर उस में ईश्वर को एक और सर्वशक्तिमान होने का प्रचार करो, कि वहीं कण-कण में समाया, रोम-रोम में रमा राम है। इस के अतिरिक्त सभी कर्म काण्ड मनुष्य को भटकने पर विवश कर देते हैं।" पुजारिन ने इस कार्य के लिए गुरुदेव से आशीर्वाद मांगा। गुरुदेव ने कहा-जिस प्रभु का कार्य करोगी वह शक्ति प्रदान करेंगे और तुम्हें हर अपने उद्देश्य में सफलता प्राप्त होगी। क्योंकि प्रभु को प्रसन्न करने की कुंजी है 'आप जपो अवरा नाम जपावो' ।।

पुजारिन कहने लगी, "हे गुरुदेव ! मैं जब आप के पास आ रही थी तो उस समय मेरा प्रयोजन था कि मैं आप से विनती कर अपना क्षेत्र सुरक्षित करवा लूं ताकि आप मेरे

कार्य में हस्तक्षेप न करें। क्योंकि आप के पास समस्त विश्व का विशाल भू-भाग है तथा आप ने सभी पर विजय पाई है। अत: आप का कार्य क्षेत्र बहुत विस्तृत है। कृपया मुझे क्षमा करें और मुझे मेरे हाल पर छोड़ दें, किन्तु मैं बहुत बड़ी भूल में थी क्योंकि धन और नाम कमा कर अपनी मान्यताएं बढ़ानी केवल अभिमान को बढ़ावा देने के अतिरिक्त कुछ भी नहीं। वास्तविक आनंद तो त्याग तथा प्रभु चिन्तन में है जो कि मैंने आप से प्राप्त किया है।"

गुरुदेव ने उसे समझाया कि किसी भी फल की प्राप्ति उस के अच्छे साधनों से होती है, यदि साधन गलत जुटाऐंगे तो प्राप्तियां भी अच्छी नहीं हो सकती। भले ही लक्ष्य उत्तम हो, तांत्रिक विद्या केवल मनो-विकार को बढ़ावा देती है। जिस से मनुष्य पथ-भ्रष्ट हो जाता है तथा अंधे कूएं में गिरता ही चला जाता है। वास्तविक सुख तो मन की चंचल प्रवृतियों पर नियन्त्रण कर निष्कर्म होकर एक ईश्वर के ध्यान में मग्न होने में है।

कृतिम चिन्हों का खण्डन- (द्वारका, गुजरात)

श्री गुरू नानक देव जी, मंडी, सामका, मुन्देर तथा अंजार नगर में प्रचार करते हुए मांडवी नगर के आशा पूर्णी देवी मन्दिर की पुजारिन को अपना अनुयायी बनाकर, शिक्षा का प्रसार करने के लिए एक नाव द्वारा कच्छ की खाडी पार कर द्वारिका-धाम पहुँचे। यह स्थान श्री कृष्ण जी की राजधानी के रूप में प्रसिद्ध है। गुरुदेव ने भाई मरदाना जी को बताया-यह सोरठ देश है (सौराष्ट्र)। यहाँ संगीतज्ञों का एक विशेष घराना रहता है जो राग सोरठ की विशेष धुन में गायन करते हैं। यहाँ की किवदंतियों के अनुसार बीजा तथा सोरठ प्रेमियों की प्रेम गाथा जो भट्ट कवि वारों में गाते हैं, उसी धुन को सोरठ राग कहते हैं। भाई मरदाना जी ने इसी राग में बाणी सुनने की इच्छा व्यक्त की गुरुदेव बाणी उच्चारण करने लगे -

सोरठि सदा सुहावणी जे सचा मनि होइ ॥

दंदी मैलु न कतु मनि जीभै सचा सोइ ॥

समुरै पैइऐ भै वसी सतिगुरु सेवि निसंग ॥

परहरि कपडु जे पिर मिलै खुसी रावै पिरु संगि ॥

राग सोरठि, पृष्ठ 642

कीर्तन श्रवण करने के लिए अनेक श्रोतागण एकत्रित हो गए। जिन में से कुछ एक के गले में भगवान श्री कृष्ण की मूर्तियां लटक रही थी तथा कुछ एक के बदन पर गदा, शंख, त्रिशूल, चक्र इत्यादि के चिन्ह धातु को गर्म कर दाग कर बनवाए हुए थे। जैसे कि घोडों इत्यादि जीवों को दागा जाता है। उन लोगों का विश्वास था कि वह चिन्ह शरीर पर बनवाने मात्र से व्यक्ति ईश्वर भक्त बन जाता है तथा उन पर प्रभु की कृपा होती है।

इस अंधविश्वास को देख कर गुरुदेव ने कहा – इन चिन्हों से परमात्मा प्रसन्न नहीं होता, वह तो मनुष्य के पवित्र हृदय को देखता है। पत्थर की मूर्तियां गले में लटकाने मात्र से कोई भक्त नहीं बन जाता। इन बातों का आध्यात्मिक जीवन से दूर का भी रिश्ता नहीं, यह तो केवल जग दिखावा तथा पाखण्ड है। यदि हम मूर्ति गले में न लटका कर हृदय में प्रभु – विरह का दर्द रखें तो भी वह व्यक्ति को लक्ष्य के निकट ला खड़ा कर देगा। इस प्रकार शरीर पर धार्मिक चिन्ह उकरवाने के स्थान पर हृदय से यदि प्रबल बन सके तो उसके आध्यात्मिक जीवन के सफल होने की सम्भावना उज्ज्वल हो जाएगी।

मूर्तियों का विसर्जन – पोरबन्दर (सुदामा नगरी, गुजरात)

श्री गुरू नानक देव जी गुरुमत सिद्धांतों का प्रचार करते हुए आगे बढ़ते हुए सुदामा नगरी पोरबन्दर पहुँचे। उन दिनों दिवाली के पश्चात् कृष्ण पक्ष की षष्ठी होने के कारण दीपावली में प्रयोग हो चुकी मूर्तियों का नदी नालों में विसर्जन करना था। अत: लोगों की भारी भीड़ इकट्ठी होकर, सिर पर मूर्तियां उठाकर ब्राहम्ण परम्परागत विधि अनुसार मन्त्र पढ़ने में जुट गए। गुरुदेव ने तब कीर्तन प्रारम्भ कर दिया जो कि पहले से विराजमान थे –

नव छिअ खट का करै बीचार ॥

निसि दिन उचरै भार अठार ॥

तिनि भी अंतु न पाइआ तोहि ॥

नाम–बिहूण मुकति किउ होइ ॥

राग सारंग, पृष्ठ 1237

जन–साधारण, मूर्तियां विसर्जन करना भूलकर गुरुदेव की संगत में आ पधारे। जब ब्राह्मणों ने देखा कि वे अकेले ही मन्त्र उच्चारण में जुटे हैं, जनता तो कहीं और जा बैठी है तो उन को चिन्ता हुई। वे भी धीरे–धीरे शब्द के मधुर संगीत के आकर्षण से खिचे चले गए। किन्तु अपने कर्मो के विपरीत बाणी सुनकर चकित हुए। क्रोध और आश्चर्य की मिली जुली प्रतिक्रिया करते हुए, प्रश्न करने लगे कि आप शास्त्रों की विधि विधान का खण्डन कर रहे हैं। इस पर गुरुदेव ने उन्हें धैर्य रखने का आग्रह करते हुए अपने प्रवचनों में कहा कि यह तिथिवार आदि सब मनुष्य के अपने बनाये हुए हैं। परन्तु प्रकृति का अपना ही नियम है। उस में सभी दिन एक समान हैं कोई तुच्छ या कोई महान नहीं। अत: न ही कोई दिन अच्छा है और न कोई दिन बुरा है। प्राणी का जन्म–मरण कभी भी हो सकता है। इस कार्य के लिए जब प्राकृतिक नियमों में हस्तक्षेप नहीं कर सकते तो साधारण कार्यो के लिए क्यों भ्रम में पड़ कर अपना समय नष्ट करते हो। वास्तव में प्रभु की लीला में खुशी का अनुभव करते हुए हमें नाम जपते हुए अपने हृदय की मैल धोनी चाहिए। इसी में सभी का कल्याण है।

भक्त नरसी का गांव– (जूनागढ़, गुजरात)

श्री गुरू नानक देव जी सुदामा नगरी पोरबन्दर (सीता सुन्दरी) से जूनागढ़ पहुँचे। यहाँ भक्त नरसी का गांव दातागंज पड़ता है। गुरुदेव का वहाँ भक्त जी के अनुयायियों से आध्यात्मिक विचार विमर्श हुआ, जिस के अन्तर्गत गुरुदेव ने त्याग और सेवा की शिक्षा देते हुए कहा, “यदि कोई परमेश्वर की प्राप्ति चाहता है तो उस के लिए मन की शुद्धि अति आवश्यक है। मन की शुद्धि प्राप्त करने के लिए नि:स्वार्थ भाव से

दीन–दुखियों की सेवा करने से बढ़ कर और कोई कार्य नहीं। जब सेवा से हृदय पवित्र हो जाए तो आत्मा की खोज में परमात्मा दृष्टि गोचर होता है।

गुरमति क्रिसनि गोवरधन धारे ॥

गुरमति साइरि पाहण तारे ॥

गुरमति लेहु परमपदु पाईऐ नानक गुरि भरमु चुकाइआ ॥

गुरमति लेहु तरहु सचु तारी ॥

आतम चीनहु रिदै मुरारी ॥

जम के फाहे काटहि हरि जपि अकुल निरंजनु पाइआ ॥

राग मारू, पृष्ठ 1041

अर्थात यदि कोई अपनी आत्मा का विकास चाहता है कि उस के हृदय में प्रभु का वास हो तो उसे गुरू शब्द की युक्ति से अपनी आत्मा में निरंजन की खोज करनी चाहिए। यदि हृदय सेवा त्याग से शुद्ध हो चुका होगा तो अवश्य ही दिव्य ज्योति के दर्शन होगे तथा आवागमन का चक्कर समाप्त हो जाएगा।

यहाँ से गुरुदेव गिरनार पर्वत पर गए ।

डण्डी संन्यासी मण्डली – (गिरनार पर्वत, गुजरात)

श्री गुरू नानक देव जी गिरनार पर्वत (गुजरात) पर पहुँचे। वहाँ पर बहुत से सम्प्रदायों के अखाड़े थे। पर्वत की चोटी पर तीन मुख्य जल स्रोत हैं, इन में से एक का आकार कमण्डल के समान है, इसलिए इसे कमण्डल कुण्ड कहते हैं। उन दिनों वहाँ दण्डी सन्यासी लोग रहते थे। गुरुदेव ने उस पर्वत की चोटी पर एक रमणीक स्थल पर अपना डेरा डाल दिया तथा अपनी मण्डली के साथ कीर्तन करने लगे। कीर्तन के आकर्षण से लोग आप के पास इकट्ठे होने लगे। गुरुदेव ने शब्द प्रारम्भ किया –

काइआ महलु मंदरु घरु हरि का तिसु महि राखी जोति अपार ।।

नानक गुरमखि महलि बुलाईऐ हरि मेले मेलणहार ।।

राग मलार, पृष्ठ 1256

शब्द-वाणी से प्रभावित हुए बिना कोई नहीं रह पाया। जिज्ञासु लोगों ने गुरुदेव से प्रश्न पूछा-हे गुरुदेव ! किस मार्ग पर चलें जिस से जीवन सफल हो सके? उत्तर में गुरुदेव ने कहा-गृहस्थ मार्ग ही सर्वोत्तम है। इसमें रह कर, माया को दासी बना कर, प्रभु की निकटता प्राप्त की जा सकती है। परन्तु इस उत्तर से दण्डी संन्यासियों को धक्का सा लगा। गुरदेव जी का उन के साथ मतभेद हो गया। वे सभी अपना पक्ष जनता के समक्ष रखने के लिए गुरुदेव के साथ विचार गोष्ठी करने लगे-यह कैसे सम्भव है कि त्यागी से गृहस्थी जल्दी और सहज प्राप्ति कर सकता है?" उत्तर में गुरुदेव ने कहा-व्यक्ति अपने मन से त्याग करता है। शरीर का त्याग कोई महत्व नहीं रखता, यह त्याग आध्यात्मिक दुनिया में गौण (नगण्य) है। यदि सन्यास लेकर भी मन माया में ही रमा रहा तो उस संन्यास का क्या लाभ? अर्थात, मन की इच्छाओं पर नियन्त्रण करना ही वास्तविक सन्यास है। यह सब कुछ तो गृहस्थ आश्रम में रह कर सभी प्रकार के कर्त्तव्य निभाते हुए किया जा सकता है, जबकि सन्यासी का मन माया के अनेक रूपों में से किसी एक के पीछे जरूर भटकता रहता है।

सन्यासी कहने लगे- "गृहस्थ में यह कैसे सम्भव है कि व्यक्ति मन से माया का त्यागी हो जाए? वहाँ तो जीवन के हर क्षेत्र में माया की आवश्यकता रहती है। घर की स्त्री भी तो माया का ही एक स्वरूप है। उत्तर में गुरुदेव ने कहा-गृहस्थ में रहते हुए, अपना प्रत्येक कर्तव्य पूर्णत: निभाते हुए मन से, माया से उदासी का जीवन जिया जा सकता है। जैसे कमल का फूल पानी में से उत्पन्न होने पर भी सदैव पानी की सतह से उपर रहता है तथा मुर्गाबी तालाबों अथवा झीलों के पानी में रहती हुई भी नहीं भींगती उस के पंख भी सदैव सूखे ही रहते हैं।

जैसे जल महि कमलु निरालमु मुरगाई नैसाणे ।

सुरति सबदि भव सागरु तरीऐ नानक नामु बखाणे ।।

राग रामकली, पृष्ठ 938

कायरता की निंदा – (सोम नाथ मन्दिर के समक्ष, गुजरात)

श्री गुरू नानक देव जी इस तरह जब सोमनाथ के मन्दिर के खण्डहरों के समक्ष पहुँचे तो वहां, स्थानीय जनता ने उनको मुहम्मद गजनवी द्वारा लूट-पाट की करुणामय गाथा सुनाई कि किसी समय को सोमनाथ के मन्दिर का वैभव विश्व-विख्यात था किन्तु अरबों रुपये की धन-सामग्री (हीरे-मोती, सोना, चांदी इत्यादि) को विदेशी आक्रमणकारी लूट कर ले गए। अब तो वे यादें ही बचीं हैं। यह बात सुनकर गुरुदेव ने उस दुर्घटना पर समीक्षा करते हुए कहा –

सो जीविआ जिसु मनि वसिआ सोइ ॥

नानक अवरु न जीवै कोइ ॥

जे जीवै पति लथी जाइ ॥

सभु हरामु जेता किछु खाइ ॥

राग माझ, पृष्ठ 142

गुरुदेव ने स्थानीय जनता के समक्ष अपने प्रवचनों में कहा-आप के पूर्वजों ने आध्यात्मिक उन्नत्ति के लिए यह मन्दिर बनवाया था, परन्तु वे आप धन वैभव-ऐश्वर्य के चक्कर में विलासिता का जीवन जीने लगे। जिस से वास्तविक लक्ष्य प्रभु मिलन (नाम वाणी) भूल गए, जिस के बिना आत्मा मर जाती है। मरी हुई आत्मा को भोग-विलास के अतिरिक्त कुछ सूझता ही नहीं। अत:आत्म-गौरव, मान-सम्मान (इज्ज़त, आबरू) जैसे सब दैवी-गुण धीरे-धीरे नष्ट हो जाते हैं तथा व्यक्ति स्वार्थी बन जाता है। वह किसी आदर्श के लिए बलिदान देना या अपने प्राणों की रणक्षेत्र में जूझते हुए आहुति देना मूर्खता समझता है। जिस के प्रणाम स्वरूप यह खण्डहर उन के चरित्र की मुंह बोलती तस्वीर हैं। अर्थात, जब किसी राष्ट्र, समाज या व्यक्ति का पतन निकट आता है तो उसके पहले सद्गुण नष्ट हो जाते हैं।

जिस नो आपि खुआए करता खुसि लए चंगिआई ॥

राग आसा, पृष्ठ 417

जब समाज में आध्यात्मिक उन्नति के स्थान पर पतन हो जाता है तो प्रकृति स्वयं उनको दण्डित करती है।

'जैनी साधु 'अनभी'– (पालिताणा नगर, गुजरात)

श्री गुरू नानक देव जी गुजरात के नगर पालीटाणा में पहुँचे। यहाँ जैन धर्मावलम्बियों का एक प्रसिद्ध मन्दिर है। उन दिनों अनभी नाम का एक जैन साधु यहाँ प्रमुख धर्म गुरू था। गुरदेव जी ने यहाँ पहुँचते ही कीर्तन प्रारम्भ किया –

सभो सूतकु भरमु है दूजै लगै जाइ ॥

जंमणु मरणा हुक्मु है भाणै आवै जाइ ॥

खाणा पीणा पवित्र है दितोनु रिजकु संबाहि ॥

नानक जिनी गुरमुखि बुझिआ तिना सुतकु नाहि ॥

राग आसा, पृष्ठ 472

वहां पर सभी लोग गुरुदेव के अमृतमय कीर्तन को सुनने के लिए इकट्ठे हो गए। कीर्तन की समाप्ति पर लोगों ने कहा, "आप जो शब्द गायन कर रहे थे इन के अर्थ समझाएं।" गुरुदेव ने तब अपने प्रवचनों में कहा, "प्रभु की लीला है, उस के आदेश अनुसार प्राणी का जन्म–मरण होता है। इस खेल में किसी प्रकार का भ्रम नहीं करना चाहिए कि जीव हत्या या पाप हो गया है। इस लिए खाना पीना पवित्र है। उस प्रभु ने यह जीविका (रिज़क) किसी न किसी रूप में सभी को प्रदान की है। बात तो केवल प्रकृति के नियमों को समझने भर की है।" यह सुन कर लोग कहने लगे– "हमें तो हमारा मुख्य पुजारी अनभी ठीक इस के विपरीत शिक्षा देता है।" इस पर जैनी साधु अनभी, गुरुदेव से विचार गोष्ठी करने आया और कहने लगा– "हमारा मुख्य उद्देश्य जीव हत्या के पापों से बचना है।" उत्तर में गुरुदेव कहने लगे– "तुम्हारे भ्रम अनुसार तो तुम दिन रात हत्याएं करते रहते हो क्योंकि अनाज के दानों में भी जीवन है।

जेते दाणे अंन के जीआ बाझु न कोइ ॥
पहिला पाणी जीउ है जितु हरिआ सभु कोइ ॥

राग आसा, पृष्ठ 472

उसे समझाते हुए गुरुदेव ने कहा, "किसी को भी भ्रम में पड़कर व्यर्थ में असामाजिक जीवन नहीं जीना चाहिए, क्योंकि समस्त वनस्पति में जीवन है। कहाँ तक अंध विश्वासों में भटकते फिरोगे क्योंकि इन बातों से अपना जीवन दुखी करने के अतिरिक्त किसी प्रकार की प्राप्ति होने की आशा नहीं की जा सकती। अत: वैज्ञानिक तथ्यों को देखते हुए जीवन जीना चाहिए।" तभी, वहाँ उपस्थित जन कहने लगे, "गुरू जी, यह साधु तो हमें पथ-भ्रष्ट करता रहता है, न खुद स्वच्छ रहता है न हम को उचित जीवन जीने की शिक्षा देता है, बल्कि इस के विपरीत अवैज्ञानिक तथा असामाजिक मलेच्छों जैसा कुचील जीवन जीने के लिए भ्रम में डालता रहता है।"

उतर में गुरुदेव कहने लगे, "इन पाखण्डी साधुओं के घर में जाकर देखो, जहां से यह भागकर आए हैं, इन का परिवार इन के निखट्टू होने के कारण रोता कुरलाता है। यहां यह लोग यहाँ सिर के बाल भेड़ों की तरह नोचवाते हैं, जूठन मांग-मांग कर खाते हैं तथा अपनी गंदगी को कुरेद-कुरेद कर देखते हैं कि कहीं कोई जीवाणु न उत्पन्न हो जाए और उस की बदबू सूंघते हैं। पानी का प्रयोग न करने की चेष्टा करते हैं कि कहीं कोई जीव हत्या न हो जाए। इस लिए यह लोग सदैव मैले-कुचैले (गंदे) रहते हैं। इन का अवैज्ञानिक ढंग का जीवन, मानव समाज के ऊपर कलंक है। इन को सत्य गुरू के ज्ञान की अति आवश्यकता है अन्यथा इन का यह जन्म व्यर्थ जाएगा।"

सिरु खोहाइ पीअहि मलवाणी जूठा मंगि मंगि खाही ॥
फोलि फदीहति मुहि लैनि भड़ासा पाणी देखि सगाही ॥
भेडा वागी सिरु खोहाइनि भरीअनि हथ सुआही ॥
माऊ पीऊ किरतु गवाइनि टबर रोवनि धाही ॥
सदा कुचील रहहि दिनु राती मथै टिके नाही ॥
झुंडी पाइ बहनि निति मरणै दड़ि दीबाणि न जाही ॥

राग माझ, पृष्ठ 149

इस तरह वह साधु अनभी, इन प्रश्नों का तर्क संगत उत्तर नहीं दे पाया तथा अपनी भूल स्वीकार करता हुआ गुरु-चरणों में आ गिरा और पथ प्रदर्शन के लिए याचना करने लगा।

गुरुदेव ने कहा, "हिंसा तो किसी का हृदय बिना करण दुखाने में है, गरीबों को सताने में या उन के साथ उचित व्यवहार न करने में है। हम कड़ुवे वचन न बोलें, यही अहिंसा है।"

सत्संगत की महिमा – (भाव नगर, गुजरात)

श्री गुरू नानक देव जी पालिताणा में सरेवड़ों के मन्दिर से होते हुए भाव नगर पहुँचे। वहाँ पर भी विशाल मन्दिर है। गुरुदेव वहां पर भी एक रमणीक स्थल में कीर्तन करने में व्यस्त हो गए। मन्दिरों के दर्शनार्थी कीर्तन सुनने में वहीं लीन होकर आगे बढ़ना ही भूल गए। गुरुदेव से कीर्तन की समाप्ति पर कुछ जिज्ञासु आध्यात्मिक परामर्श की इच्छा करने लगे। एक साधु ने कीर्तन द्वारा दिए गए उपदेश पर गुरुदेव से प्रश्न किया, "हे गुरदेव जी! क्या आप बाणी उच्चारण कर रहे थे।"

काइआ महलु मंदरु घरु हरि का तिसु महि राखी जोति अपार ॥

नानक गुरमुखि महलि बुलाइऐ हरि मेले मेलण हार ॥

राग मलार, पृष्ठ 1256

"हे! गुरुदेव जी, आप के कथन अनुसार तो हमारे भीतर ही प्रभु निवास करते हैं तथा यह काया ही उस प्रभु का मन्दिर है। जिस से मिलन करने की युक्ति ही पूर्ण गुरू से सीखनी है। इस का अर्थ हुआ, इन मन्दिरों (भवनों) के दर्शनों को आना व्यर्थ है?"

उतर में गुरुदेव ने अपने प्रवचनों में कहा, "आप के हृदय की भावना यदि यहाँ आकर प्रभु मिलन के लिए छटपटाती है तो यात्रा सफल है अन्यथा आप ने धन, समय व्यर्थ में बरबाद करने के अतिरिक्त बिना कारण कष्ट भी उठाए हैं। जबकि प्रभु मिलन की विधि, साध-संगत में प्रात: काल बैठ कर हरियश करने या सुनने मात्र से प्राप्त हो

सकती है। वास्तव में मन को साधने से प्रभु के कण-कण में विद्यमान होने का अनुभव प्राप्त होने लगता है। इसीलिए मन को साध लेने वाले व्यक्ति को साधु कहते हैं क्योंकि उस व्यक्ति विशेष ने कड़े प्रयत्नों से मन पर विजय प्राप्त कर चंचल प्रवृतियों पर अंकुश लगाकर उन का सद्-उपयोग करना सीख लिया होता है। यह कार्य हर गृहस्थी, गृहस्थ आश्रम में रह कर तथा सहज जीवन जीकर भी कर सकता है। किसी विशेष वेषभूषा के व्यक्ति का नाम साधु नहीं है। साधु तो केवल मन को साधने वाले व्यक्ति ही होते है। अतः जिस ने मन को साधा है वह धीरे-धीरे अभ्यास करने से अपने हृदय रूपी मन्दिर में दिव्य ज्योति के दर्शन कर सकता है।

नाम की महिमा – (साबरमती अहमदाबाद, गुजरात)

श्री गुरू नानक देव जी भाव नगर से होते हुए साबरमती में आये। आप जी ने साबरमती नदी के तट पर अपना खेमा लगाया। वह स्थान नगर के घाट के निकट ही था। जब प्रातःकाल हुआ तो कीर्तन प्रारम्भ कर दिया। घाट पर स्नान करने आने वाले, कीर्तन द्वारा मधुर बाणी सुनते ही, वहीं सुन्न से होकर बैठ गए। गुरुदेव उच्चारण कर रहे थे –

बाबा मनु मतवारो नाम रसु पीवै सहज रंग रचि रहिआ ॥
अहिनिस बनी प्रेम लिव लागी सबदु अनाहद गहिआ ॥

राग आसा, पृष्ठ 360

देखते ही देखते सूर्य उदय हो गया घाट पर भीड़ बढ़ती चली गई। अधिकांश लोग कुछ समय के लिए गुरुदेव का कीर्तन सुनने बैठ जाते। नाम महा-रस की शब्द द्वारा व्याख्या सुनकर नाम में लीन होने की अभिलाषा जिज्ञासुओं के हृदय में जाग उठी। कीर्तन समाप्ति पर जिज्ञासुओं ने गुरुदेव से प्रश्न किया कि नाम स्मरन का अभ्यास, किस विधि पूर्वक किया जाए? तथा कहा उनका मन एकाग्र नहीं होता, मन पर अंकुश लगाने की युक्ति क्या हो, कृपया बताएं?

गुरुदेव ने समस्त संगत को सम्बोधित करते हुए कहा-यदि कोई व्यक्ति नाम महा रस पाना चाहता है तो उसे प्रारम्भिक अवस्था में सूर्य उदय होने से पूर्व (अमृत बेले) शौच स्नान से निर्वित होकर एकान्त वास कर सहज योग में आसन लगाकर सतनाम (सतिनाम = सत्य नाम) का जाप प्रारम्भ कर उस के गुणों का मनन करना चाहिए। प्रकृति का यह अटल नियम है कि जिसे लोग चाहते हैं या प्यार करने की भावना रखते हैं उस के स्वभाव के अनुसार वे अपना स्वभाव तथा आदतें बना लें तो दूरी समाप्त हो जाती है, जिस से निकटता आते ही परस्पर प्यार हो जाता है। क्योंकि प्यार होता ही वहाँ है जहां विचारों की समानता हो। अत: प्रभु के गुणों का अध्ययन कर उस जैसे गुण अपने अन्दर उत्पन्न करने का भरसक प्रयास करते रहना चाहिए। उदाहरण के लिए, प्रभु कृपालु है निर्भय है, निरवैर है। यह उस के प्रमुख गुण हर एक व्यक्ति अपने अन्दर उत्पन्न करने की क्षमता रखता है कि वह सभी का मित्र बन जाए। किसी से ईर्ष्या, द्वेष न रख कर निरवैर बन जाए। न किसी से डरे न किसी को डराए तथा प्रत्येक गरीब जरूरतमंद की सहायता करने की चेष्टा करे। प्रत्येक क्षण उस प्रभु को समस्त जीवों में विद्यमान देखें। बस यही गुण उत्पन्न होते ही उस में तथा उस प्रभु में भेद समाप्त हो जाएगा। धीरे-धीरे मित्रता की वह अवस्था भी आ जाएगी जहां वे प्रभु से अभेद हो जाएगा।

गुरुदेव की शिक्षा सुनकर समस्त श्रोतागण आग्रह करने लगे-हे गुरू जी ! आप हमारे यहाँ कुछ दिन ठहरें। क्योंकि हम आप से हरियश करने की विधि-विधान सीखना चाहते हैं। गुरुदेव ने उन का अनुरोध स्वीकार करते हुए कहा-आप एक धर्मशाला यहाँ तैयार करें जहां प्रतिदिन कीर्तन हो सके तथा संगत, प्रभु की स्तुति करने के लिए एकत्र हो। बहुत से नर-नारियों ने आप से गुरू दीक्षा की अभिलाषा व्यक्त की। गुरुदेव ने कहा आप पहले साध-संगत की स्थापना करें, हरियश करने की विधि विधान दृढ़ कर लें तद् पश्चात, आप की यह अभिलाषा भी अवश्य पूर्ण करेंगे।

महाजन द्वारा शोषण– (बड़ोदरा नगर, गुजरात)

श्री गुरू नानक देव जी साबरमती की संगत से आज्ञा लेकर आगे दक्षिण की ओर बढ़ते हुए अपने साथियों सहित बडोदरा नगर पहुँचे। यह स्थान इस क्षेत्र का बहुत विकसित नगर था। परन्तु अमीर–गरीब के बीच की खाई कुछ इस कदर ज्यादा थी कि धनी व्यक्ति धन का दुरुपयोग कर गरीबों को दास बना कर, ऐश्वर्य का जीवन व्यतीत करते थे। इस के विपरीत निर्धन व्यक्ति बहुत कठनाई से दो समय का भरपेट भोजन जुटा पाते थे। कहीं–कहीं तो गरीब कभी–कभी भूखे मरने पर भी विवश हो जाते। गुरुदेव ने जब जन–साधारण की यह दयनीय दशा देखी तो वह व्याकुल हो उठे। उन को एक व्यक्ति ने बताया कि गरीबी के तो कई कारण है। जिस में सम्पति का एक समान बटवारा न होना। दूसरा बडा कारण, यहाँ का महाजन आड़े समय में गरीबों को ब्याज पर कर्ज़ देता जो कि गरीब कभी भी चुकता नहीं कर पाते, जिस कारण गरीबों की सम्पति धीरे–धीरे महाजन के हाथों गिरवी होने के कारण जब्त हो जाती। वैसे महाजन अपने आपको बहुत धर्मी होने का दिखावा भी करता है तथा त्यौहार पर भण्डारा भी लगाने का ढोंग रचता है।

इस समस्या के समाधान हेतु गुरुदेव ने एक योजना बनाई और अगली सुबह महाजन के मकान के आगे कीर्तन आरम्भ कर दिया तथा स्वयं उच्च स्वर में गाने लगे।

इसु जर कारणि घणी विगुती इनि जर घणी खुआई ।।

पापा बाझहु होवै नाही मुइआ साथि न जाई ।।

राग आसा, पृष्ठ 417

उस समय महाजन घर के उस स्थान पर चारपाई लगाकर सो रहा था, जहां धरती में धन गाढ़ा हुआ था। जैसे ही मधुर बाणी का रस उस के कानों में गूंजा, वह उठा और शौच–स्नान से निवृत होकर फूल लेकर गुरू चरणों में उपस्थित हुआ। गुरुदेव ने उसे बैठने का संकेत किया। वह स्वयं भी प्रतिदिन घर पर मूर्तियों के आगे

धूप-अगरबत्ती जला कर भजन गाता था। किन्तु आज उसे साधु संगत में गुरुबाणी सुनकर, अपने कार्यो के पीछे अनुचित धंधे स्पष्ट दिखाई देने लगे। अत: उस के मन में विचार आया कि गुरू जी सत्य ही कह रहे हैं तथा उसके कर्मो को जानते हैं कि वह गरीबों का शोषण कर, उन से गलत हथकण्डों से धन संचित कर धर्मी होने का ढोंग करता है। कीर्तन समाप्ति पर गुरुदेव ने प्रवचन प्रारम्भ किया कि यदि कोई मनुष्य मन की शांति चाहता है तो उस के सभी कार्यो में सत्य होना आवश्यक है नहीं तो उस के सभी धर्म-कर्म निष्फल जाएंगे क्योंकि उस के हृदय में कपट है वह दीन-दुखी के हृदय को ठेस पहुँचाकर उस की आह लेता है जिस से प्रभु रूठ जाते हैं। क्योंकि प्रत्येक प्राणी के हृदय में उस प्रभु का वास है। अत: दया ही वास्तविक धर्म है। यदि कोई प्राणी प्रभु की खुशी प्राप्त करना चाहता है, तो उसे चाहिए कि वह समाज के निम्न तथा पीड़ित वर्ग की यथा शक्ति निष्काम सहायता करे। वास्तव में यह धन सम्पत्ति मृत्यु के समय यहीं छूट जाएगी जिस को कि प्राणी ने अनुचित कार्यो अर्थात पाप कर्मो द्वारा संग्रह किया होता है।

यह सुनकर महाजन से न रहा गया। वह गुरुदेव के चरणों में गिर पड़ा तथा कहने लगा, "गुरू जी मुझे क्षमा करें। मैं बहुत गरीबों का शोषण कर चुका हूँ। मेरे पास अनेक छोटे-छोटे किसानों की जमीनें तथा गहने गिरवी पड़े हैं, जिन्हें मैं आप की शिक्षा ग्रहण करते हुए वापस लौटा देना चाहता हूँ। क्योंकि मेरा मन सदैव अशांत रहता है तथा मुझे रात भर नींद भी नहीं आती।"

गुरुदेव ने कहा, "यदि आप ऐसा कर देंगे तो आप पर प्रभु की अपार कृपा होगी। बाकी का जीवन भी आप आनंदमय जी सकोगे।" महाजन ने गुरुदेव की आज्ञा प्राप्त कर सभी की जमीनें तथा अभूषण लौटा दिये तथा आदेश अनुसार धर्मशाला बनवाकर साध -संगत में हरियश सुनने लगा। जैसे ही साध-संगत की स्थापना हुई वहाँ की अधिकांश जनता गुरुदेव की अनुयायी बनकर नानक पंथी कहलाने लगे।

जमीदार द्वारा शौषण – (सूरत नगर, गुजरात)

श्री गुरू नानक देव जी ने अपनी दक्षिण यात्रा के समय जिला सूरत के एक देहात में विश्राम किया। आप जी वहां पर एक तलाब के किनारे बड़ के वृक्ष के नीचे प्रात: काल हरियश में कीर्तन कर रहे थे तो कुछ किसान आप के पास आए और विनती करने लगे, "गुरू जी हम लुट गए, हम कहीं के नहीं रहे। हमारा परिवार अब तो भूखा मर जाएगा। हमें दर-दर की ठोकरें खाने के लिए विवश कर दिया गया है।" गुरुदेव ने उन्हें सांत्वना दी और कहा, "कृपया आप धैर्य रखें, करतार भली करेगा। वह सब का रिज़क दाता है। वह किसी न किसी रूप में सभी का पालन करता है। उस पर पूर्ण विश्वास रखना चाहिए।" किन्तु किसान इतने भयभीत थे कि वे सब डरे हुए सिसक-सिसक कर रो पड़े और कहने लगे, "इस वर्ष, वर्षा की कमी के कारण फसल अच्छी नहीं हुई। जो थोडा बहुत अनाज हुआ था वह हमारे परिवार के लिए भी बहुत कम था। किन्तु यहाँ का जमींदार तथा उस के लट्ठधारी कर्मचारी पूरा अनाज ज़ोर जबरदस्ती हम से छीन ले गए है तथा हमें मारा पीटा है और हमारा अपमान किया है।"

इस अत्याचार की गाथा सुनकर गुरुदेव गम्भीर हो गए तथा इस समस्या के समाधान के लिए योजना बनाने लगे। उन्होंने नन्हे बच्चों को, जो भूख से बिलख रहे थे, साथ लिए और सभी किसानों को अपने पीछे आने का संकेत किया। गुरुदेव ने जमींदार की हवेली के बाहर भाई मरदाना जी को कीर्तन प्रारम्भ करने के लिए कहा और आप जी स्वयं वाणी उच्चारण करने लगे -

जे रतु लगै कपड़ै जामा होइ पलीतु ॥
जो रतु पीवहि माणसा तिन किउ निरमलु चीतु ॥
नानक नाउ खुदाइ का दिलि हछै मुखि लेहु ॥
अवरि दिवाजे दुनी के झूठे अमल करेहु ॥

राग माझ, पृष्ठ 140

कीर्तन की मधुर ध्वनि सुनकर जमींदार की हवेली से उसके लट्ठदारी कर्मचारी आ गए। हवेली के बाहर का दृश्य देखकर वे तुरन्त जमींदार को बुला लाने को गये और कहा कि उन किसानों का पक्ष लेकर एक फ़कीर आप के विरुद्ध अंदोलन चलाने के लिए आप के घर का घेराव किए हुए हैं तथा गा कर काव्य रूप में व्यंग मार रहा है। यह सुनकर जमींदार आग-बबूला हो उठा और स्वयं न आकर पत्नी को भेजा कि वह जाकर ठीक से ज्ञात करे कि कौन है जो उसके विरुद्ध दुस्साहस करके उसे चुनौती दे रहा है? जमींदार की पत्नी ने जब गुरुदेव को आनंदमय अवस्था में प्रभु चरणों में लीन पाया और उन के मुख से भावपूर्ण बाणी सुनी तो उसके मन में विचार बना कि वह फ़कीर लोग तो परोपकारी दिखाई देते हैं, इन का किसानों के पक्ष में होना नि: स्वार्थ है तथा वह जो भी कह रहे हैं उस में सत्य है। भले ही सत्य कड़ुवा लग रहा है परन्तु उन के कथन में तथ्य है। अत: उन को अवश्य सुनना चाहिए, जल्दी में कोई गलत निर्णय नहीं लेना चाहिए। यह सोचकर वह कुछ देर रुक कर लौट गई तथा नम्रता पूर्वक आग्रह कर अपने पति को वहाँ ले आई। और कहा कि वह भी कम से कम उन्हें प्रत्यक्ष देख कर कोई उचित निर्णय लें। क्योंकि फ़कीरों की रहस्यमय बातों में कोई अर्थ होता है। वे यूं ही किसी का पक्ष नहीं लेते। पत्नी से सहमत होकर, वह उस के साथ ही गुरुदेव के दर्शनों के लिए पहुँचा। उस समय गुरुदेव प्रभु स्तुति में लीन होकर शब्द में सुरति रमाए बाणी उच्चारण कर रहे थे। जमींदार ने सोचा कि वह वास्तव में दुनियां के दिखावे मात्र के लिए कई प्रकार से धन के वैभव का प्रदर्शन कर धर्मी होने का स्वांग करता है, परन्तु धर्म क्या है? इस बात का कभी विश्लेषण नहीं करता। यदि वह उन के कथन अनुसार हृदय की पवित्रता को धर्म का आवश्यक अंग मान ले तो अब तक जो किया है, वह सब गलत था। क्योंकि उन के पीछे उसका व्यक्तिगत निहित स्वार्थ अवश्य था। उस ने कुछ सोचते हुए पत्नी से कहा, "तुम पुन: जाओ और पूछो, फ़कीर क्या चाहते हैं?" उसकी पत्नी आज्ञा पाकर गुरुदेव के पास गई एवं विनम्रता पूर्वक कहने लगी, "हे साईं जी! आप हमारे यहाँ आए हैं। हमारे धन्य भाग्य है, किन्तु आप का यहाँ आने का क्या प्रयोजन है, कृपया हमें अवगत कराएं।" गुरुदेव ने तब कहा, "हे देवी! आप सब कुछ देख-समझ रही है। इन दूध पीते मासूम बच्चों का निवाला भी तुम्हारे करिन्दे इन से छीन लाए हैं। इन किसानों की खून पसीने की कमाई, जो कि इन के कड़े परीश्रम की

देन है, इन के काम नहीं आ रही। एक तरफ यह श्रमिक भूखे प्यासे हैं, दूसरी तरफ आप को सभी कुछ तो उस प्रभु ने दिया है। आप के यहाँ किसी वस्तु का अभाव नहीं। अत: न्याय होना चाहिए"। यह तर्क सुनते ही वह कुलीन भद्र महिला का सिर झुक गया। उस ने संकेत से अपने स्वामी को तुरन्त पास बुला लिया तथा गुरुदेव के साथ परामर्श करने का आग्रह करने लगी। जमींदार के आने पर गुरुदेव प्रवचन करने लगे, "हे मानव ! इस पर विचार करो। यदि कपड़ों पर खून का धब्बा लग जाए तो उसे अपवित्र मान कर धोते है किन्तु वह लोग जो अपने अधिकारों का दुरोपयोग कर गरीब जनता का खून पीते हैं उन का हृदय कैसे पवित्र हो सकता है? यदि सच्चे अर्थो में धर्मी बनना चाहते हो तो बडप्पन को त्याग कर हृदय की पवित्रता पर बल दो और उस प्रभु की प्रसन्नता प्राप्त करो क्योंकि इन गरीबों के हृदय में उसी का निवास है।"

जमींदार को अपनी भूल का एहसास हुआ उस ने तुरन्त अपने कारिन्दों को आदेश दिया कि उन किसानों से छीना गया अनाज तथा मवेशी लौटा दिये जाए तथा उसने गुरुदेव से अपने प्रायश्चित के लिए क्षमा याचना की। गुरुदेव ने कहा, "यहाँ एक ध र्मशाला बनवाएं जिस में प्रतिदिन हरियश के लिए साध-संगत इकट्ठी होकर शुभ कर्मो के लिए प्रभु से अशिर्वाद मांगे। इसी में सभी का कल्याण होगा। वह जमींदार भी गुरुदेव का अनुयायी बन गया तथा गुरू दीक्षा प्राप्त कर सिक्ख धरम में प्रवेश किया।

स्वांगी गुरू – नासिक (पंचवटी), महाराष्ट्र

श्री गुरू नानक देव जी सूरत से नासिक की ओर प्रस्थान कर गए। वहाँ स्थानीय जनता द्वारा प्रत्येक वर्ष एक मेले का आयोजन किया जाता था। जिस में दूर-दूर से व्यापारी तथा अनेक वर्ग के लोग इकट्ठे होकर सांस्कृतिक कार्यक्रमों में भाग लेते थे। मेला कई दिन चलता था गुरुदेव ने भी अपना खेमा एक उचित स्थान देख कर जल स्रोत के निकट लगा दिया। धीरे-धीरे मेला भरने लगा। गुरुदेव ने भाई मरदाना जी से कीर्तन की चौकी भरने को कहा, कीर्तन द्वारा हरियश सुनने के लिए कई भक्तगण धीरे-धीरे आकर बैठने लगे किन्तु कुछ समय पश्चात्, स्वांगियो का एक दल निक्ट आकर नृत्य करने लगा। उस दल में कुछ सदस्य विभिन्न प्रकार के साज बजा रहे थे।

उन की उत्तेजक धुनों पर उन के कुछ सदस्य इस प्रकार नाच रहे थे कि दर्शकों को बरबस हंसी आ रही थी। अत: सभी दर्शक खेल-तमाशा देखकर जाते समय अनुदान के रूप में कुछ धन उन्हें दे जाते थे। नृतक दल के निकट आने पर कीर्तन में बाधा उत्पन्न हो गई। जन-साधारण खेल-तमाशे देखने में रुचि लेने लगा। इस प्रकार शान्त वातावरण भंग हो गया। कीर्तन का रस लेने वाले भक्तजन तथा गुरुदेव ने देखा कि गाना गाते हुए मुख्य नृतक भी स्वयं नाचने लग गया था तथा उस के सिर के बाल बिखरे हुए थे, जिन में नाचने के कारण धूल-गर्दा पड़ रहा था। वह व्यक्ति जो कि उनका गुरू था अपने शिष्यों के संकेतों पर नाच रहा था। वह भी केवल चन्द चान्दी के सिक्कों के लिए, जिससे उदर पूर्ति हो सके। विपरीत जीवन शैली देखकर, गुरुदेव से रहा न गया उन्होंने, इस सब को अनर्थ की संज्ञा दी, और कह उठे -

वाइनि चेले नचनि गुर पैर हलाइनि फेरनि सिर ॥

उडि उडि रावा झाटै पाइ वेखै लोकु हसै घरि जाइ ॥

रोटीआ कारणि पूरहि ताल आपु पछाड़हि धरती नालि ॥

राग आसा, पृष्ठ 465

गुरुदेव ने अपने प्रवचनों में कहा यह कैसा गुरू है जो माया प्राप्ति के चक्कर में नाच-नाच कर दिशा हीन जीवन जी रहा है जिस के अनुसार चेलों के आदेश पर गुरू होते हुए भी जनता के सामने तमाशा बना हुआ है। और लोगों के लिए श्री कृष्ण तथा श्री राम की कहानियों के स्वांग भर कर, ऊल-जलूल संवादो से हंसा कर, केवल अपनी जीविका का साधन बना हुआ है। वास्तव में यह सब कुछ बिना किसी आदर्श के केवल उदर पूर्ति का साधन मात्र है।

गुरुदेव वहाँ से पंढरपुर चले गए, जहां पर भक्त नामदेव जी का जन्म स्थान था। वहाँ से गुरुदेव ने उनके अनुयाईयों से भक्त जी की बाणी प्राप्त कर अपनी पोथी में संगठित कर ली। इस प्रकार आप जी ने भक्त त्रिलोचन जी, पीपा जी तथा सैण जी की भी बाणी एकत्र कर ली।

नारी जाति का अपमान–जिला ठाणे शिव मन्दिर (अमर नाथ), महाराष्ट्र

श्री गुरू नानक देव जी नासिक से ज़िला ठाणे में पहुँचे वहाँ पर अमर नाथ नामक एक प्रसिद्ध शिव मन्दिर है। वहाँ शिवलिंग की पूजा की जाती है। अत: वहाँ अंध विश्वास के कारण स्त्रियां अपने भग–द्वार से शिवलिंग का स्पर्श अनिवार्य समझती थी। इस प्रकार की उपासना पर गुरुदेव ने आपत्ति की और कहा नारी जाति का यह घोर अपमान है। किन्तु वहाँ पर यह भ्रान्तियाँ फैला रखी थी कि मासिक धर्म होने पर नारी अपवित्र हो जाती है इस लिए उसे पुन: पवित्र होने के लिए शिव लिंग से स्पर्श करना चाहिए। और इस भ्रम जाल को तोड़ने के लिए जागृति लाने के विचार से वहाँ पर विद्वानों को आमन्त्रित कर विचार गोष्ठी करने का कार्यक्रम बनाया। अत: गुरुदेव ने शिवरात्रि के दिन मेले में जनता के सामने अपने विचार कीर्तन रूप में प्रस्तुत किए –

जिउ जोरू सिरनावणी आवै वारो वार ।।
जूठे जूठा मुखि वसै नित–नित होइ खुवारु ।।
सूचे ऐहि न आखीअहि बहनि जि पिंडा धोइ ।।
सूचे सेई नानका जिन् मनि वसिआ सोइ ।।

राग आसा, पृष्ठ 472

अपने प्रवचनों में उपयुक्त बाणी का सैद्धांतिक पक्ष स्पष्ट करते हुए गुरुदेव ने कहा कि प्रकृति के नियमानुसार नारी जाति की जननक्रिया के लिए मासिक धर्म एक सहज क्रिया है। इस में किसी प्रकार का भ्रम करना मूर्खता है। जो लोग इस सहज क्रिया को अशुद्ध या अपवित्र जान कर समाज में भ्रान्तियां फैला कर, पाखण्ड कर माता–बहनों का उपहास कर उन्हें नीचा दिखाते हैं वे स्वयं बर्बाद होते हैं। शरीरिक स्नान से पवित्रता कदाचित् स्थाई नहीं हो सकती, क्योंकि शरीर में सदैव मल–मूत्र किसी न किसी रूप में विद्यमान रहता है। केवल वही व्यक्ति पवित्र है जिन के हृदय में प्रभु का वास है।

ज्ञान ही गुरू – (जिला पूणे, महाराष्ट्र)

श्री गुरू नानक देव जी ठाणा नगर से पूणे पहुँचे, वहाँ पर भीमा नदी के किनारे ज्योति लिंग मन्दिर में अनियमितताएं तथा अंध-विश्वासों से जन-साधारण को सावधान करते हुए कहने लगे, "प्रभु प्राप्ति का सही मार्ग हृदय की पवित्रता है। जो मनुष्य पवित्र हृदय से गुरू की शरण में नहीं जाता, उसे ईश्वर-प्राप्ति नहीं हो सकती। क्योंकि गुरू की संगत से ही सत्याचरण वाले जीवन की प्राप्ति सम्भव है, अन्यथा व्यक्ति बाह्य चिन्हों एवं वेश-भूषा के आडम्बरों में भटकता रहता है।"

बिनु सतिगुर किनै न पाइओ बिनु सतिगुर किनै न पाइआ ॥
सतिगुर विचि आपु रखिओनु करि परगटु आखि सुणाइआ ॥
सतिगुर मिलिऐ सदा मुकतु है जिनि विचहु मोहु चुकाइआ ॥
उतमु एहु बीचारु है जिनि सचे सिउ चितु लाइआ ॥
जगजीवनु दाता पाइआ . . . . ॥

राग आसा, पृष्ठ 466

गुरुदेव के प्रवचनों तथा कीर्तन से भक्तगण बहुत प्रभावित हुए। एक भक्त ने गुरू जी से प्रश्न किया– "हे गुरुदेव जी! हम यह कैसे जाने कि कोई व्यक्ति-विशेष ही पूर्ण सामर्थ्यवान गुरू है अर्थात वे ही सत्य से तदाकार हुआ महापुरुष है?

गुरुदेव जी– आप का प्रश्न प्रशंसनीय है, क्योंकि साधारण मनुष्य के पास प्रर्याप्त ज्ञान नहीं होता। लोग तो भेषधारी व्यक्ति को ही वास्तविक साधु समझ लेते है। जब कि बहुत से साधु तो वास्तव में स्वादु होते हैं जो कि बिना परीश्रम के आजीविका अर्जित करने के लिए स्वांग करते हैं। इस लिए किसी व्यक्ति विशेष के शरीर को गुरू धारण करने की विचारधारा गलत है। क्योंकि समस्त मानवों में मानव शरीर होने के कारण कहीं-न-कहीं त्रुटियां अवश्य मिलेंगी। अत: ज्ञान को गुरू मानना चाहिए, साध-संगत में हरियश करते हुए ज्ञान प्राप्त हो सकता है, जहां पूर्ण समर्थशाली महापुरुषों की रचनाओं का अध्ययन किया जाता हो।

जिज्ञासु-गुरू जी, किसी शरीर को गुरू न माना जाए?

गुरुदेव जी-यह शरीर नाशवान है, आज है कल नहीं, क्योंकि शरीर नाशवान है अत: ज्ञान को ही गुरू मानना है जो कि आत्मा का अमर अंग है।

अश्लील मूर्तियों की भर्त्सना-रंग पट्टम नगर (कर्नाटक)

श्री गुरू नानक देव जी पुणे से कर्नाटक प्रांत के रंगपट्टम नामक नगर में पहुँचे। वहाँ पर स्थानीय जनता भगवान विष्णु की उपासक थी, उन्होंने तुंगभद्रा नदी के किनारे एक विशाल मन्दिर बना रखा था जहां भान्ति-भान्ति मुद्राओं में विष्णु जी की काल्पनिक लीलाओं की मूर्तियों का निर्माण कर पूजा की जाती थी। जिस में शेषनाग पर विराजमान विष्णु जी की मूर्ति प्रमुख थी। पुजारियों ने बहुत सी किंवदंतियां फैला रखी थी कि वहाँ पर नारद जी ने भस्मासुर दैत्य से शिव की रक्षा करने के लिए विष्णु जी को मोहिनी रूप धारण करने के लिए आग्रह करते हुए प्रेरित किया था। अत: वहाँ के मन्दिरों में अनेक मुद्राओं में नृत्य करते हुए मोहिनी रूप में रति क्रिया में संलग्न मूर्तियां थी, जिसे देख कर मन उत्तेजित तथा चंचल हो उठे। इन मूर्तियों को अश्लीलता की संज्ञा देकर गुरुदेव ने भर्त्सना की और कहा-जहां साधारण मनुष्य का मन एकाग्र होने के स्थान पर चलायमान हो जाए, वे मन्दिर या पूजा स्थल नहीं बल्कि व्यभिचार का स्रोत हैं। अत: वहाँ के संचालक धर्म के नाम पर भ्रान्तियाँ फैलाने का साधन बन गए है, जिस कारण प्रभु से निकटता के स्थान पर दूरी बढ़ रही है। गलत मार्ग दर्शन से साधारण जिज्ञासु की भटकन समाप्त होने के स्थान पर और बढ़ गई है, जिस का दोष इन संचालकों, संस्थापकों तथा निर्माताओं पर आता है, जो कि धन को संचित करने के लिए जनता को गुमराह कर उन का जीवन नष्ट कर रहे है। जब कि समस्त बुद्धिजीवी जानते है कि बिना हरि भजन के प्राणी आवागमन के चक्र से छुटकारा प्राप्त नहीं कर सकता।

अंधा आगू जे थीऐ किउ पाधरु जाणै ॥
आपि मुसै मति होछीऐ किउ राहु पछाणै ॥
किउ राहि जावै महलु पावै अंध की मति अंधली ॥
विणु नाम हरि के कछु न सूझै अंधु बुडौ धंधली ॥
दिनु राति चानणु चाउ उपजै सबद गुर का मनि वसै ॥
कर जोड़ि गुर पहि करि विनंती राहु पाधरु गुरु दसै ॥

राग सूही, पृष्ठ 767

गुरुदेव ने अपने विचारों को कीर्तन तथा प्रवचनों में व्यक्त करते हुए स्पष्ट किया कि बिना हरि भजन तथा बिना अच्छे आचरण के छुटकारा नहीं मिल सकता।

भिक्षा – पैतृक विरासत का अपमान – (पाणाजी, गोआ)

श्री गुरू नानक देव जी रंग पट्टम से गोआ प्रदेश के पाणाजी नगर में समुद्र तट पर पहुँचे। वह स्थल प्राकृतिक सौन्दर्य से माला माल है तथा उस की छटा देखते ही बनती है। गुरुदेव उन रमणीक स्थलों में समाधिस्थ हो गए, जब समाधि से उत्थान किया तो प्रभु स्तुति में गाने लगे। भाई मरदाना जी भी आप के साथ ताल मिलाकर संगीत की बंदिश में रबाब बजाने लगे। मधुर, हृदय-भेदक बाणी सुनकर पर्यटक भी धीरे-धीरे इकट्ठे होते चले गए, जिस से श्रोताओं का समूह इकट्ठा हो गया। उस समय गुरुदेव उच्चारण कर रहे थे –

अलाहु अलखु अगंमु कादरु करणहारु करीमु ॥
सभ दुनी आवण जावणी मुकामु एकु रहीमु ॥
मुकामु तिसनो आखीऐ जिसु सिसि न होवी लेखु ॥
असमानु धरती चलसी मुकामु ओही एकु ॥
दिन रवि चलै निसि ससि चलै तारिका लख पलोइ ॥
मुकामु ओही एकु है नानका सचु बगोइ ॥

राग सिरीराग, पृष्ठ 64

जिज्ञासुयों ने शब्द की समाप्ति पर रचना के अर्थ जानने चाहे तो गुरुदेव ने कहा, "इस धरती पर सभी लोग सैलानी अर्थात यात्री हैं। सब ने एक दिन यहाँ से चले जाना है परन्तु अल्लाह (ईश्वर) ही यहाँ स्थायी निवास करता है, क्योंकि धरती, सूर्य, चन्द्रमा और तारे यह सब भी चलाएमान है। प्राणी मात्र की तो बात ही क्या है?" सभी जिज्ञासु बहुत प्रभावित हुए उन्होंने गुरू जी के आगे बहु-मूल्य उपहार रख दिये किन्तु गुरू जी ने उन्हें अस्वीकार कर दिया। एक जिज्ञासु कहने लगा, "गुरुदेव जी! यह उपहार आप क्यों नहीं स्वीकार करते जबकि दूसरे साधु तो कई बार यहाँ से वस्तुएं मांग कर ले जाते देखे गए हैं। और यहाँ कुछ दूरी पर उनका आश्रम है जहां से वह भिक्षा मांगने अक्सर आते हैं। मैं आप को उन से मिला सकता हूँ।" गुरुदेव ने कहा, "ठीक है, हम स्वयं जाकर उन का मार्ग दर्शन करेंगे।" इतने में उसी आश्रम का एक कर्म-काण्डी सन्यासी वहाँ पर भिक्षा मांगने पहुँच गया। गुरुदेव ने उसे अपने पास बुला लिया और भिक्षा मांगने का कारण पूछा? सन्यासी ने उत्तर दिया-हमारे आश्रम के नियम-अनुसार सन्यास ग्रहण करने के लिए पूर्णत: गृहस्थ को त्याग कर शिक्षा प्राप्त करनी होती है तथा शिक्षा काल में भिक्षा मांग कर जीवन निर्वाह करना होता है। शिक्षा पूर्ण होने पर प्रत्येक विद्यार्थी को सर्व प्रथम अपने गृह ही से भिक्षा मांग कर लानी होती है, ताकि मांगने वाले में नम्रता आ जाए। यह सुनकर गुरुदेव ने कहा-यह धारणा मिथ्या है कि मांगने से नम्रता आती है। इस के विपरीत मांगने से स्वाभिमान को आघात पहुँचता है और मनुष्य कहीं का नहीं रहता। मांगने के लिए जो कुछ तुम गा रहे हो वह सब ज्ञान रहित बातें हैं, ठीक उसी प्रकार, जिस प्रकार मुल्ला भूखा होने पर अपने घर को मस्जिद बताता है। तुमने भी नखटू होने के कारण कानों में मुद्रा डाली है और रोज़ी-रोटी चलाने का ढोंग सन्यासी बनकर निभा रहे हो, जिस से तुम्हारी पैंतृक विरासत का भारी अपमान हो रहा है। कि भले घर का लड़का मांग कर खा रहा है। यही बस नहीं फिर तुम गुरू-पीर भी कहलवाना चाहते हो। किन्तु उसी की मर्यादा नहीं जानते कि इस बात के लिए व्यक्ति को स्वाभिमान से जीवन जीना होता है, न कि दर-दर पर भिक्षा मांग कर आत्म गौरव को मिट्टी में

मिलाना। इस लिए किसी को भी तुम जैसे लोगों के पांव नहीं छूने चाहिए क्योंकि तुम लोग सभ्य समाज में स्वीकार्य नहीं हो, प्रभु चरणों में स्वीकार्य होना तो एक अलग बात है। जो अपनी आजीविका परीश्रम से अर्जित करता है तथा ज़रूरतमंदों को उस में से कुछ भाग देता है वास्तव में वही सत्य मार्ग गामी है। गुरुदेव ने तब शब्द उच्चारण किया

गिआन विहूणा गावै गीत ।। भुखे मुलां घरे मसीति ।।
मरवटू होइ कै कंनं पड़ाए ।। फकरु करे होरु जाति गवाए ।।
गुरु पीरु सदाए मंगण जाइ ।। ता कै मूलि न लगीऐ पाइ ।।
घालि खाहि किछु हथहु देइ ।। नानक राहु पछाणहि सेइ ।।
राग सारग, पृष्ठ 1245

देव दासी प्रथा की भर्त्सना – (मैसूर नगर, कर्नाटक)

श्री गुरू नानक देव जी पाणाजी से दक्षिण की ओर बढ़ते हुए मैसूर नगर में एक भव्य मन्दिर में पहुँचे। आप जी ने वहाँ पर साधारण जनता की निर्धनता देखी। उस के विपरीत मन्दिरों में अपार धन सम्पदा तथा वैभव देखा। तो इस असन्तुलन पर आप जी बहुत क्षुब्ध हुए। आप के वहाँ पहुँचने पर तब स्थानीय राजा राजकीय मन्दिर में पूजा अर्चना करने के लिए एक विशेष दिन अपने परिवार सहित पधारे। वहाँ के पुजारियों ने तब उन का भव्य स्वागत करने के लिए एक विशेष नियमावली अपनाई। मन्दिर के मुख्यद्वार की सड़क के दोनों किनारों पर फूलों की वर्षा करती हुई देव दासियों की लम्बी कतारें लगाई गई और महाराज की जय हो इत्यादि नारे बुलंद किए गए। मन्दिर में इस प्रकार के राजकीय स्वागत के आयोजन को देखकर, आडम्बर के विरुद्ध गुरुदेव कह उठे –

दर घर महला सोहणे पके कोट हजार ।।
हसती घोड़े पाखरे लसकर लख अपार ।।
किसही नालि न चलिआ खपि खपि मुए असार ।।
सोइना रुपा संचीऐ मालु जालु जंजालु ।।
सभ जग महि दोही फेरीऐ बिनु नावै सिरि कालु ।।
पिंडु पड़ै जीओ खेलसी बदफैली किआ हालु ।।
सिरी राग, पृष्ठ 63

प्रभु की कृपा के पात्र बनने के लिए नम्रता धारण कर एक भिखारी रूप में आना चाहिए। परन्तु इस के विपरीत राज शक्ति के प्रदर्शन से कोई भी प्राप्ति नहीं हो सकती। प्राप्ति तो हरि नाम स्मरण में है न कि बदफैली कामुक मोहिनियों से स्वागत कराने में। गुरुदेव ने देव दासी प्रथा का कड़ा विरोध किया और कहा, "लोग धर्म का नाम लेकर समाज में कुरीतियां तथा अनैतिकता का प्रचार-प्रसार कर रहे हैं। विलासिता के यह सब साधन समाज को पतन के गहरे कुएं में धकेल रहे हैं।"

मधुर संगीत की महिमा – (बेंगलूर, कर्नाटक)

श्री गुरू नानक देव जी इस तरह उपदेश देते हुए बेंगलूर पहुँचे। जो कि उन दिनों भी दक्षिण भारत का सब से बडा व्यापारिक केन्द्र था। वहाँ पर छोटे-छोटे कुटीर उद्योग होने के कारण आस-पास से लोगों का आवागमन बहुत बडी संख्या में होता रहता था। अत: उस नगर में स्थान-स्थान पर भिन्न-भिन्न मतावलम्बियों के धर्म मन्दिर, विशाल भवनों के रूप में विद्यमान थे। जिन में विभिन्न प्रकार से केवल मूर्ति पूजा होती थी तथा कहीं-कहीं कर्नाटक संगीत में काल्पनिक भजन गाये जाते थे। स्थानीय लोग विशेष रूप से अपने इष्ट की प्रतिमा के समक्ष सामूहिक रूप में नृत्य करते और प्रतिमा पर फूल मालाएं चढाकर तथा धूप बत्ती करते हुए अपने को धन्य समझते थे। किन्तु आध्यात्मिक

ज्ञान की खोज में विचार-विमर्श नहीं करते थे कि मन की शुद्धि कैसे हो तथा उस एकेश्वर-निरांकार ज्योति स्वरूप प्रभु से कैसे मिलन हो। अत: वहाँ पहुँच कर गुरुदेव ने स्थानीय संगीतकारों के सामने जब अपने कीर्तन का प्रदर्शन किया तो वे स्तब्ध रह गए कि शांत सहज धुनों में प्रभु स्तुति करने से मन एकाग्र होकर प्रभु चरणों में लीन होता है। गुरुदेव ने जन-साधारण को अपने प्रवचनों द्वारा समझाया-संगीत दो प्रकार का होता है। पहले प्रकार के तीव्र गति के संगीत से केवल शरीर ही झूम सकता है जिसे आप नृत्य कला में प्रयोग करते हैं तथा कथकली इत्यादि नृत्य में दक्षता प्राप्त करते हैं। परन्तु दूसरे प्रकार के शांत मधुर शास्त्रीय संगीत से शरीर के स्थान पर मन और आत्मा दोनों झूमती है। इस प्रकार सुरति एकाग्र होकर प्रभु चरणों में लीन हो जाती है जिस से व्यक्ति समाधि से शून्य अवस्था में आ सकता है जो कि आनंदमयी आत्मिक अनुभूतियां प्राप्त कर सकने में सहायक होता है। आध्यात्मिक दुनिया में शरीर गौण है वहाँ केवल मन की एकाग्रता तथा उस की शुद्धता को ही प्राथमिकता प्राप्त होती है। इस लिए चंचल प्रवृतियों के गीत तथा संगीत धार्मिक स्थानों पर वर्जित होने चाहिए नहीं तो प्राप्तियों के स्थान पर कुछ खोना पड़ सकता है।

वाजा मति परवावजु भाउ ॥

होइ अनंदु सदा मनि चाउ ॥

एहा भगति एहो तप ताउ ॥

इतु रंगि नाचहु रखि रखि पाउ ॥

पूरे ताल जाणै सालाह ॥

होरु नचणा खुसीआ मन माह ॥ 1 ॥ रहाउ ॥

सतु संतोखु वजहि दुइ ताल ॥

पैरी वाजा सदा निहाल ॥

रागु नाद नही दूजा भाउ ॥

इतु रंगि नाचहु रखि रखि पाउ ॥ 2 ॥

राग आसा, पृष्ठ 350

पशु वध (बली) की भर्त्सना – (पालघाट, कर्नाटक)

श्री गुरू नानक देव जी बेंगलूर से पालघाट पहुँचे। इस नगर में जनार्दन नाम का एक बहुत प्रसिद्ध शिव मन्दिर है। वहाँ पर उपासना के नाम पर पशु बलि चढ़ाते थे। वह क्षेत्र नीलगिरी पर्वत श्रृंखला के आदिवासी क्षेत्र में स्थित है। स्थानीय लोग अपने इष्ट की उपासना के लिए भैंस का वध करते हैं तथा उस के मांस को प्रसाद रूप से बांट कर खुशियां मनाते हैं। गुरुदेव ने इस तरह के निम्न स्तर की पूजा विधि को देखकर बहुत रोष प्रकट किया तथा कहा–समस्त जीव–जन्तु, पशु–पक्षी इत्यादि, प्रभु–परमेश्वर की ही उत्पत्ति हैं अर्थात सब प्राणियों का पिता वह स्वयं है, फिर ऐसे पिता के समक्ष उस के पुत्र का वध कर उसे कैसे प्रसन्न कर सकते हैं? इस प्रश्न का उत्तर वहाँ के आदिवासियों के पास न था। अत: विचारों के आदान प्रदान में वे लोग गुरुदेव को संतुष्ट नहीं कर पाए। उस समय गुरुदेव ने भाई मरदाना जी को आदेश दिया, सुर साधो तथा कीर्तन प्रारम्भ करो क्योंकि प्रभु की तरफ से बाणी आ रही है। फिर क्या था सभी वाद्य साधे गए और गुरुदेव ने उच्चारण आरम्भ किया।

दूरि नाही मेरो प्रभु पिआरा ॥

सतिगुर बचनि मेरो मनु मानिआ हरि पाए प्रान अधारा ॥ 1 ॥ रहाउ ॥

इन विधि हरि मिलीऐ वर कामनि धन सोहागु पिआरी ॥

जाति बरन कुल सहसा चूका गुरमति सबदि बीचारी ॥

जिसु मनु मानै अभिमानु न ताकउ हिंसा लोभु विसारे ॥

सहजि रवै वरु कामणि पिर की गुरमुखि रंगि सवारे ॥

राग सारग, पृष्ठ 1197

गुरुदेव ने अपने प्रवचनों में कहा, "हे भक्तजनों सर्वप्रथम प्रभु के गुणों को जानने की आवश्यकता है। जब प्रभु के गुणों का अध्ययन कर उस के नियमों अनुसार जीवन

व्यतीत करेंगे तो सहज ही उस की कृपा होगी। हमें इस बात का ज्ञात होना चाहिए कि वह दूर नहीं प्रत्येक स्थान पर विद्यमान है। जिस समय भक्तजन स्वयं को प्रभु परमेश्वर रूपी पति की स्त्री मानकर प्रत्येक प्रकार के अवगुण त्याग कर, जाति, वर्ण, कुल इत्यादि के भेद समाप्त कर, विशेषकर हिंसा, लोभ, अभिमान को त्याग कर, विनम्र भाव से सतगुरू के पूर्ण ज्ञान के प्रकाश में मन पर नियन्त्रण करेंगे तो ज्योति स्वरूप महाशक्ति का उन में प्रकाश धीरे-धीरे सम्भव हो जाएगा और वह आंनदित होकर पति मिलन की अनुभुति प्राप्त करेंगे।"

समय/श्वासों के सदुपयोग पर बल-(कालीकट, कर्नाटक)

श्री गुरू नानक देव जी पालघाट से अन्नामलाई पर्वत श्रृंखला में से होते हुए समुद्र तट पर कालीकट पहुँचे। यह स्थान अरब सागर के तट पर एक प्रसिद्ध बन्दरगाह है। उन दिनों वहाँ पर विदेशों से छोटे-छोटे जहाज व्यापार के लिए आते-जाते थे। अत: वहाँ के निवासियों की आर्थिक दशा बहुत अच्छी थी। धन की कमी न होने के कारण अधि काश लोग ऐश्वर्य का जीवन जीते थे। इस लिए उन का लक्ष्य, खाना-पीना तथा मौज मस्ती मनाना मात्र ही था। अत: उन के जीवन में आध्यात्मिकवाद नहीं था अर्थात वे नास्तिक जीवन जीते थे। गुरुदेव ने कहा-बिना उद्देश्य के जीवन जीने वाले भटकती हुई आत्माएं हैं, जो कि अपनी अमूल्य श्वासों की पूंजी व्यर्थ गवाकर जुआरी की तरह खाली हाथ वापस लौट जाते हैं। प्रभु द्वारा रचित उपहार में दी गई अद्भुत काया फिर दुबारा नहीं मिलती। इस लिए समय को सफल बनाने के लिए उस का सदुपयोग करने की प्रेरणा दी।

सउ ओलामे दिनै के राती मिलनि सहंस ॥
सिफति सलाहणु छडि कै, करंगी लगा हंसु ॥
फिटु इवेहा जीविआ जितु खाइ वधाइआ पेटु ॥
नानक सचे नाम विणु सभो दुसमनु हेतु ॥

राग सूही, पृष्ठ 790

गुरुदेव ने समुद्र तट पर एक पर्यटक स्थल पर नारियल के वृक्षों के नीचे कीर्तन करते हुए उन धनी पुरुषों को सम्बोधित करते हुए कहा सभी प्राणी यह नहीं जानते कि उनके पास श्वासों की पूंजी कितनी है। इस लिए विचार कर देखना चाहिए कि मानव शरीर धारण करने का मुख्य प्रयोजन क्या है? कहीं ऐसा न हो कि श्वासों की पूंजी बिना कारण नष्ट हो जाए और फिर खाली हाथ जाना पड़े।

हम आदमी हां इक दमी मुहलति मुहतु न जाणा ॥
नानकु बिनवै तिसै सरेवहु जाके जीअ पराणा ॥ 1 ॥
अंधे जीवना वीचारि देखि केते के दिना ॥ रहाउ ॥ 1 ॥
राग धनासरी, पृष्ठ 660

अनैतिक यौन सम्बन्धों पर फिटकार– (कोचीन, केरला)

श्री गुरू नानक देव जी कालीकट से समुद्र तटवर्तीय क्षेत्रों में चलते हुए एक और मुख्य बन्दरगाह कोचीन पहुँचे। वहाँ भी लगभग वैसी ही स्थिति थी। अधिकांश लोगों की आर्थिक दशा अच्छी थी। इस लिए वे विलासिता का जीवन जीने में ही विश्वास रखते थे। भजन, बन्दगी को अनावश्यक कार्य समझ कर साधु-संतों की हंसी उड़ाते थे। उन का मुख्य लक्ष्य धन एकत्र करना तथा सुरा-सुन्दरी में खोए रहना था।

गुरुदेव जब उस बंदरगाह के रमणीक तटीय स्थलों पर विचरण कर रहे थे तो उन्होंने पाया कि धनी परिवारों के युवा जोड़े संध्या समय प्रेम क्रीड़ा का छलावा करते हुए अनैतिक यौन सम्बन्ध बनाये हुए थे और समाज में आचरणहीनता का प्रसार करते थे। जिस से वातावरण दूषित हो रहा था तथा अज्ञानी लोग अपना अमूल्य मनुष्य जन्म पशुओं की भान्ति व्यर्थ गवा रहे थे। अत: गुरुदेव से यह सब देखा न गया, वह अपनी बाणी द्वारा कह उठे –

साची सुरति नामि नही त्रिपते हउमै करत गवाइआ ॥
पर धन पर नारी रतु निंदा बिखु खाई दुखु पाइआ ॥
सबदु चीनि भै कपट न छूटे मनि मुखि माइआ माइआ ॥
अजगरि भारि लदे अति भारी मरि जनमे जनमु गवाइआ ॥
राग मलार, पृष्ठ 1255

गुरुदेव ने इस कुरीति के लिए वहाँ के समाज में जागृति लाने के उद्देश्य से नगर के प्रमुख स्थलों पर अपार जन समूहों में कीर्तन के माध्यम से अपनी विचारधारा रखी और अपने प्रवचनों से धनी समाज को फिटकारा और कहा कि वे लोग सत्य के मार्ग के पांधी न बनकर धन के अभिमान में मनुष्य जन्म व्यर्थ गवा रहे हैं। सभी लोगों को चाहिए कि प्रभु नाम से मन को साधें तथा माया के पीछे न भागें। दूसरों की पत्नी, दूसरों की निंदा में दुख ही दुख है यह बातें क्षणिक सुख तो दे सकती हैं परन्तु बाद में पश्चाताप, ग्लानी, असाध्य रोग, इत्यादि अनेकों कष्ट उपहार में दे जाती हैं जिन का व्यक्ति को अजगर की भांति भार उठाये चलना पड़ता है। अत: यह कर्म भूमि है, इस में किसी को भी फल भोगे बिना छुटकारा नहीं मिल सकता। इस लिए शुभ कर्म करना अनिवार्य है।

स्वांगी साधु, संन्यासीयों को ललकार – (त्रिवेन्द्रम, केरला)

श्री गुरू नानक देव जी कोचीन बन्दरगाह से आगे बढ़ते हुए केरल प्रांत के मुख्य नगर त्रिवेन्द्रम में पहुँचे। यह भू भाग भी प्राकृतिक सौन्द्रर्य से सम्पन्न है। वहाँ पर तापमान भी लगभग सामान्य रहता है तथा वर्षा अधिक होने के कारण हरा-भरा नमी भरपूर मौसम तथा उपजाऊ प्रदेश है। इस लिए वहाँ पर उत्तरी भारत से अधिकांश सन्यासी, साधु वेष में सामूहिक रूप में तीर्थ यात्रा पर भ्रमण करते हुए पहुँचते थे। उन का विश्राम गृह वहाँ के विशाल मन्दिर हुआ करते थे तथा उदर पूर्ति के लिए वे स्थान-स्थान पर पहुँच कर आहार जुटाने में ही ध्यान केन्द्रित रखते थे। कभी उचित भोजन व्यवस्था न मिल पाने के कारण असन्तोष में परेशान होकर यहां-वहां भटकने लगते तथा आपस में

भोजन के बटवारे पर झगड़ा भी करते। ऐसी ही एक साधु मण्डली की गुरुदेव के साथ रास्ते में भेंट हो गई जो कि तृष्णा का दामन न छोड़ कर उस के पीछे मारे-मारे फिर रहे थे। वे सब गुरुदेव के साथ हो लिए। गुरुदेव जहाँ भी जाते, वे अपने नियमानुसार समय-समय, गांव देहातों में जन साधारण के लिए कीर्तन करते और विचारों के आदान-प्रदान के लिए प्रवचन करते, जिस से कहीं-कहीं भक्तजन सेवा करने की दृष्टि से कुछ जलपान, खाद्य सामग्री या उपहार भेंट करते। इस साधु मण्डली में गुरुदेव सब कुछ बराबर बांट देते। इस प्रकार उनको गुरुदेव का सहारा एक साधन के रूप में मिल गया। जिधर भी गुरुदेव जाते वे लोग वहीं का रुख कर लेते, क्योंकि वे जानते थे कि गुरुदेव की बहुमुखी प्रतिभा के कारण प्रत्येक स्थान पर, उनकी बहुत आदर मान से भली भान्ति सेवा होती थी। परन्तु गुरुदेव जी, उन सभी में संन्यासियों के लक्षण न पाकर बहुत क्षुब्ध थे कि उन लोगों ने व्यर्थ का साधु-वेष धारण किया हुआ था वास्तव में वे साधु के वेष में स्वादू थे। क्योंकि उन का मुख्य ध्येय मुफ्त के माल से मौज मस्ती उड़ाना था। अत: गुरुदेव ने उन को चुनौती दी और कहा-

इकि कंद मूलु चुणि खाहि वण खंडि वासा ॥
इकि भगवा वेसु करि फिरहि जोगी संनिआसा ॥
अंदरि त्रिसना बहुतु छादन भोजन की आसा ॥
बिरथा जनमु गवाहि न गिरही न उदासा ॥
जमकालु सिरहु न उतरै त्रिबिधि मनसा ॥
गुरमती काल न आवै नेड़ै जा होवै दासनि दासा ॥
राग माझ, पृष्ठ 140

"तुम लोग न गृहस्थी हो, न उदासी, तुम्हारे अन्दर तृष्णा वैसे की वैसे ही है, भोजन तथा वस्त्रों की चाहत है। तुम लोगों ने मन पर विजय न पाकर केवल बाहरी रूप साधु का धारण कर के इस मानव जन्म को व्यर्थ गवाने का कार्य भर किया हुआ है। यदि तुम में से कोई वनों में निवास कर कन्द-मूल फलों पर जीवन निर्वाह कर रहा है तो भी वह गुरू के ज्ञान बिना एकाग्र मन न हो कर संकल्प विकल्प से पीछा नहीं छुड़ा पा रहा।

प्रकृति सौन्दर्य पर न्यौछावर – कुमारी अन्तरीप (कन्या कुमारी)

श्री गुरू नानक देव जी आगे संगलाद्वीप (श्री लंका) प्रस्थान के लिए दक्षिण भारत के अन्तिम छोर कन्या कुमारी पहुँचे। वहाँ पर भारत का भू भाग समाप्त होता है तथा हिन्द महासागर के दर्शन होते हैं। गुरुदेव ने इसी स्थान से एक छोटे जहाज द्वारा श्री लंका (संगला द्वीप) की यात्रा आरम्भ कर दी। जहाज की छत पर बैठे यात्रियों के अनुरोध पर गुरुदेव ने भाई मरदाना जी को कीर्तन के लिए कहा तथा स्वयं प्रकृतिक सौन्दर्य के दृश्यों को अपनी बाणी में चित्रित करने लगे –

कुदरति दिसै कुदरति सुणीऐ कुदरति भउ सुख सारु ।।
कुदरति पाताली आकासी कुदरति सरब आकार ।।
कुदरति वेद पुराण कतेबा, कुदरति सरब वीचारु ।।
कुदरति खाणा पीणा पैनणु कुदरति सरब पिआरु ।।
कुदरति जाती जिनसी रंगी कुदरति जीअ जहान ।।
राग आसा, पृष्ठ 464

राजा शिवनाभ – मटिया कलम (कोलम्बो)

श्री गुरू नानक देव जी का एक परम भक्त भाई मनसुख था जो कि लाहौर नगर का एक बहुत बड़ा व्यापारी था, उसने गुरुदेव से सुलतानपुर में गुरू दीक्षा प्राप्त कर सिक्खी धारण कर ली थी अर्थात शिष्य बन गया था। वह अपने व्यापार को विकसित करने के लिए दक्षिण भारत से मसाले इत्यादि खरीदने तथा पंजाब का माल वहाँ बेचने पहुँचा हुआ था। वह अपने माल की मन्डी की खोज में श्री लंका के मटिया कलम स्थान पर पहुँच गया था। वहाँ पर उस ने गुरुदेव के अनुयायी होने के नाते उनकी शिक्षा के अनुसार नित्य कर्म करना प्रारम्भ कर दिया। प्रात:काल उठकर प्रभु चिन्तन करना तत्पश्चात् भोजन बनाकर लंगर रूप में जरूरतमन्दों में बांट कर खाना। अकस्मात् ही एक

घटना इस प्रकार हुई कि उस दिन एकादशी का मुख्य व्रत था। स्थानीय नियमावली अनुसार उस दिन सभी ने व्रत रखना था, सरकारी आदेश के उल्लंघन की आज्ञा किसी नागरिक को भी नहीं थी। अत: किसी को भी घर पर रसोई तैयार करने का साहस नहीं था। भले ही वह व्रत रखने की स्थिति में न था, परन्तु भाई मनसुख ने गुरू जी के आदेश अनुसार भोजन तैयार कर सभी जरूरतमन्दों को भोजन कराया। बस फिर क्या था उन्हें गिरफ्तार कर व्रत न रखने के अपराध में दंडित करने के लिए न्यायधीश के समक्ष प्रस्तुत किया गया। भाई मनसुख जी ने अपने स्पष्टीकरण में कहा, "महोदय मैं भी ईश्वर का भक्त हूँ। अत: मैं उसी के नाम पर, उसी के नियम अनुसार गरीबों की सहायता करना अपना कर्त्तव्य समझता हूँ। ताकि कोई भूखा-प्यासा न रहे किन्तु आप बिना कारण दीन दुखियों से उपवास करने को कहते हैं, जब कि भोजन बिना उन को जीने के लिए बाध्य करना, उन को कष्ट देकर पीड़ित करने के समान है। वह ईश्वर सभी को आजीविका (रोजी-रोटी) देता है। परन्तु आप अपनी मिथ्या मान्यताओं के अनुसार, उन में हस्तक्षेप कर जन-साधारण के जीवन में परेशानियां उत्पन्न करते हैं। इस से प्रभु प्रसन्न होने वाला नहीं क्योंकि वह सब का रिज़क दाता है किन्तु आप का नियम उस के कार्य में बाधा उत्पन्न करता है।" उनके इस तर्क ने न्यायधीश को निरुतर कर दिया और न्यायधीश ने इस घटना क्रम को राजा शिवनाभि के सम्मुख भेज दिया। शिवनाभि ने भाई मनसुख से विचार गोष्ठी की। अत: सन्तुष्ट होकर पूछा, "आप के आध्यात्मिक गुरू कौन है? मैं उन के दर्शनों की कामना करता हूँ क्योंकि मैं किसी पूर्ण पुरुष से गुरू दीक्षा लेने की अभिलाषा लिए बैठा हूँ।" इस पर भाई मनसुख जी ने बताया, "मेरे गुरू, बाबा नानक देव जी हैं, वह इन दिनों अपने प्रचार दौर के लिए दक्षिण के तीर्थ स्थलों इत्यादि से होते हुए, विश्व भ्रमण पर है और आधुनिक जीवन शैली से प्रभु प्राप्ति के सिद्धांतों का प्रचार कर रहे हैं। सम्भावना है कि वह इस द्वीप में भी पधारेंगे। क्योंकि वह ऐसी जगह अवश्य ही पहुँचते हैं जहां उन को कोई भक्तजन याद करता है।" बस फिर क्या था। राजा शिवनाभि ने गुरुदेव के स्वागत की तैयारी प्रारम्भ कर दी। पाखण्डी साधुओं को जब यह बात मालूम हुई तो उन्होंने राजा की श्रद्धा भक्ति से अनुचित लाभ उठाने की सोची। वे जानते थे कि राजा शिवनाभि ने गुरू नानक देव जी को पहले कभी देखा नहीं है। अत: वे नानक जी जैसा रूप धरकर मटियांकलम पहुँच जाते और अपने

शिष्यों द्वारा झूठा प्रचार करवाते कि गुरू नानक जी आए हैं। राजा शिवनाभि पहले भी एक दो बार पाखंडी साधुओं के चुंगल में फंस गया था परन्तु जल्दी ही झूठे साधुओं का भ्रम जाल टूट जाता, क्योंकि वे आध्यात्मिक परीक्षा लेने पर निम्न स्तर तक गिर जाते। भाई मनसुख ने गुरुदेव की अलौकिक तेजस्वीमय प्रतिभा जो ब्यान की थी, वह उन में कहीं दिखाई न देती। वे तो माया तथा रूप यौवन के मोह जाल में फंस जाते। जिस से उन का स्वांगी रूप नंगा हो जाता।

गुरुदेव के गुणों का ध्यान कर राजा शिवनाभि नित्य उन की प्रतीक्षा करता, धीरे-धीरे यह प्रतीक्षा अधीरता में बदल गई। एक दिन राजा शिवनाम दर्शनों के लिए व्याकुल बैठा था कि राजकीय उदियान के माली ने सूचना दी, "हे! राजन आज आप के यहाँ वास्तव में गुरू बाबा जी आ गए है। वह अपने साथियों के साथ वाटिका में कीर्तन में व्यस्त हैं उन का कीर्तन सुनते ही बनता है। वे हरियश में लीन हैं। उन के चेहरे की शान्ति एवं एकाग्रता से कौन है जो प्रवाभित न हो?" इस समाचार को पाते ही राजा शिवनाभि ने युक्ति से काम लेने का विचार बनाया और अपने मंत्री परशुराम को आदेश दिया कि आए हुए साधु बाबा की परीक्षा ली जाए। मंत्री ने आज्ञा पाते ही गुरुदेव के स्वागत के लिए कुछ चुनी हुई नृत्यकाएं भेजी जिन का मुख्य कार्य पुरुषों को अपने रूप यौवन से लुभा कर जाल मे फंसाना होता था। वे युवतियां सम्पूर्ण हार श्रृंगार कर हाव-भाव का प्रदर्शन करती हुई नृत्य कलाओं से आरती उतारने लगीं और स्वागत के मंगल गीत गाने लगी। परन्तु उन्होंने गुरुदेव को कीर्तन में लीन पाया। वह तो प्रभु चरणों में अपनी सुरति एकाग्र कर स्मरण में व्यस्त थे। नृत्यकाओं ने कई तरह से प्रयास किए कि किसी प्रकार गुरुदेव को विचलित किया जा सके, किन्तु गुरुदेव ने भाई मरदाना जी को प्रभु स्तुति में कीर्तन करने को कहा। गुरुदेव ने उन काम उत्तेजक मुद्राओं में वासनाओं का वाण चलाने वाली युवतियों को निष्क्रिय करने के लिए पुत्री कह कर सम्बोधन किया तथा उन को एहसास कराया कि वे भटक गई थी और सौन्दर्य यौवन व्यर्थ गंवा रही थी। गुरुदेव ने उच्चारण किया -

कापड़ु पहिरसि अधिकु सीगरु ॥ माटी फूली रूपु बिकारू ॥
आसा मनसा बांधो बारू ॥ नाम बिना सूना घरु बारु ॥
गाछहु पुत्री राज कुआरि ॥ नामु भणहु सचु दोतु सवारि ॥
प्रिउ सेवहु प्रभु प्रेम अधारि ॥ गुर सबदी बिखु तिआस निवारि ॥

राग बसंत, पृष्ठ 1187

गुरुदेव के यह शब्द उन के हृदयों को भेदन कर गये और उन को अपने वासनामय नंगेपन पर लज्जा आने लगी। गुरुदेव ने उनका ध्यान आन्तरिक प्रकाश की ओर आकर्षित किया, जिस से सत्य मार्ग पर चल कर सदैव ही आनंद की प्राप्ति की जा सकती है वे जल्दी ही जान गई कि गुरुदेव को उन की दीन दशा पर दया आई है। अत: वे सब की सब गुरुदेव से क्षमा याचना करने लगी तथा प्रणाम करती हुई लौंट गई।

विशेष नृत्यकाओं का दल पराजित होकर लौट आया है जब यह समाचार राजा को मिला तो उसने पुन: एक और परीक्षा लेने के लिए मन्त्रि को आदेश दिया। मन्त्रि परशु राम बहुमूल्य रत्नों के सजे थाल उपहार के रूप में ले कर गिया और आग्रह करने लगा कि वे उन्हें स्वीकार करें। किन्तु गुरुदेव ने सभी उपहारों को जैसे का तैसा लौटा दिया और कहा, "यह माया तो हमारे किसी काम की नहीं। हम तो केवल एक ही विशेष वस्तु स्वीकार करते हैं जो कि तुम्हारे राजा के पास है। अत: हमें जो आवश्यकता है वही मिलना चाहिए।" यह उत्तर पाकर मन्त्रि ने राजा को गुरुदेव की इच्छा से अवगत करा दिया।

इस बार गुरुदेव के दर्शनों को बहुमूल्य भेंट लेकर राजा शिवनाभ स्वयं उपस्थित हुआ। अभिनंदन के पश्चात् आग्रह करने लगा कि उसकी भेंट स्वीकार करें। गुरुदेव ने कहा-यह सब वस्तुएं तुम्हारी नहीं है तथा मिथ्या हैं नाशवान हैं। हमें तो वह वस्तु दो जो तुम्हारी हो।

शिवनाभ यह सुनकर सोच-विचार में पड़ गया कि ऐसी कौन सी वस्तु है जो उसकी भी हो और नाशवान भी न हो। अन्त में वह बोला, "गुरू जी! मेरे पास तो ऐसी कोई वस्तु है ही नहीं जो मेरी भी हो। और नाशवान न हो। कृपया आप ही बताएं कि मैं

आप को क्या भेंट करूं?" इस पर गुरदेव जी ने कहा, "हमें तुम्हारा मन चाहिए, जो अभिमान करता है कि मैं राजा हूँ। अत: हम तुम से तुम्हारा मैं-मैं करने वाला मन रूपी अभिमान चाहते हैं। जब तुम इसे हमें दे दोगे तो सब सामान्य हो जाएगा क्योंकि यह वही है जो सभी प्रकार की समस्याएं उत्पन्न करता है तथा मनुष्य का मनुष्य से वर्गीकरण करता है। यह, मैं-मैं का गर्व ही जीव आत्मा और परमात्मा के मिलन में बाधक है अत: हम आप से इसे ही लेना चाहते हैं।" राजा शिवनाम ने कहा ठीक है परन्तु इस के न रहने से मैं राजा कैसे कहलाऊंगा तथा मेरे आदेश किस प्रकार व्यवहार में आएंगे?

वही तो विधि-विधान हम बताने आए हैं कि कर्म से राव होते हुए भी मन से रंक के समान नम्र बनकर जीना चाहिए। ताकि शासन व्यवस्था करते समय किसी से अन्याय न हो पाए। राजा शिवनाम ने कहा, "ठीक है आप अब राज महल में चलें, सवारी हाजिर है।" गुरुदेव ने कहा, "हम पशुओं की सवारी नहीं करते हम तो मनुष्यों की सवारी करते हैं।" राजा बोला, "ठीक है जैसी आप की इच्छा है। आप मनुष्य की पीठ पर विराजें और चलें।" गुरुदेव ने कहा, "हमारे कहने का तात्पर्य है कि पशु प्रवृति वाले शरीरों पर हम कैसे अधिकार पा कर उनका संचालन कर पाएंगे हमें तो मानव प्रवृति वाला कोई शरीर मिले जिस के हृदय पर हम शासन कर यह यात्रा करें।"

यह सुनकर राजा शिवनाम बोला, "गुरुदेव! हम अल्प बुद्धि वाले हैं। आप आज्ञा करें तो मैं ही आप का घोड़ा बन जाता हूँ। गुरुदेव ने कहा, "यही ठीक रहेगा। हम आज से तुम्हारे हृदय रूपी घोड़े पर नाम रूपी चाबुक लगाकर सवारी करेंगे। अत: तुम भी हमारी आज्ञा अनुसार यहाँ सत्संग के लिए एक धर्मशाला बनवाओ जिस में हम कीर्तन द्वारा हरियश रूपी अमृत भोजन बांटा करेंगे।

धर्मशाला बनवाने के लिए तत्काल आदेश दिया गया जिसे स्थानीय परम्परा अनुसार बांस तथा बैंत का तैयार करवा लिया गया। उस में गुरुदेव प्रतिदिन कीर्तन तथा प्रवचन करने लगे। जिज्ञासु अलग-अलग विषयों पर गुरुदेव से प्रश्न करते, जिनका समाधान करते हुए गुरुदेव कहते यदि मनुष्य अपने जीवन का मुख्य लक्ष्य जान जाए तो उस की प्राप्ति की तैयारी करने पर बाकी की समस्यायों का समाधान स्वयं हो जाएगा। वास्तव में मानव का इस मृत्यु लोक में आने का प्रयोजन है-शुभ कर्म कर प्रभु पारब्रह्म

परमेश्वर के साथ हो चुकी दूरी को समाप्त कर उस में पुनः अभेद हो जाना इस लिए मानव हृदय में उस की याद सदैव बनी रहनी चाहिए तथा कब मिलन होगा एक तड़प होनी चाहिए।

दरसन की पिआस जिसु नर होइ ॥
एकतु राचै परहरि दोइ ॥
दूरि दरदु मथि अंम्रितु खाइ ॥ गुरमुखि बूझै एक समाइ ॥1॥
तेरे दरसन कउ केती बिललाई ॥
विरला को चीनसि गुर सबदि मिलाइ ॥ 1 ॥ रहाउ ॥

राग बसंत, पृष्ठ 1188

गुरुदेव का समस्त कार्य क्षेत्र एक विशेष लक्ष्य की प्राप्ति के लिए, केवल मन को साधने की नियमावली दृढ़ करवाना था। अतः आप ने बताया कि बाहरी भेष कर्म–काण्ड, मूर्ति पूजा के आडम्बर इत्यादि सभी कुछ व्यक्ति को उलझा कर भटकने पर विवश कर देते हैं, तथा व्यक्ति उन में खो जाता है और मुख्य उद्देश्य से भटक जाता है। इस लिए उसे सदैव सावधान रहते हुए युक्ति से तर्क संगत कार्य करने चाहिए। अंध विश्वासी आवागमन के चक्र से नहीं छूट सकता, क्योंकि वह विवेक बुद्धि से काम नहीं लेता। बिना विवेक के प्रभु प्राप्ति असम्भव है।

गुरुदेव के ऐसे उपदेशों ने वहाँ पर क्रांति ला दी। प्रत्येक स्थान पर जागृति का प्रचार–प्रसार दिखाई देने लगा। लोग परम्परा अनुसार मूर्ति पूजा का कर्म–काण्ड त्याग कर एक ईश्वर के चिन्तन, मनन में व्यस्त रहने लगे। परन्तु रूढ़िवादी विचारों वाले लोगों ने आपत्ति की, कि वे तो उनका परम्परागत ढंग का त्याग करने में असमर्थ हैं, जब तक कि इस विषय पर एक विचार गोष्ठी का आयोजन नहीं किया जाता। गुरुदेव जी यह

संदेश पाकर बहुत प्रसन्न हुए, अब वहाँ के निवासी प्यार से उन्हें आचार्य नानक कह कर बुलाने लगे। वे पहले से ही इस विचार विमर्श के इच्छुक थे। विरोधी पक्ष ने अपने सभी विद्वानों और पण्डितों को आमंत्रित किया वे यह शास्त्रार्थ, अनुराधापुरम में होना निश्चित हुआ। परन्तु समस्या सामने यह आई कि अंतिम निर्णय कौन करेगा। पण्डितों का मत था कि बहुमत जिस के पक्ष में हो वही विजयी होगा। परन्तु गुरुदेव का कहना था कि जिन के पक्ष में तर्क अच्छे हों तथा अकाट्य तथ्य हो वही विजयी होगा। पण्डित इस बात पर सहमत नहीं हुए क्योंकि वह जानते थे कि गुरुदेव की अकाट्य तर्क शक्ति के समक्ष वह टिक नहीं सकते। वह तो केवल अपने बहुमत से ही विजयी होना चाहते थे। अत: प्रतियोगिता स्थगित कर दी गई क्योंकि दोनों पक्ष सहमत न हो सके कि निर्णय किस विधि अनुसार हो। उधर गुरुदेव का कथन था कि भेड़ों की गिनती सदैव अधिक होती है शेरों की नहीं अर्थात मूर्खों की गिनती सदैव अधिक रही है, विद्वानों की नहीं।

गुरुदेव ने राजा शिवनाभ तथा वहाँ के निवासियों को गुरमति दृढ़ करवाकर आगे के लिए प्रस्थान की तैयारी कर दी तो राजा और उस की रानी चंद्र कला ने गुरुदेव से अनुरोध किया कि वे वहाँ से न जाएं। किन्तु गुरुदेव ने उन्हें सांत्वना देते हुए कहा–यह शरीर तो नाशवान है इस के लिए आप को मोह–ममता नहीं करनी चाहिए। रानी ने तब कहा–हम आप का वियोग सहन नहीं कर पाएंगे, अब आप के दर्शन कैसे होंगे? गुरुदेव ने तब कहा–मेरा वास्तविक स्वरूप तो मेरी बाणी है वही मेरा निरगुण स्वरूप है। यदि आप नित्यप्रति साध संगत में शब्द कीर्तन सुनेंगे तो हम प्रत्यक्ष होंगे तथा आप का हमारे साथ सम्पर्क सदैव स्थापित रहेगा।

कार्तिकय मन्दिर – (कत्तरगामा नगर, श्रीलंका)

श्री गुरू नानक देव जी कोटी, सीता वाका, बादूला इत्यादि नगरों से होते हुए कत्तरगामा पहुँचे। वहाँ पर शिव के पुत्र कार्तिकेय का एक विशाल मन्दिर था। स्थानीय जनता में इस की बहुत मान्यता थी तथा किंवदंतियां प्रचलित थी कि उस देवता रूप पर उस की माता पार्वती का मन भी भ्रम गया था। अत: कार्तिकेय की पूजा पुजारी गण पर्दे की ओट लेकर ही करते थे। जन साधारण को मूर्ति के दर्शन नहीं करवाए जाते थे। विशेषकर स्त्रियों को निकट नहीं आने दिया जाता था। जब भी कोई नव विवाहित वधु पूजा-अर्चना के लिए आती तो मूर्ति तथा दुल्हन के मध्य पर्दा अनिवार्य होता था। किंवदंती यह थी कि कार्तिकेय के दर्शन करने मात्र से दुल्हन का मन चंचल होकर विचलित हो जाता है जिस से उस के भटकने का भय है। क्योंकि यह देवता रूप यौवन का प्रतीक है। अत: दुल्हन को दर्शन किये बगैर पूजा-अर्चना कर रूप-यौवन की कामना करनी चाहिए।

गुरुदेव ने इस तरह की काल्पनिक कथाओं पर आपत्ति की और विवेक बुद्धि से इस बात का विश्लेषण करने के लिए जन-साधारण को आमन्त्रित किया। गुरुदेव ने अपने प्रवचनों में कहा-सर्वशक्तियों का स्वामी वह प्रभु-परमेश्वर स्वयं है उस के रहते किसी दूसरे से कोई कामना करनी ही नहीं चाहिए। जो कोई एक ईश्वर को छोडकर किसी दूसरे दर पर भटकता है वह ठोकरें ही खाता है तथा उसे प्रप्ति की कुछ आशा भी नहीं करनी चाहिए। हां अनिष्ट होने की सम्भावना अवश्य हो सकती है।

एक जिज्ञासु ने गुरुदेव से पूछा, "हे गुरुदेव यह पण्डित कार्तिक मास में बच्चों के विवाह भी नहीं करने देते। उन का कथन है कि कार्तिक मास में विवाहिता स्त्री पथ भ्रष्ट कलंकित हो जाती है क्योंकि कार्तिक माह में कार्तिकेय देवते का प्रभाव बना रहता है।"

गुरुदेव ने उत्तर में कहा, "इन बातों का कोई आधार नहीं। यह केवल दकियानूसी विचारधारा है जिस को अंधविश्वास तथा अवैज्ञानिक कह सकते हो।"

एकीश्वर के अस्तित्व पर गोष्ठी – (वटीकलोवा बन्दरगाह, श्री लंका)

श्री गुरू नानक देव जी, कत्तरगामा नगर से वटीकलोवा बन्दरगाह पहुँचे। यह बन्दरगाह श्री लंका के पूर्वी तटीय स्थल पर है। वहाँ पर बौद्ध धर्मावलम्बियों का बहुत प्रभाव था। वे लोग प्रभु के अस्तित्व को स्वीकार नहीं करते थे। जब कि गुरुदेव प्रभु परमेश्वर को सर्वव्यापक, साक्षात तथा सर्व शक्तिमान मानते थे। अत: इस मतभेद को लेकर बहुत बड़ा विवाद उत्पन्न हो गया। जिस के समाधान के लिए स्थानीय तत्कालीन राजा धर्मा-प्रक्रमावाहु नोवम् ने सभी तरह के विज्ञान जानने वालों और हिन्दू पंडितों को आमन्त्रित कर कहा कि आप सब मिलकर ईश्वर के अस्तित्व के ऊपर चर्चा करें। इस अवसर का लाभ उठाते हुए गुरुदेव ने अपने विचार कीर्तन द्वारा प्रकट करते हुए बाणी उच्चारण की-

एको एकु कहै सभु कोई हउमै गरबु विआपै ॥

अंतरि बाहरि एकु पछाणै इउ घरु महलु सिञापै ॥

प्रभु नेड़ै हरि दूरि न जाणहु एको स्रिसटि सबाई ॥

एकंकारु अवरु नही दूजा नानक एकु समाई ॥

राग रामकली, पृष्ठ 930

गुरुदेव ने अपनी बाणी में कहा-केवल अभिमान या अहंभाव से ही व्यक्ति अपने से प्रभु को दूर मान लेता है। नहीं तो वह उसके अन्दर है और वह उस में व्याप्क है। ठीक उसी प्रकार जैसे एक मछली समुद्र के भीतर रहती है और समुद्र की खोज में निकलती है कि समुद्र कहाँ तक है? जब कि वह स्वयं समुद्र में है और उस में भी समुद्र है। ठीक उसी प्रकार ईश्वर, ज्योति स्वरूप शक्ति सर्वथा विद्यमान है। यह शरीर ही उस की अदभुत रचना है। न किसी ने इसे खरीदा है न ही किसी ने इसे बनाया है। अत: यह सब उस प्रभु का उपहार है जिस का कि हर एक को सदुपयोग करना चाहिए। गुरुदेव के तर्कों के सामने कोई टिक नहीं सका। अत: सब ने अन्त में पराजय स्वीकार कर ली।

बौद्ध भिक्षुकों के साथ गोष्ठी – (ट्रिंकोमली नगर, श्री लंका)

श्री गुरू नानक देव जी वटीकलोवा से प्रस्थान कर ट्रिंकोमली नगर पहुँचे। उन दिनों यह नगर भी घने जंगलों में समुद्र के किनारे बसा हुआ था। वहाँ पर एक प्राचीन हिन्दू मन्दिर था। गुरुदेव की महिमा सुनकर वहाँ के नागरिक उन के दर्शनों के लिए उस मन्दिर में इकट्ठे हो गये। परन्तु गुरुदेव वहाँ न जाकर एक वीरान स्थल पर जा विराजे तथा भाई मरदाना जी को साथ लेकर कीर्तन में व्यस्त हो गए। अत: कुछ कुलीन नागरिक आप की अगवाई के लिए आए और प्रार्थना की कि वे उन के मन्दिर में पधारें। किन्तु गुरुदेव ने कहा ईश्वर सर्वव्यापक है और प्रत्येक स्थान पर विद्यमान है। जिसका उनको अनुभव हो रहा है। गुरुदेव के वहाँ स्थिर रहने से संगत धीरे-धीरे वहीं पर जुड़ गई और कीर्तन समाप्ति पर श्रोताओं ने गुरुदेव से कहा, "आप जी ने वटीकलोवा में ईश्वर के अस्तित्व के विषय में बौद्ध भिक्षुकों को ज्ञान देकर उन का मार्ग दर्शन किया है। उसी प्रकार ईश्वर प्राप्ति के लिए हमारा भी मार्ग दर्शन करें। हम ऐसे कौन से कार्य करें जिस से प्रभु प्राप्ति सम्भव हो सके?"

इस के उत्तर में गुरुदेव ने कहा, "ऐसे सैंकड़ों कर्म-काण्ड हैं जो धार्मिक माने जाते हैं जैसे-हिमालय पर घोर तपस्या करना, स्वर्ण के भन्डार दान करना, भूमि दान करनी, धार्मिक पुस्तकों का अध्ययन करते रहना, गाय दान करनी, तीर्थ यात्रा करनी इत्यादि। यदि यह सब कर्म तराजू के एक पलड़े पर रखे जाए और दूसरी तरफ हरिनाम रखा जाए तो हरिनाम का पलड़ा ही सदैव भारी रहेगा क्योंकि ये कर्म हरि भजन के समक्ष तुच्छ हैं। हां शर्त केवल एक ही है कि हरि भजन करते समय चरित्र का उज्ज्वल होना अति आवश्यक है। अर्थात आचरण से शुभ कर्म करना अनिवार्य है। आप जी ने तब इसी संदर्भ में बाणी उच्चारण की -

राम नामि मनु बेधिआ अवरु कि करी वीचारु ॥

सबद सुरति सुखु उपजै प्रभ रातउ सुख सारु ॥

जिउ भावै तिउ राखु तूं मै हरि नामु अधारु ॥ 1 ॥

मन रे साची खसम रजाइ ॥

जिनि तनु मनु साजि सीगारिआ तिसु सेती लिव लाइ ॥ 1 ॥ रहाउ ॥

तनु बैसंतरि होमीऐ एक रती तोलि कटाइ ॥

तनु मनु समधा जे करी अनदिनु अगनि जलाइ ॥

हरि नामै तुलि न पुजई जे लख कोटी करम कमाइ ॥ 2 ॥

राग सिरी राग, पृष्ठ 62

प्रेम ही पूजा है – (अनुराधापुरा, श्री लंका)

श्री गुरू नानक देव जी ट्रिंकोमली से अनुराधापुरा पहुँचे। यह स्थान भी श्री लंका के उत्तरी क्षेत्र में केन्द्र बिन्दु है। वहाँ से ज्ञान गोष्ठी के लिए गुरुदेव को पहले भी निमन्त्रण मिल चुके थे परन्तु उन्होंने वह स्वीकार नहीं किये थे। उनके अनुसार उस का निर्णय तर्को के आधार पर हो जब कि विपक्षी दल चाहता था कि उस बात का निर्णय बहुमत के बल पर होना चाहिए। जब आप वहाँ पर अपने कार्यक्रम अनुसार पहुँचें तो आप को मिलने के लिए अनेक लोग जिज्ञासा-वश पहुँचे, कि देखें, वह कौन सा महापुरुष है जिस ने राजा शिवनाभि को अपना अनुयायी बना लिया है। अतः गुरुदेव सभी से बहुत स्नेह से मिलते तथा उनकी शंकाओं का निराकरण करते। इस प्रकार वहां पर एक प्रश्न उभरा कि प्रभु दिव्य ज्योति के दर्शन साकार रूप में या निराकार रूप में होने चाहिए और मानव का कल्याण किस रूप में सम्भव है? इस के उत्तर में गुरुदेव ने स्पष्ट किया, "अधिकांश लोग साकार उपासना पहले से ही करते हैं जिस में व्यक्ति बिना कारण बच्चों जैसे झमेले में उलझ कर रह जाता है। कभी मूर्ति को नहलाओ, कभी खिलाओ कभी सुलाओ इत्यादि। जब कि व्यक्ति स्वयं जानता है कि उसके द्वारा किए गए परीश्रम का

उस मूर्ति को कोई लाभ नहीं। क्योंकि वह जड़ है अतः उसका परीश्रम व्यर्थ जाता है। जब परीश्रम व्यर्थ है तो उस के फल की आशा भी व्यर्थ है। इस लिए उनको अनुभव करना चाहिए कि वे स्वयं उस पारब्रह्म परमेश्वर की बनाई गई अद्भुत जीवित मूर्तियां हैं। जिस में वह स्वयं वास करते हैं। इसी लिए सभी महापुरुष बार-बार यही कहते रहे है-'घटि घटि महि हरि जू बसै सन्तन कहिओ पुकार', अर्थात हरी सब में एक समान रमा हुआ है। जब सब में उस प्रभु की ही ज्योति कार्य कर रही है तो सब को अपने भीतर ही उस की खोज करनी चाहिए। अतः उस मृग की भान्ति भटकते नहीं रहना चाहिए, जिस की नाभि में कस्तूरी है वह सुगन्धि की खोज में इधर-उधर अज्ञानता वश भागता फिरता है। अर्थात वह प्रेम अनुभव प्रकाश है उसे महसूस ही किया जा सकता है कि वह कण-कण में सर्व-व्यापक है। जिस दिन प्राणी उस प्रभु को अपने भीतर खोजने में जुट जायेगा उस दिन से द्वैतवाद भी समाप्त हो जाएगा तथा वह सबको स्नेह से देखने लग जायेगा। यह क्रान्तिकारी परिवर्तन सब में एकता लाएगा जिससे समाज में भाईचारा उत्पन्न होगा और आपसी ईर्ष्या कलह-कलेश समाप्त होकर परस्पर प्रेमभाव से जीवन व्यतीत करने का सिद्धांत समझ में आ जाएगा। अर्थात जो समाज का जाति-पाति के आधार पर वर्गीकरण है उस के पीछे साकार उपासना का ही हाथ है। क्योंकि साकार उपासना में प्रत्येक व्यक्ति का इष्ट अलग-अलग होता है जिस से एकता के स्थान पर अनेकता आ जाती है। वास्तव में प्रेम ही पूजा है जो केवल निराकार उपासना से ही प्राप्त हो सकती है।

एको एकु कहै सभु कोई हउमै गरबु विआपै ॥
अंतरि बाहरि एकु पछाणै इउ घरु महलु सिञापै ॥
प्रभु नेड़ै हरि दूरि न जाणहु एको स्रिसटि सबाई ॥
एकंकारु अवरु नहीं दूजा नानक एकु समाई ॥ 5 ॥

राग रामकली, पृष्ठ 930

दिव्य ज्योति की उपासना ही सर्वोत्तम – (रामेश्वरम, तामिल नाडू)

श्री गुरू नानक देव जी अनुराधापुरा से प्रस्थान कर मन्नार पहुँचे तथा यहाँ से सेतुबन्ध धनुष कोटी बन्दरगाह से रामेश्वरम पहुँचे। वहाँ पर एक विशाल प्राचीन मन्दिर है जिस में दूर-दूर से यात्री दर्शनों के लिए आते हैं। गुरुदेव ने निरंकार उपासना दृढ़ करवाने के लिए यांत्रियों के समक्ष प्रवेश स्थल पर कीर्तन प्रारम्भ कर दिया।

दूजी माइआ जगत चित वासु ॥ काम क्रोध अहंकार बिनासु ॥ 1 ॥

दूजा कउणु कहा नही कोई ॥ सब महि एकु निरंजन सोइ ॥1 ॥ रहाउ ॥

दूजी दूरमति आखै दोइ ॥ आवै जाइ मरि दूजा होइ ॥ 2 ॥

धरणि गगन नह देखउ दोइ ॥ नारी पुरख सबाई लोइ ॥ 3 ॥

रवि ससि देखउ दीपक उजिआला ॥ सरब निरंतरि प्रीतमु बाला ॥ 4 ॥

करि किरपा मेरा चितु लाइआ ॥ सतिगुरि मो कउ एकु बुझाइआ ॥ 5 ॥

एकु निरंजन गुरमुखि जाता ॥ दूजा मारि सबदि पछाता ॥ 6 ॥

ऐको हुकमु बरतै सभ लोई ॥ एकसु ते सब ओपति होई ॥ 7 ॥

राह दोवै खसमु ऐको जाणु ॥ गुर कै सबदि हुकमु पछाणु ॥ 8 ॥

सगल रूप वरन मन माही ॥ कहु नानक एको सालाही ॥ 9 ॥

राग गउड़ी, पृष्ठ 223

किंवदंतियों के अनुसार माना जाता है कि श्री राम चन्द्र जी ने रावण को पराजित करने के लिए वहाँ शिव जी की उपासना की थी। जिस कारण वहां पर अभी भी शिव पूजा की परम्परा चली आ रही है। गुरुदेव के कीर्तन को श्रवण कर रहे भक्तजनों ने पूछा कि आप जी किस के उपासक हैं क्योंकि आप की बाणी में शिव उपमा तो है नहीं? इस पर गुरुदेव ने अपने प्रवचनों में कहा कि हम सर्वशक्तिमान निराकार दिव्य ज्योति, पारब्रह्म परमेश्वर के उपासक है अत: हम उसी की उपमा करते हैं :-

पवणु पाणी अगनि तिनि कीआ ब्रहमा बिसनु महेस अकार ॥

सरबे जाचिक तूं प्रभु दाता दाति करे अपुनै बीचार ॥ 4 ॥

कोटि तेतीस जाचहि प्रभ नाइक देदे तोटि नाही भंडार ॥

पृष्ठ 504

ज्ञान और श्रद्धा दोनों अनिवार्य – (मदुरै नगर, तामिल नाडू)

श्री गुरू नानक देव जी रामेश्वर से जिस मुख्य भूमि पर पधारे। उस नगर का नाम रामनाथपुरम है। इस क्षेत्र में अनेक शिव मन्दिर हैं। उन दिनों भी स्थानीय लोग शिव उपासना में ही विश्वास रखते थे। अत: वहाँ के कुछ शिव उपासक समुहिक रूप में उतरी भारत की तीर्थ यात्रा करते समय ऋषिकेश तथा जोशीमठ इत्यादि स्थानों पर मछंदर नाथ के शिष्य गोरख नाथ के सम्पर्क में आ गए थे। वहाँ पर उन्होंने गोरख नाथ को गुरू धारण कर गुरू दीक्षा प्राप्त की और सन्यासी रूप धारण कर वापस मदुरै के निकट तिलगंजी नामक स्थान में एक मठ बनाकर उसका संचालन करने लगे। उन लोगों का मुखिया मंगल नाथ, सिद्धि प्राप्त व्यक्ति था, जो कि जन-साधारण को तान्त्रिक शक्तियों से भयभीत कर उन से धन अर्जित करता रहता था। अधिकांश लोग उस के वरदान तथा शापों से सहमे रहते थे। उस की भेंट गुरुदेव से हो गई। हुआ ऐसे कि एक विशेष स्थान पर गुरुदेव अपने प्रवचनों से जन-साधारण को निराकार उपासना की शिक्षा दे रहे थे और परम ज्योति की कीर्तन स्तुति कर रहे थे। मधुर संगीत के प्रभाव से धीरे-धीरे प्रतिदिन विशाल रूप में संगत एकत्र होने लगी। अत: गुरुदेव के दर्शनों को जो भी आता वह उन के विचारों का विवेचन करने को विवश हो जाता। युक्ति तथा तर्क संगत सिद्धांत हर एक के हृदय पर गहरा प्रभाव डालते। जिस कारण विवेकशील लोग निराकार की उपासना की ओर तुरन्त अग्रसर हो कर अपनी पुरानी साकार उपासना, मूर्ति पूजा की परिपाटी त्याग कर रोम-रोम मे रमे राम अर्थात निरांकार प्रभु की उपासना, गुरुदेव द्वारा दर्शायी विधि अनुसार प्रारम्भ कर देते। इस विधि में साध-संगत को प्रधानता थी और प्रभु स्तुति के लिए कीर्तन द्वारा हरियश करना तथा संगत की सेवा के लिए

समुहिक लंगर करना था। जिस के अनुसार बांट कर खाना सिक्ख मत का अनिवार्य अंग है। श्रद्धालु लोग दर्शन करते समय गुरुदेव को जो भी भेंट करते, वे सामग्री तथा धन इत्यादि लंगर के लिए भेज देते। अपने पास कुछ न रखते। लंगर प्रथा को देखकर दूर-दूर से जन समूह एकत्रित होने लगा जिस कारण स्थानीय योगियों के मठ में श्रद्धालु न के बराबर रह गए। इस प्रतिक्रिया को देखकर नाथ पंथियों को चिंता हुई वे भी गुरुदेव से अपना लोहा मनवाने के लिए ज्ञान-गोष्ठी करने आए। गुरुदेव ने उन्हें बहुत आदर मान से बिठाकर संगत में ज्ञान चर्चा प्रारम्भ की। मठ का मुखिया मंगल नाथ कहने लगा, "आप तो सांसारिक व्यक्ति हैं जब कि हम गृहस्थ त्यागी हैं। अत: जनता को ज्ञान उपदेश देकर त्यागी बनाना हमारा कार्यक्षेत्र है।" इस के उत्तर में गुरुदेव ने कहा, "त्याग तो मन का होता है, किन्तु आप ने शरीर से ही गृहस्थ त्याग दिया है जब कि आप का मन साधारण गृहस्थियों की तरह माया, तृष्णा, मोह ममता इत्यादि वासनाओं में ग्रस्त है। अत: आप का त्याग कोई त्याग नहीं केवल एक ढोंग है जो कि केवल उदर पूर्ति का साधन मात्र है। सत्य तो यह है, न तो आप योगी ही हैं न सांसारी क्योंकि जो शिक्षा आप जनता को देते हैं उस पर स्वयं अपना जीवन नहीं जीते। अत: आप की करनी कथनी में अन्तर है। यह कडुवा सत्य सुनकर योगी मंगल नाथ ने गुरुदेव पर प्रश्न किया, "आप अपने मन पर किस विधि द्वारा नियंत्रण करते हैं?" इस के उत्तर में गुरुदेव ने कहा, "हम 'शब्द गुरू' की कमाई करते हैं अर्थात गुरू उपदेशों पर जीवन व्यापन करने का निरंतर प्रयास करते रहते हैं। गुरू ज्ञान ही मन को विकारों से मुक्त रखता है, इस के लिए हठ योग की कोई आवश्यकता नहीं। यथार्थ यह है कि आत्मिक अभ्यासी (जिज्ञासु) एक ऐसा पक्षी है जो दो पंखों की सहायता से ही उड़ सकता है। एक पंख प्रेम का है तथा दूसरा पंख ज्ञान का, इन दो पंखों को आधार बनाकर कोई भी जिज्ञासु गृहस्थ में रहते हुए सहज योग द्वारा साधना कर मन पर विजय प्राप्त कर प्रभु में अभेदता प्राप्त कर सकता है। इस कार्य के साधन रूप में केवल सत्संग तथा सेवा की आवश्यकता पड़ती है। हम ने सेवा की विधि सिखाने के लिए लंगर प्रथा चलाई है, जिस से जिज्ञासु तन-मन-धन इत्यादि सभी प्रकार से अपना योगदान कर निष्काम सेवा कर सकता है।

कर्म ही प्रधान है – (श्री रंगम, त्रिचापल्ली तामिल नाडू)

श्री गुरू नानक देव जी मदुरै से त्रिचापल्ली पहुँचे। दक्षिण भारत का यह एक विशाल नगर है। इस जिले के श्री रंगम नामक स्थान पर रामानुज ऋषि की याद में एक विशाल वैष्णव मन्दिर है। यह स्थान कावेरी तथा कोलेरून नदियों के मध्य स्थित है इसी कारण वहां पर यात्रियों का आवागमन सदैव बना रहता है। गुरुदेव के वहाँ पधारने पर उन के कीर्तन से तीर्थयात्री बहुत प्रभावित हुए। अतः उनके पास कीर्तन श्रवण करने के लिए बहुत बड़ी संख्या में भक्तगण श्रोता रूप में इकट्ठे होने लगे। कुछ श्रोताओं ने आप जी से शिकायत की कि मन्दिर के पुजारीगण साधारण यात्रियों से अच्छा व्यवहार नहीं करते तथा बहुत फीकी और कडवी भाषा बोलते हैं। यदि कोई धनी व्यक्ति दिखाई देता है तो वे उसे बहला-फुसलाकर षड़यन्त्र से ठग लेते है। उत्तर में गुरुदेव ने कहा- हे! भक्तजनो यह मृत्यु लोक कर्म भूमि है। यहाँ पर प्राणी केवल कर्मो के लिए स्वतन्त्र हैं। अतः उसे फल के लिए भी तैयार रहना चाहिए क्योंकि कर्मो की गति न्यारी है। इस से कोई भी बच नहीं पाया भले ही वे समाज में उच्च वर्ग या अवतारी पुरुष कहलाते रहे हों। गुरुदेव ने इसके लिए तब बाणी उच्चारण की तथा कीर्तन द्वारा सभी भक्तों को यह शिक्षा दी कि कोई भी बच नहीं सकता। उसे अपने किए कर्मो का फल तो भोगना ही पड़ता है।

सहंसर दान दे इंद्र रोआइआ ॥ परसरामु रोवै घरि आइआ ॥
अजै सु रोवै भीखिआ खाइ ॥ ऐसी दरगह मिलै सजाइ ॥

राग रामकली, पृष्ठ 953

विवेक बुद्धि का होना अनिवार्य – (तंजावुर नगर, तामिल नाडू)

श्री गुरू नानक देव जी श्रीरंगम से तंजावुर नगर पहुँचे। उन दिनों यह क्षेत्र बहुत विकसित था तथा भवन कला में अग्रणी था। विशेषकर मन्दिरों के निर्माण में अद्भुत कला–कौशल का प्रदर्शन किया गया था। अधिकांश मन्दिर जलाशयों के किनारे होने के कारण उन में कमल के फूलों का दृश्य मनोरम था। गुरुदेव ने इन रमणीक स्थानों पर अपार जन–समूह को कीर्तन द्वारा प्रभु स्तुति करने के लिए प्रेरित किया। परन्तु कुछ श्रोतागण गुरुदेव से कहने लगे, "आप की शिक्षा मन को भाती है। किन्तु आप से क्या छिपाना, इन तथा कथित धार्मिक स्थानों के पुजारियों का स्वयं का जीवन चरित्र उज्ज्वल नहीं। ये लोग परहेज़गार जीवन नहीं व्यापन करते, जिस से कि दूसरों को प्रेरणा मिले। बल्कि यहाँ तो उल्टा ही प्रभाव होता है। इन लोगों को देखकर तो भला मनुष्य भी अपना धर्म–कर्म सब छोड़ देता है।" इस के उत्तर में गुरुदेव ने जिज्ञासुओं को सांत्वना देते हुए कहा, "आप विवेक बुद्धि से काम लें। प्रकृति का यह नियम है। जल में बहुत से मेड़क होते हैं परन्तु उनका अहार कीड़े–मकोड़े, काई इत्यादि है। वे कभी भी कमल फूल की सुगन्ध या उस की कोमलता का आनंद नहीं उठा सकते। ठीक इस प्रकार ये लोग भी है जो धार्मिक स्थलों पर रहते हुए भी प्रभु की पहचान नहीं कर पाते। जिस प्रकार कमल फूल का लाभ भंवरा दूर से आकर ले जाता है या चन्द्रमा का अनुभव करके कमल खिल जाता है। ठीक उसी प्रकार जिज्ञासु विवेक बुद्धि से धार्मिक स्थलों से दूर रहते हुए भी अपनी भावनाओं के बल पर प्रभु की महिमा का पूर्ण आनंद उठाते रहते हैं।

दादर तू कबहि न जानसि रे ॥

भरवसि सिबालु बससि निरमल जल अंम्रितु न लरवसि रे ॥ 1 ॥ रहाउ ॥

बसु जल नित न वसत अलीअल मेर चचा गुन रे ॥

चंद कुमदनी दूरहु निवससि अनभउ कारिन रे ॥

राग मारू, पृष्ठ 990

श्रमिकों की समस्या का समाधान– (नागापट्नम बंदरगाह, तामिल नाडू)

श्री गुरू नानक देव जी तंजावुर नगर से नागापट्टनम बन्दरगाह पर पहुँचे। उन दिनों वहाँ से भारतीय मजदूर दक्षिण पूर्व देशों में मजदूरी करने इसी बन्दरगाह से मलाया, मलेशिया, इंडोनेशिया इत्यादि देशों के लिए जाते थे। अत: उस समय बिहार तथा उड़ीसा के मज़दूर भी उस बन्दरगाह से रवाना होने के लिए जहाज की प्रतीक्षा कर रहे थे। जब गुरुदेव की उन से भेंट हुई तो वे लोग गुरुदेव के व्यक्तित्व से बहुत प्रभावित हुए। क्योंकि एक तो भाषा की समस्या न थी दूसरे यह मजदूर भी अपना खाली समय व्यतीत करने के लिए भजन इत्यादि गा कर अपना मनोरंजन करते रहते थे। जिस से परस्पर निकटता आ गई और गुरुदेव के कीर्तन में वे सब बहुत रुचि लेने लगे। किन्तु उन के सामने एक समस्या सदैव बनी रहती थी कि उन लोगों में हिन्दू–मुस्लिम का भेदभाव था तथा रूढ़िवादी तो एक दूसरे का स्पर्श किया पानी भी नहीं पीते थे। अत: उन्होंने गुरुदेव के सम्मुख अपनी समस्या रखी और पूछा, "आप ने किस प्रकार एक मुस्लिम को अपना साथी बना रखा है। गुरुदेव ने तब उन्हें आदर्श जीवन जीने का ढंग बताते हुए कहा–

एको हुकमु वरतै सभ लोई ॥
एकसु ते सभ ओपति होई ॥ 7 ॥
राह दोवै खसमु एको जाणु ॥
गुर कै सबदि हुकमु पछाणु ॥ 8 ॥
सगल रूप वरन मन माही ॥
कहु नानक एको सालाही ॥ 9 ॥

राग गउड़ी, पृष्ठ 223

वह प्रभु, सब का मालिक है, उसके हुक्म से ही सभी की उत्पति हुई है। अत: किसी में कोई अंतर नहीं है। सभी कुछ तो एक समान है। भले ही प्रभु की निकटता

प्राप्ति के लिए लोगों ने अलग-अलग रास्ते बना लिए हैं किन्तु वह तो एक ही है। गुरमति ने यह सिद्धांत दृढ़ करवा दिया है कि वह सभी में विद्यमान है। इस लिए सब को एक-दूसरे में उसी की ही ज्योति देखनी चाहिए। इस पर सभी मजदूरों के नेता, जिन के नेतृत्व में वे लोग जकार्ता (जावा दीप) जा रहे थे, गुरुदेव से भेंट करने आए तथा कहा, "हे गुरुदेव! धर्म के नाम से अकारण ही जो झगड़ा करते रहते हैं, यही बातें हमारे दुख का कारण हैं। आप कृपया मिल-जुलकर रहने का रहस्य बताएं ताकि हम जहां भी जाए हंसी खुशी जीवन जी सके।" इस के उत्तर में गुरुदेव ने कहा, "जब आप एक-दूसरे को अपना भाई मान कर उस की भावनाओं का सत्कार करना सीख जायोगे उस दिन तुम्हारी सभी समस्याएं समाप्त हो जाएंगी।" गुरुदेव की बाणी का उन के मन पर गहरा प्रभाव हुआ। वे सब मिलकर गुरुदेव से अनुरोध करने लगे और कहा, "हे गुरुदेव, यदि आप हमारे साथ चलें तो हमारी सभी समस्याएं स्वयं हल हो जाएंगी तथा हमें जीने का ढंग भी आ जाएगा क्योंकि पहले भी जो मजदूर जावा, सुमात्रा में कार्यरत है, उन में किसी विधि से आपसी घृणा तथा द्वैष की भावना समाप्त हो। जिस से हम आपसी कलह कलेश से छुटकारा प्राप्त कर अपने मुख्य लक्ष्य पर ध्यान केन्द्रित कर, धन अर्जित कर सकें। गुरुदेव ने उनका अनुरोध सहर्ष स्वीकार कर लिया क्योंकि गुरुदेव का उद्देश्य दुखी मानवों में भ्रातृत्व की भावना उत्पन्न करना ही तो था।

श्रमिकों के अन्तर्जातीय विवाह – (जकार्ता, इन्डोनेशिया)

इस प्रकार मजदूर दलों के साथ जहाज द्वारा गुरुदेव जी नागा-पट्टनम से इन्डोनेशिया जकार्ता नगर में पहुँच गए। वहाँ के भारतीय मजदूरों को जब गुरुदेव के व्यक्तिव के विषय में, नये मजदूरों से जानकारी मिली तो वह गुरुदेव को अपने खेमों में ले गए। जहां पर श्रमिक अपना कार्य समाप्त कर प्राय: मनोरंजन के लिए अपनी परम्परा अनुसार ढोलक चिमटा लेकर गाना बाजाना किया करते थे। भोजपुरी भजनों का कार्यक्रम भी कभी-कभी होता था। अत: वे लोग, गुरुदेव का कीर्तन भी सुनने लगे जो कि शास्त्रीय संगीत पर आधारित, एक मात्र प्रभु स्तुति, के लिए होता था। कुछ ही दिनों में वहाँ पर स्थानीय जनता में गुरुदेव के कार्यक्रमों का कई स्थानों पर आयोजन होने लगा।

गुरुदेव अपने प्रवचनों में सदैव ही परस्पर मिलजुल कर, बिना भेद-भाव के रहने की शिक्षा देते। अत: इस भावना के अंतर्गत आप जी ने कुछ श्रमिकों के अन्तर्जातीय विवाह भी करवा दिये, जो कि वहीं पर स्थाई रूप में बास करना चाहते थे। इस तरह वहाँ पर एक नई संस्कृति ने जन्म ले लिया। यह सब देखकर वहाँ के कृषक बहुत प्रभावित हुए, जो कि भारत भूमि से गन्ने की खेती का उद्योग चलाने गए हुए थे। उन्होंने, गुरुदेव की भेंट बड़े व्यापारियों से करवाई जो कि वहाँ जहाज़रानी के कार्यक्षेत्र में कार्यरत थे और भारत से इन देशों के लिए माल के आदान-प्रदान में गहरी रुचि ले रहे थे। गुरुदेव के सम्पर्क में आने से वे जल्दी ही उन के श्रद्धालु बन गए और उन्होंने गुरुदेव को अपने साथ चलने का आग्रह किया। गुरुदेव ने उन की विनती स्वीकार कर उन के साथ सिंगापुर के लिए चल पड़े।

आदिवासी कबीलों का उत्थान – (सिंगापुर)

श्री गुरू नानक देव जी ने इन्डोनेशिया के जावा दीप की राजधानी जकार्ता से भारतीय व्यापारियों को साथ लिया और सिंगापुर पहुँच गये। उन दिनों वहाँ पर आदिवासी कबीलों की भरमार थी, किन्तु विकास का दौर प्रारम्भ हो चुका था। अधिकांश लोग अपनी परम्परा अनुसार रूढ़िवादी जीवन जी रहे थे। अत: गुरुदेव ने उनको मिलजुल कर रहने की शिक्षा दी तथा कहा, "अपने काल्पनिक देवता नहीं पूजने चाहिए। इसके विपरीत सर्वशक्तिमान पारब्रह्म परमेश्वर की पूजा करो, जो कि निराकार और सर्वव्यापक है। इस से सब में एकता उत्पन्न होगी तथा सभी लोग एक शक्ति होकर उभरेंगे।" इन बातों का वहाँ की जनता पर गहरा प्रभाव पड़ा वे गुरुदेव की शिक्षा ग्रहण करने लगे। जिससे उन लोगों में आपसी कलह की समस्याओं का समाधान हो गया।

त्री सूत्रीय कार्यक्रम कल्याणकारी – (कवालालम्पुर, मलेशिया)

श्री गुरू नानक देव जी भारतीय व्यापारियों के साथ उन के अनुरोध पर मलेशिया की मुख्य बन्दरगाह कवालालम्पुर में पहुँचे। वहाँ पर उन दिनों दक्षिण भारत के तमिल लोग बहुत बड़ी संख्या में रोजगार की तलाश में पहुँच रहे थे। उन लोगों ने गुरुदेव का भव्य स्वागत किया तथा उन को कार्यक्रमों का आयोजन कर कई जगह पर कीर्तन तथा प्रवचन सुने। उन दिनों गुरुदेव अपने मूल सिद्धांत त्री सूत्रीय कार्यक्रम ही जन साधारण में दृढ़ करवा रहे थे। कृत करो (परीश्रम करो), वंड के छको (बांट कर खाओ) तथा नाम जपो अर्थात एक निराकार परम ज्योति का चिन्तन–मनन करो। यह सहज सरल मार्ग वहाँ के जन–साधारण में बहुत लोकप्रिय हुआ। लोगों ने गुरुदेव की शिक्षा अनुसार अपने रूढ़िवादी विचार त्यागकर जाति–पाति के भेदभाव बिना, वर्ग विहीन समाज की स्थापना कर ली तथा कर्म काण्डों से छुटकारा प्राप्त कर मिलजुल कर रहने लगे। गुरुदेव ने वहाँ पर साध–संगत की स्थापना की तथा धर्मशाला बनवाने के लिए प्रेरित किया। कवालालम्पुर से गुरुदेव उन्हीं जहाज़ों द्वारा वापस नागापट्टनम बन्दरगाह पर लौट आए। क्योंकि वह जहाज़ इसी बन्दरगाह से आते–जाते थे।

आडम्बरों पर प्रभु नहीं रीझता – (कुंभकोनम नगर, तामिल नाडू)

श्री गुरू नानक देव जी मलेशिया से जब जल–पोत द्वारा वापिस नागापट्टनम बन्दरगाह पर आ रहे थे तो रास्ते में कुछ तामिल मजदूरों से भेंट हुई, जो कि अपने घरों को वापस लौट रहे थे। उन्होंने गुरुदेव से अनुरोध किया–वे उनके साथ गांव चलें, जो कि नागापट्टनम के निकट ही कुंभ कोनम नगर में पड़ते हैं। वहाँ पर लोग बहुत रूढ़िवादी विचारों के हैं तथा वे अपना जीवन व्यर्थ के कर्म–काण्डों में नष्ट करते रहते हैं। शायद आप के प्रवचनों से वहाँ कोई क्रांति आ जाए, जिस से जन–साधारण में जागृति आ जाए। गुरुदेव ने अब उत्तर भारत की तरफ आना ही था, अत: उन का अनुरोध स्वीकार करते हुए वे उन लोगों के साथ उनके मुख्य नगर कुंभकोनम पहुँचे। वहाँ पर लोगों में अनावश्यक रस्मों और रिवाजों को देखकर गुरुदेव ने कहा, “लोग जितने आडम्बर रचेंगे उतनी कठिनाइयां ही मोल लेंगे। वास्तविक्ता यह है कि प्रभु केवल प्रेम का भूखा है। वह किसी के आडम्बर या दिखावे पर प्रसन्न नहीं होता।

परमेश्वर का कोई प्रतिद्वन्दी नहीं – (करानूर नगर, तामिल नाडू)

श्री गुरू नानक देव जी कुंभकोनम नगर से करानूर नगर में पहुँचे। उन दिनों वहाँ पर गणेश पूजा का वार्षिक उत्सव आयोजन किया जा रहा था। उन की यह मान्यता थी कि सर्व प्रथम गणेश पूजन करने से कार्य सिद्ध होते हैं। गुरुदेव ने इस बात पर आपत्ति प्रकट की तथा कहा कि निराकार पारब्रह्म परमेश्वर ही सभी कार्य सिद्ध करने वाला है। जब वह परम ज्योति ही सृष्टि का संचालन कर रही है तो कोई दूसरा उस के कार्यो में किस प्रकार हस्तक्षेप कर सकता है। धन, धरती, पुत्र ऋद्धि-सिद्धि इत्यादि देने वाला गणेश नहीं बल्कि वह सर्व शक्तिमान पारब्रह्म परमेश्वर है। इसलिए आज तक परमेश्वर का कोई प्रतिद्वन्दी उत्पन्न नहीं हुआ। अत: प्राणी मात्र को किसी दूसरे पर श्रद्धा न कर केवल एक निराकार ज्योति पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए जो कि सर्व सुखों का दाता है। इस पर गणेश उत्सव के आयोजनकर्त्ता कहने लगे, "गुरुदेव आप की बात तो सब ठीक है परन्तु हमारे यहाँ किंवदंतियो अनुसार यह प्राचीन परम्परा चली आ रही है।" गुरुदेव ने तब भाई मरदाना जी को रबाब बजाने को कहा और शब्द उच्चारण किया :-

सब तेरी कुदरति तू सिरि सिरि दाता सभु तेरो कारणु कीना हे ॥15 ॥

इकि दरि सेवहि दरहु वञाए ओइ दरगह पैधे सतिगुरु छडाए ॥

राग मारू, पृष्ठ 1028

प्रकृति के दृढ़ नियम – (पाण्डीचेरी)

श्री गुरू नानक देव जी करानूर नगर से पाण्डीचेरी क्षेत्र में पहुँचे। वहाँ उन दिनों बौद्ध जैन तथा वैष्णव धर्मों के अनुयायी, लगभग बराबर संख्या में रहते थे। अत: उन तीनों में सैद्धांतिक मतभेद सदैव बना रहता था, कि कौन सा आध्यात्मिकवाद मानव कल्याण के लिए हितकारी है। प्रत्येक धर्म को मानने वाले अपने धार्मिक स्थल पर जनता में अपनी धाक जमाने में व्यस्त रहते थे। वास्तव में जनता कोई उचित जीवन पद्धति चाहती थी, क्योंकि तीनों धर्मों के विपरीत सिद्धांतों के कारण उन में मानसिक तनाव बना रहता था। साधारण व्यक्ति कोई ठीक निर्णय नहीं कर पा रहा था। ऐसे में गुरुदेव की लोकप्रियता देखकर पुजारी वर्ग को चिंता हुई कि उनके विरुद्ध जनता में आक्रोश है जो कि उनता को उलझा कर भटकने पर विवश कर रहे थे। इस लिए वे नई चेतना का सामना न कर सकने की स्थिति में थे, जिस के परिणाम स्वरूप वे गुरुदेव के विरुद्ध योजना तैयार करने लगे कि जितनी जल्दी सम्भव हो सके उस फ़कीर को भ्रष्ट प्रमाणित कर वहाँ से हटा दिया जाए। उधर गुरुदेव के क्रांतिकारी उपदेश रंग ला रहे थे। वे इतने लोकप्रिय हो गए कि जन–साधारण उन पर न्यौछावर होने पर तैयार हो गए। पुजारी वर्ग ऐसे में सीधे रूप से सामना कर सकने में अपने को असमर्थ पा रहे थे, क्योंकि जनता उनके बहकावे में नही आ रही थी। अत: वे षड्यन्त्र रचने की युक्ति पर विचार करने लगे और उन्होंने एक–दूसरे को विश्वास में लेकर अफवाह फैलाई कि परम्परागत पूजा–अर्चना को त्याग देने से प्राकृतिक विपदा आने वाली है। भूकम्प या ज्वार (समुद्री तूफान) इत्यादि भी आ सकता है। जिस से जन–धन की हानि हो सकती है। जब इस प्रकार की दुर्घटना होने की भविष्य वाणियां जब गुरुदेव के पास पहुँची तो वे बोले–किसी को भी भयभीत होने की कोई आवश्यकता नही, क्योंकि प्रकृति के अपने अटल नियम हैं, जो किसी विशेष कर्म काण्डों के साथ नहीं जुड़े हुए। यदि प्राकृतिक प्रकोप होना ही होगा तो वह लोगों के डगमगाने से नहीं टलेगा, भगवान पर विश्वास रखो। वह सब को कुशल मंगल रखेगा। गुरुदेव के धैर्य बन्धाने से निष्ठावान व्यक्तियों में दृढ़ता और साहस आ गया। वे सब अफवाहों को समझने लगे जिस से सब अडोल रहे। गुरू जी ने तब प्रकृति के नियमों के संम्बंध में शब्द उच्चारण किया –

भै विचि पवणु वहै सदवाउ ।। भै विचि चलहि लख दरीआउ ।।

भै विचि अगनि कढै वेगारि ।। भै विचि धरती दबी भारि ।।

भै विचि इंदु फिरै सिर भारि ।। भै विचि राजा धरम दुआरु ।।

भै विचि सूरजु भै विचि चंदु ।। कोह करोड़ी चलत न अंतु ।।

भै विचि सिध बुध सुर नाथ ।। भै विचि आडाणे आकास ।।

भै विचि जोध महाबल सूर ।। भै विचि आवहि जावहि पूर ।।

सगलिआ भउ लिखिआ सिरि लेखु।।नानक निरभउ निरंकार सचु एक।।1।।

राग आसा, पृष्ठ 464

कोई चारा न चलता देख कर के पुजारी वर्ग के कुछ लोगों ने गुरुदेव का सामना करने की ठानी। वह इकट्ठे होकर गुरुदेव से उलझने पहुँच गए। गुरुदेव ने उन की आशा के विपरीत उन का हार्दिक स्वागत किया, जिस से वे सभी बहुत प्रभावित हुए तथा गुरुदेव की मीठी बाणी सुनकर उन का आक्रोश जाता रहा। वास्तव में वे जानना चाहते थे कि गुरुदेव के पास क्या युक्ति है, जिस से जन-साधारण उन का हृदय से सत्कार करने लगा है। इसी संकल्प को लेकर वे आध्यात्मवाद पर गुरुदेव की विचारधारा जानना चाहते थे। गुरुदेव ने उनकी जिज्ञासा शान्त करते हुए कहा, "प्रभु को प्रसन्न करने की सर्व प्रथम युक्ति है-हृदय शुद्ध करना अर्थात किसी के प्रति द्वेष भावना न रखना। दूसरा सूत्र है-प्रभु की इच्छा में ही खुशी अनुभव करनी अर्थात आत्म समर्पण, तीसरा सूत्र है-प्रभु द्वारा प्रत्येक पदार्थ के लिए उस का कृतज्ञ होना अर्थात अभिमान मन में न लाना। चौथा सूत्र है-विनम्र होना अर्थात मीठी बाणी बोलना। पांचवाँ सूत्र है ज्ञान इन्द्रियों पर नियन्त्रण रखना अर्थात काम चेष्टा पर अंकुश लगाना। छटा सूत्र है-उदारवादी होना अर्थात यथाशक्ति परोपकार के लिए जरूरतमंदों की आर्थिक सहायता करना। इन सब कार्यो का लक्ष्य एक ही है कि प्राणी उस निराकार दिव्य ज्योति को अपने हृदय रूपी मन्दिर में बसाने के लिए पवित्र स्थान बना लें जिस से उसका चिंतन, मनन सहज ही रंग लाएगा।"

उज्ज्वल आचर्ण में आत्म कल्याण– (कांचीपुरम नगर, तामिल नाडू)

श्री गुरू नानक देव जी पाण्डीचेरी से कांचीपुरम नगर पहुँचे। इस नगर को दक्षिण का बनारस भी कहते हैं। यह दक्षिण भारत का अनुपम नगर है। उन दिनों वहाँ वैष्णवों, शैवों तथा बौद्धों के शिक्षा संस्थान बहुत प्रगति पर थे। मन्दिरों की नगरी होने पर भी गुरुदेव को वहाँ पर वास्तविक धर्मी पुरुषों के दर्शन नहीं हुए। एक दिन एक वैष्णव मन्दिर में गुरुदेव को कुछ साधु पुरुषों ने प्रवचन करने को कहा। गुरुदेव ने उनका अनुरोध स्वीकार करते हुए कहा, "वास्तविक जीवन सत्य, सन्तोष, क्षमा, दया इत्यादि शुभ गुणों को धारण करने में है। किसी विशेष सम्प्रदाय की केवल वेषभूषा धारण करने में नहीं। इस लिए प्राणी को अपने अन्त:कर्ण में सदैव झाँक कर देखते रहना चाहिए कि कहीं वह केवल कर्मकाण्ड कर अपना समय नष्ट तो नहीं कर रहा। प्रभु अन्तर्यामी है, उस के आगे पाखण्ड या छल कपट नहीं चल सकता। इसलिए वही कार्य करने चाहिए जो उस की दृष्टि में स्वीकार्य हो।" गुरुदेव ने भाई मरदाना जी को सुर साधने को कहा और स्वयं बाणी उच्चारण करने लगे :-

सचु वरतु संतोखु तीरथु गिआनु धिआनु इसनानु ॥
दइआ देवता खिमा जपमाली ते माणस परधानु ॥
जुगति धोती सुरति चउका तिलकु करणी होइ ॥
भाउ भोजनु नानका विरला त कोई कोइ ॥

राग सारग, पृष्ठ 1245

विचार की कसोटी से शुभ कर्म – (तिरूपति मन्दिर, आंधा प्रदेश)

श्री गुरू नानक देव जी कांचीपुरम नगर से आंध्र प्रदेश के चित्तूर जिले में वैंकटाचल पर्वत पर बाला जी के मन्दिर में पहुँच गये। उस मन्दिर को तिरूपति मन्दिर भी कहते हैं। उन दिनों यह मन्दिर उस क्षेत्र का सब से बड़ा धार्मिक स्थान था। लोग दूर-दूर से दर्शनों के लिए आते थे। महिलाएं अपनी प्रथा अनुसार मन्नतें मांगती थी कि यदि उसका कार्य सिद्ध हुआ तो वह अपने सिर के बाल भेंट चढ़ा देगी। अत: कुछ एक महिलाएं अंध-विश्वास में अपने सिर के बाल जड़ से मुंडवाकर वहाँ के पुजारियों को भेंट कर आती। जिस कारण वे कुरूप दिखवाई देने लगती। पुजारी वर्ग उन के भोलेपन का अनुचित लाभ उठाते। इस तरह वे लोग सुन्दर लम्बे तथा स्वस्थ बालों को विदेशों में नारी श्रृंगार के लिए बेच कर अपना व्यापार चलाते। यह अनुचित धंधा या तस्करी अंध विश्वास के कारण बहुत जोरों से चल रही थी। महिलाओं की कुरूपता गुरुदेव से देखी न गई। क्योंकि उत्तरी भारत में महिलाओं के विधवा होने पर उनको करूप करने के लिए उन के बाल काटने की परम्परा थी। गुरुदेव ने वहाँ की नारी जाति को जागृत करने के लिए तथा उनको अधिकारों के लिए जूझने के लिए एक प्रेरणा देने का कार्यक्रम बनाया। उन्होंने मन्दिर के प्रांगण में जहां जनता दर्शनों की प्रतीक्षा में खड़ी रहती, भाई मरदाना जी को कीर्तन आरम्भ करने को कहा। जैसे ही कीर्तन प्रारम्भ हुआ मधुर शास्त्रीय संगीत पर आधारित बाणी सुनकर जनता का गुरुदेव की ओर आकर्षित होना ही था। उस समय गुरुदेव ने उच्चारण किया -

अकलि एह न आखीऐ अकलि गवाईऐ बादि ।।
अकली साहिबु सेवीऐ अकली पाईऐ मानु ।।
अकली पड़ि कै बुझीऐ अकली कीचै दानु ।।
नानकु आखै राहु एहु होरि गलां सैतानु ।।

राग सारग, पृष्ठ 1245

गुरुदेव ने अपने प्रवचनों में कहा, "अपने इष्ट की उपासना करते समय यदि प्राणी अंध विश्वास को त्यागकर अक्ल से काम ले तो उसकी उपासना तथा किया हुआ दान रंग लाएगा, जिस से उसे आदर-मान मिलेगा। परन्तु भेड़ चाल की तरह बिना सोचे समझे जो लोग दान कर रहे हैं, उसे से हानि ही हो रही है। क्योंकि किये हुए दान का दुरोपयोग हो रहा है। जो किसी ने दान किया है वह तो किसी की भी आवश्यकता पूर्ति नहीं कर रहा बल्कि शैतान लोग अपने ऐश्वर्य के लिए उस का अनुचित लाभ उठाकर जनता को मूर्ख तथा कुरूप बनाकर हंस रहे हैं, क्योंकि उन्होंने उनका प्राकृतिक सौन्दर्य छीन लिया है।

शनि देवते का खण्डन– (कुड़प्पा नगर, आंध्रा प्रदेश)

श्री गुरू नानक देव जी आंध्र प्रदेश के कुड़प्पा नगर में पहुँचे। वहाँ के लोग शनि देवता की पूजा करते हुए उस से अपने लिए दरिद्रता हरने की कामना करते थे। उन का विश्वास था कि उनकी गरीबी शनि देवता अपने ऊपर ले लेगा तथा उनको धनी होने का वरदान देगा। उस के लिए किंवदन्तियां भी प्रचलित थी कि शनि स्वयं पुरषार्थी नहीं था। अत: वह आलस्य पूर्ण जीवन जीने का आदी था। जिस कारण उस का जीवन दरिद्रता पूर्ण तथा कुचील (गंदा) बना रहता था और वह धन अर्जित करने की क्षमता नहीं रखता था। अत: उस की भाभियों ने उसे दुत्कार कर जीने मात्र के लिए निम्न क्षेणी के वस्त्र, बर्तन भोजन तथा निवास आदि दे दिया था जिस से उस का गुजर बसर हो जाए। इस प्रकार वह दया का पात्र बनकर सदैव ग्लानि भरा जीवन जीता रहा, किन्तु उस के मरने के पश्चात् समाज ने उसे दरिद्रता का देवता स्वीकार कर लिया। जिस के अनुसार लोग उस की पूजा कर प्रार्थना करते हैं, कि हे! शनि, दरिद्रता के देवता, हमारी दरिद्रता तू हर ले। अत: हम सम्पन, समृद्ध हो सके।

गुरुदेव ने उनके इस भोलेपन पर आश्चर्य व्यक्त किया कि जो व्यक्ति स्वयं दूसरों की दया पर दरिद्रता का जीवन जीता रहा, वह अपने भक्तों की मरणोपरान्त किस प्रकार सहायता कर सकता है? तथा कहा-सर्व शक्तिमान प्रभु के रहते, लोगों को एक तुच्छ

प्राणी के आगे भिक्षा के लिए हाथ नहीं पसारने चाहिए। जब कि सब जानते हैं कि वह स्वयं बहुत कठिनता से जीवन व्यापन करता रहा। इससे कुछ प्राप्ति होने वाली नहीं बल्कि अपना समय तथा शक्ति व्यर्थ नष्ट कर रहे हो। गुरुदेव ने उन्हें प्रकृति के नियमों से अवगत कराते हुए कहा-सर्व मान्य सत्य सिद्धांत यह है कि जो जिस इष्ट की आराधना करेगा, वह उसी जैसा ही हो जाएगा अर्थात साधक को वही स्वरूप तथा वही स्वभाव (आदतें) मिलेगा जो उस के इष्ट की होगा । तात्पर्य यह कि आप शनि के जीवन तथा उस के चरित्र को तो जानते ही हैं। बस आप समझ लें कि उस की आराधना करने वाला वैसा ही दरिद्री, कुचैल तथा आलसी हो जाएगा।

कपिल मुनि का आश्रम- (गंटूर नगर, आंध्रा प्रदेश)

श्री गुरू नानक देव जी कुड़प्पा नगर से गण्टूर नगर पहुँचे। उस स्थल पर जलाशय, झीलों की भरमार थी तथा वह स्थल प्राकृतिक सौन्दर्य के अद्भुत दृश्य प्रस्तुत करता था। जिस की छटा मनमोहक थी। आदि काल से ही महापुरुष इस क्षेत्र को तपोवन के रूप में प्रयोग करते रहे हैं। प्राचीन काल में इस क्षेत्र में कपिल मुनि नामक एक ऋषि हुए हैं जिनकी याद में लोगों ने मन्दिर बनवा कर उन की मूर्ति स्थापित कर पूजा-अर्चना प्रारम्भ की हुए थी। कपिल मुनि जी ने अपने जीवन काल में प्रभु की निष्काम आराधना कर दिव्य दृष्टि प्राप्त कर ली थी। जब वह परलोक गमन करने लगे तो उन के अनुयाईयों ने उन से पूछा कि उनका उद्धार किस प्रकार होगा? तो उन्होंने बताया कि समय आएगा जब उत्तरी भारत के पश्चिमी क्षेत्र से एक पराक्रमी महापुरुष नानक नाम धारण कर आऐंगे, जो समस्त मानव के कल्याण के लिए विश्व भ्रमण करेंगे। अत: उन की शिक्षा धारण करने पर सब का कल्याण होगा। क्योंकि वही निराकार ओउ्म ज्योति की उपासना सिखाऐंगे।

गुरुदेव के वहाँ पर आगमन के समय उस मन्दिर की बहुत मान्यता थी। अत: क्षेत्र के अधिकांश जपी-तपी लोग, जो कि कपिल मुनि के अनुयायी थे, वहीं बसे हुए थे। गुरुदेव के कीर्तन का रसवादन करने के लिए दूर-दूर से लोग एकत्र हुए, गुरुदेव ने बाणी उच्चारण की -

ओअंकार ब्रहमा उतपति ।।

ओअंकारु कीआ जिनि चिति ।।

ओअंकारि सैल जुग भए ।।

ओअंकारि बेद निरमए ।।

राग रामकली, पृष्ठ 929

यह बाणी सुनते ही कपिल मुनि के अनुयाईयों को किवदंतियो के अनुसार स्मरण हो आया कि ओंकार की उपासना करवाने वाला महापुरुष नानक नाम धारण कर उत्तर पश्चिम-भारत से आ गया है। इस पर वे सब अति प्रसन्न हुए एवं: सब ने गुरुदेव को दण्डवत प्रणाम किया तथा गुरू दीक्षा के लिए प्रार्थना करने लगे।

जग दिखावे पर आलोचना- (विजयवाडा नगर, आंध्रा प्रदेश)

श्री गुरू नानक देव जी गण्टूर नगर से विजयवाडा नगर पहुँचे। उस दिन वहाँ पर एक प्रसिद्ध सौदागर का देहान्त हो गया था। सम्पूर्ण नगर में शोक छाया हुआ था। परिवार के निकट-सम्बंधियों ने मातम के लिए एक विशेष सभा का आयोजन किया हुआ था। उस में स्त्रियां बहुत ही अनोखे ढंग से आपसी ताल मिलाकर विलाप कर रही थी। और एक महिला (नैण) के नेतृत्व में बहुत ऊंचे स्वर से चिल्ला रही थी। जिस में हृदय की वेदना न थी केवल कृत्रिम करुणामय ध्वनियां थी। जिस का ऐहसास श्रोतागणों को हो रहा था। अधिकांश नर-नारियां औपचारिकता पूरी करने के विचार से उपस्थित हुये थे। गुरुदेव से बनावटी सहानुभूति का दिखावा सहन नहीं हुआ उन्होंने इस का तुरन्त खण्डन करने का निर्णय लिया और अपनी बाणी के माध्यम से सत्य कह उठे -

जैसे गोइलि गोइली तैसे संसारा ॥

कूड़ु कमावहि आदमी बांधहि घर बारा ॥ 1 ॥

जागहु जागहु सूतिहो चलिआ वणजारा ॥ 1 ॥ रहाउ ॥

नीत नीत घर बांधीअहि जे रहणा होई ॥

पिंडु पवै जीउ चलसी जे जाणै कोई ॥ 2 ॥

ओही ओही किआ करहु है होसी सोई ॥

तुम रोवहुगे ओस नो तुम् कउ कउणु रोई ॥ 3 ॥

धंधा पिटिहु भाईहो तुम् कूड़ु कमावहु ॥

ओह न सुणई कतही तुम् लोक सुणावहु ॥ 4 ॥

जिस ते सुता नानका जागाए सोई ॥

जे घरु बुझै आपणा तां नीद न होई ॥ 5 ॥

राग सोरठ, पृष्ठ 418

गुरुदेव के मधुर कंठ से झूठे दिखावे पर मीठी फिटकार सुनकर सब को ऐहसास हुआ कि वे सब झूठ की लीला ही तो रच रहे थे जो कि वास्तविकता से कोसों दूर थी। शब्द की समाप्ति पर जन-समूह के आग्रह पर गुरुदेव ने कहा, "यह मात लोक कर्मभूमि है। यहाँ पर प्राणी आरज़ी रूप में कुछ शुभ कर्म संचित करने आते हैं। जब उसकी निर्धारित अवधि समाप्त होती है तो उस के हुक्म के अनुसार उसको वापस लौटना ही है, इस में झूठे दिखावा करने की क्या आवश्यकता है? अत: इन बातों से कुछ भी प्राप्ति होने वाली नहीं। क्योंकि सभी ने बारी बारी वापिस जाना ही है। यह मात लोक किसी के लिए भी स्थिर स्थान नहीं है।

मसकीनियां पहलवान – (हैदराबाद नगर, आंध्रा प्रदेश)

श्री गुरू नानक देव जी विजयवाड़ा नगर से दक्षिण हैदराबाद पहुँचे। वहाँ पर एक एकांत स्थान पर झील के किनारे गुरुदेव जब अमृत बेला के समय प्रभु स्तुति में (कीर्तन) कर रहे थे तो वहाँ से एक श्रमिक ईंधन के लिए लकड़ी लेने जंगल को जा रहा था। मीठी बाणी के आकर्षण से वह आगे नहीं बढ़ पाया एवं वही रुक कर गुरुदेव के निकट बैठ कर कीर्तन रसास्वादन करता रहा। कीर्तन की समाप्ति पर गुरुदेव से अनुरोध करने लगा, "आप कृपया मेरे घर पधारें।" गुरुदेव ने उस के प्रेम को जान कर उस के यहाँ विश्राम करना स्वीकार कर लिया। श्रमिक ने गुरुदेव को बहुत आदर भाव से भोजन कराया। परन्तु चूंकि वह तो गरीब था, सो दूसरी बार के भोजन के लिए उस के पास कुछ भी न था। अत: कुछ धन अर्जित करने के लिए वह नगर की ओर चल पड़ा। नगर में जाकर देखा तो पता चला कि स्थानीये राजा ने अपने यहाँ एक कुश्ती का आयोजन किया हुआ था। उस क्षेत्र का सुप्रसिद्ध पहलवान मसकीनियां जो कि रुसतम की उपाधि प्राप्त कर चुका था तथा अनेक स्थानों से निर्विरोध विजयी घोषित हो रहा था, वह चुनौती दे रहा था कि 'है कोई माई का लाल जो मुझ से कुश्ती कर सके।

नगर में प्रशासन की तरफ से डौंडी पिटवाकर घोषणा की जा रही थी कि यदि कोई भी मसकीनियां पहलवान की चुनौती स्वीकार करेगा उसे विजयी होने पर 500 रुपये पुरस्कार रूप में दिये जाएंगे। यदि वह पराजित हो जाता है तो उसे 100 रू० क्षति पूर्ति के रूप में दिये जाएंगे।

यह घोषणा सुनकर गरीब श्रमिक ने मन ही मन कहा, "यदि मैं इस चुनौती को स्वीकार कर लेता हूँ तो मुझे पराजित होने पर भी क्षति पूर्ति में रुपये मिलेंगे। जिस से मैं घर पर ठहरे हुए फ़कीरों की भोजन व्यवस्था कर उन की सेवा में खर्च कर दूं तो मैं पुण्य कमा सकता हूँ।" अत: उस ने यह चुनौती तुरन्त स्वीकार करने की घोषणा कर दी। जब कि वह जानता था भले ही वह हष्ट-पुष्ट है परन्तु पहलवान के सामने टिक पाना उसके बस की बात नहीं। उस के एक झटके मे उसकी हड्डियां टूट जाएंगी। किन्तु उस के सामने एक आदर्श था, जिस के लिए वह अपने प्राणों की आहुति देने को भी तत्पर था।

विशाल जन-समूह के सामने अखाड़े में जब रुस्तम उपाधि विजेता मसकीनियां पहुँचा तो उस को अपने सामने एक साधारण युवक को देख कर आश्चर्य हुआ तथा वह व्यंग पूर्वक बोला, "हे युवक क्यों बिना कारण मेरे हाथों मरना चाहते हो, क्या, तुझे अपना जीवन प्यारा नहीं?" इस के उत्तर में श्रमिक युवक बोला, "बात ऐसी है कि मेरे यहाँ संत पधारे हैं। उन की भोजन व्यवस्था के लिए मुझे रुपयों की अति आवश्यकता है। बस इस काम के लिए मैं अपने जीवन को उन पर न्यौछावर करने को तैयार हूँ।" यह सुनते ही अभिमानी मसकीनियां पर बज्रपात हुआ, उस का मन भर आया। वह पसीज गया तथा उस का अभिमान क्षण भर में जाता रहा। वह सोचने लगा यदि उसे भी ऐसी सेवा में इस व्यक्ति का हाथ बटाने का शुभ अवसर मिल जाए तो शायद उस का भी कल्याण हो जाए। उस ने तुरन्त निर्णय लिया कि वह अपनी उपाधि इस श्रमिक युवक को दे दूंगा, जिस से बाकी का जीवन शान्त-सहज गुजारने का आनन्द लूंगा, अत: अब इसी में उसका भला है।

कुश्ती प्रारम्भ हुई। दोनों ओर से दाव-पेच होने लगे। देखते ही देखते एक ही झटके से श्रमिक युवक ने मसकीनीयां पहलवान को पटक कर धराशायी कर दिया। वास्तव में मसकीनियां पहलवान ने युवक का प्रतिरोध ही नहीं किया जिस से वह क्षण भर पराजित घोषित हो गया।

श्रमिक युवक को प्रशासन की तरफ से सम्मानित करते हुए पुरस्कार की निर्धारित नकद धन राशि तथा उपाधि दोनो ही प्रदान की गई। जिस से वह खुशी-खुशी घर लौटा। मसकीनीयां पहलवान भी उस के साथ चलकर यहाँ गुरुदेव के दर्शनों के लिए पहुँचा। गुरुदेव ने उस की कुर्बानी तथा नम्रता के लिए उस को आशीर्वाद दिया तथा कहा सदैव सुखी बसो।

जनहित में जल की व्यवस्था – (बिदर नगर, कर्नाटक प्रदेश)

श्री गुरू नानक देव जी हैदराबाद से कर्नाटक प्रदेश के बिदर नगर पहुँचे जोकि पठारी क्षेत्र है और ऊबड़-खाबड़ होने के कारण वहां पर मीठे पानी की भारी कमी थी। गुरुदेव ने चट्टान के नीचे एक खुले स्थान पर अपना डेरा लगाया। स्थानीय लोगों से सम्पर्क करने पर उन्हों ने बताया, "मीठे जल के स्रोत पर दो सूफी फ़कीरों का कब्ज़ा है। वे पानी, केवल उन्हीं लोगों को लेने देते हैं, जो दीन स्वीकार कर लेते हैं।" गुरुदेव ने इस बात पर आपत्ति की और कहा, "पानी प्रकृति का अमूल्य उपहार, समस्त मानव समाज के लिए एक समान है, इस के वितरण में फ़कीरों को मतभेद नहीं करना चाहिए।"

पीर सईयद याकूब अली तथा पीर जलालउद्दीन अपनी खानकाह पर जन-साधारण को ताबीज़ इत्यादि बांटते तथा तान्त्रिक विद्या से लोगों को प्रभावित करते थे। जिस से उन की मान्यता बहुत बढ़ गई थी। अत: उन के मुरीदों ने काले इल्म से डेरे के लिए धन राशि इक्ट्ठी करने के लिए लोगों को भ्रम में उलझा कर पाखण्ड बना रखा था।

गुरुदेव के समक्ष स्थानीय निवासी विनती करने लगे, "हे गुरुदेव! आप हमारी पीने के पानी की समस्या का समाधान कर दें तो हम आप के अति आभारी होंगे।" गुरुदेव ने उन की कठिनाइयों को समझा तथा परामर्श दिया- आप सभी मिलकर प्रभु चरनों में आराधना करें तो उस कृपालु प्रभु की आप लोगों पर आवश्य ही अनुकंपा होगी। इस विचार को सुन कर, मीठे जल का इच्छुक जन-समूह, एकत्र होकर गुरुदेव के पास उपस्थित हुआ एवं गुरुदेव द्वारा बताई विधि अनुसार, उन्हीं के नेतृत्व में प्रभु से प्रार्थना करने लगा। प्रार्थना के समाप्त होते ही गुरुदेव ने एक चट्टान के टुकड़े को सरकाने का आदेश दिया। जैसे ही प्रभु की-जय, जयकार के नारों से आकाश गूंजा। उसी क्षण देखते ही देखते मीठे जल की एक धारा प्रवाहित हो निकली। सभी लोग खुशी से नाचने लगे।

इन सूफी महानुभावों को जब इस बात का पता चला तो वे आश्चर्यचकित होकर गुरू जी को मिलने आए। गुरुदेव ने उनका स्वागत किया और कहा, "आप सूफी फ़कीर

होकर ख़ालक की ख़लकत में मज़हब के नाम पर भेद-भाव क्यों करते हैं?" इस के उत्तर में फ़कीर कहने लगे, "जी ये लोग बुत-परस्त हैं। अत: मोमन का हक वाजिब है।" इस पर गुरुदेव ने कहा, "इस का अर्थ यह हुआ कि आप अल्लाह मियां से भी अपने-आप को ज्यादा योग्य समझते हैं जिस ने सृष्टि की रचना की है। वह तो सभी कुछ बिना भेद-भाव किए, बांटे जा रहा है, उस की रहमतें तो हर वक्त, हर एक प्राणी पर एक जैसी ही हो रही है। वह तो सूर्य से नहीं कहता कि हिन्दू के यहाँ धूप न दो या बादलो हिन्दू के यहाँ बरसो।"

उन फ़कीरों को जब इस बात का उत्तर नहीं सूझा तो वे गुरुदेव से क्षमा याचना करते हुए चरणों में आ गिरे और कहने लगे, "हम तुच्छ बुद्धि वाले हैं। आप हमारा मार्ग दर्शन करें।" गुरुदेव ने तब कहा, "खुदा अपनी सभी नयामतें खलकत में बिना रुकावट दे रहा है। लोग अपने-अपने नसीबों के अनुसार, सब का लाभ उठा रहे हैं। यदि एक नयामत उसने किसी को बांटने के लिए दे दी तो वह उस के हुक्म की अदूली क्यों करे?

ऐसी शिक्षा प्राप्त कर फ़कीर सन्तुष्ट हो गए। गुरुदेव ने आदेश दिया, "यहाँ धर्मशाला बनवाकर उस में सब को समानता तथा भ्राति भाव का सबक सिखाओ।"

सईयद शाह हुसैन फ़क्कड़ – (नांदेड़ नगर, महाराष्ट्रा)

श्री गुरू नानक देव जी बिदर से महाराष्ट्र के नंदेड़ नगर श्री अवचल नगर हजूर साहिब में पहुँचे। उन दिनों वहां पर नगर के बाहर एक सूफी फ़कीर सईयद शाह हुसैन फ़क्कड रहता था। उन के मुरीदों ने उन्हें बताया, "गांव के बाहर एक फ़कीर आए हैं। वह गा कर अपना कलाम कहते हैं जो कि बहुत ज्ञान वर्धक तथा शान्तिदायक है।" यह सुनकर सईयद शाह हुसैन जी, गुरुदेव के दीदार को आया। जैसे ही मिलन हुआ वर्षा प्रारम्भ हो गई। शाह हुसैन विनती करने लगा, "हे फ़कीर! साई! आप हमारे यहाँ तशरीफ ले आएं जिस से आप भीगने से बच जाएंगे।" उत्तर में गुरुदेव ने कहा, "आप हमारी चिन्ता न करें, हमें कुदरत के हर रंग में रहने की आदत है।" किन्तु शाह हुसैन नहीं माना, वह कहने लगा, "आप हमारे मेहमान हैं इस लिए आप एक बार हमें सेवा का मौका जरूर दें।" गुरुदेव ने उस का स्नेह भरा आग्रह देखकर उस के पास रहना स्वीकार

कर लिया। फ़कीर शाह हुसैन जो कि उन दिनों युवावस्था में था और आस पास के गांव-देहात में बहुत मान्यता रखता था। गुरुदेव ने अनुभव किया कि फ़कीर तो आध्यात्मिक जीवन जीना चाहता है, परन्तु लोगों ने उस को ही व्यक्तिगत रूप में पूजना शुरू कर दिया है। इस लिए समय रहते गुरुदेव ने सावधान किया कि ऐसा न हो कि कुछ चापलूस लोगों के मुख से वह अपनी बढ़ाई सुनकर और विचलित हो कर अपने उद्देश्य से भटक जाए। अत: अपनी मान्यता न होने दें। पूजा तो केवल उस खुदा की ही होनी चाहिए। बन्दे को तो सिर्फ़ बन्दगी में ही रह कर उस का शुक्र अदा करना चाहिए। करामातें दिखाने से आत्मिक बल व्यर्थ चला जाता है। जैसे कोई तस्कर अमूल्य निधि लूटकर ले गया हो। ठीक वैसे ही खुशामदी लोग इबादत का फल लूटकर ले जाते हैं।

पतिव्रता होने की सीख-दौलताबाद (औरंगाबाद) नगर, महाराष्ट्रा

श्री गुरू नानक देव जी नांदेड़ नगर से दौलताबाद नगर में पहुँचे। नगर के मुख्य बाजार में से गुजरते समय भाई मरदाना जी की दृष्टि एक महाजन पर पड़ी जो कि अपनी दुकान में गद्दी लगाकर बहुत आराम से अपने व्यापार की देख-रेख कर रहा था तथा उस के कर्मचारी उस की आज्ञा अनुसार काम करने में व्यस्त थे। भाई मरदाना जी के मन में उस समय एक संकल्प उत्पन्न हुआ। वह सोचने लगा, "गुरुदेव कहते हैं कि हर कोई, किसी न किसी दुख से अवश्य ही पीड़ित होता है। केवल वही सुखी मनुष्य है जो प्रभु के कार्यो पर सन्तुष्ट होकर उस की रज़ा में रहता है अर्थात गिला शिकवा नहीं करता। किन्तु मुझे तो यह महाजन हर दृष्टि से प्रसन्नचित्त दिखाई दे रहा है। हो न हो यह सब से सुखी व्यक्ति होना ही चाहिए।" अत: भाई मरदाना जी ने यह शंका गुरुदेव के समक्ष रखी और कहा, "यह महाजन दुखी नहीं हो सकता। इस के पास सभी प्रकार के साधन उपलब्ध हैं?" गुरुदेव ने मरदाना जी की शंका का निवारण करने के लिए उन को उस महाजन को बुला लाने के लिए भेजा। भाई मरदाना जी ने उस महाजन से कहा, "आप को हमारे गुरू जी बुला रहे हैं। वह आप से कुछ बात करना चाहते हैं।" महाजन ने गुरुदेव को दूर खड़े देखा। उन के व्यक्तित्व से प्रभावित होकर वह भाई मरदाना जी के साथ चला आया और गुरुदेव को अभिनन्दन कर कुशल मंगल पूछने लगा। गुरुदेव

ने उसे पास में बैठाकर, भाई मरदाना जी के प्रश्न का उत्तर देने के लिए कहा। भाई मरदाना जी ने जब उस पर अपना प्रश्न फिर दोहराया, "क्या आप प्रत्येक दृष्टि से सुखी व्यक्ति हैं?" तो वह बोला, "बिल्कुल नहीं। मैं जो बाहर से दिखाई दे रहा हूँ ठीक इस के विपरीत मेरी अन्दर की स्थिति है। मैं मरना चाहता हूँ परन्तु मर भी नहीं सकता।" उस का उत्तर सुनकर भाई मरदाना जी बहुत आश्चर्य चकित हुए और कहने लगे, "ऐसा आप क्यों करना चाहते हैं? विस्तार पूर्वक रहस्य बताएं।"

महाजन संकोच–वश कुछ कह नहीं पा रहा था परन्तु गुरुदेव ने उसे सांत्वना दी और कहा, "आप नि: संदेह अपनी बात कहें। यदि प्रभु ने चाहा तो आप की समस्या का समाधान भी हो जायेगा। इस आश्वासन पर, महाजन ने कहा, "कुछ वर्ष पूर्व मेरी पत्नी बीमार पड़ गई। उस का बहुत इलाज करवाया परन्तु बीमारी बढ़ती गई। रोग का निदान नहीं हो पाया। जिस कारण उसके बचने की आशा समाप्त हो गई। मेरी पत्नी ने जब यह अनुभव किया कि उसकी मृत्यु निश्चित ही है तो वह मुझ से कहने लगी। मैं तो अब मर ही जाऊंगी और मेरे मरने पर आप दूसरी शादी रचा लेंगे। मैंने यह सुनकर उस को विश्वास दिलवाने की पूरी कोशिश की कि ऐसा कभी भी नहीं होगा क्योंकि मैं भी उसे बहुत प्यार करता हूँ परन्तु उस का संदेह दूर नहीं हुआ। उस का कहना था कि आप जो अब कह रहे हैं उस का पालन समय आने पर नहीं करेंगे। इस प्रकार हमारा प्रेम दो आत्माओं का न होकर दो शरीरों तक सीमित रह जाएगा। उस की भावुकता पूर्ण बातों ने मेरे मन पर गहरा प्रभाव डाला। मैं उस को विश्वास दिलाना चाहता था कि ऐसा कभी भी नहीं होगा परन्तु वह मानने को तैयार न थी। अत: मैंने आवेश में आकर उस के सामने अपने शिश्न का मुंड (लिंग का अग्र भाग) काट कर फैंक दिया जिस कारण रक्त ही रक्त प्रवाहित होने लगा। मेरे निज़ी सेवक ने जर्राही (शल्य चिकित्सक) को तुरन्त बुला कर मेरा उपचार करवाया। रक्त प्रवाहित तो बन्द होकर सामान्य हो गया किन्तु जो भावुकता में अनहोनी होनी थी वह तो हो गई थी। अब क्या हो सकता था खैर ...... मेरी पत्नी का उपचार भी उसी जर्राही ने पेट में चीरा देकर, कुछ खराब ग्रन्थियां (रसौली) निकाल कर किया। जिस से वह धीरे धीरे कुछ माह में सामान्य हो गई। समय बदल गया, जब वह पूर्णत: स्वस्थ्य हो गई तो फिर से उसी प्रकार प्रेम क्रीड़ा की चाहत करने लगी किन्तु अब ऐसा सम्भव तो था नहीं, क्योंकि उस के अंधे प्रेम में मैं अपने को

उस पर न्यौछावर कर चुका था। मुझे अयोग्य पाकर वह बहुत निराश रहने लगी। अतः वह अपने पर नियन्त्रण नहीं रख पाई उस ने कामुकता के कारण समय मिलते ही पर–पुरुषों के साथ अनैतिक यौन सम्बन्ध स्थापित कर लिए हैं जो कि मैं सहन नहीं कर पा रहा, अतः मुझे जीवन नहीं मृत्यु चाहिए। भाई मरदाना जी ने उस का करुणामय वृतान्त सुनकर अनुभव किया कि गुरुदेव के कथन में सत्य सदैव छिपा रहता है। गुरुदेव ने उस महाजन को धीरज बन्धाया और कहा, "करतार भली करेगा यदि आप अपनी पत्नी को हमारे पास लाओ तो हम उस को सद्‌गुणों की शिक्षा देंगे। फिर से वह अपनी भूल पर पश्चाताप करेगी।" महाजन ने गुरुदेव को अपने घर ले जा कर उनका भव्य स्वागत करते हुए अपनी पत्नी (सेठानी) से मिलवाया। जैसे ही उस ने गुरुदेव के दर्शन किये वह उन के तेजस्व के कारण चौकी तथा लाजवंश सिमटकर बैठ गई।

गुरुदेव ने कहा, "पुत्री तुम्हारा कर्त्तव्य है पतिव्रत धर्म का पालन करना। तुम तो जानती ही हो तुम्हारे पति ने तुम्हारे लिए अपने आप को तुझ पर बलिदान कर दिया है। अतः अब उस का आत्मगौरव तुम्हीं ने बनाए रखना है।" सेठानी यह सुनकर गुरुदेव के चरणों में आ गिरी तथा क्षमा याचना करते हुए कहने लगी, "अब मैं फिर से पिछली भूलें नहीं दोहराऊंगी।" इस पर गुरुदेव ने उसे आर्शीवाद देते हुए कहा, "भगवान तुझे शक्ति प्रदान करें तथा दृढता से उज्ज्वल जीवन जीने का बल भी प्रदान करें।"

कामणि कामि न आवई खोटी अवगणिआरि ॥
ना सुख पेईऐ साहुरै झूठि जली वेकारि ॥
आवणु वंञणु डाखड़ो छोडी कंति वसारि ॥
पिरकी नारि सुहावणी मुती सो कितु सादि ॥
पिर कै कामि न आवई बोले फादिलु बादि ॥
दरि घरि ढोई ना लहै छुटी दूजै सादि ॥

राग–सिरी राग, पृष्ठ 56

ओंकारेश्वर मन्दिर – (खण्डवा क्षेत्र, मध्य प्रदेश)

श्री गुरू नानक देव जी दौलतावाद से खण्डवा ज़िले की ओर प्रस्थान कर गए। खण्डवा के निकट मान्धाता नामक स्थान पर नर्मदा नदी कई घुमाव-फिराव के कारण दो बार घोड़े की नाल की भांति बहती हुई आगे बढ़ती है जिस से वहाँ ॐ जैसे आकार के अक्षर के समान एक द्वीप की उत्पत्ति हो गई है। स्थानीय लोगों ने पौराणिक किंवदन्तियों के अनुसार वहाँ पर एक मन्दिर बना रखा है जिसे वे ओंकारेश्वर जी का मन्दिर कहते हैं। ओंकारेश्वर मन्दिर में ओंकार के सिद्धांत के विरुद्ध साकार की उपासना होती देखकर, गुरुदेव क्षुब्ध हुए। उन्होंने कहा-प्राचीन ऋषि-मुनियों ने अति श्रेष्ठ दार्शनिक सिद्धांत मानव कल्याण हेतु प्रस्तुत किए हैं, किन्तु पुजारी लोगों ने फिर से वही घुमा-फिरा कर मानवता को कुएं में धकेलने का मार्ग अपना लिया है।

वहां पर पूजा के लिए ब्रह्म, विष्णु तथा महेश (शिव) आदि तीन अलग-अलग मन्दिर बनाकर, अलग-अलग पुजारी जनता को अपनी ओर आकृष्ट कर रहे थे। उन मन्दिरों में मुख्य शिव मन्दिर था जहां शिवलिंग की पूजा हो रही थी। पुजारी वर्ग वास्तव में अपनी रोज़ी-रोटी के चक्रव्यूह में घिरे हुए थे। उन को यथार्थ का ज्ञान होते हुए भी जनता को गुमराह करने में ही अपना भला जान पड़ता था। अत: वह इन तीनों शक्तियों के स्वामी, ओंकार दिव्य निराकार परम ज्योति के विषय में जिज्ञासुओं को नहीं बताना चाहते थे। उन का तर्क था कि जन-साधारण इतनी सूक्ष्म बुद्धि नहीं रखता कि उसे परम तत्व के विषय में ज्ञान दिया जाए। अत: हम इसी प्रकार जनता को अपना ग्राहक जानकर अपनी-अपनी दुकानदारी चलाते थे। इस पर गुरुदेव ने पुजारी वर्ग (पण्डों) को चनौती दी और कहा, "रूढिवादी प्रथा चलने से तुम स्वयं भी प्रभु की दृष्टि में अपराधी हो क्योंकि सत्य ज्ञान को न बता कर केवल व्यक्तिगत स्वार्थ सिद्धि हेतु जनता के भोलेपन का अनुचित लाभ उठाना जानते हो तथा अपने कर्त्तव्य से मुंह मोड़कर प्रभु के सन्मुख कैसे होंगे। क्योंकि गलत विधि विधान से मोक्ष सम्भव नहीं।"

केते गुर चेले फुनि हूआ ॥

काचे गुर ते मुक्ति न हूआ ॥

राग रामकली, पृष्ठ 932

मुक्ति का मार्ग आन्तरिक चारित्रिक, नैतिकता से सम्बन्ध रखता है। गुरू जी ने पुजारी वर्ग को खरी-खरी सुनाई तो जिज्ञासावश वे सभी इकट्ठे होकर गुरुदेव के साथ ज्ञान गोष्ठि के लिए पहुँचे। तब भाई मरदाना जी के रबाब के स्वर में गुरुदेव ने शब्द उच्चारण किया -

एकु अचारु रंगु इकु रूपु ॥ पउण पाणी अगनी असरूपु ॥

एको भवरु भवै तिहु लोइ ॥ ऐको बूझै सूझै पति होइ ॥

गिआनु धिआनु ले समसरि रहै ॥ गुरमुखि एकु विरला को लहै ॥

जिस नो देइ किरपा ते सुखु पाए ॥ गुरू दुआरै आखि सुणाए ॥

राग रामकली, पृष्ठ 930

तत्पश्चात् गुरुदेव ने अपने प्रवचनों में कहा, "ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव का निर्माता एक महाशक्ति और भी है जिसे आप ओंकार के नाम से जानते हैं। उस को विभाजित करना अनर्थ है। वह 'त्री भवन महि एको ज्योति' है। अत: यही सिद्धांत जन साधारण में दृढ़ करवाना चाहिए। कोई यंत्र, तंत्र मुक्ति पद नहीं हो सकते। काम क्रोधादि वासनाओं पर नियंत्रण रख कर ही साधना के मार्ग पर अग्रसर हुआ जा सकता है। श्री गुरू बाबा नानक जी के मुखार विन्द से जब ॐ अक्षर का विचार पंडितों ने श्रवण किया तो वे सभी गद्‌गद होकर बहुत प्रसन्न हुए। अत: चरणों में आ गिरे और प्रार्थना करने लगे, "आप के दर्शनों के कारण कृतार्थ हुए हैं। अब आप हम पर कृपा करके मुक्ति के लिए ज्ञान दीजिए तब गुरुदेव दयालु हुए, भक्ति ज्ञान देकर भजन करने का नियम दृढ़ कराया कि वह सर्व व्यापक है। अत: उसे प्रत्येक स्थान पर प्रत्येक क्षण उपस्थित जानों।"

साध–संगत की महिमा– (इन्दौर नगर, मध्य प्रदेश)

श्री गुरू नानक देव जी खण्डवा से इन्दौर पहुँचे। यहाँ पर भी आप जी ने नगर के बाहर एक इमली के वृक्ष के नीचे अपना डेरा लगाया जो कि चौराहे के जलाशय के निकट ही था। आप जी ने अमृत बेला में अपनी रीति अनुसार प्रभु स्तुति में भाई मरदाना जी के रबाबी संगीत में कीर्तन प्रारम्भ कर दिया। शौच–स्नान के लिए जो कोई भी नगर के बाहर आया, वह आप के मधुर कीर्तन के आकर्षण से आप के निकट खिंचा चला आया और कीर्तन श्रवण करते हुए मन एकाग्र कर प्रभु चरणों में जुड़ने का आनंद उठाने लगा। आप जी इसी प्रकार सुबह–शाम जन–समूह इकट्ठा कर कीर्तन के पश्चात् आध्यात्मिक जीवन जीने के लिए अपने प्रवचनों द्वारा उनका मार्ग दर्शन कर रहे थे, कि एक दिन दो पड़ौसी मित्र आप के पास आए। औपचारिकता के पश्चात् जिज्ञासावश पूछने लगे कि साध–संगत में आने का क्या महत्व है? गुरुदेव ने उत्तर दिया जो व्यक्ति परमार्थ के लिए साध–संगत में जाकर हरि यश सुनता अथवा गाता है उस के कार्य सिद्ध होते चले जाते हैं अर्थात उस के काम में बरकतें आती हैं तथा उस का जीवन सफल हो जाता है। इस के विपरीत जो दुर्जनों की संगत में पड़ता है वह दर–दर की ठोकरें खाता है तथा अपने श्वासों की पूंजी नष्ट करते हुए अपमानित जीवन जीता है। किन्तु वे दोनों कहने लगे, "हमारा तो अनुभव आप के कथन के विपरीत है।" पहला मित्र कहने लगा, "मैं आप के पास कई दिनों से शुभ कर्मों की शिक्षा धारण करने आ रहा हूँ, अत: मैंने अपने इस मित्र को भी प्रेरित किया था कि यह भी मेरे साथ आप के पास साध–संगत के लिए चले। परन्तु जब यह मेरी प्रतीक्षा कर रहा था तो उस समय जमीन कुरेदते हुए इसे एक मोहर (चान्दी का सिक्का) मिली है, जबकि मुझे, रास्ते में एक सूल चुभा है जिस के दर्द के कारण मैं समय से नहीं पहुँच पाया।" इस वृतांत को सुनकर गुरुदेव ने कहा, "आप का निर्णय प्रत्यक्ष के आधार पर करना होगा ताकि किसी के मन में शंका उत्पन्न न हो अत: चलो उस जगह पर चलें जहां यह घटना घटित हुई है।" इस पर वे लोग गुरुदेव को वहाँ ले गए जहां से मोहर मिली थी। गुरुदेव ने आदेश दिया कि उस स्थान को खोदा जाए। देखते ही देखते वहाँ से एक घड़ा निकला जो कि कोयलों से भरा पड़ा था। उस के पश्चात् वहाँ पहुँचे जहां दूसरे मित्र को सूल चुभा था। वहाँ पर खोदने

से सूली के आकार की तीखी नोक वाली एक लकड़ी मिली। यह देख गुरुदेव ने निर्णय दिया कि आप जो भी कर्म करते हैं। वह प्रफुल्लित होते हैं कुकर्म करने पर भाग्य में लिखी मोहरें कोयले का रूप धारण कर गई हैं और साध संगत करने पर सूली का कांटा बनकर चुभा है। यदि शुभ कर्म करोगे तो जन्म सफल हो सकता है। क्योंकि मानव के लिए मातलोक कर्म-भूमि है। यहाँ पर कर्म ही संचित करने आते हैं। शुभ कर्मो से बड़े से बड़ा संकट भी छोटा रूप धारण कर के टल जाता है। इस प्रकार अशुभ कर्म करने पर भाग्य में होने वाली प्राप्तियां भी नष्ट हो जाती है।

हृदय की पवित्रता ही स्वीकार्य- (उज्जैन नगर, मध्य प्रदेश)

श्री गुरू नानक देव जी इन्दौर नगर से उज्जैन नगर पहुँचे। यह प्राचीन ऐतिहासिक नगर सपरा नदी के किनारे है। वहाँ पर पौराणिक किंवदंतियों अनुसार बारह वर्षा पश्चात् अमृत धारा प्रवाहित होती है, अत: वहाँ पर कुम्भ मेला लगता है। गुरुदेव जी के वहाँ पधारने के समय कुम्भ मेले की तैयारियां हो रही थी। सपरा नदी के तट पर उन दिनों योगियों के बारह सम्प्रदायों में से भृतहरी नामक योगी समुदाय का एक अखाड़ा था। मेले के कारण जनता में अपनी प्रतिष्ठा बढ़ाने के उद्देश्य से वे सभी दूर-दूर से पहुँच रहे थे। योगियों के अखाड़े के निकट ही एक वृक्ष के नीचे गुरुदेव ने भी अपना खेमा लगाया और सुबह-शाम हरि यश में कीर्तन करने लगे। कीर्तन के उपरान्त प्रवचन होने लगे। जिस से मेले में आप जी आकर्षण के केन्द्र बन गए क्योंकि आप तो कर्म-काण्डों का खण्डन कर आध्यात्मिक जीवन जीने पर बल देते थे। जैसा कि केवल नदी में स्नान करके या दीपक जला कर तैराने भर से मोक्ष नहीं मिलता वह तो शुभ आचरण से मिलता है, जो व्यक्ति सत्य-मार्ग का गामी है वह शरीर की अपेक्षा हृदय की पवित्रता पर अपना ध्यान केन्द्रित करता है। यही प्रभु मिलन की अचूक युक्ति है।

अधिआतम करम करे ता साचा ॥ मुक्ति भेदु किआ जाणै काचा ॥

ऐसा जोगी जुगति बीचारे ॥ पंच मारि सच उरिधारै ॥ रहाउ ॥

जिस कै अंतरि साच वसावै ॥ जोग जुगति की कीमति पावै ॥

रवि ससि एको ग्रिह उदिआनै ॥ करणी कीरति करम समानै ॥

ऐक सबद इक भिखिया मांगै ॥ गिआनु धिआनु जुगति सचु जागै ॥

भै रचि रहै न बाहरि जाइ ॥ कीमति कउण कहै लिव लाइ ॥

आपे मेले भरमु चुकाए ॥ गुर परसादि परम पदु पाए ॥

गुर की सेवा सबदु वीचारु ॥ हउमै मारे करणी सार ॥

जप तप संजम पाठ पुराणु ॥ कहु नानक अपरंपर मानु ॥

राग गउड़ी, पृष्ठ 223

दूसरी तरफ जनता को अपनी ओर आकृष्ट करने के लिए योगी भरसक प्रयत्न कर रहे थे ताकि जन-समूह उन के दिखाए मार्ग पर विश्वास करे। किन्तु गुरुदेव अपनी मधुर बाणी से लोगों को जागृत कर रहे थे।

आदिवासी भील कबीले का सरदार कौडा राक्षस (भीलवाडा क्षेत्र, राजस्थान)

श्री गुरू नानक देव जी उज्जैन से जयपुर के लिए चल पड़े। इस लम्बे मार्ग में पठारी क्षेत्र पड़ता है अत: उन दिनों में वहां पर जन संख्या नाम मात्र को थी। कहीं-कहीं जंगल थे तथा कहीं-कहीं पहाड़ी टीले थे। रास्ते में झालवाड़, कोटा तथा बूंदी इत्यादि छोटे-छोटे नगर पड़ते थे परन्तु इन नगरों के बीच की लम्बी दूरी में आदिवासी भीलों का क्षेत्र था जो कि अपने घर टीले पर बनाते थे तथा उस में विशेष प्रकार के सूराख (छेद्र) रखते थे जिस से वे अपने शत्रु (शिकार) को दूर से ही पहचान कर सकते थे तथा उस को पकड़ कर मार कर खाते थे।

गुरुदेव जब कोटा से बूंदी के मध्य यात्रा कर रहे थे तो वहाँ पर भाई मरदाना जी को भोजन, पानी अथवा कंदमूल फल इत्यादि की खोज में कुछ दूर इधर उधर जाना पड़ा, जिस से वह भील लोगों के क्षेत्र में पहुँच गए और भीलों ने उन्हें आंगन्तुक होने के कारण शत्रु का भेदिया जान कर पकड़ लिया गया। भीलों ने उनको अपने सरदार कौडा के पास प्रस्तुत किया। कौडा ने बदले की भावना से भाई मरदाना जी को मृत्यु दण्ड देने की घोषणा कर दी, जिस के अनुसार उन को जीवित जला कर मार देने का कार्यकर्म बनाया गया। इस काम के लिए तेल का कड़ाह गर्म करना प्रारम्भ कर दिया गया। दूसरी तरफ भाई मरदाना जी के समय से न लौटने के कारण गुरुदेव स्वयं उन की खोज-खबर को निकले। जल्दी ही वह पद चिन्हों का सहारा लेते हुए उस जगह पहुँच गए जहां पर भाई जी को बान्ध के रखा गया था। उधर भाई मरदाना जी भीलों के कब्जे में भयभीत अवस्था में प्रभु चरणों में प्रार्थना में लीन थे कि तभी गुरुदेव वहां पहुँच गए। भीलों के सरदार कौडा को बहुत आश्चर्य हुआ कि उनके सुरक्षित स्थान तक वह किस प्रकार पहुँचा? उस ने गुरुदेव पर प्रश्न किया-आप कौन हैं? उत्तर में गुरुदेव ने कहा हम अपने साथी की खोज में आए हैं तथा परमेश्वर के भक्त हैं। यह सुनकर वह कहने लगा-परमेश्वर के बन्दे तो सभी हैं परन्तु नगर में बसने वाले धनी तथा ऊँची जाति के लोग हमें नीच कह कर सदैव अपमानित करते हैं तथा हमें तो वे देखना भी नहीं चाहते। यदि परमेश्वर के सभी बन्दे हैं तो वे हम से ऐसा दुर्व्यवहार क्यों किया जाता है? उत्तर में गुरुदेव ने कहा-आप ठीक कहते हैं, परन्तु इस में कुछ दोष आप का अपना भी है। आप भी बदले की भावना से उन लोगों के भूले-भटके साथियों की हत्या कर देते हो जिस से दोनों तरफ शत्रुता की भावना बढ़ती ही चली जा रही है। यदि ऐसा ही चलता रहा तो शत्रुता और बढ़ेगी। इस का एक ही उपाय है कि आप बदले की भावना त्याग कर हृदय में प्रेम धारण करें तथा उन लोगों से भद्र व्यवहार करें जिस से सहज ही निकटता आ जाएगी। क्योंकि द्वैष भावना को मिटाने का प्रेम ही एक मात्र साधन है।" इस शिक्षा का कौडा पर बहुत अच्छा प्रभाव हुआ। उस ने गुरुदेव के वचन माने तथा भाई मरदाना जी के बन्धन तुरन्त खोलने का आदेश दिया। इस पर कौडा के साथियों ने कुछ कंद-मूल, फल गुरुदेव को दिये जो उन्होंने मरदाने को देकर बाकी बांट दिये तथा भाई जी को रबाब थमाई और कहा कि अब आप इन लोगों के उद्धार के लिए शब्द गायन करें।

राजपूत चौधरी धर्म सिंह – (जयपुर नगर, राजस्थान)

श्री गुरू नानक देव जी उज्जैन से झालावाड़, कोटा तथा बुंदी होते हुए जयपुर नगर में पहुँचे। आप जी ने नगर के बाहर एक निर्जन स्थान पर आसन जमाया। भाई मरदाना जी जल के लिए नगर पहुँचे क्योंकि वहाँ कुंए इत्यादि नहीं होते। अत: स्थानीय लोग वर्षा का पानी जलाशय में संजोकर रखते हैं। वहाँ पर उन को चौधरी धर्म सिंह नामक एक जाट मिला, जो कि अपने नाम के अनुसार ही धर्मी पुरुष था। उस ने भाई जी को आंगतुक जान कर आदर सत्कार से भोजन कराया तथा पूछा, "आप अकेले है अथवा और व्यक्ति भी साथ में है।" उत्तर में भाई जी ने कहा, "मैं अकेला नहीं हूँ मेरे साथ मेरे गुरुदेव हैं परन्तु वह किसी के द्वार पर नहीं जाते।" यह जान कर चौधरी धर्म सिंह ने कुछ खाद्य सामग्री साथ ली और भाई जी के साथ गुरुदेव के दर्शनों को आया। भाई जी की रबाब के संगीत में कीर्तन श्रवण कर वह अति प्रसन्न हुआ तथा प्रार्थना करने लगा, "हे गुरुदेव ! आप हमारे नगर में पधार कर हमें कृतार्थ करें।" उस की प्रार्थना पर गुरुदेव नगर में गए। चौधरी की हवेली में सुबह-शाम प्रभु स्तुति में कीर्तन तथा प्रवचन होने लगे। गुरुदेव की महिमा राजा सुधर सैन ने भी सुनी। उस ने भी गुरुदेव को निमन्त्रण भेजा परन्तु गुरुदेव नहीं गए। इस पर राजा स्वयं गुरुदेव के दर्शनों को आया तथा पूछने लगा, "आप जी ने मेरा निमन्त्रण स्वीकार क्यों नहीं किया।" उत्तर में गुरुदेव ने कहा, "हे राजन ! हम सन्तोषी हैं तथा सन्तोष की ही शिक्षा देते हैं जब कि आप इस प्रवृति के विपरीत आचरण करते हो हम इस लिए नहीं आए।" वह आरोप सुनकर राजा बोला, "मुझ से ऐसी कौन सी भूल हुई है जिस के लिए आप ने मुझे असंतोषी बता रहे हैं?" गुरुदेव ने कहा, "तुम अपने राज्य के विस्तार की चेष्टा में आए दिन बिना कारण अपने पड़ोसी छोटे-छोटे रजवाड़ों को पराजित करने की धुन में रहते हो तथा राजपूत होने के झूठे अभिमान में अनेकों सैनिक आपसी कलह-कलेश में मरवा डालते हो। जिस से कई नारियां विधवा जीवन जीने की विवशता के कष्ट भोगती हैं।" राजा ने इस सत्य को स्वीकार किया और कहा, "आप ठीक कहते हैं। कई बार लड़ाई का मूल कारण कोई भी नहीं होता, केवल झूठा अभिमान ही असली समस्या होती है और हम एक दूसरे को नीचा दिखवाते रहते हैं।"

गुरुदेव ने उसे परामर्श दिया, "आप सभी छोटे बड़े राजवाड़ों को निमन्त्रण भेजकर एक सम्मेलन का आयोजन करें जिस में सभी मिल बैठकर आपसी छोटे-बड़े झगड़े पंचायती रूप में सुलझा लें ताकि आयंदा इस क्षेत्र के लोग बिना कारण आपसी फूट में न मारे जाएं। यदि वीरता ही दिखानी हो तो संगठित होकर किसी विदेशी आक्रमणकारी पर दिखाई जाए।"

राजा इस प्रस्ताव पर सहमत हो गया तथा उस ने ऐसा ही करने का वचन दिया।

तीर्थों पर भटकना व्यर्थ – (रिवाड़ी नगर, हरियाणा)

श्री गुरू नानक देव जी जयपुर नगर से नारनौल होते हुए रिवाड़ी पहुँचे। नगर के बाहर एक पुराने मन्दिर के निकट आप ने एकान्त स्थान देख कर डेरा लगाया। भाग्यवश कुछ तीर्थ यात्री, जो कि गंगा स्नान कर घरों को लौट रहे थे, उन्होंने भी रात भर के विश्राम के लिए वहीं डेरा लगा लिया। प्रात:काल आप जी ने स्नान आदि से निवृत होकर भाई मरदाना जी को कीर्तन करने को कहा और बाणी उच्चारण प्रारम्भ की –

सगल जोति महि जाकी जोति॥ बिआपि रहिआ सुआमी ओति पोति॥

जिउ कासट मै अगनि रहाइ ॥ दूध बीच घी रहिओ समाइ ॥

सागर माहि बुदबुदा हरे ॥ कनक कटक घट माटी करे ॥

नानक तिउ जग वहम मझार ॥ सतिगुर मिले ता देइ दिखार ॥

(जन्म साखी)

गुरुदेव की रसना से यह बाणी सुनकर तीर्थ यात्री गद्‌गद हो उठे और कहने लगे, "हम ज्ञान प्राप्ति की कामना से ही तीर्थ यात्रा को निकले थे। परन्तु अभी तक तो मन अशान्त, ज्यों का त्यों ही है। आप कृपा कर हमें ज्ञान प्रदान करें, जिस से हमारी तीर्थ यात्रा सफल हो जाए।" उन की प्रार्थना पर गुरुदेव ने कहा, "पारब्रह्म-परमेश्वर को तीर्थों पर खोजने की अपेक्षा अपने हृदय में ही खोजना चाहिए, क्योंकि वह दिव्य ज्योति

आप के भीतर उसी प्रकार समाई हुई है, जिस प्रकार दूध में घी, परन्तु उस की प्राप्ति पूर्ण सत्यगुरू की शिक्षा पर आचरण करने से ही हो सकती है। अर्थात अपने हृदय रूपी मन्दिर में उस के दर्शन करने का अभिलाषी व्यक्ति पूर्ण गुरू की शरण में पहुँचे और गुरू की कृपा के पात्र बनने के लिए, उनके दिखाए मार्ग पर चले, तो घर में ही प्रभु प्राप्ति सम्भव है।"

संसार मिथ्या है – (हिसार नगर, हरियाणा)

श्री गुरू नानक देव जी रिवाड़ी से हिसार नगर पहुँचे। आप जी ने नगर के बाहर एक कूएं के निकट अपना आसन लगाया। संध्या समय कुछ महिलाएं जल भरने के लिए आई तो आप जी एवं भाई मरदाना जी कीर्तन कर रहे थे। कीर्तन की मधुरता के कारण महिलाएं जल भरना भूल कर गुरुदेव के निकट आ कर, कीर्तन का रसास्वादन सुनने लगी। कीर्तन की समाप्ति पर उन महिलाओं ने गुरुदेव से आग्रह किया, "आप यहाँ निर्जन स्थान पर न रह कर नगर के बारातघर में ठहरें ताकि हमें अन्न–जल से आप की सेवा का अवसर मिल सके।" गुरुदेव ने उन की प्रार्थना को स्वीकार कर लिया। अगली सुबह जब गुरुदेव कीर्तन करने में व्यस्त थे तो उन की मधुर बाणी सुन कर आस–पास के नर–नारी, हरि–यश सुनने एकत्र हो गए। कीर्तन करते समय गुरुदेव बाणी उच्चारण कर रहे थे –

कूड़ु राजा कूड़ु परजा कूड़ु सभु संसारु ॥
कूड़ु मंडप कूड़ु माड़ी कूड़ु बैसणहारु ॥
कूड़ु सुइना कूड़ु रुपा कूड़ु पैनहणहारु ॥
कूड़ु काइआ कूड़ु कपड़ु कूड़ु रूपु अपारु ॥
कूड़ु मीआ कूड़ु बीबी खपि होए खारु ॥
कूड़ि कूड़ै नेहु लगा विसरिआ करतारु ॥
किसु नालि कीचै दोसती सभु जगु चलणहारु ॥
कूड़ु मिठा कूड़ु माखिउ कूड़ु डोबे पूरु ॥
नानकु वखाणै बेनती तुधु बाझु कूड़ो कूड़ु ॥

राग आसा, पृष्ठ 468

कीर्तन समाप्ति पर गुरुदेव ने प्रवचनों में कहा, "यह दृष्टिमान संसार सभी नाशवान है, इस लिए केवल एक प्रभु के अतिरिक्त कहीं और स्नेह नहीं करना चाहिए, क्योंकि सभी ने बारी-बारी चले जाना है।" तभी एक महिला रोती विलकती आई और प्रार्थना करने लगी, "हे गुरुदेव ! मेरे बच्चे का देहान्त हो गया है कृपया उसे पुन: जीवन दान दें।" गुरुदेव ने उसे धैर्य बन्धाया और कहा, "हे माता ! प्रभु की लीला है उस के हुक्म के आगे किसी का कोई बस नहीं चलता। अत: सभी उस के हुक्म के बन्धे हुए चलते हैं।" परन्तु उस महिला का विलाप थमने को न था। इस लिए गुरुदेव ने उस का रूदन देखते हुए कहा, "हे देवी ! आप का बच्चा जीवित हो सकता है यदि आप किसी ऐसे घर से एक कटोरा दूध ला दें जहां कभी कोई मरा न हो?" वह महिला बात का रहस्य जाने बिना, वहां से चल दी, उस का विचार था कि वह कोई कठिन कार्य नहीं था अत: वह घर-घर जा कर पूछने लगी कि उन के यहाँ पहले कभी कोई मरा तो नहीं है? परन्तु वह जल्दी ही निराश हो कर लौट आई। वह जहां, और जिस द्वार पर भी गई वहाँ पर उस को एक ही उत्तर मिला कि उनके पूर्वज इत्यादि बहुत से लोग पहले मर चुके थे। उसे कोई भी ऐसा घर अथवा परिवार नहीं मिला जहां कोई न मरा न हो। इस पर गुरुदेव ने उसे कहा, "देखो देवी आप के साथ कोई ऐसी अनहोनी घटना तो घटी नहीं जिस के लिए तुम इतनी दुखी हो रही हो, यह मात लोक एक मुसाफिरखाना है। यहाँ इसी प्रकार आवागमन सदैव बना रहता है। अर्थात ऐसी घटना सब के साथ घटित होती चली आई है।" गुरुदेव की युक्ति से अब वह जीवन का रहस्य जान चुकी थी। अत: उस का मन शान्त हो चुका था।

श्रमिकों में आस्था जाग्रित-(बठिण्डा नगर, पंजाब)

श्री गुरू नानक देव जी हिसार नगर से बठिण्डा नगर पहुँचे। नगर के बाहर आप अमृत बेला में कीर्तन करने में व्यस्त हो गए। उस समय कुछ श्रमिक, मजदूरी की तलाश में नगर जा रहे थे। गुरुदेव की मीठी बाणी सुनकर वे प्रार्थना करने लगे, "हे गुरू जी ! हमें कोई जीविका अर्जित करने की युक्ति बताएं क्योंकि इस वर्ष वर्षा अच्छी न होने से खेती ठीक नहीं हुई। अत: मजदूरी भी कहीं मिल नहीं पाती।" गुरुदेव ने श्रमिकों की विवशता को जानते हुए उन्हें धैर्य बन्धाया और कहा, "प्रभु सब का स्वामी है अत:

प्रत्येक प्राणी को रिज़क देना उस का मुख्य कार्य है। वह बच्चे के जन्म से पहले माता के स्तनों में दूध भेजता है। जल में तथा भूमि के नीचे रहने वाले जीवों को भी जीविका प्रदान कर रहा है किन्तु आप तो मनुष्य है अत: आप को विचलित नहीं होना चाहिए।" इसी सन्दर्भ में गुरुदेव ने बाणी उच्चारण की -

पवणु पाणी अगनि तिनि कीआ, ब्रह्मा बिसनु महेस अकार ॥
सरबे जाचिक तूं प्रभु दाता, दाति करे अपुनै बीचार ॥
कोटि तेतीस जाचहि प्रभ नाइक देदे तोटि नाही भंडार ॥
ऊधै भांडै कछु न समावै सीधै अंम्रितु परै निहार ॥

राग गुजरी, पृष्ठ 504

अन्त में गुरुदेव कहने लगे, "बस एक ही बात समझने की है कि उस की कृपा दृष्टि सदैव हो रही है केवल कृपा के पात्र बनने के लिए प्राणी को उस के सनमुख होना चाहिए। नहीं तो वह ठीक उसी प्रकार वंचित रह जायेगा जिस प्रकार घड़ा उलटा होने के कारण वर्षा के पानी से भर नहीं पाता।"

भगति करि चितु लाइ हरि सिउ छोडि मनहु अंदेसिआ ॥
सचु कहै नानकु चेति रे मन जीअड़िआ परदेसीआ ॥

राग आसा, पृष्ठ 439

गुरुदेव के उत्साहित करने पर श्रमिक वर्ग में आत्म विश्वास जाग्रत हो गया। वह प्रभु में आस्था लेकर अपने नगर पहुँचे। नगर के प्रशासनिक अधिकारी नगर के दुर्ग की मरम्मत करवाने के लिए कुछ श्रमिकों की तलाश में थे। अत: उन्होंने श्रमिकों को बुलाकर उन को तुरन्त रोजगार दे दिया।

दौलत खान से पुनर मिलन – (सुलतान नगर, पंजाब)

श्री गुरू नानक देव जी बठिण्डा नगर से सुलतानपुर पहुँचे। बेबे (बहन)नानकी आप जी को बहुत याद कर रही थी अत: वह कुछ दिनों से आप के दर्शनों के लिए अंधीर रहने लगी थी, कि अकस्मात उन को उन की दासी तुलसां ने जाकर सूचना दी कि उन के प्यारे भैया नगर में आ चुके हैं। बस कुछ ही समय में उन के पास पहुँचने ही वाले हैं। बहन नानकी जी की खुशी का ठिकाना न रहा, वह अपने भैया के स्वागत के लिए भोजन तैयार करने में व्यस्त हो गई। तभी द्वार पर भाई मरदाना जी की रबाब के संगीत में सत्य-सत्य की मीठी ध्वनि सुनाई दी। बेबे (बहन) नानकी भागकर घर से बाहर निकली और अपने भइया को गले लगाया तथा कुशल-क्षेम पूछा और कहा, "लगभग 5ऋ वर्ष के पश्चात् आप वापस लौट रहे हैं। इस बार किस किस तरफ गए थे?" उत्तर में गुरुदेव ने कहा, "हम दक्षिण भारत तथा अन्य पड़ोसी देशों में भ्रमण कर आ रहे हैं।" तभी तुलसां ने चारपाई बिछा दी उस पर गुरुदेव को बैठा कर, उन के चरण धुलवाए और बहन जी ने भोजन परोस दिया। तुलसां पंखा करने लगी। बेबे नानकी जी ने घर के समाचार बताते हुए कहा, "अब बच्चे बड़े हो गए हैं उन के विवाह करने है यह सब सांसारिक कार्य आप अपनी देख रेख में करो।" गुरुदेव ने सहमति प्रकट की और कहा, "करतार भली करेगा, सब कुछ समय अनुसार यथापूवर्क हो जाएगा।" परन्तु बेबे कहने लगी, "आप का बड़ा लड़का, श्री चन्द तो विवाह करने से इन्कार कर रहा है। उस का कहना है कि वह आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करेगा तथा समस्त जीवन केवल नाम स्मरण में व्यतीत करेगा।" इस पर गुरुदेव ने उत्तर दिया, "मैं उस की आत्मिक अवस्था देखकर ही कोई निर्णय करूंगा।" तभी भइया जयराम जी अपने कार्यालय से लौट कर आए, उन्होंने नानक जी को हृदय से लगाया। किन्तु नानक जी ने उन के चरण स्पर्श किये। इत्फाक से उन दिनों नवाब दौलत खान लाहौर से सुलतानपुर, किसी काम से आए हुए थे। उन को लाहौर की सूबेदारी (राज्यपाल) मिली हुई थी। गुरुदेव का सुलतानपुर में आना जब उनको मालूम हुआ तो वह गुरुदेव से मिलने आए। उन्होंने गुरुदेव से उन की लम्बी यात्राओं के विषय में विस्तार से जानकारी प्राप्त की और बहुत आनंदित हुए। उन्होंने तभी पूछा, "अब आप अपना मुकाम कहाँ रखने का विचार रखते

हैं?" गुरुदेव ने उत्तर दिया, "मुकाम, वह बनाता है जो इस संसार में स्थिर रह सकता हो। बाकी सब जगत चलायमान है, अल्लाह के अतिरिक्त सब नाशवान तथा मिथ्या है। अत: जीव का मुकाम तो सारा संसार है"

अलाहु अलखु अगंमु कादरु करणहार करीमु ।
सब दुनी आवण जावणी मुकामु एकु रहीमु ।।
मुकामु तिस नो आखीऐ जिसु सिसि न होवी लेखु ।
असमानु धरती चलसी मुकामु ओही एकु ।।
दिन रवि चलै निसि ससि चलै तारिका लख पलोइ ।
मुकामु ओही एकु है नानक सचु बुगोइ ।।

राग–सिरी राग, पृष्ठ 64

इस उपदेश को सुनकर दौलतखान बहुत प्रभावित हुआ और गुरुदेव को नमस्कार कर चला गया। गुरुदेव के वापस लौटने का समाचार नगर में फैलते ही बहुत से पुराने सत्संगी गुरू जी को मिलने आए जिस से कुछ दिन सुलतानपुर की धर्मशाला में पुन: कई गुना रौनक होने लगी। सुबह-शाम कीर्तन के पश्चात् गुरुदेव अपने प्रवचनों द्वारा संगत को गुरमति दृढ़ करवाने लगे। कुछ दिन पश्चात् आप जी ने तलवण्डी जाने का कार्यक्रम बनाया और भाई मरदाना जी सहित वहाँ पहुँचे।

पिता पुत्र में सैद्धांतिक मतभेद – (तलवण्डी नगर, पंजाब)

श्री गुरू नानक देव जी सुलतानपर पुर से तलवण्डी पहुँचे। आप जी नगर के बाहर एक निर्जन स्थान पर विश्राम करने लगे। परन्तु भाई मरदाना जी आप की आज्ञा पाकर अपने घर-परिवार को मिलने पहुँचे। भाई मरदाना जी के लौटने का समाचार जैसे ही माता तृप्ता जी को मिला, वह नानक जी की खोज में निकल पड़े और जल्दी ही उन्होंने नानक जी को खोज लिया। गुरुदेव ने चरण बन्दना की। माता जी ने उन को कंठ लगाते हुए आग्रह किया कि उनके साथ घर पर चलो। माता जी का ममता भरा आग्रह इतना

भावुक था कि गुरुदेव इन्कार नहीं कर पाये अत: वे माता जी के साथ घर पहुँचे। पिता कालू जी तथा गुरुदेव जी के बडे बेटे श्री चन्द से भेंट हुई, जो कि उन दिनों अपने दादा जी के पास रह रहे थे। पिता कालू जी ने नानक जी को इस बार कंठ से लगाकर स्नेह पूर्ण कहा, "बेटा अब मैं बूढ़ा हो गया हूँ अत: तुम मेरे पास रहो।" गुरुदेव ने उत्तर में कहा, "मेरे स्थान पर आप का पोता आप के पास है।" यह सुनकर मेहता कालू जी ने कहा, "वह तो ठीक है परन्तु यह तो तेरे से भी दो कदम आगे बढ़ गया है। इस का कहना है कि मैं आजीवन अविवाहित रहूंगा।" इस पर गुरुदेव ने श्री चन्द जी को अपने पास बिठाकर बहुत स्नेह पूर्वक जीवन का वास्तविक लक्ष्य बताते हुए कहा, "प्रकृति के नियमों के अंतरगत जीवन बहुत सहज तथा सरल हो जाता है तथा प्राप्तियां भी अधिक होती हैं। इस के विपरीत ब्रह्मचर्य का पालन करना कठिन ही नहीं असम्भव भी होता है। इस लिए कोई भी कदम उठाने से पहले अपने हृदय को दृढता से जांचो कि कहीं समय आने पर विचलित तो नहीं हो जाएगा। यदि ऐसा हुआ तो कहीं के नहीं रहोगे अर्थात दीन-दुनियां दोनों खो दोगे।" श्री चन्द जी उत्तर में कहने लगे, "पिता जी आप चिन्ता न करें मैंने अपने मन को साध लिया है। वह कभी भी विचलित नहीं हो सकता इसलिए मैंने आजीवन यति रहने की कड़ी प्रतिज्ञा ले ली है।" परन्तु इस उत्तर से गुरुदेव प्रसन्न नहीं हुए और उन्होंने कहा, "तुम्हें इस प्रकार की प्रतिज्ञा लेने से पहले मेरे लौटने की प्रतीक्षा करनी चाहिए थी।"

सचि सिमरिए होवै परगासु ।। ता ते बिखिआ महि रहै उदासु ।।
सतिगुर की ऐसी वडिआई ।। पुत्र कलत्र विचे गति पाई ।।
राग धनासरी, पृष्ठ 661

अब हमारे बीच सदैव सैद्धांतिक मतभेद उत्पन्न हो गया है। पिता जी के रोष को देखते हुए श्री चन्द जी ने उन से क्षमा याचना की और कहा, "मुझ से भूल हुई है परन्तु अब क्या किया जा सकता है। कृपया मुझे अर्शीवाद दें कि मेरी प्रतिज्ञा भंग न हो।" उत्तर में गुरुदेव ने कहा, "ठीक है, मैं तुम्हारी प्रतिज्ञा के सामने रुकावट नहीं बनता किन्तु इतनी कड़ी साधना करने पर भी प्राप्ति गृहस्थियों से कम ही होगी।"

इस विचार विमर्श के पश्चात् माता तृप्ता जी तथा पिता कालू जी कहने लगे, “ठीक है यदि यह विवाह नहीं करता तो छोटे लड़के लक्खमी दास की तैयारी करो।” गुरुदेव ने उत्तर दिया, “ठीक है मैं उस के ननिहाल पक्खो के रंधावे जाऊंगा और इस शुभ कार्य का प्रारम्भ करूंगा। तभी राय बुलार साहब का संदेश आ पहुँचा कि नानक जी से कहो कि वे उन से मिलने आवें। गुरुदेव जी संदेश पाकर उन के यहाँ पहुँचे। नानक जी का आना सुनकर राय जी पलंग से उठे, परन्तु वृद्ध अवस्था के कारण उठ नहीं पाये। अत: लुढ़क गए जिस से गुरुदेव ने उन्हें थाम लिया। वह वैराग में रूदन करने लगे कि गुरुदेव जी बहुत लम्बे समय पश्चात् ही लौटते हैं। मैं अब मृत्युशय्या पर पड़ा हूँ मेरी बस यही एक अभिलाषा शेष थी कि आप के दीदार कर शरीर त्याग सकूं। बस यह इच्छा भी पूर्ण हुई। अत: अब मैं खुशी-खुशी, इस संसार से विदा होने को तैयार हूँ। गुरुदेव ने उन्हें धैर्य बन्धाया और कहा, “सब कुछ उस मालिक के हुक्म से ठीक ही हो रहा है।” इस प्रकार गुरुदेव कुछ दिन अपने माता-पिता के पास तलवण्डी में रहे तथा भाई मरदाना जी को साथ लेकर कीर्तन कर वहाँ की संगत को हरि यश से कृतार्थ करते रहे और फिर सब से विदा लेकर आप अपने ससुराल पक्खो के रंधावे परिवार से मिलने चले गए।

भाई दोदा जी– (पक्खो के रंधावे ग्राम, पंजाब)

श्री गुरू नानक देव जी अपने माता पिता जी से विदाई लेकर तलवण्डी नगर से अपने ससुराल पक्खो के रंधावे ग्राम में परिवार को मिलने पहुँचे। इस बार गुरुदेव का वहां पर भव्य स्वागत किया गया। सभी नगर निवासी बहुत प्रसन्न थे। विशेष कर गांव का चौधरी अजिता जी गुरुदेव से आग्रह करने लगा, “अब आप यहीं बस जाओ, मैं आप को जमीन खरीदने में सहायता करूंगा।” उस के प्रस्ताव अनुसार बाबा मूलचन्द जी ने रावी नदी के पच्छिमी तट पर उपजाऊ भूमि की निशानदेही कर ली थी। गुरुदेव ने स्थानीय संगत के अनुरोध पर वहाँ एक प्रचार केन्द्र बनाने की योजना बनाई जिस को कार्य रूप देने के लिए आप जी स्वयं उस स्थान का निरीक्षण करना चाहते थे। परन्तु बेटे लक्खमी दास का विवाह बाबा मूलचन्द जी द्वारा निश्चित किया जा चुका था अत: सभी सम्बंधियों को निमन्त्रण भेजे गए और उन के आने की प्रतीक्षा होने लगी। इस बीच समय

मिलते ही एक दिन गुरुदेव रावी के उस पार भाई मरदाना जी को साथ लेकर पहुँच गए। वहाँ पर एक रमणीक स्थल देखकर आसन लगाया और प्रात:काल होने पर कीर्तन में व्यस्त हो गए। वहां से एक किसान महिला खेतों में काम कर रहे अपने पति के लिए, भोजन लेजाते हुए वहां से गुजरी, उस ने जब मधुर संगीत में गुरुदेव की बाणी सुनी तो वह कीर्तन सुनने वहीं बैठ गई और कीर्तन श्रवण करने लगी, कीर्तन समाप्ति पर उस ने भाई मरदाना जी तथा गुरुदेव को वह भोजन परोस दिया। और वह लौट कर घर गई, पुन: भोजन तैयार कर जब खेतों में पहुँची तब तक बहुत देर हो चुकी थी। उस का पति दोदा बहुत नाराज़ हुआ कि उसने इतनी देर कहाँ की? उस ने बताया कि नदी किनारे कोई साधु मण्डली हरि यश में लीन थी अत: भोजन उनको खिला कर, उस के लिए पुन: भोजन तैयार कर लाई हूँ। दोदा विचार करने लगा कि साधुओं को भोजन कराना तो अच्छी बात है परन्तु यह तो देखना परखना ही चाहिए कि साधु पाखण्डी इत्यादि ना हो। इस विचार को मन में लेकर वह चुपके से समय मिलते ही वहाँ पहुँचा जहां पर गुरुदेव आसन लगा कर हरि यश में लीन थे। दोदा भी नमस्कार कर बैठ गया और कीर्तन सुनने लगा– गुरुदेव तब बाणी उच्चारण कर रहे थे :

खाणा पीणा हसणा सउणा विसरि गइआ है मरणा ।।
खसमु विसारि खुआरी कीनी ध्रिगु जीवणु नही रहणा ।।

राग मलार, पृष्ठ 1254

कीर्तन की समाप्ति पर दोदा जी ने गुरूदेव से पूछा, ''आप कहाँ से पधारे हैं और आपके आने का क्या प्रयोजन है ?'' गुरूदेव ने उत्तर दिया, ''हम रमते साधू हैं, भगवान यहां ले आया है। हमारे यहां आने का प्रयोजन केवल मानव कल्याण के कार्य करना है। परन्तु दोदा इस उत्तर से सन्तुष्ट नहीं हुआ। क्योंकि उसके मन में संशय उत्पन्न हो गया था। उसने फिर पूछा, ''आपका मानव कल्याण से क्या तात्पर्य है और हमें आप क्या दे सकते हैं ? क्योंकि हमारे पास धन सम्पदा का आभाव तो है ही नहीं।'' गुरूदेव ने कहा, ''वही तो हम कीर्तन में कह रहे थे कि हे प्रभु! आपने हमें अमुल्य

मानव शरीर दिया है और अनंत धन सम्पदा दी है। परन्तु हमने कभी तेरा धन्यवाद भी नहीं किया जबकि हम जानते हैं कि संसार सब मिथ्या है एक न एक दि हम सबने अवश्य ही संसार से विदा लेनी है।'' दोदा (गम्भीर मुद्रा में) आपकी बात में तथ्य तो है परन्तु यह धन सम्पदा मैंने अपने परिश्रम से अर्जित की हैं, इसमें प्रभु का क्या काम ?'' गुरूदेव ने इस उत्तर पर कहा, ''आप खूब परिश्रम करें, यदि भगवान समय अनुसार वर्षा ही न करें तो खेतों में फसल फूले-फलेगी कैसे ?'' इतने में दोदे की पत्नी उसे खोजती हुई वही पुनः चली आई और पति को गुरूदेव के समक्ष पाकर, गुरूदेव के चरणों में विनती करने लगी, ''हे प्रभु, सम साई जी! हमें सन्तान सुख प्राप्त नहीं है, कृप्या हमारी यह अभिलाषा पूर्ण होने के लिए वरदान दें।'' इस पर गुरूदेव ने दोदे पर प्रश्न किया, ''प्रायः सभी गृहस्थियों के यहाँ सन्तान होती है परन्तु तुम्हारे यहाँ क्यों नहीं है ? इसका सीधा सा अर्थ है सभी कुछ उस प्रभु के हाथ में है और उसी की कृपा दृष्टि अथ्वा बरकतों से संसार चल रहा है।'' गुरूदेव ने दोदे की पत्नी को सांत्वना दी और कहा, ''सन्तान उत्पत्ति का उपाय यही है कि आप यहाँ एक धर्मशाला बनवायें और उसमें नित्यप्रति सत्य-संगत होनी चाहिए फिर वे सत्संगी मिलकर किसी दिन आपके लिए प्रभु चरणों में सन्तान के लिए प्रार्थना करेंगे जो अवश्य ही स्वीकार्य होगी।

चौथा अध्याय

प्रचार अभियान तृतीय

जीवन सार्थक करने की युक्ति – (चम्बा नगर, हिमाचल)

श्री गुरू नानक देव जी अपने छोटे लड़के लक्खमी दास का विवाह सम्पन्न कर अपने माता-पिता तथा सम्बन्धियों से विदा लेकर पक्खो के रंधावे ग्राम से हिमालय पर्वत श्रृंखला की यात्रा पर भाई मरदाना जी को साथ लेकर निकल पड़े। आप जी रावी नदी के किनारे चलते-चलते चम्बा नगर में पहुँचे। यह क्षेत्र प्राकृतिक दृष्टि से अति सुन्दर मनमोहक है। इस के रमणीक स्थानों की छटा देखते ही बनती है। यहाँ बहुत से देवी देवतायों के मन्दिर है। जहां प्रतिदिन पूजा अर्चना होती रहती है। गुरुदेव ने एक रमणीक स्थान देखकर वहाँ पर कीर्तन प्रारम्भ कर दिया। एकांत में रबाब की मधुर धुन पर कीर्तन की ध्वनि सुनकर कुछ तीर्थ यात्री उधर चले आए जहां पर गुरुदेव कीर्तन में मग्न थे-

नदरि करे ता सिमरिआ जाइ ॥
आतमा द्रवै रहै लिव लाइ ॥
आतमा परमातमा एको करै ॥
अंतर की दुबिधा अंतरि मरै ॥
गुर परसादी पाइआ जाइ ॥
हरि सिउ चितु लागै फिरि कालु न खाइ ॥ 1 ॥ रहाउ

राग धनासरी, पृष्ठ 661

तीर्थ यात्रीयों को कीर्तन में बहुत आनंद प्राप्त हुआ, उन्होंने गुरुदेव से आग्रह किया, "आप हमें अपने काव्य का भावार्थ बताएं।" इस पर गुरुदेव ने कहा, "हे सत्य पुरुषो भगवान की याद भी उसी को आती है, जिस व्यक्ति पर उस की कृपा हो तथा वैराग्य भी उसी के हृदय में उत्पन्न होता है, जिस को प्रभु अपने निकट लाना चाहता है।

प्रभु की कृपा के पात्र बनने के लिए जब व्यक्ति यत्न करता है तो उस की कृपा द्वारा आत्म शंकाए मिट जाती हैं। जिस व्यक्ति का मन हरि सिमरन में रम गया हो फिर उसे बार-बार जन्म-मरण के चच र में नहीं पड़ना पड़ता, अत: पूर्ण गुरू के दर्शाऐ मार्ग पर पूर्णतय: जीवन निर्वाह करने से मोक्ष प्राप्ति होती है।

उन लोगों ने जब गुरुदेव से जीवन को सार्थक करने की युक्ति सुनी तो वे नत मस्तक हो गए तथा कहने लगे, "हम लोग मन की शान्ति के लिए लम्बे समय से तीर्थो इत्यादि धार्मिक स्थानों की यात्रा कर रहे हैं किन्तु कहीं सन्तुष्टि प्राप्त नहीं हुई, जो कि आज आप की संगत करने से प्राप्त हुई है। इस लिए हम आप से दीक्षा लेना चाहते हैं। कृपया आप हमें अपना शिष्य स्वीकार करें।" गुरुदेव ने उन के हृदय की सच्ची लगन देखते हुए उन को, "चरणामृत देकर दीक्षित कर उपदेश देते हुए अपना शिष्य स्वीकार किया।" यह घटना जंगल की आग की तरह समस्त चम्बा नगर में फैल गई कि घाटी में कोई पूर्ण पुरुष आए हुए हैं जो कि सत्य मार्ग को बहुत ही सहज विधि द्वारा दृढ़ करवाते हैं। देखते ही देखते गुरू जी के दर्शनों को, अपार जन समूह उमड़ पड़ा। गुरुदेव की स्तुति सुन कर नगर का नरेश भी अपने परिवार सहित दर्शनों को आया। वह पूर्णत: देवी उपासक था, जिस कारण उस ने गुरुदेव से भान्ति-भान्ति के प्रश्न किए। उत्तर में गुरुदेव ने कहा-ज्योति स्वरूप पारब्रह्म परमेश्वर के दर्शनों की अभिलाषा लिए अपने को बड़े देवता कहलाने वालों ने भी साधना में बहुत कठनाइयां झेली हैं। यहाँ तक कि योगी, यति इत्यादि भी वेष-भूषा बदल-बदल कर तथा कई युक्तियों द्वारा तप-साधना करते हार गये किन्तु परमेश्वर का भेद (अन्त) नहीं जान सके। अत: प्रभु ! अनन्त है उसके नाम भी अनेक हैं और उसके गुण भी अनेक हैं। उसके किसी एक गुण का व्यरव्यान करना भी कठिन है।

देवतिआ दरसन कै ताई दूरव भूरव तीरथ कीए ।।

जोगी जती जुगति महि रहते करि करि भगवे भेरव भए ।।

तउ कारणि साहिबा रंगि रते ।।

तेरे नाम अनेका रूप अनंता कहणु न जाही तेरे गुण केते ।।

राग आसा, पृष्ठ 358

जो व्यक्ति रोम-रोम में रमे राम को त्याग कर काल्पनिक देवी देवताओं के चक्र में अपना समय नष्ट करते हैं वह अन्तकाल में पश्चाताप की आग में जलते हैं कि उन्होंने वास्तविकता को जानते हुए भी कर्म-काण्ड में अपने को उलझाए रखा, क्योंकि भव सागर से पार उतरने को एक मात्र साधन हरि नाम आराधना ही है।

बिनु हरि नाम को मुक्ति न पावसि,

डूबि मुए बिनु पानी ॥

भैरउ म: 1, पृष्ठ 1127

गुरुदेव के वचनों से स्थानीय नरेश बहुत प्रभावित हुआ। उस ने गुरुदेव की शिक्षा धारण कर एक धर्मशाला की स्थापना करवाई और फिर वहां पर निरंकार की उपासना के लिए संगत प्रतिदिन प्रभु स्तुति करने लगी। वहाँ से प्रस्थान कर गुरुदेव कांगड़ा क्षेत्र में चले गए।

निराकार उपासना ही फलीभूत होती है- (कांगड़ा नगर, हिमाचल प्रदेश)

श्री गुरू नानक देव जी चम्बा नगर से कांगड़ा प्रस्थान कर गए। पौराणिक कथा अनुसार पार्वती के सती होने पर शिवजी द्वारा उस के शव को लेकर जगह जगह घूमने से जिसे धरती पर कान गिरा, तो यह क्षेत्र कांगड़ा कहलाया। यहाँ पर एक बहुत प्रसिद्ध मन्दिर है जहां पर देवी की पूजा होती है। अपने भक्तों की मण्डली के साथ गुरुदेव जब कांगड़ा पहुँचे तो उन की निराकार उपासना की प्रसिद्धि सुनकर, दूर-दूर से जिज्ञासु उन के दर्शनों को आने लगे। किन्तु पुजारी गण, गुरुदेव से ईर्ष्या करने लगे। उन का मत था कि बिना प्रत्यक्ष दर्शन किये निराकार प्रभु की आराधना कोई किस प्रकार कर सकता है? व्यक्ति को भगवान की छवि तो दिखाई देनी ही चाहिए। अत: वे इकट्ठे होकर गुरुदेव के साथ उलझने के लिए पहुँच गए। गुरुदेव उस समय संगत के समक्ष कीर्तन करते हुए उच्चारण कर रहे थे।

एका मूरति साचा नाउ।। तिथै निबड़ै साचु निआउ ।।

साची करणी पति परवाणु ।। साची दरगाह पावै माणु ।।

राग बसंत, पृष्ठ 1188

पुजारी वर्ग को आवेश में आते देखकर गुरुदेव ने सब माजरा समझ लिया कि उन लोगों की रोटी-रोजी को सच्चाई से आघात पहुँच रहा है अत: उन्होंने युक्ति से कड़ुवे सत्य को घर-घर पहुँचाने के लिए कार्यक्रम बनाया तथा अपने प्रवचनों में कहना प्रारम्भ किया-

तेरी मूरति एका बहुतु रूप ।। किसु पूज चड़ावउ देउ धूप ।।

तेरा अंतु न पाइआ कहा पाइ ।। तेरा दासनि दासा कहउ राइ ।।

राग बसंत, पृष्ठ 1168

हे प्रभु, तू अनंत रूप है, मैं किसे पुजूँ तथा किसे धूप दूं। मैं अल्पज्ञ, समझ नहीं पा रहा हूँ। क्योंकि तू बेअन्त है। अत: तेरा नाम ही मेरे लिए मूर्ति है। जहां पर मुझे सच्चा न्याय मिलने की आशा है। इस लिए, हे ! मेरे स्वामी मैं जानता हूँ कि मेरे सत्य कार्य तुझे स्वीकार्य है। मुझे वही कार्य तेरे दरबार में सम्मान दिलवा सकते हैं। अन्यथा नहीं.... क्योंकि मैं जानता हूँ धर्म ग्रंथों में स्पष्ट लिखा है। पाखण्ड करने से आप पाखण्डी के निकट भी नहीं आते।

सिम्रिति सासत्र करहि वखिआण ।। नादी बेदी पढ़हि पूराण ।।

पाखण्ड द्रिसटि मनि कपटु कमाहि ।। तिन कै रमईआ नेंड़ि नाहि ।।

राग बसंत, पृष्ठ 1169

यह सुनकर पुजारी वर्ग उलझने का साहस नहीं कर पाया क्योंकि वे जानते थे कि उन के कार्यों में पाखण्ड ही पाखण्ड छिपा हुआ है, अत: वे शान्त होकर चुपके से वापस खिसक गए।

अंध विश्वासों का खण्डन– (ज्वाला मुखी मन्दिर क्षेत्र, हिमाचल प्रदेश)

श्री गुरू नानक देव जी कांगड़ा नगर से ज्वाला मुखी मन्दिर चले गए। यह मन्दिर तुर्क शासकों के अत्याचारों का शिकार रहा था। उन्होंने अपने शासन काल में स्वयं जल रही ज्योति को भूगर्भीय प्राकृतिक नियमावली के अंतरगत एक साधारण घटना मात्र मान कर मन्दिर को ध्वस्त कर दिया और कहा बताओ कहाँ है तुम्हारी देवी? यदि है तो प्रकट होकर दिखाए? परन्तु ऐसा कुछ भी नहीं हुआ।

समय व्यतीत हो जाने के पश्चात् कुछ पण्डितों ने अपनी जीविका के चक्र में इसे पुन: निर्माण करवा कर जनता में मान्यता स्थापित की।

आज भी मन्दिर के अन्दर एक कुंड है, जिस को वे लोग गोरख–डिब्बी के नाम से पुकारते हैं जो कि वास्तव में एक दूधिया रंग के पानी का चश्मा है। जिस में पानी बुलबले बनकर भूमि से उभरता है। उन दिनों जन–समूह वर्ष में दो बार मन्दिर के दर्शनों के लिए उमड़ पडता था। इस बार भी गुरुदेव जब वहां पर पहुंचे तो देवी के नाम पर निश्चित किये गए नवरात्रि के ही दिन थे, अत: मन्दिर के दर्शनों के लिए भारी भीड़ इकट्ठी हो गई थी।

अर्जुन नाम का मुख्य पुजारी जन साधारण के समक्ष अपने को विद्वान प्रकट करने के लिए विचार गोष्ठी में गुरुदेव जी को पराजित करने की योजना बना रहा था। क्योंकि गुरुदेव द्वारा ज्योति स्वरूप पारब्रह्म परमेश्वर के प्रचार के समाचार उसे कांगडा क्षेत्र से मिल रहे थे अत: यह विचारधारा उस की जीविका के मार्ग में बाधा उत्पन्न कर रही थी। वह किसी प्रकार भी इस सत्य को मानने को तैयार नहीं था। देवी देवताओं का खण्डन उसे अपनी मृत्यु तुल्य प्रतीत हो रहा था। गुरुदेव ने उसे कहा– आप वास्तव में सब कुछ जानते हैं कि किन्हीं भौगोलिक कारणों से (पृथ्वी के अन्दर की गति विधि के कारण) कुण्ड में दूधिया पानी आ रहा है। ठीक इसी प्रकार ज्वलनशील वायु (गैस) भी रिस रही है, जिस को आप ने आग दिखाकर ज्योति के रूप में प्रवज्लित कर लिया है। यहां पर यह सब कुछ संयोग वश भूगर्भीए कारणों का प्रणाम है। इस क्रिया में किसी देवी–देवता को प्रकट होना मानकर, केवल अंध विश्वासों को जन्म देकर, कर्मकाण्डों के जंजाल में

फंस कर अपना अमूल्य जीवन नष्ट करना है। आप यदि पूजा ही करनी चाहते हैं, जिस से आप का जीवन सार्थक हो जाए, तो उस के लिए आप को एक मात्र साधन, निराकार ज्योति स्वरूप प्रभु का सिमरन ही करना चाहिए। उस के बिना, आप की पूजा व्यर्थ चली जाएगी।

पूजा कीचै नामु धिआईऐ बिनु नावै पूज न होइ ॥ रहाउ ॥

बाहरि देव परवालीअहि जे मनु धोवै कोइ ॥

राग गूजरी, पृष्ठ 489

निर्बिधन प्रीति भोज – (बैज नाथ नगर, हिमाचल प्रदेश)

श्री गुरू नानक देव जी जवाला मुखी से पालमपुर होते हुए बैज नाथ नगर पहुँचे। उन दिनों इस स्थान का नाम कीड़ ग्राम था। यहाँ कीड़ प्रजाति के लोग राज्य करते थे। उन्होंने जब गुरुदेव की स्तुति सुनी तो उन से निवेदन किया, "आप हमारे यहाँ भोजन करने का निमन्त्रण स्वीकार करें।" गुरुदेव ने असमर्थाता बताते हुए कहा, "हम साधु लोग हैं। राजकीय प्रीति भोज से हमारा कोई नाता नहीं। परन्तु स्थानीय नरेश नहीं माना।" वह कहने लगा, "आप मेरा भोजन स्वीकार नहीं करेंगे तो मैं इस बात को अपना अपमान मानता हूँ।" गुरुदेव ने कहा, "हमारे साथ बहुत से साधु-सन्यासी लोग हैं अत: आप को कष्ट होगा।" परन्तु नरेश नहीं माना वह कहने लगा, "हमें सेवा का एक अवसर तो प्रदान करके देखें।" इस पर गुरुदेव ने उस का निमन्त्रण स्वीकार कर लिया। फिर क्या था गुरुदेव के नाम से परिचित जन-साधारण लोग दूर-दूर से गुरुदेव के नाम से भण्डारे में सम्मिलित होने पहुँचने लगे। भोज के दिन अपार जन समूह एकत्रित हो गया। नरेश को बि चिन्ता हुई। उस ने अपने सभी साधन जुटाए। परन्तु अपार जन समूह को देखकर उस का साहस टूटने लगा। उस ने इस समस्या के समाधान के लिए अपने मंत्रियों से विचार किया। इव पर एक विद्वान मंत्री ने परामर्श दिया, "अब तो एक ही युक्ति है कि हम सब प्रीति भोज प्रारम्भ होने से पहले गुरुदेव से आग्रह करें कि वह हमारे लिए प्रभु चरणों में प्रार्थना करें कि प्रीति भोज निर्विघ्न समाप्त हो। अत: ऐसा ही

किया गया। गुरुदेव ने प्रीतिभोज के आरम्भ में सभी भक्तजनों के साथ मिलकर प्रभु चरणों में प्रार्थना की, "हे प्रभु ! अपने सेवकों की लाज आप रखना तथा बिना किसी बाधा के कार्य सम्पूर्ण हो। यही संगत की मनोकामना है।" संगत की कृपा दृष्टि होने पर भण्डारा (लंगर) समाप्त होने पर ही नहीं आया। जब कि सभी ने मन चाहा आहार प्राप्त कर लिया।

ज्योति स्वरूप प्रभु का अनुभव – (कुल्लू नगर, हिमाचल प्रदेश)

श्री गुरू नानक देव जी बैजनाथ से कुल्लू नगर में पहुँचे। वहाँ एक पर्वत के शिखर पर शिव मन्दिर है जिसे स्थानीय जनता बिजलियां महांदेव के नाम से पुकारते हैं। किंवदन्तियों अनुसार इस स्थान पर, प्रत्येक वर्ष चैत्र माह में आकाशीय बिजली गिरती है, जिस से मन्दिर का कलश चार भागों में विभक्त हो जाता है, जिसे पुजारी कपिल गाय के दूध से धुलाई करते हैं तो वह पुनः जुड़ जाता है। तथा वहाँ पर कुआरी योगिनी, अदृश्य आत्माओं के रूप में तपस्या में लीन है इत्यादि।

गुरुदेव जी, वहाँ की स्थानीय मान्यताओं से सहमत नहीं हुए। सत्य मार्ग की प्राप्ति के लिए उन्होंने अपने विचार प्रकट करते हुए कहा, "यदि आप चाहते हैं कि आप का कल्याण हो तो अपने हृदय रूपी मन्दिर में ज्योति स्वरूप परम शक्ति की याद सदैव बसानी चाहिए। बस यही एक मात्र सहज सरल उपाय है।" –

दरसन की पिआस जिसु नर होइ ॥
एकतु राचै परहरि दोइ ॥
दूरि दरदु मथि अंम्रितु खाइ ॥
गुरमुखि बूझै एक समाइ ॥
तेरे दरसन कउ केती बिललाइ ॥
विरला को चीनसि गुर सबदि मिलाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥

राग बसंत, पृष्ठ 1188

गुरुदेव ने अपने प्रवचनों में कहा, "हे सत्य पुरुषो ! यदि कोई विवेक बुद्धि से सत्य को जानने का प्रयत्न करेगा तो वह अपने अंत:कर्ण में गुरू की शिक्षा द्वारा झाँक कर उस के अस्तित्व को अनुभव कर सकता है। शर्त यही है कि हृदय में दर्शनों की सच्ची लगन होनी चाहिए। पाखण्ड या कर्म काण्डों के जंजालों से कुछ भी प्राप्ति नहीं होगी।"

मन हाथी, गुरू शब्द रूपी अंकुश – (मनीकरण, हिमाचल)

श्री गुरू नानक देव जी कुल्लू नगर से मनीकरण पहुँचेऔर वहां पर प्रकृति के अद्भुत करिश्मे देखे। इस क्षेत्र में पानी के पांच कुंड हैं। जिन में एक से अति गर्म जल भूगर्भी कारणों से एक ही गति से प्रवाहित हो रहा है। वहाँ से सात कोस दूरी पर एक अन्य कुंड है, जिस को गंगा कुंड कहते हैं। वहां पर दूधिया रंग का जल, कच्ची लस्सी के स्वाद जैसा है। इन कुंडों के बारे में बहुत सी किंवदन्तियां प्रचलित हैं। गुरुदेव ने इस घाटी में प्रभु स्तुति करते हुये कीर्तन एवं प्रवचन किया –

तूं करता पुरखु अगंम है आपि स्रिसटि उपाती ॥
रंग परंग उपारजना बहु बहु बिधि भाती ॥
तूं जाणहि जिनि उपाईऐ सभु खेलु तुमाती ॥ 2 ॥

राग माझ, पृष्ठ 138

बहुत से तीर्थ यात्री कीर्तन सुनकर आप के पास आ बैठे। इन में से कुछ सन्यासी भी थे जो कि गुरुदेव के कीर्तन से बहुत प्रभावित हुए। उन में से एक ने आप को पूर्ण पुरुष जान कर अपनी कुछ समस्याएं आप के समक्ष रखी और कहा, "मन पर विजय कैसे पाई जाए?" इस के उत्तर में गुरुदेव ने कहा –

मनु कुंचरु काइआ उदिआनै ॥
गुरु अंकसु सचु सबदु नीसानै ॥   *राग गउड़ी, पृष्ठ 221*

गुरुदेव ने अपने प्रवचनों में कहा, "मनुष्य का मन हाथी के समान चंचल है। जिस प्रकार महावत के अंकुश से विशालकाय हाथी नियमबद्ध जीवन जीता है, ठीक इसी

प्रकार मन पर नियन्त्रण करने के लिए पूर्ण गुरू की दीक्षा अर्थात उन के उपदेशों का सहारा लेना पड़ता है।" तभी दूसरे सन्यासी ने पूछा, "प्रभु से मिलन किस विधि हो सकता है?" उत्तर में गुरुदेव ने कहा–

आतम महि रामु, राम महि आतमु, चीनसि गुर बीचारा ।।
अंम्रित बाणी सबदि पछाणी दुख काटै हउ मारा ।।

राग भैरउ, पृष्ठ 1153

प्रभ को बाहर ढूँढने की आवश्यकता नहीं। क्योंकि आत्मा तो राम की ही अंश है। उसे तो अपने अंत:कर्ण में झांकने से ही देखा जा सकता है किन्तु इस के लिए, पूर्ण पुरुष द्वारा दिये गये मार्ग दर्शन पर, आचरण को उज्ज्वल करने के पश्चात् ही प्रभु का ज्ञान होगा। अत: उसको पाने की दृढ़ता मन, वचन तथा आचरण से होनी चाहिये।

हरिनाम रूपी धन अर्जित करने की प्रेरणा– (मण्डी, हिमाचल प्रदेश)

मनीकरण से गुरुदेव जी दूसरे भक्तजनों के साथ मण्डी पहुँचे। जैसा कि नाम से ही विदित है उन दिनों उस स्थान पर एक बहुत बडा व्यापारिक केन्द्र था। दूर–दूर से व्यापारी, व्यापार की दृष्टि से वहाँ आते थे। अत: वह क्षेत्र समृद्ध था। गुरुदेव का आगमन सुनकर बहुत व्यापारी एकत्रित होकर उन के दर्शनों को पहुँचे। व्यापारियों ने गुरू जी को बहुत सा धन अर्पित किया तथा अपने व्यापार के लिए मंगल कामनाएं करते हुए आर्शीवाद की इच्छा व्यक्त की, कि गुरुदेव आर्शीवाद दें ता कि उनका व्यापार प्रफुल्लित हो। इस पर गुरुदेव ने अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए, कीर्तन करते हुए बाणी का उच्चारण किया।

वणजु करहु वणजारिहो वखरु लेहु समालि ।।
तैसी वसतु विसाहीऐ जैसी निबहै नालि ।।
अगै साहु सुजाणु है लैसी वसतु समालि ।।
भाई रे रामु कहहु चितु लाइ ।।
हरि जसु वखरु लै चलहु सहु देखै पतीआइ ।।

सिरी राग, पृष्ठ 22

आप जी ने व्यापारियों को उपदेश देते हुए कहा–भले ही आप व्यापारी हैं परन्तु आप यह भूल चुके हैं कि प्राणी इस मानव समाज में किसी विशेष प्रयोजन को लेकर आया है उसका मुख्य उद्देश्य मातलोक में हरि नाम रूपी धन अर्जित करना है। जो कि वह संसार से विदा होने पर प्रभु पिता को दिखा सके। जिस से प्रभु (शाह) उस पर प्रसन्न हो उठे तथा वह प्रभु के समक्ष मान–सम्मान प्राप्त करने में सफल हो जाए। क्योंकि इस कर्म भूमि में सब व्यापारी हैं अत: प्राणी को बहुत सावधानी से सच्चा व्यापार करना चाहिए। वास्तव में सब से बड़ा तथा सच्चा व्यापार हरि नाम धन संचित करना है। मानव किसी से धोखा न करे यही सच्चा व्यापार है। गुरुदेव ने व्यापारियों से कहा–इस धन को जो कि आप ने भेंट किया है उसे धर्मशाला बनवाने के लिए प्रयोग में लाएं, ता कि वहां पर प्रतिदिन साधु संगत में मिल बैठ कर प्रभु स्तुति की जा सके।

रूप–यौवन के अभिमान त्यागे– (रवालसर, हिमाचल प्रदेश)

श्री गुरू नानक देव जी मण्डी से रवालसर पहुँचे। बहुत से भक्तजन आप के साथ हो लिए थे। आप के कीर्तन तथा प्रवचनों से वे लोग इतने प्रभावित हुए कि गुरू दीक्षा की विनती करने लगे थे। वहां के सरोवर में, जो कि प्रकृति द्वारा निर्मित है, आप ने उस में एक विशेष प्रकार के खोखले पत्थर तैरते हुए देखे। और उस सरोवर के किनारे एक रमणीक स्थल पर आप विराजमान हो कर, हरियश करने लगे। आप की कीर्ति कुछ दिनों में ही घर–घर पहुँच गई। जिस को सुनकर कुछ महिलाएं आप के पास आई। और उन में से एक ने आप के पास विनती की, "हे गुरुदेव ! मेरा मार्ग दर्शन करें। मेरे पति मुझ से प्रेम नहीं करते, मैं किसी विधि भी उनका प्रेम प्राप्त करना चाहती हूँ।" उस के प्रश्न के उत्तर में गुरुदेव ने उस के व्यवहार के विषय में उसी से जानकारी प्राप्त कर कहा, "हे भोली बहन ! तुम अपने व्यवहार में परिवर्तन लाओ। सब से पहले अपने रूप–यौवन का अभिमान त्याग कर, हृदय में नम्रता धारण करो। दूसरा अपनी बाणी में मीठापन लाकर, सेवा भाव से पति का मन जीतो। इस कार्य के लिए अन्य ऐसी स्त्री को अपनी प्रेरणा बनाओ जो अपने पति का प्रेम पाकर सन्तुष्ट हो। तात्पर्य यह कि उस महिला की पति के प्रति गति विधियों पर ध्यान दो। जिस से तुम्हें भी अपने व्यवहार की

प्रतिक्रिया का ज्ञान हो सके। इस तरह तुलनात्मक अध्ययन से तुम बहुत कुछ शिक्षा प्राप्त कर सकती हो, और फिर उस को व्यवहार में लाने से तुम्हारे कष्ट स्वयं समाप्त हो जाएंगे।"

जाइ पुछहु सोहागणी वाहै किनी बाती सहु पाईऐ ॥
जो किछु करे सो भला करि मानीऐ हिकमति हुकमु चुकाईऐ ॥
जा कै प्रेमि पदारथु पाईऐ तउ चरणी चितु लाईऐ ॥
सहु कहै सो कीजै तनु मनो दीजै ऐसा परमलु लाईऐ ॥
ऐव कहहि सोहागणी भैणे इनी बाती सहु पाइऐ ॥ 3 ॥

राग तलिंग, पृष्ठ 722

यह उपदेश सुनकर वह महिला कहने लगी, "मैं तो अपनी ओर से पति को प्रसन्न करने के लिए सभी प्रकार के हार-शृंगार करती हूँ और वह सभी बातें करती हूँ जिस से पुरुषों को आकर्षित किया जा सके।" उस महिला की चतुर बातें सुनकर गुरुदेव कह उठे-

गली असी चंगीआ आचारी बुरीआह ॥
मनहु कुसुधा कालीआ बाहरि चिटवीआह ॥
रीसा करिह तिनाड़ीआ जो सेवहि दरु खड़ीआह ॥

राग सिरी राग, पृष्ठ 85

काल्पनिक देवताओं की पूजा वर्जित- (बिलासपुर, हिमाचल प्रदेश)

श्री गुरू नानक देव जी रवालसर से होकर बिलासपुर पहुँचे। बहुत से यात्री आप की ज्ञान चर्चा सुनने के लिए साथ हो लिए थे। अत: उन्होंने गुरुदेव से आग्रह किया, "आप हमारे यहाँ जागृति लाने के लिए अपनी विचारधारा जन-साधारण के सामने रखें। जिस से समाज में अंध विश्वास के स्थान पर सत्य का प्रकाश हो।" गुरुदेव ने उन का अनुरोध

स्वीकार कर लिया। इस प्रकार गुरू जी उन के साथ बिलासपुर के एक मन्दिर के परिसर में पहुँचे जहाँ पर काल्पनिक देवी-देवताओं की पूजा होती थी। गुरुदेव ने मन्दिर के प्रागंण में सुबह-शाम अपने नित्यकर्म अनुसार निराकार ज्योति स्वरूप प्रभु की महिमा में कीर्तन प्रारम्भ कर दिया जिस से आप की चर्चा घर-घर होने लगी। वहाँ का स्थानीय नरेश भी हरि यश की स्तुति सुनकर आप के दर्शनों को आया। जब उसे मालूम हुआ कि गुरू जी केवल निराकार उपासना में विश्वास रखते हैं तो वह परेशान हो उठा। देवी-देवताओं का खण्डन वह किसी प्रकार भी सुनना नहीं चाहता था। उस ने अपने तथा कथित विद्वानों को विचार गोष्ठी के लिए तुरन्त बुला भेजा। ज्ञान चर्चा प्रारम्भ हुई। उन पंडितों तथा पुजारियों ने गुरुदेव से अनेक प्रश्न किये। जिस के उत्तर में गुरुदेव ने बाणी उच्चारण की-

जिनी नामु विसारिआ दूजै भरमि भुलाई ।।
मूलु छोडि डाली लगे किआ पावहि छाई ।। 1 ।।
बिनु नावै किउ छूटीऐ जे जाणै कोई ।।
गुरमुखि होइ त छूटीऐ मनमुखि पति खोई ।। रहाउ ।।
जिनी एको सेविआ पूरी मति भाई ।।
आदि जुगादि निरंजना जन हरि सरणाई ।। 2 ।।
साहिबु मेरा एकु है अवरु नहीं भाई ।।
किरपा ते सुखु पाइआ साचे परथाई ।। 3 ।।
गुर बिनु किनै न पाइओ केती कहै कहाए ।।
आपि दिखावै वाटड़ी सची भगति द्रिड़ाए ।। 4 ।।

राग आसा, पृष्ठ 420

गुरुदेव ने अपने प्रवचनों में कहा, "जो लोग निराकार प्रभु (दिव्य ज्योति) की उपासना त्याग कर काल्पनिक देवी देवताओं की उपासना का आडम्बर रचते है, वह कार्य ऐसा ही है जैसे कोई अल्पज्ञ व्यक्ति पौधे की जड़ को न सींच कर डालियों को सींचता है। वास्तविकता यह है कि हरि नाम स्मरण के बिना आवागमन के चक्कर से

छुटकारा नहीं मिल सकता, भले ही कोई व्यक्ति जीवन भर कर्म काण्ड करता रहे। मुक्ति का एक मात्र साधन, अंध विश्वास का त्याग कर विवेक बुद्धि से, बिना कर्म काण्ड, बिना आडम्बर रचे, रोम-रोम में रमे राम का चिन्तन-मनन करने में है। यही गुरमुख के लक्षण हैं, इस के विपरीत मनमानी करने वाला अपना आत्म गौरव तथा मान-सम्मान खो देता है।"

गडरीये बुडन को दीर्घ आयु- (कीरतपुर, पंजाब)

श्री गुरू नानक देव जी ने अपने प्रवचनों से बिलासपुर नरेश तथा जनता का मन जीत कर और उन को एकीश्वर उपासना में लगा कर आगे प्रस्थान की आज्ञा ली और वहां से कीरतपुर क्षेत्र में पहुँचे। वहाँ पर जाकर बसती के बाहर ही आप जी अपने चरागाह में नित्य कर्म अनुसार, कीर्तन में लीन हो गए। इतने में वहाँ पर भगवान का एक भक्त गडरिया युवक अपनी भेड़ों को चराता हुआ पहुँचा। जिस को लोग प्यार से बुढ्ढन कहते थे। बुढ्ढन ने गुरुदेव को जब एक निर्जन स्थान पर कीर्तन करते हुए व्यस्त देखा तो उसे बहुत आश्चर्य हुआ। क्योंकि उसने बुढ्ढन से पहले किसी को, निर्जन स्थल पर प्रभु स्तुति करते देखा नहीं था। उस ने प्राय: संन्यासियों को बस्तियों में ही गाते सुना था। उस ने गुरुदेव को पीने के लिए दूध प्रस्तुत किया और कीर्तन श्रवण करने बैठ गया। कीर्तन से वह आनंद विभोर हो उठा, जिस से उस की तृष्णाएं शांत हो गई। गुरुदेव गायन कर रहे थे-

अम्रित काइआ रहै सुखाली बाजी इहु संसारो ॥
लबु लोभु मुचु कूड़ु कमावहि बहुतु उठावहि भारो ॥
तूं काइआ ! मै रुलदी देखी जिउ धर उपरि छारो ॥
सुणि सुणि सिख हमारी ॥ *राग गउड़ी, पृष्ठ 154*

शब्द की समाप्ति पर युवक बुढ्ढन ने गुरुदेव से प्रश्न किया, "हे पीर जी ! मैं इस काया को कैसे सफल कर सकता हूँ?" उत्तर में गुरुदेव ने कहा, "भाई! मनुष्य को प्रत्येक क्षण बन्दगी में रहना चाहिए। उस से जीवन सफल हो जायेगा।" इस पर बुढ्ढन

कहने लगा, "मनुष्य की आयु बहुत कम होती है। अधिकांश समय तो धंधों में व्यर्थ चला जाता है। भजन बन्दगी के लिए तो दीर्घ आयु होनी चाहिए। अत: मुझे दीर्घ आयु की कामना है।" गुरुदेव कहने लगे, "यदि बन्दगी के लिए दीर्घ आयु की इच्छा है तो अल्लाह ने चाहा तो वह भी पूर्ण होगी।" गुरुदेव उस के स्नेह के कारण कुछ दिन उस के गांव मे ठहरे और भजन बन्दगी का अभ्यास दृढ़ करवाया। आप जब आगे प्रस्थान के लिए तैयार हुए तो गुरुदेव को विदा करने को बुढ्ढन सहमत न हुआ, वह ज़िद करने लगा, "मैं तो आप को नित्य प्रति दूध पिला कर सेवा करना चाहता है।" इस पर गुरुदेव ने कहा, "ठीक है हम आप की यह सेवा स्वीकार करते हैं, परन्तु अभी नहीं आप हमारी प्रतीक्षा करें। हम अपने छटवें स्वरूप (शरीर) में आप के पास फिर आयेंगे। उस वक्त आप अपनी इच्छा पूर्ण कर लेना।" यह सुन कर बुढ्ढन कहने लगा, "हे पीर जी ! इस का अर्थ यह हुआ कि मैं बहुत लम्बे समय तक जीवत रहूंगा।" उत्तर में गुरुदेव ने कहा, "आप ने प्रभु आराधना के लिए दीर्घ आयु की कामना की है, अत: वह पूर्ण होगी। इस लिए हम आप की भक्ति पूर्ण होने पर पुन: मिलने के लिए अवश्य ही आयेंगे।"

नोट : छटवीं पातशाही, गुरू हरि गोबिन्द (नानक देव) जी ने अपने लड़के बाबा गुरदिता जी को बुढ्ढन शाह फकीर के पास भेज कर उस को दीदार दिये तथा उस से सेवा में दूध पी कर कृतार्थ किया। उस की मृत्यु के पश्चात् उन्होंने अपने हाथों से उस का अन्तिम संस्कार किया तथा वहां पर कीरतपुर के नाम से एक नगर बसाया।

भूमि पंचायत को मिली – (नालागढ़, हिमाचल)

श्री गुरू नानक देव जी कीरतपुर क्षेत्र से नालागढ पहुँचे। पर्वतीय क्षेत्र की तलहटी में बसा नालागढ़ एक रमणीक स्थान है। उस का सौन्दर्य देखते ही बनता है। गुरुदेव ने एक वृक्ष के नीचे अपना आसन लगाया और कीर्तन में लीन हो गए। जैसे ही राहगीरों ने गुरुदेव की मधुर बाणी सुनी, वे एक-एक कर, धीरे-धीरे गुरुदेव के पास आ बैठे और बाणी श्रवण करने लगे। गुरुदेव उच्चारण कर रहे थे–

माइआ सचि राजे अंहकारी ॥

माइआ साथ न चलै पिआरी ॥

माइआ ममता है बहु रंगी ॥

बिन नावै को साथि न संगी ॥

जिउ मनु देखहि पर मनु तैसा ॥

जैसी मनसा तैसी दसा ॥

जैसा करमु तैसी लिव लावै ॥

सतिगुरु पूछि सहज घरु पावै ॥

राग प्रभाती, पृष्ठ 1342

कीर्तन की समाप्ति पर गांव का प्रधान वहां पर आ गया। उस ने भी गुरुदेव के प्रवचन सुने। और विचार करने लगा कि गुरुदेव की शिक्षा पर यदि वे अपना व्यवहार बना लें तो उनकी सब सामाजिक बुराइयां समाप्त हो जायेंगी। अत: उसने गुरुदेव से आग्रह किया कि गुरुदेव जी उनके गांव में चलें, ताकि वे उन की अन्न-जल से सेवा कर सकें। उस के अनुरोध पर गुरुदेव जी उसी के यहाँ ठहरे। दूसरे दिन गांव के मुखिया होने के नाते उस के यहाँ पंचायत द्वारा दो पड़ौसी किसानों की जमीन का एक झगड़ा निपटाया जाना था। पंचायत ने दोनों किसानों के तर्क सुने। परन्तु कैसे निर्णय करें, इस में असमर्थता अनुभव की, क्योंकि दोनों किसानों की बात में कुछ तथ्य युक्ति संगत थे। अत: उन्होंने निर्णय के लिए गुरुदेव की सहायता मांगी। इस पर गुरुदेव कहने लगे-

हकु पराइया नानका उसु सूअर उसु गाइ ॥

गुरु पीरु हामा ता भरे जा मुरदारु न खाइ ॥

राग माझ, पृष्ठ 141

इस उपदेश को सुनते ही दोनों किसानों ने अपना-अपना दावा छोड़ दिया तथा वह भूमि पंचायत को दे दी। पंचायत के मन में विचार आया कि अब उस भूमि के टुकड़े

का क्या किया जाए। गुरुदेव ने तब परामर्श दिया कि वहाँ पर एक धर्मशाला बनवाई जाए। यह विचार सब के मन को भा गया। इस प्रकार वहाँ पर तुरन्त धर्मशाला बनवाकर साध संगत की स्थापना की गई और वहाँ पर हरि-यश होने लगा।

भजन करने की प्रेरणा- (पिंजौर ग्राम, हरियाणा)

श्री गुरू नानक देव जी नालागढ़ की संगत से विदा होकर पिंजौर ग्राम पहुँचे। वहाँ पर बहुत से यात्री जोहड़सर के वार्षिक उत्सव में भाग लेने के लिए ठहरे हुए थे। गुरुदेव ने अपने नित्य कर्म अनुसार अमृत बेला में कीर्तन प्रारम्भ कर दिया और हरि यश गाने लगे-

खाणा पीणा हसणा सउणा विसरि गइआ है मरणा ॥

खसमु विसारि खुआरी कीनी ध्रिगु जीवणु नही रहणा ॥ 1 ॥

प्राणी एको नामु धिआवहु ॥

अपनी पति सेती घरि जावहु ॥ 2 ॥ रहाउ ॥

राग मलार, पृष्ठ 1254

वहाँ पर पडौस में एक तालाब था। जहां पर स्थानीय लोग प्रात: काल में शौच स्नान के लिए आते थे। उन्होंने जब मधुर बाणी सुनी तो वे धीरे-धीरे गुरुदेव के समीप आकर कीर्तन श्रवण करने लगे। कीर्तन समाप्ति पर गुरुदेव ने अपने प्रवचनों में कहा-

"हे मानव ! प्रभु ने तुझे अमूल्य रत्न रूपी काया उपहार स्वरूप दी है। अत: उस प्रभु का धन्यवाद करो, क्योंकि इस सुन्दर काया का एक दिन तो त्याग करना ही पड़ेगा। इस लिए मृत्यु को मत भूलो और अपना समय केवल ऐश्वर्य में नष्ट मत करो। मातलोक में आने का मुख्य प्रयोजन क्या है, उस पर भी ध्यान दो। हे जीव ! यदि प्रभु चरणों में सम्मान पूर्वक स्थान लेना चाहते हो तो अपने जीवन में आराधना के लिए भी समय निश्चित करो।"

प्रभु पर दृढ़ भरोसा – (धर्मपुर, हिमाचल प्रदेश)

श्री गुरू नानक देव जी पिंजौर से प्रस्थान कर अपने अगले पड़ाव, धर्मपुर पहुँचे। उन दिनों तिब्बत से व्यापार इसी रास्ते से होता था। रास्ते में आप को अनेक यात्री मिले जो कि सपाटू से होकर जोहड़सर नामक स्थान पर पर्वतीय मेले के लिए जा रहे थे। धर्मपुर में आप जी ने एक चश्मे (पानी के स्रोत) के पास डेरा लगाया। अमृत बेला में गुरुदेव ने नित्यकर्म के अनुसार कीर्तन प्रारम्भ किया, जिस की

मधुरता के आकर्षण से यात्री वही खिंचे चले आए।

हरि धनु संचहु रे जन भाई ।।
सतिगुर सेवि रहहु सरणाई ।।
तसकरु चोरु न लागै ता कउ धुनि उपजै सबदि जगाइआ ।।
तू एकंकारु निरालमु राजा ।।
तू आपि सवारहि जन के काजा ।।
अमरु अडोलु अपारु अमोलकु हरि असथिर थानि सुहाइआ ।।
देही नगरी ऊत्तम थाना ।। पंच लोक वसहि परधाना ।।
ऊपरि एंककारु निरालमु सुंन समाधि लगाइआ ।।

राग मारू, पृष्ठ 1039

अधिकांश यात्री वहीं पर मन्त्रमुग्ध होकर, गुरुदेव के मुखार-बिंद से भावपूर्ण बाणी सुनने लगे। शब्द की समाप्ति पर, गुरुदेव ने श्रोताओं की जिज्ञासा पर उन के प्रश्नों के उत्तर में कहा, "मानव जीवन का मुख्य लक्ष्य हरि-नाम धन की कमाई करना ही है। इस कार्य के लिए हृदय से किसी पूर्ण पुरुष की शिक्षा अनुसार जीवन यापन करना अति आवश्यक है। यदि आप हरि नाम रूपी धन एकत्र करने मे सफल हो जाते हैं तो इस को कोई भी, किसी विधि द्वारा छीन नहीं सकता। शब्द की धुनि ही सोई हुई जीव आत्मा को जगाकर प्रभु मिलन की प्रेरणा करती है।"

इस प्रकार अपार जनसमूह ने गुरुदेव का संग करते हुए आगे की यात्रा प्रारंभ की।

पुरुषार्थी होने की सीख – (सपाटू, हिमाचल प्रदेश)

धर्मपुर से श्री गुरू नानक देव जी यात्रियों के साथ आगे बढ़ते हुए सपाटू नामक स्थान पर पहुँच गए। वहाँ पर विश्राम के लिए पड़ाव डाला गया। शरीरिक क्रियाओं से निवृत होकर आप जी संध्या समय फिर से हरि यश में शब्द गायन करने लगे। सपाटू में ही स्वास्थ्य लाभ के लिए आए एक युवक ने गुरुदेव से भेंट की और कहा, "हे महा पुरुष जी ! मुझ पर दया करें। मैं सदा अस्वस्थ रहता हूँ। वैद्य ने मुझे जलवायु परिवर्तन के लिए पर्वतीय क्षेत्र जहां पर चीढ़ के वृक्ष हों वहां पर रहने का परामर्श दिया है। मेरे रोग का निदान नहीं हो पाता, जब कि प्रभु का दिया मेरे पास सब कुछ है।" इस के उत्तर में गुरुदेव कहने लगे–

दुखु दारू सुखु रोगु भइया जा सुखु तामि न होई ।।
तू करता करणा मै नाही जा हउ करी न होई ।।
बलिहारी कुदरति वसिआ ।। तेरा अंतु न जाई लखिआ ।। रहाउ ।।
राग आसा, पृष्ठ 469

प्रकृति के कुछ नियम हैं जिस के अन्तर्गत मानव शरीर की रचना हुई है। जो नियमों का उल्लंघन करता है वह रोगी हो जाता है परन्तु रोग भी मनुष्य भले के लिए ही होते हैं ताकि उसे शारीरिक रचना समझने में सहायता मिले अर्थात वह उस के लिए दवा का ही काम करता है, जिस से व्यक्ति भूलों के लिए सावधान हो जाए। क्योंकि सुख मे व्यक्ति जाने-अनजाने मे नादानियां कर रोग मोल लेता फिरता है। भाव:-यौवन के आवेश में नशे-विषय कर के जीवन विकारों मे नष्ट कर देता है। इस लिए शिक्षा देने के लिए प्रकृति दण्ड रूप में रोग देती है। अत: प्राणी को प्रकृति का सदैव ऋणी होना चाहिए। जिस ने यह सुन्दर, अमूल्य काया उपहार स्वरूप प्रदान की है। इस को सफल बनाने के लिए उसे पुरुषार्थी होना चाहिए। आलस्य का त्याग कर अंमृत बेला में प्रभु चिन्तन मे समय लगाना चाहिए तथा अपना कार्य स्वयं करना चाहिए। जिस से सेवको के मोहताज न होकर स्वावलम्बी बन सकें। क्योंकि आत्म निर्भरता ही शरीर को पुष्ट करने में सहायक सिद्ध होगी।

पशुबलि पर आक्रोश – (जोहड़सर, हिमाचल प्रदेश)

श्री गुरू नानक देव जी सपाटू से अन्य यात्रियों के साथ जोहड़सर पहुँचे। वहाँ पर उन दिनों वार्षिक उत्सव था। अत: बड़ी धूम-धाम से मेले की तैयारियां हो रही थी। दूर-दूर से व्यापारी वस्तुओं का आदान-प्रदान करने पहुँच रहे थे। वहाँ के मुख्य मन्दिर में देवी-देवताओं की मूर्तियों को नवीनतम रूप दिया जा रहा था। मन्दिर के प्रांगण मे देवी पूजा के लिए विशेष नर्तक, नृत्य का अभ्यास कर रहे थे। समारोह के प्रारम्भ होने पर नर्तकों ने अपने विशेष नृत्य का प्रदर्शन किया। जिस में देवी मूर्ति को दण्डवत प्रणाम करते हुए हर्ष-उल्हास के गीत गाते हुए, देवी को दर्शन देने के लिए आभार व्यक्त कर रहे थे। इस प्रकार वे नार्तक देवी के प्रति श्रद्धा का प्रदर्शन कर रहे थे। इस आडम्बर को देखकर गुरुदेव ने भाई मरदाना जी को रबाब सुर में लाने को कहा और स्वयं कीर्तन में लग गये –

भउ फेरी होवै मन चीति ।।

बहदिआ उठदिआ नीता नीति ।।

लेटणि लेटि जाणै तनु सुआहु ।।

इतु रंगि नाचहु रखि रखि पाउ ।। 3 ।।

राग आसा, पृष्ठ 350

पुजारियों ने समझा कि वे साधु जन हैं और वे अपनी श्रद्धा गा कर व्यक्त करेंगे। परन्तु गुरुदेव ने तो नृत्य का खण्डन आरम्भ कर दिया और अपनी बाणी में कहा, "वास्तविक नृत्य तो प्रभु की बढ़ाई करना ही है बाकी सब मन को बहलाने के लिए मनोरंजन मात्र ही है। प्रभु प्रेम मे समर्पित हो जाना ही वास्तविक नृत्य है। उस प्रभु की याद हृदय मे सदैव टिका कर रखना ही देवी के फेरे लगाना है। अपने शरीर के अंह का त्याग करना ही प्रभु चरणों में दण्डवत प्रणाम करना है।"

देवी देवताओं को प्रसन्न करने के लिए जब बकरों की बलि होने लगी तो गुरुदेव ने आपत्ति की और कहा–

जड़ पाहन के मानै पीव ।।

तिस के आगै मारै जीव ।।

जानत नहीं साकत अंधे ।।

(जन्म साखी)

"हे आस्तिक कहलाने वाले अंधे ! तुझे इतना भी दिखाई नहीं देता कि निर्जीव पत्थर की मूर्ति के लिए जीवों का वध करता है। क्या तुझे इन में प्रभु के अंश के दर्शन नहीं होते? वास्तव में तू आस्तिक नहीं नास्तिक है।" इस पर सभी पुजारी वर्ग गुरुदेव से ज्ञान गोष्ठी करने लगा। गुरुदेव ने तब कहा, "अपना कल्याण चाहते हो तो निराकार प्रभु की स्तुति सत्संग मण्डल बना कर प्रतिदिन किया करो। इस के अतिरिक्त निष्काम सेवा ही परमार्थ का रास्ता है।"

जल की समस्या का समाधान – (माहीसर, हिमाचल प्रदेश)

श्री गुरू नानक देव जी जोहड़सर से आगे बढ़े तो कुछ श्रद्धालुओं ने उन्हें अपने गांव मे चलने की प्रार्थना की और कहा, "हे गुरु देव जी ! हम लोग बहुत पिछड़े हुए हैं, अत: हमारे गांव में अंध विश्वास का साम्राज्य है। यदि आप वहाँ जागृति लाएं तो आप की प्रेरणा से काफी परिवर्तन आ सकता है। गुरुदेव ने उन का अनुरोध तुरन्त स्वीकार कर लिया और उन के साथ उस गाँव में पहुंचे जो कि ऊँचे पर्वत के शिखर पर वसा था। उस गाँव में जन जीवन वर्षा के पानी पर निर्भर करता था। अत: पीने का पानी दूर से लाना पड़ता था। गुरुदेव की वहाँ के चौधरी माही से जब भेंट हुई तो वह गुरुदेव के वचनों से बहुत प्रभावित हुआ। उस ने गुरुदेव की बहुत सेवा की और उन को प्रसन्न कर प्रार्थना करने लगा कि उनके गांव मे पीने योग्य निर्मल जल की कमी है। और वे कृपा दृष्टि करें। गुरुदेव ने जन साधारण की समस्या को देखते हुए एक दिन समस्त गांव वालों की सभा बुलाई और उस में हरि-यश किया। अंत में एक उचित स्थान देखकर वहाँ पर एक बावड़ी बनाने के लिए आधार शिला रखने का उन्हीं लोगों को आदेश दिया। जिस के निर्माण होते ही वह प्रभु कृपा से वह जल से भर गई। इस प्रकार वहाँ पर पीने के पानी की समस्या हल हो गई। गुरुदेव के प्रस्थान के पश्चात् चौधरी माही ने बावड़ी के आगे एक ताल का निर्माण करवाया जो कि बाद में माहीसर के नाम से जाना जाने लगा।

व्यापारीयों द्वारा शौषण विरुद्ध अन्दोलन– (ज्ञार्सा नगर, तिब्बत)

जोहड़सर, माहीसर इत्यादि स्थानों से होते हुए गुरुदेव जी हिन्दुस्तान–तिब्बत राज मार्ग पर पहुँचे। आप रास्ते मे आप ने रामपुर कस्बे से गुजरते हुए सतलुज वादी स्थित जिला किनौर के कस्बे काल्पा, पूह, नाको एवं कौरिफ इत्यादि स्थानों पर जन–साधारण का उद्धार करते हुए, भारतीय सीमा के पार तिब्बत जम्बू कस्बे में पहुँचे। वहाँ से आगे ज्ञार्सा नगर पहुंच कर गुरुदेव ने प्रचार अभियान के लिए कुछ दिन वहां पर पड़ाव डाला। उन दिनों भी वहाँ पर बौद्ध धर्म के अनुयायी रहते थे। आप जी अपने पहले प्रचार–दौरे के दिनों में लासा इत्यादि नगरों में बहुत दिन रह चुके थे। अत: आप जी वहां की संस्कृति तथा समस्याओं के विषय में भली भान्ति जानते थे। इस लिए वे लोग आप जी के युक्ति पूर्ण, तर्क संगत, विचारों से बहुत प्रभावित हुए।

जन–साधारण ने आप के समक्ष अपनी समस्याएं रखी और कहा, "हमारी गरीबी का मुख्य कारण यहाँ के व्यापारी लोग हैं, जो कि रोजमर्रा की वस्तुएं–नमक, तेल, कपड़ा इत्यादि बहुत ऊँचे दामों पर बेचते हैं तथा हमारी वस्तुएं कौड़ियों के भाव खरीदते हैं। क्योंकि यहां के व्यापार पर इन का एकाधिकार है। ये लोग अपनी मन मानी से जन–साधारण का शोषण करते हैं।" गुरुदेव ने इस पर कुछ व्यापारियों को आमंत्रित किया और उन से इस विषय में सत्य जानना चाहा। इस प्रश्न के उत्तर में व्यापारियों ने तर्क दिया कि वे लोग पंजाब के मैदानी क्षेत्र से खचरों पर माल लाद कर, लम्बी पर्वत शृंखला पार कर यहाँ तिब्बत पहुँचते हैं, तो माल पर खर्च बहुत आता है। अत: वे मजबूर हैं।" गुरुदेव ने उन को उचित दाम लेने के लिए प्रेरित किया किन्तु यह बात भी उन को अमान्य थी। इस लिए इस विषय पर वे सब एक मत नहीं हो पाए। गुरुदेव ने तब उन की मानसिक दशा का चित्रण अपनी वाणी में इस प्रकार किया।

चिटे जिन के कपड़े मैले चित कठोर जीउ ॥

राग सूही, पृष्ठ 751

हृदय की पवित्रता ही स्वीकार्य– (रुडोक नगर, तिब्बत)

श्री गुरू नानक देव जी ज्ञार्सा नगर से सिंधु नदी को पार कर चलते–चलते रुडोक नगर में पहुँचे। यह पच्छिमी तिब्बत में है, वहां से चिशूल दर्रा पार कर के लद्दाख क्षेत्र में प्रवेश किया जाता है। गुरुदेव ने एक गुम्फा (मट्ठ) के निकट डेरा लगा कर अपने नित्यकर्मानुसार कीर्तन प्रारम्भ कर दिया। कीर्तन की मधुर ध्वनि के कारण वहाँ के लोग एक लामा (गुम्फा का पुजारी) के साथ यह देखने के लिए आए कि उनके यहां आज कौन आंगतुक आया है, जो कि उन के साजों की तेज ध्वनि की अपेक्षा, मधुर, कर्ण प्रिय संगीत में गाने की क्षमता रखता है। गुरुदेव के संकेत को पा कर वे सभी लोग गुरू जी के निकट होकर बैठ गए और कीर्तन का आनन्द लेने लगे।

हउ ढाढी वेकारु कारै लाइआ ॥
राति दिहै कै वार धुरहु फुरमाइआ ॥
ढाढी सचै महलि खसमि बुलाइआ ॥
सची सिफित सलाह कपड़ा पाइआ ॥
सचा अम्रित नामु भोजनु आइआ ॥

राग माझ, पृष्ठ 150

कीर्तन की समाप्ति पर जन–समूह जानना चाहता था, "गुरुदेव जी आप कहाँ से आए हैं और मधुर स्वर में क्या गा रहे हैं? गुरुदेव ने उन्हें बताया, "उस प्रभु का मैं एक छोटा सा अदना सा माणस हूँ। उस प्रभु की स्तुति कर उसकी आज्ञानुसार उस के नाम रूपी अंमृत को समस्त मानव समाज में बांट रहा हूँ। मैं इसी उद्देश्य से आप के पास आया हूँ।" यह सुनकर सभी नर–नारी ने गुरुदेव का भव्य स्वागत किया और उन को अपने गुम्फा में ले गए। वहाँ पर भगवान बुद्ध की पूजा की जाती थी तथा तेज ध्वनि से बिगुल, ढोल इत्यादि बजाए जाते थे। गुरुदेव ने गुम्फा के परिसर में अपनी सभा लगा कर जन–साधारण को मन से आराधना करने की युक्ति बताते हुए कहा कि शरीर द्वारा किए गए कर्म काण्डों का आध्यात्मिक दुनियां में कोई महत्व नहीं। वहाँ तो हृदय की पवित्रता

तथा स्नेह को ही स्वीकार किया जाता है। अत: भगवान कोई स्थूल वस्तु नहीं वह तो विशाल तथा निर्गुण स्वरूप होकर समस्त ब्रह्मंड में एक रस रमा हुआ है अर्थात सर्वव्यापक है। इस लिए उसे गुम्फा तक सीमित नहीं मान लेना चाहिए।

तू आपे आपि वरतदा आपि बणत बणाई ॥

तुधु बिनु दूजा को नही तू रहिआ समाई ॥

राग मलार, पृष्ठ 1291

इस उपदेश को सुनकर नगर वासी बहुत प्रभावित हुए। उन्होंने गुरू दीक्षा में चरणमृत प्राप्त कर सिक्खी धारण कर गुरू जी के अनुयायी बन गए और गुरुदेव के दर्शाए मार्ग अनुसार साधु संगत की स्थापना कर निराकार प्रभु स्तुति में दिन गुजारने लगे।

प्रभु स्वयम्बू है – (लद्दारव का चशूल गांव, काशमीर)

श्री गुरू नानक देव जी तिब्बत के रुडोक नगर से चशूल दर्रा पार कर चशूल गाँव में पहुँचे। उन दिनों में भी गाँव के समस्त निवासी बौद्ध धर्म के अनुयायी थे। उन्होंने गुरुदेव की विचित्र वेशभूषा देखकर पूछा आप तिब्बत के निवासी तो है नहीं अत: आप यहाँ पर कहाँ से आ रहे हैं।" इस पर गुरुदेव ने अपना प्रयोजन बताते हुए कहा, "हम निराकार प्रभु के उपासक हैं और उसी के नाम के प्रचार के लिए विश्व भ्रमण पर निकले हैं।" इस पर साकार तथा निराकार प्रणालियों को लेकर विचार-विमर्श प्रारम्भ हुआ। गुरुदेव ने कहा, "साकार या स्थूल वस्तु के निर्माण का एक निश्चित समय होता है। यह बात स्वाभाविक है कि जिस का निर्माण या जन्म हुआ है उस का विनाश या मरण अवश्य ही होगा। इस लिए वह वस्तु, मूर्ति या मनुष्य जो समय के बन्धन में आते हैं, वे प्रभु नहीं हो सकते। प्रभु तो अमर है समय के बन्धनों से मुक्त है। इस पर लामा लोगों ने प्रश्न उठाया कि फिर प्रभु का निर्माता कौन है? उत्तर में गुरुदेव ने कहा-

आपीनै आपु साजिओ आपीनै रचिओ नाउ ॥

दुयी कुदरति साजीऐ करि आसणु डिठो चाउ ॥

राग आसा, पृष्ठ 463

उस महाशक्ति ने अपना निर्माण भी स्वयं ही किया है। उस का निर्माता कोई दूसरा नहीं है। समस्त प्रकृति का निर्माण कर उस में स्वयं विराजमान होकर, एक रस, (सर्व व्यापक) होकर रमा हुआ है।

प्रभु हमारे घट में ही बसता है– (लेह नगर, लद्दारव क्षेत्र)

श्री गुरू नानक देव जी फिर चशूल गांव से आगे बढ़ते हुए सिंधु नदी के किनारे–किनारे चल पड़े। रास्ते में उपशी तथा कारा नाम के कस्बों में वहाँ के निवासियों का मार्ग दर्शन करते हुए लेह नगर में पहुँचे, जिस को लद्दारव क्षेत्र का केन्द्र माना जाता है। लद्दारव की रमणीक वादी में गुरुदेव को प्रभु की निकटता की अनुभूति होने लगी तो वे कीर्तन में लीन हो गये–

तू दरिआउ दाना बीना मै मछुली कैसे अतु लहा ॥
जह जह देरवा तह तह तू है तुभ ते निकसी फूटि मरा ॥
न जाणा मेउ न जाणा जाली जा दुरवु लागै ता तुभै समाली ॥
राग सिरी, पृष्ठ 25

गुरुदेव जब प्रभु स्तुति में लीन थे तो कुछ लद्दारवी नागरिक भी आप की बाणी श्रवण करने आए। इस से आप की एकाग्रता में उन की रुचि उत्पन्न हुई। वह जानना चाहते थे कि वह आंगुतक कौन है, जो वहाँ पर प्राकृतिक सौन्दर्य में अपनी सुद्ध–बुद्ध रवोकर, सुरति एकाग्र कर प्रभु चरणों में लीन होने का अभ्यास रखता है? उन में से एक ने स्थानीय लामा को जा कर सूचित किया कि वहाँ कोई ऐसा व्यक्ति आया है जो कि लामा लोगों की तरह दिरवाई देता है परन्तु वह लामा भी नहीं है, क्योंकि उस की भाषा तथा प्रेम स्तुति की विधि भिन्न है। ऐसी जानकारी मिलते ही, लामा अपने साथियों को लेकर तुरन्त उस जगह पर पहुँचा, जहाँ गुरुदेव कीर्तन में लीन थे। कीर्तन सुनकर लामा भी प्रभावित हुआ और सोचने लगा कि यह पुरुष अवश्य ही उनका मार्ग दर्शन करने आया है। क्योंकि इस व्यक्ति के चेहरे पर आत्मिक प्राप्तियों का तेज भलक रहा है।

गुरुदेव जब उत्थान अवस्था में आए तो वे लोग आगे बढ़े और अभिवादन कर पूछने लगे, "आप कहाँ से आए हैं तथा आप का नाम क्या है?" उत्तर में गुरुदेव ने कहा, "हम उस प्रभु के भेजे हुए आदमी हैं और मेरा नाम नानक निरंकारी है।"

गुरुदेव का उत्तर सुनकर लामा की जिज्ञासा और बढ़ गई। उस ने प्रश्न किया, "यह सब तो ठीक है परन्तु हम जानना चाहते हैं, आप कहाँ से आए हैं तथा आप के आने का यहां क्या प्रयोजन है?" उत्तर में गुरुदेव ने कहा, "हम तो आप से विचार विमर्श करने पंजाब से आए हैं।" इस पर लामा ने गुरुदेव का भव्य स्वागत करते हुए अपने यहाँ ठहरने का प्रबन्ध किया। दूसरे दिन एक जन सभा का आयोजन कर गुरुदेव ने श्रोताओं के समक्ष कीर्तन किया-

जिसु जल निधि कारणि तुम जगि आए सो अंम्रितु गुर पाही जीउ ॥
छोडहु वेसु भेख चतुराई दुविधा एहु फलु नाही जीउ ॥
मन रे थिरु रहु मतु कत जाही जीउ ॥
बाहरि ढूंढत बहुतु दुखु पावहि घरि अंम्रित घट माही जीउ ॥ रहाउ ॥

राग सोरठ, पृष्ठ 598

तत्पश्चात् अपने प्रवचनों में कहा, "मनुष्य जन्म का मुख्य उद्देश्य, जीवन काल को सफल बनाना है अर्थात जिस अमूल्य वस्तु के लिए मनुष्य बार-बार जन्म मरण के चक्र में हैं वह तो उसके हृदय में नाम, अमृत के रूप में पहले से ही विद्यमान है। उसे केवल प्रकट करना है, परन्तु इस अमूल्य निधि की प्राप्ति विधि पूर्वक, गुरू की शिक्षा द्वारा प्राप्त होती है। इस के लिए किसी विशेष भेष भूषा की आवश्यकता नहीं तथा ना ही किसी प्रकार की दुविधा में पड़ कर कर्म काण्ड करने की आवश्यकता है। उस को तो केवल मन को एकाग्र कर सुरति अर्न्तमुखी करनी है। यदि प्रभु को बाहर ढूंढते रहोगे तो प्राप्ति के स्थान पर दुख ही दुख मिलेंगे, क्योंकि सब कुछ तो अंत:करण में छिपा पड़ा है।"

गुरुदेव के प्रवचनों से लामा तथा जन-साधारण बहुत प्रभावित हुए। सभी का मत था कि नानक जी ने उन्हें सत्य मार्ग के दर्शन करवाए हैं। जब कि प्रभु को बाहर ढूंढने की अपेक्षा अपने अन्त:करण मे ही ढूंढने का प्रयत्न करना चाहिए। अत: उन्होंने गुरू जी से गुरू-दीक्षा लेकर सभी अनावश्यक कर्म काण्ड त्याग दिये।

कुख्यात दस्यु का कल्याण – (बासगो, लद्दाख क्षेत्र)

श्री गुरू नानक देव जी लेह नगर से आगे बढ़ने के लिए सिंधु नदी के किनारे – किनारे चलने लगे। जब आप निमू के स्थान से आगे बढ़े तो वहाँ पर आप को एक समाज विरोधी लोगों का एक टोला मिला जो कि यात्रियों को रास्ते में लूट लेता था। उन का मुख्य कार्य तस्करी करना था। उन के सरगना ने गुरुदेव को एक धनी व्यापारी समझ कर, उस स्थान पर घेर लिया और कहा, "तुम जो भी माल तिब्बत से लाए हो हमें दे दो।" इस पर गुरुदेव ने उन को अपना परिचय दिया कि वे फ़कीर लोग हैं उनके पास धन तो होता ही नहीं ! हां, कहो तो, नाम रूपी धन है, जो दे सकते हैं, जिस से उनकी सभी इच्छाओं की तृप्ति हो जाएगी। परन्तु शर्त एक है, उस की प्राप्ति के लिए, उस का पात्र बनना पड़ेगा। यह सुनकर कुख्यात दस्यु गुर्राया और कहने लगा, "मुझे मूर्ख बनाते हो !" किन्तु गुरुदेव शान्तचित मुस्करा पड़े और कहने लगे, "तेरे आज तक के सभी कार्य मूर्खता पूर्ण ही तो थे क्योंकि जिस धन के लिए तुमने छीना – झपटी की है बताओ वह कहाँ है? परन्तु अब तुझे ऐसा धन देना चाहते हैं जो तेरे पास बढ़ता ही जाएगा, कभी कोई उसे तेरे से छीन नहीं सकेगा।" इस पर दस्यु दुविधा में पड़ गया वह सोचने लगा ऐसी भी कौन सी वस्तु है जो बढ़ती जाए और मुझ से कोई छीन न सके यदि दान किया जाए तो बढ़ती ही जाए। उस की जिज्ञासा बढ़ती गई। गुरुदेव ने तब भाई मरदाने को शब्द गायन करने के लिए कहा –

हरि धनु संचहु रे जन भाई ॥

सतिगुर सेवि रहहु सरणाई ॥

तसकरु चोरु न लागै ता कउ धनि उपजै सबदि जगाइआ ॥

तू एकंकारु निरालमु राजा ॥

तू अपि सवारहि जन के काजा ॥राग मारू, पृष्ठ 1039

दस्यु ने जब यह शब्द सुना तो वह गुरुदेव के निकट बैठ गया और पूछने लगा, "आप आखिर देना क्या चाहते हैं?" उत्तर में गुरुदेव ने कहा, "तुम को शान्ति, धैर्य (धीरज), सन्तोष देना चाहते हैं। इन गुणों के प्राप्त होने पर तुम्हें दोबारा फिर कभी

छीना झपटी के लिए भटकना नहीं पड़ेगा।” दस्यु का माथा ठनका वह कोई निर्णय नहीं कर पा रहा था कि वर्तमान जीवन त्याग कर वैराग्य जीवन धारण किया जाए अथवा नहीं। एक तरफ मानव जीवन को सफल बनाने का सूत्र था, दूसरी तरफ धन ऐश्वर्य इत्यादि। परन्तु क्षणिक सुखों के पश्चात् आत्मिक ग्लानि इत्यादि जब कि पहली तरफ आत्म कल्याण के साथ-साथ मानसिक शान्ति, संतोष इत्यादि दैवी गुणों की प्राप्तियां थी। कुछ क्षण आत्म द्वंद के पश्चात, दस्यु ने अपने पिछले जीवन के प्रायश्चित के लिए गुरुदेव के आगे सिर झुका दिया और कहा, “मुझे क्षमा करें, मैं आप की शरण में हूँ।” गुरुदेव ने उसे अपने अंत:करण की खोज की विधि का अभ्यास करवाया और कहा, “अब तुम मानव कल्याण के लिए कार्य करोगे। अत: यही पर यात्रियों की सेवा का कार्यभार सम्भालोगे।”

गडरीये को दिशा निर्देश- (सर्कदू गांव, लद्दाख क्षेत्र)

श्री गुरू नानक देव जी बासगो से प्रस्थान कर सिंधु नदी के किनारे-किनारे बढ़ते सर्कदू गाँव के निकट पहुँचे। और एक रमणीक स्थान पर कीर्तन में लीन हो गए, एक गडरिया उसी समय आप के पास आया और नम्रता पूर्वक विनती करने लगा, “हे फ़कीर साईं जी ! आप ने कहीं मेरी भेड़ें तो नहीं देखी, जब मैं खाना खा रहा था तब कुछ भेड़ें न जाने कहाँ चली गई हैं, वे मिल ही नहीं रहीं। यदि वे भेड़ें न मिली तो मेरा मालिक मुझे बुरी तरह मारेगा।”

उत्तर में गुरुदेव ने कहा, “तुम्हारी भेड़ें यहाँ तो नहीं आई परन्तु उन को ढूंढने में तेरी सहायता अवश्य की जा सकती है।” वह युवक कहने लगा, “फ़कीर जी, जिन-जिन चरगाहों में, मैं अक्सर भेड़ें चराता हूँ सभी स्थान तो मैंने देख लिए हैं। अब मैं निराश हो चुका हूँ।” गुरुदेव ने उसे धैर्य बन्धाया और कहा, “अल्लाह पर भरोसा रखो सब ठीक हो जाएगा और उस के साथ उस की भेड़ें ढूंढने चल पड़े। भेड़ों के पदचिन्हों के अनुसार बढ़ते गए। आगे जाकर पर एक जगह भेड़ों के मैं-मैं करने का धीमा-धीमा स्वर सुनाई दिया, परन्तु वहाँ पर दूर-दूर तक भेड़ें कहीं भी दिखाई नहीं दे रही थी। आवाज की सीध में बढ़ते हुए गुरुदेव एक गहरे खड्डे के पास पहुँचे वहां पर एक के पीछे

एक कर भेड़ें नीचे उतर गई थी परन्तु बाद में वे वापस ऊपर नहीं चढ़ पाई। जैसे ही गडरिये को भेड़ें मिलीं वह खुशी से नाचने लगा और भेड़ों को लेकर अपने मालिक के पास पहुँचा। मालिक ने देर से लौटने का कारण पूछा जिस के उत्तर में उस ने अपने मालिक को आज की घटना बताई कि एक फ़कीर साई ने भेड़ें ढूंढने में उसकी सहायता की है। यह सुनकर भेड़ों का स्वामी गुरुदेव को मिलने आया। उसने गुरुदेव से आग्रह किया कि वे उसके साथ उसके घर पर चल कर विश्राम करें। गुरुदेव ने उस का अनुरोध स्वीकार किया और गांव में चले गए। दूसरी सुबह प्रात:काल हरि यश के लिए गुरुदेव ने कीर्तन प्रारम्भ किया -

माइआ सुत दारा जगत पिआरा चोग चुगै नित फासै ।।
नामु धिआवै ता सुख पावै गुरमति कालु न गासै ।।
राग तुखारी, पृष्ठ 1110

गुरुदेव ने अपने प्रवचनों में कहा, "मानव जीवन अमूल्य है अत: प्रात:काल स्नान इत्यादि से निपट कर प्रभु चरणों में एकाग्र मन से भजन में बैठना चाहिए। इस प्रकार लक्ष्यों की प्राप्तियां होती हैं।"

योगीयों के बारह पंथ - (बाल-टाल क्षेत्र, काशमीर)

श्री गुरू नानक देव जी सर्कदू से प्रस्थान कर कारगिल पहुँचे। उन दिनों कुछ यात्री सकारदू से अमर नाथ के वार्षिक उत्सव में भाग लेने के लिए चले जा रहे थे। कारगिल में पड़ाव के समय उन यात्रीयों ने गुरुदेव का कीर्तन सुना प्रभावित हो कर उन से अनुरोध किया कि अमर नाथ की यात्रा मे चलें। जिस से उन को जन-साधारण से सम्पर्क करने मे सुविधा रहेगी। गुरुदेव ने उनके इस प्रस्ताव पर सहमति प्रकट की और वहाँ से अगले पड़ाव 'दरास' से होते हुए हरि यश करते हुए बालताल पहुँचे। जो कि श्री नगर-लेह मार्ग पर स्थित है। वहाँ से अमर नाथ की यात्रा के लिए मार्ग जाता है। आप जी को बहुत से तीर्थ यात्री श्री नगर की ओर से भी आते हुए मिले जो कि बाल ताल की रमणीक घाटी मे पड़ाव डाले बैठे थे। उन में अधिकांश लोग नाथ पंथी थे। जिन के बारह पंथ हैं, अत:

उन सब की कुछ न कुछ मर्यादा भिन्न रहती है। कोई जटाधारी रहते हैं, कोई रूंड-मुंड और किसी के पास सामग्री के रूप में एक त्रिशूल, कानो में मुंद्रा, मृगछाला, गोदड़ी, भस्म का बटूआ, शंख, सिङ्डी, करमण्डल, रुद्राक्ष की माला, डमरू भगवे कपड़े या लंगोट इत्यादि होता है। उन्होंने जब गुरुदेव को देखा तो कौतुहल वश ने पूछा, "क्या आप नाथ पंथी हैं? यदि हैं, तो कौन से पंथ से सम्बन्ध रखते है क्योंकि आप की विचित्र वेष-भूषा से कुछ जानकारी प्राप्त नहीं होती।" उत्तर में गुरुदेव कहने लगे, "मैं पूर्णत: गृहस्थी हूँ। मेरी दृष्टि में योगी बनने की अपेक्षा गृहस्थ में वे सब प्राप्तियां सहज रूप में हो सकती हैं जो हठ योग से कई वर्षो में भी नहीं हो सकती। क्योंकि आध्यात्मिक दुनिया में शरीर से सन्यास लेने से कुछ मिलने वाला नहीं वहाँ तो मन के सन्यास से प्राप्ति होती हैं, जो कि गृहस्थ मे रह कर भी सहज रूप मे सम्भव है।" इस पर आप ने भाई मरदाना जी को रबाब से सुर साधने को कहा और स्वयं कीर्तन में लीन हो गये-

जोगु ना खिंथा जोग न डण्डै जोगु न भसम चड़ाईऐ ।।
जोगु न मुंदी मूंडि मुडाइऐ जोगु न सिंङी वाईऐ ।।
अंजन माहि निरंजनि रहीऐ जोग जुगति इव पाईऐ ।।
गली जोगु न होई ।।
एक द्रिसटि करि समसरि जाणै जोगी कहीऐ सोई ।। रहाउ ।।
जोगु न बाहरि मड़ी मसाणी जोगु न ताड़ी लाईऐ ।।

राग सूही, पृष्ठ 730

कीर्तन से सब को ऐसे लगा जैसे समय को ठहरा दिया गया था। सभी यात्री कीर्तन सुनने के लिए गुरुदेव के चारों तरफ एकत्र हो गए। शब्द की समाप्ति पर कुछ लोगों ने आप से विचार विमर्श करने की इच्छा व्यक्त की। गुरू जी ने तब अपने प्रवचनों में कहा, "किसी विशेष सम्प्रदाय की वेषभूषा अथवा सामग्री या चिन्ह धारण करने मात्र से कोई व्यक्ति धार्मिक नहीं बन जाता। वास्तव में सन्यास अथवा योग मन का ही होना चाहिए। इस लिए मनुष्य को कहीं भी भटकने की आवश्यकता नहीं यदि वह सच्चे हृदय से घर में भी बैठ कर आराधना करेगा तो वह प्रभु चरणों में स्वीकार्य होगा।" गुरू जी कहने

लगे, "केवल बातों से कोई योगी नहीं बन जाता उस के लिए मन से त्यागी होना अति आवश्यक है। इस के अतिरिक्त भेद भाव मिटाकर समस्त मानवता को एक जैसा जान कर उन के दुख-सुख में उन की सहायता करनी चाहिए। केवल तीर्थो पर या मरघट-मसाणों में भटकने मात्र से कुछ प्राप्त न होगा बल्कि ऐसे कार्य करने चाहिए जिस से मन की इच्छाएं समाप्त हो जाएं और जीवन भी मोह माया से विरक्त हो जाए। जैसे कमल का फूल पानी से सदैव निर्लेप रहता है।" गुरुदेव की विचारधारा जान कर समस्त नर-नारी, जो यात्रा के लिए आगे बढ़ने के लिए तत्पर थे। बहुत सन्तुष्ट हुए और आगे अमर नाथ गुफा की और बढ़ने लगे।

गोष्ठी-नाथ पंथीयों से-(गुरुदेव अमर नाथ के मैदान में, काशमीर)

श्री गुरू नानक देव जी बाल ताल से अन्य यात्रियों के साथ आगे बढ़ते हुए अमर नाथ घाटी में पहुँचे वहाँ पर दूसरी तरफ पहलगाँव की और से भी बहुत बड़ी संख्या मे यात्री आ रहे थे। कुछ ही समय में आप गुफा के सामने वाले मैदान में पहुँच गए जहां यात्री नाले मे स्नान इत्यादि कर विश्राम कर रहे थे। आप ने वहां उचित स्थान देखकर कीर्तन आरम्भ कर शब्द उच्चारण किया। निकट में ही कई साधु मण्डलियां पहले से धूप बत्ती जलाकर, अलग-अलग बैठे अपनी क्रियाओं में व्यस्त थे। कोई ग्रंथों का पाठ कर रहा था तथा कोई आंखें मूंद कर माला फेर रहा था तथा कोई शंख बजा रहा था, इस प्रकार वे सब विभिन्न क्रियाओं मे संलग्न थे-

गुर उपदेश साचु सुख जा कउ किआ तिसु उपमा कहीऐ ।।
लाल जवेहर रतन पदारथ खोजत गुरमखि लहीऐ ।।
चीनै गिआनु धिआनु धन साचौ एक सबदि लिव लावै ।।
निरालंबु निरहारु निहकेवलु निरभउ ताड़ी लावै ।। 3 ।।
राग प्रभाती, पृष्ठ 1332

सभी साधु संतों ने जब रबाब की मधुर धुन में बाणी सुनी तो वे सभी आप के निकट हो गए। शब्द की समाप्ति पर, साथ में आए हुए यात्रियों ने विनती की, "हे गुरुदेव ! आप यहाँ भी अपने विचार व्यक्त करें।" इस पर गुरुदेव ने सभी साधु-संन्यासियों को सम्बोधन कर कहा, "प्रभु सिमरन के बिना यह मानव जीवन व्यर्थ है। मनुष्य को स्वयं को किसी विशेष सम्प्रदाय की वेष-भूषा धारण कर भ्रम मे नहीं पड़ना चाहिए कि वह धर्मी हो गया है। धर्म तथा शुभ कर्म गृहस्थ मे भी रह कर हो सकते हैं। वास्तव में तो हृदय में प्रभु की याद सदैव रखनी ही सिमरन है, परन्तु इस के लिए पूर्ण गुरू (सत्यगुरु) की शिक्षा के आधार पर शब्द के संयोग से अंत:कर्ण में बसे प्रभु की खोज अंतर मुखी होकर करने की आवश्यकता है। जिस से नाम रूपी अमूल्य निधि की प्राप्ति हो जाती है।"

गुरुदेव के विषय में जैसे ही मेले में चर्चा होने लगी, उधर भरथरी योगी भी मेले मे विशेष रूप से अपनी मण्डली सहित पधारे हुए थे, उन्हों ने गुरू जी से ज्ञान गोष्ठी का आग्रह किया क्योंकि गुरुदेव संन्यास धारण करने का खण्डन कर रहे थे। वह इस बात को चुनौती मान कर गुरुदेव से उलझने लगे। योगी ने गुरुदेव से कहा, "हम इस लिए श्रेष्ठ हैं क्योंकि हम नारी जाति का त्याग कर प्रभु मे ध्यान एकाग्र करते हैं। जब कि गृहस्थी लोग, गृहस्थ के झमेलों में उलझे रहते हैं तथा उन के रास्ते मे नारी बाधक है। इस लिए उनका मन एकाग्र नहीं कर पाता।

गुरुदेव ने उत्तर में कहा, "यह सिद्धांत व्यवहारिक रूप में बिलकुल खोखला है। क्योंकि आप को भी जीवन निर्वाह के लिए भोजन, वस्त्र तथा अन्य सामग्री की आवश्यकता है। जो कि आप गृहस्थों से भीख मांग कर पूरी करते हो तथा उन्हीं पर निर्भर हो। तुम स्वयं निखट्टू हो जब कि गृहस्थी अपना कर्तव्य पूरा करता हुआ, साधु-संत की सेवा कर पुण्य कमाता है और आप की तपस्या का आधा फल ले जाता है।"

भरथरी योगी को इस बात का उत्तर न सूझा, वह कहने लगा, "हम यति है इस लिए श्रेष्ठ हैं। गुरुदेव ने उत्तर में कहा, "यति होना प्रकृति का कोई नियम नहीं, यदि सभी लोग यति हो जाएं तो संसार की उत्पति कैसे सम्भव होगी? जब कि आप की अपनी माता भी तो गृहस्थी थी जिस से आप का जन्म हुआ है नहीं तो आप का अस्तित्व में आना ही सम्भव नहीं था।"

इस उत्तर को सुन कर योगी भरथरी शान्त हो गया। उस के अन्य साथी भी गुरुदेव से पूछने लगे, "नानक जी आप हमे बताएं, आप ने कौन सा योग धारण किया है तथा योगी को किस प्रकार से जीवन व्यापन करना चाहिए?" गुरुदेव ने शब्द उच्चारण किया –

गुर का सबदु मनै महि मुंद्रा खिंथा खिमा हढावउ ॥
जो किछु करै भला करि मानउ सहज जोग निधि पावउ ॥
बाबा जुगता जीउ जुगह जुग होगी परम तंत महि जोगं ॥
अम्रितु नामु निरंजन पाइआ गिआन काइआ रस भोगं ॥ रहाउ ॥

राग आसा, पृष्ठ 359

गुरुदेव ने अपने प्रवचनों में कहा, "मैंने अंत:करर्ण की खोज सहज योग द्वारा कर नाम रूपी अमृत (महा रस) की प्राप्ति की है। इस सहज योग में, गुरू का शब्द कानों में मुद्रा है, क्षमा मेरी खिंथा (चटाई) है। प्रभु के आदेश अनुसार जीवन निर्वाह करना, मेरा योग है। जिस से मैंने ऋद्धि-सिद्धि प्राप्त कर ली है।" गुरुदेव ने भरथरी योगी को कहा–मेरे लिए अब समस्त मानव जाति एक है। मैंने वर्ण आश्रम का चक्र त्याग दिया है क्योंकि मैंने एक पारब्रह्म से अपना नाता जोड़ लिया है।

सभी योगियों ने गुरुदेव को तब नमस्कार किया तथा शिक्षा धारण कर अपने-अपने स्थान को लौटने लगे। और गुरुदेव भी पहलगाम के लिए चल पड़े।

निराकार प्रभु की आराधना की महिमा – (पहलगाम नगर, काशमीर)

श्री गुरू नानक देव जी, अमर नाथ की घाटी से लौटते समय पहलगाम नगर में पहुंचे। पहलगाम में उन दिनों भी बाहरी योगीयों का भारी जमाव था। अत: आप ने एक नाले के किनारे रमणीक स्थान पर, प्रात:काल के नित्यकर्म पश्चात् कीर्तन आरम्भ कर दिया। सुहावने मौसम में फूलों की वादी में मधुर संगीत के आकर्षण से बहुत से लोग गुरुदेव के निकट आ कर, कीर्तन श्रवण करने लगे। गुरुदेव उच्चारण कर रहे थे–

सत संगति कैसी जाणीऐ ।। जिथै एको नामु वखाणीऐ ।।

एको नामु हकमु है ।। नानक सतिगुर दीआ बुझाइ जीउ ।।

राग सिरी पृष्ठ 72

बहुत से जिज्ञासु शब्द की समाप्ति पर गुरुदेव जी से प्रवचन करने का आग्रह करने लगे, क्योंकि उन में से कुछ एक ने गुरू जी से अमर नाथ में ही परिचय कर लिया था। गुरुदेव ने कहा, "मनुष्य को आध्यात्मिक उन्नति के लिए केवल उन्हीं लोगों की संगत करनी चाहिए जो केवल एक ही प्रभु (निराकार दिव्य ज्योति) की स्तुति करते हो अन्यथा सब व्यर्थ एवं समय नष्ट करना है क्योंकि समस्त देवी देवता भी उसी महा शक्ति द्वारा उत्पन्न किए गए हैं। जैसे कि मनुष्यों को प्रकृति द्वारा निर्मित किया गया है" –

त्रितीआ ब्रहमा बिसनु महेसा ।।

देवी देव उपाए वेसा ।।

जोती जाती गणउ न आवै ।।

जिनि साजी सो कीमत पावै ।।

राग बिलावलु महला, पृष्ठ 839

कहाँ तक वर्णन किया जाए, देवी देवताओं की संख्या भी अनंत है। जिस प्रभु ने मानव तथा देवी-देवताओं को पैदा किया है वही इस रहस्य को जानता है। अत: प्राणी मात्र को एक ही प्रभु के अतिरिक्त किसी की भी भूल कर उपासना नहीं करनी चाहिए।

गोष्ठी – पण्डित ब्रह्म दास – (मटन नगर, काशमीर)

श्री गुरू नानक देव जी पहलगाम नगर से प्रस्थान कर के मटन नगर में पहुँचे। उस स्थान पर एक छोटी सी पहाड़ी की गोद में से एक विशाल चश्मा फूट कर निकल रहा है, जिस का निर्मल जल देखते ही बनता है। उस जल धारा को वहीं सरोवर का रूप दिया गया है, वहां यात्री स्नान कर कृतार्थ होते हैं। उन दिनों वहाँ कश्मीरी पंडितों का समूह निवास करता था जो कि यात्रियों की पैतृक सूचियां हरिद्वार की तरह जात-पात के

आधार पर तैयार करते रहते थे तथा संस्कृत पढ़ते-पढ़ाते थे। गुरुदेव जब वहाँ पधारे तो उन्हें वहां के प्रमुख पण्डित चतुर दास का लड़का ब्रह्मदास मिला, जिस के पास एक विशाल पुस्तकालय था। अत: वह वेदान्त एवं व्याकरण का सर्वाधिक ज्ञाता था। वह जिस विषय पर भी बोलता, उसी विषय पर प्रमाणों का भण्डार प्रस्तुत कर प्रति-द्वन्दी को निरूत्तर कर देता था। जब कभी किसी विद्धान के साथ विचार गोष्ठी होती तो शर्त यही रखी जाती कि पराजित पक्ष की पुस्तकें इत्यादि जब्त कर ली जायेंगी। इस प्रकार ब्रह्मदास ने विद्धानों को चुनौती दे कर गोष्ठिओं के लिए विवश कर उन की अमूल्य पुस्तकें जब्त कर ली थी। गुरुदेव से भेंट होने पर उस ने पहला प्रश्न किया, "आप किस सिद्धांत में विश्वास रखते हैं तथा आप ने कौन-कौन से शास्त्र इत्यादि पुस्तकें पढ़ी हैं?" गुरुदेव ने उत्तर दिया-

कोई पड़ता सहसाकिरता कोई पड़ै पुराना ॥

कोई नामु जपै जपमाली लागै तिसै धिआना ॥

अब ही कब ही किछू न जाना तेरा एको नामु पछाना ॥

राग रामकली, पृष्ठ 876

परन्तु ब्रह्मदास ने अपने किताबी ज्ञान और वेद, पुराणों के अपने चयन की चर्चा छेड़ दी। उसने बताया कि वह कौन-कौन से शास्त्रों का आचार्य है तथा कौन-कौन से पंडित को उस ने शास्त्रार्थ में पराजित किया है। यह सब सुन कर, वेद, कतेब की पहुँच से परे, अनुभवी ज्ञान के ब्रह्मवेता गुरुदेव बोले।

पड़ि पड़ि गडी लदीअहि पड़ि पड़ि भरीअहि साथ ॥

पड़ि पड़ि बेडी पाईऐ पड़ि पड़ि गडीअहि खात ॥

पड़ीअहि जेते बरस बरस पड़ीअहि जेते मास ॥

पड़ीऐ जेती आरजा पड़ीअहि जेते सास ॥

नानक लेखै इक गल होरु हउमै झखणा झाख ॥ 467 ॥

राग आसा, पृष्ठ 467

अत: गुरुदेव ने अपने प्रवचनों में कहा "आप ने बहुत कुछ पढ़ा लिखा है परन्तु आपकी दुविधा नहीं गई। आप तत्व ज्ञान से वंचित रहे हैं। आप की अनुभव शक्ति अभी तक अन्धकार में है। नि:सन्देह तुम्हारी बुद्धि पुस्तकीय ज्ञान से तीक्ष्ण और चपल हो गई है परन्तु तत्व ज्ञान की गरिमा उसे बुद्धि प्राप्त नहीं हुई। आप ने अपने पास ज्ञान का इतना बड़ा भण्डार रखा और फिर भी सत्य ज्ञान से वंचित रहे हैं। यह ज्ञान, सदाचार की भावना से रहित होकर शरीर द्वारा की गई पूजा से नहीं मिलता।" सत्य ज्ञान के मिलने पर ब्रह्मदास ने गुरुदेव के चरणों में नमश्कार किया और तत्व ज्ञान की शिक्षा की याचना करने लगा। उस की नम्रता देखते हुए गुरुदेव ने उसे अपना शिष्य बनाना स्वीकार कर लिया और गुरू दीक्षा देकर सत्य मार्ग पर चलने का उपदेश दिया।

वहां पर उपस्थित अन्य पण्डित भी इस दृश्य को देखकर, भक्ति से मुक्त हो कर श्रद्धा में आ गए। उन्होंने भी गुरुदेव से प्रश्न किया, "हे स्वामी ! यदि परमात्मा हमारे भीतर है तो उस का नाम जपने की कया आवश्यकता है? यदि वह बाहर होता तो उस का नाम जपने की आवश्यकता भी थी। जब वह हमारे भीतर है तो नाम रटने के बिना भी दिखाई देना चाहिए?" इस प्रश्न के उत्तर में गुरुदेव ने कहा, "मान लो आप के हाथ मे धूल मिट्टी से सना हुआ एक दर्पण है। आप उस में से आप अपना मुख नहीं देख सकते जब तक कि आप उसे स्वच्छ नहीं करते। ठीक उसी प्रकार मनुष्य का मन मलीन है। उस के उपर से विषय विकार रूपी मलीनता दूर करने के लिए, नाम रूपी जल लेकर हृदय रूपी दर्पण धोना पड़ता है, ताकि उस प्रभु को देख सकें" –

भरीऐ मति पापा कै संगि ।।

ओहु धोपै नावै कै रंगि ।।

जपुजी साहिब, पृष्ठ 4

एक अन्य पण्डित ने पूछा, "गुरुदेव ! हम शास्त्रों द्वारा निर्धारित कर्म करते हैं। परन्तु हमें शान्ति नहीं मिली?" इस पर गुरुदेव ने उत्तर दिया, 'शान्ति केवल श्रद्धा और भक्ति की भावना से प्राप्त हो सकती है। कर्मकाण्डीय बाह्य साधनों से शान्ति कदापि नहीं मिलती। प्रभु के नाम को जपने से आपको शान्ति मिलेगी और उसके साथ साथ आपका अपना व्यवहार सदाचारी एवं परोपकारी होना चाहिये। इस तरह आप परमपिता

के दर्शन कर सकते हैं। वरना वेद शास्त्र पढ़ कर भी आप भ्रम में पड़े अंहकार में डूबे रहेंगे और आपका उद्धार नहीं होगा। अत: आपको सहज अवस्था में रहकर वाद-विवादों को त्यागकर समस्त मानव जाति के कल्याण के लिए तत्पर रहना चाहिये।' इन बातों का उन कश्मीरी पण्डितों पर बहुत प्रभाव पड़ा जिस से उन्होंने गुरू जी के दर्शाये मार्ग पर चलने का संकल्प लिया।

हृदय की शुद्धि पर बल – (अनंतनाग नगर, काशमीर)

श्री गुरू नानक देव जी, मटन कस्बे से आगे बढ़ते हुए अनंतनाग नगर में पहुँचे। वहाँ पर भी मटन की तरह एक छोटी सी पहाड़ी की गोद में से एक विशाल झरना फूट कर निकल रहा है। उस झरने के पानी को सरोवरों में इकट्ठा किया गया है। बहता हुआ पानी एक सरोवर से दूसरे सरोवर में से होता हुआ आगे बढ़ता है। इन सरोवरों के किनारे मन्दिर बने हुए हैं। जिस में से पण्डित लोग अपने विश्वास अनुसार उन दिनों मे भी देवी देवताओं की मूर्तियों की पूजा करते थे। जब उन पुजारियों को मालूम हुआ कि पण्डित भी ब्रह्मदास गुरुदेव का सेवक बन गया है तो उन को आश्चर्य हुआ, वे सभी एकत्रित हो कर गुरुदेव के सम्मुख हुए और प्रश्न किया, "हे स्वामी ! हम नाम जपते हैं परन्तु वह फलीभूत नहीं होता इस का क्या कारण हो सकता है?" उत्तर में गुरुदेव ने बाणी उच्चारण की और कहा–

भांडा धोइ बैसि धूपु देवहु तउ दूधै कउ जावहु ॥
दूधु करम फुनि सुरति समाइणु होइ निरास जमावहु ॥
जपहु त एको नामा अवरि निराफल कामा ॥ 1 ॥ रहाउ ॥

राग सूही, पृष्ठ 728

"यदि कोई जिज्ञासु मन की शान्ति अथवा अमृत नाम-महारस प्राप्त करना चाहता है तो उसे कर्म काण्ड त्याग कर हृदय रूपी बर्तन को हरि नाम रूपी जल से धोना चाहिए। ठीक उसी प्रकार जैसे दूध के लिए जल से बर्तन धोकर धूप में सुखा कर स्वच्छ कर लिया जाता है कि दूध कहीं खराब न हो जाए। फिर हरि नाम रूपी दूध को

एकाग्र सुरति की जामन (जाग) लगाओ। इस विधि द्वारा आप अमृत रूपी हरि नाम प्राप्त कर शान्त चित अडोल रह सकते हैं। परन्तु आप को बार-बार गुरू उपदेश के अंकुश से मन रूपी हाथी को नियन्त्रण मे रखना होगा।"

मनु कुंचरु काइआ उदिआनै ॥
गुरु अंकसु सचु सबदु नीसानै ॥ *राग गउड़ी, पृष्ठ 221*

सेवा सिमरन से अन्तःकरण स्वच्छ – (आवन्ती पुर, काशमीर)

श्री गुरू नानक देव जी अनंतनाग नगर में पण्डितों को प्रभु भजन की विधि दृढ़ करवा कर आगे श्री नगर की तरफ बढ़े। रास्ते में अवन्ती पुर कस्बे में आप की भेंट एक सूफी फ़कीर कमाल से हो गई। जो कि यात्रियों को जल पान करा कर सेवा किया करता था। उस की सेवा देखकर गुरुदेव बहुत प्रसन्न हुए। विचार विमर्श होने पर फ़कीर कमाल ने पूछा, "हे गुरू जी ! यदि अल्लाह हमारे भीतर ही है तो उस की इबादत में उस का नाम जपने की क्या आवश्यकता है? जब कि हम उसे अनुभव कर रहे हैं?" गुरुदेव ने उत्तर दिया, "आइने में अपना मुख तभी दिखाई देगा जब वह स्वच्छ होगा। यदि वह मैला है तो उसे पहले स्वच्छ करना ही होगा। हृदय रूपी आइने में कई जनम की मैल ठीक उसी प्रकार लगी हुई है। उस की मलीनता को स्वच्छता में बदलने के लिए अल्लाह के गुणों का गुणगान जरूरी है। इस लिए उस का कोई भी गुण लेकर, उस गुण वाचक नाम से उस की याद द्वारा मन की मैल धोनी होगी। जिस से अंत:करण स्वच्छ हो जाए। जैसे ही सेवा तथा सिमरन से अन्त:करण स्वच्छ होता है, वैसे ही उस प्रभु के दर्शन होने प्रारम्भ हो जाते हैं।"

भरीऐ मति पापा कै संगि, उहु धोपै नावै कै रंगि ॥
जपुजी साहिब, पृष्ठ 4

विकारों से मुक्ति के लिए प्रार्थना – (श्री नगर, काश्मीर)

श्री गुरू नानक देव जी, अवन्ती पुर से श्री नगर पहुँचे। नगर के प्रारम्भ में ही डल झील के किनारे पहाड़ी के शिखर पर एक मन्दिर है, जिस को शंकराचार्य मन्दिर कहा जाता है। वहाँ से समस्त झील तथा नगर का दृश्य बड़ा ही मन-मोहक दिखाई देता है। गुरुदेव जब वहाँ पहुँचे तो यात्रीयों की भीड़ लगी हुई थी। आप जी ने अपने नियम अनुसार मन्दिर से कुछ दूरी पर कीर्तन प्रारम्भ कर दिया। कीर्तन श्रवण करने को आप के चारों तरफ भीड़ एकत्र हो गई। आप उच्चारण कर रहे थे-

अवरि पंच हम एक जना किउ राखउ घर बारु मना ॥

मारहि लूटहि नीत नीत किसु आगै करी पुकार जना ॥

स्री राम नामा उचरु मना ॥

आगै जम दलु बिखमु घना ॥ रहाउ ॥

राग गउड़ी, कबीर जी, पृष्ठ 155

शब्द की समाप्ति पर कुछ श्रोताओं ने रचना के भाव सरल भाषा में जानने की जिज्ञासा प्रकट की। तब आप जी ने तब प्रवचन किया, "यह शरीर, जिस को प्राणी अपना कहता है इस के भीतर पांच चोर (तस्कर) बैठे हुए हैं। जो नित्य-प्रति उसे पीटते और लूटते हैं परन्तु वह अपनी गफलत की नींद सो रहा है, इन पांचों से बचाव के लिए प्रयास नहीं करता। जब कि वह जानता है कि ये पांचों विकार (काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार) इत्यादि, उसके विनाश का कारण बनेंगे।" यह सुन कर एक वृद्ध व्यक्ति ने पूछा, "गुरू जी आप ही बताएं इन तस्करों से छुटकारा किस प्रकार प्राप्त किया जा सकता है अत: ऐसे में सहायता के लिए किसे पुकारें?" उत्तर में गुरुदेव ने कहा, "अपने भीतर बैठी जीव आत्मा को पुकारना चाहिए जो कि परमात्मा का अंश है। और रोम रोम में रमे राम को याद करना चाहिए जिस से आत्मा को बल मिलता है और वह इन पांचो विकारों का सामना करने के लिए शक्तिशाली बन जाती है। जिस से प्राणी भव सागर पार करने में सफल हो जाते हैं। मानव जीवन सफल करने की कुन्जी है।"

एक मात्र पुस्तकीय ज्ञान का खण्डन– (बारामूला नगर क्षेत्र, काश्मीर)

श्री गुरू नानक देव जी, श्री नगर के आस पास के स्थलों से होते हुए, जेहलम नदी के किनारे बसे नगर बारामूला में पहुँचे। प्राचीन काल से काश्मीर घाटी में प्रवेश करने का मुख्य मार्ग, जेहलम नदी के साथ साथ ही था। गुरुदेव आगे बढ़ते हुए वहाँ के विद्यापीठ में पहुँचे, जहां पर विधार्थियों को वेदों शास्त्रों का अध्ययन कराया जाता था। आप जी ने चिनार के एक वृक्ष के नीचे बैठकर उन का पाठ्य क्रम देखा और त्रुटि भरे अध्ययन पर टीका कर दिया–

दीवा बलै अंधेरा जाइ ॥

बेद पाठ मति पापा खाइ ॥

उगवै सूरु न जापै चंदु ॥

जह गिआन प्रगासु अगिआनु मिटंतु ॥

बेद पाठ संसार की कार ॥

पढि पढि पण्डित करहि बीचार ॥

बिनु बूझे सब होइ खुआर ॥

नानक गुरमुखि उतरसि पारि ॥ *राग सूही, पृष्ठ 791*

पण्डितों को जब गुरुदेव की विचारधारा का ज्ञान हुआ, तो वे गुरुदेव से उलझ कर कहने लगे, "हम इस ज्ञान को प्राचीन काल से बांटते चले आ रहे हैं। जब कि आप इस ज्ञान का खण्डन कर रहे हैं इसका कारण बताए?" उत्तर में गुरुदेव ने कहा, "मैं न खण्डन कर रहा हूँ न मण्डन। मैं तो उस तत्व ज्ञान की बात कह रहा हूँ जिस की प्राप्ति से मनुष्य का आचरण उज्ज्वल हो उठता है परन्तु इस प्रकार के किताबी ज्ञान में केवल अंह भाव ही बढ़ेगा जो कि व्यक्ति को विनाश की ओर ले जाता है।"

साधु वेष में धन अर्जित करने की आलोचना– (उड़ी क्षेत्र, काशमीर)

श्री गुरू नानक देव जी बारामूला से उड़ी क्षेत्र में पहुँचे। आप जी ने एक निर्जन स्थान पर आसन लगा कर भाई मरदाना जी के साथ प्रभु स्तुति में कीर्तन प्रारम्भ कर दिया।

जह जह देखा तह जोति तुमारी तेरा रूप किनेहा ॥

इकतु रूपि फिरहि परछंना कोइ न किस ही जहा ॥ 2 ॥

अंडज जेरज उतभुज सेतज तेरे कीते जंता ॥

एक पुरबु मै तेरा देखिआ तू सभना माहि रवंता ॥

तेरे गुण बहुते मै एकु ना जाणिआ मै मूरख किछु दीजै ॥

प्रणवति नानक सुणि मेरे साहिबा डुबदा पथरु लीजै ॥

राग सोरठि, पृष्ठ 596

गुरुदेव कीर्तन में लीन थे कि तभी वहाँ पर साधु वेष–धारण किये हुए कुछ व्यक्तियों की टोली आ गई। वह भी गुरुदेव का कीर्तन सुनने लगे। कीर्तन की समाप्ति पर उन्होंने गुरुदेव से पूछा, "आप नगर के बाहर, सुनसान में क्यों बैठे हैं? यहाँ आप को क्या लाभ है? यहाँ पर तो आप को कोई भोजन भी नहीं पूछेगा। इत्यादि . . . .।" उत्तर में गुरुदेव ने कहा, "आप का प्रभु पर पूर्ण भरोसा होना चाहिए। वह स्वयं आपकी आवश्यकता पूर्ण करता है, इस लिए किसी बात की चिन्ता मत करो?" वे लोग वास्तव में गुरुदेव से कश्मीर घाटी के विषय में जानकारी प्राप्त करना चाहते थे कि सब से अधि क यात्री कहां–कहाँ होते हैं? उन्होंने जल्दी ही अपना वास्तविक उद्देश्य गुरुदेव के सम्मुख रखा कि उन का मुख्य लक्ष्य यात्रीयों से सम्पर्क कर उन से धन बटोरना है। अत: ऐसे स्थलों पर पहुँच कर भिक्षा में अधिक से अधिक धन इकट्ठा करना चाहते थे। उन की नीच प्रवृति को देखकर गुरुदेव ने उन से कहा–

गुरु पीर सदाए मंगण जाए ॥

ता कै मूलि न लगीऐ पाइ ॥

घालि खाइ किछु हथहु देइ ॥

नानक राहु पछाणहि सेइ ॥ राग सारंग, पृष्ठ 1245

गुरुदेव का व्यंग सुनकर वे बहुत नाराज हुए और पूछने लगे, "क्या आप भिक्षा नहीं लेते?" उत्तर में गुरुदेव ने कहा, "साधू- संत का मुख्य प्रयोजन जगत को सत्य मार्ग दिखवाना है, न कि धन अर्जित करना। हां ! यदि कोई जिज्ञासु अपनी खुशी से सेवा-भाव से कोई वस्तु या खाद्य पदार्थ भेंट स्वरूप उनको अर्पित करता है तो वे उसे स्वीकार कर लेते हैं। और परमार्थ के कार्यों में खर्च कर देते हैं, पल्लू में बांधते नहीं।" इस उत्तर पर वे वहाँ से चलते बने।

सत्य मार्ग के पांधीयों पर संतुष्ट- (मुज़फराबाद नगर, काशमीर)

श्री गुरू नानक देव जी उड़ी क्षेत्र से मुज़फराबाद नगर में पहुँचे। वहाँ के निवासी आध्यात्मिक दुनिया से सम्बन्ध बनाए रखते थे। वहां के अधिकांश लोग साधु संगत करने में विश्वास रखते थे तथा आए गये साधु फ़कीरों का आदर सम्मान करना उन का स्वभाव था। उन लोगों ने गुरुदेव के पधारने पर उन का भव्य स्वागत किया तथा आप जी को एक धर्मशाला में ठहराया गया। जहां पर आप का कीर्तन सुनने के लिए जनता को आमन्त्रित किया गया। कुछ जिज्ञासुओं ने आप से अनुरोध किया कि प्रभु मिलन का सहज मार्ग बताएं जिस से जीवन को सफल किया जा सके। उन का विचार सुन कर गुरुदेव अति प्रसन्न हुए और कहने लगे, "यहाँ के निवासी विवेकशील हैं तथा आध्यात्मिक दुनिया में जल्दी ही स्थान बना लेंगे क्योंकि इन्होंने सत्य मार्ग को पहचानने का पहला कार्य कर लिया है। जिस के फल स्वरूप यहाँ पर कर्म-काण्ड इत्यादि निरर्थक कार्य नहीं किए जाते।" गुरुदेव ने बाणी उच्चारण की-

निकटि वसै देखै सभु सोई ॥

गुरमुखि विरला बूझै कोई ॥

विणु भै पइऐ भगति न होई ॥

सबदि रते सदा सुखु होई ॥

ऐसा गिआनु पदारथु नामु ॥

गुरमुखि पावसि रसि–रसि मानु ॥ 1 ॥ रहाउ ॥

गिआनु गिआनु कथै सभु कोई ॥

कथि कथि बादु करे दुखु होई ॥

कथि कहणै ते रहै न कोई ॥

बिनु रस राते मुकति न होई ॥ 2 ॥

गिआनु धिआनु सभु गुर ते होई ॥

साची रहत साचा मनि सोई ॥

मनमुख कथनी है पर रहत न होई ॥

नावहु भूले थाउ न कोई ॥ राग बिलावलु, पृष्ठ 831

आप जी ने अपने प्रवचनों में कहा, "हे भक्त जनो ! प्रभु कहीं दूर नहीं रहता, बस इस रहस्य को समझना और समझाना ही संगत करने का मुख्य उद्देश्य है। इस की प्राप्ति के लिए पहला कार्य हृदय में, उस परम शक्ति का भय उत्पन्न करना है। जब तक आप उसे सर्व शक्तिमान नहीं मानते, प्राप्ति के लिए एक कदम भी आगे नहीं बढ़ सकते। इस सब के लिए एक मात्र सहारा नाम का है जो कि 'शबद' की सहायता से लिया जाता है।

वली कंधारी – (हसन अबदाल – पंजा साहिब, पंजाब)

श्री गुरू नानक देव जी मुज़फराबाद (काशमीर) से प्रस्थान कर आगे बढ़े और एक छोटी सी पहाड़ी की तलहटी में आ विराजे। दूर-दूर तक पानी न होने के कारण वह स्थान निर्जन था। क्योंकि उन दिनों वहाँ पर दूर तक कहीं पानी नहीं मिलता था। गुरुदेव ने भाई मरदाना जी को कहा, "भाई मरदाना, बाणी आई है। आप सुर-साध लो।" इस पर गुरुदेव हरि यश में लीन हो गए।

रे मन ऐसी हरि सिउ प्रीति करि जैसी जल कमलेहि ॥

लहरी नालि पछाड़ीऐ भी विगसै असनेहि ॥

जल महि जीअ उपाइ कै बिनु जल मरणु तिनेहि ॥

मन रे किउ छूटहि बिनु पिआर ॥

गुरमुखि अंतरि रवि रहिआ बखसे भगति भंडार ॥

राग सिरी, पृष्ठ 59

जब से दोपहर का समय हुआ तो भाई मरदाना जी ने गुरुदेव से विनती की, "हे गुरुदेव ! मुझे प्यास लगी है। कृपया मुझे पानी पिलाने का कोई प्रयत्न कीजिए।" गुरुदेव ने कहा, "यहाँ दूर-दूर तक कोई बस्ती दिखाई नहीं देती। केवल इस पहाड़ी की चोटी पर एक झोंपड़ी है अत: वहाँ पानी अवश्य होना चाहिए। आप वहाँ जाकर पानी पी आयो।

भाई मरदाना जी, गुरुदेव से आज्ञा लेकर पहाड़ी की चोटी पर पहुँचे। वहाँ उन को एक सूफी फ़कीर इबादत करते हुए दिखाई दिया जो कि पहले कभी कन्धार (अफगानिस्तान) का रहने वाला था। इस लिए उन को वहां देहात में वली कंधारी के नाम से पुकारते थे। वली कंधारी ने भाई मरदाना जी से पूछा, "आप कहाँ से आए हैं और कहाँ जा रहे हैं? आप अकेले हैं या कोई और भी आप के साथ है?"

भाई मरदाना ने कहा, "हम काशमीर से आ रहे हैं तथा पंजाब का भ्रमण करने का कार्यक्रम है। मैं अकेला नहीं हूँ, मेरे साथ मेरे गुरू, बाबा नानक देव जी भी हैं।" यह उत्तर सुनकर वह बोला, "तेरा नाम क्या है और तू किस जाति से सम्बन्ध रखता है?" भाई

मरदाना ने कह, "मैं जाति से मिरासी हूँ। मेरा नाम मरदाना है एवं जन्म से मुस्लिम हूँ।" बस फिर क्या था? यह सुनते ही वली कंधारी क्रोधित होकर कहने लगा, "तुम मुस्लिम होकर एक हिन्दू काफिर को अपना मुरशिद मानता है? तुम्हें तो मर ही जाना चाहिए। मैं तुझ जैसे को पानी नहीं पिला सकता।" किन्तु भाई मरदाना जी शान्त रहे। उन्होंने एक बार फिर वली कन्धारी से विनम्रता पूर्वक प्रार्थना की कि हे साँई जी ! आप मुझे पानी पिला दें मैं प्यासा हूँ। प्यासे को पानी पिलाना बहुत सवाब का काम (पुण्य कार्य) है।" परन्तु वली और अधिक क्रोधित होकर कहने लगा, "यदि तुम सीधे से जाते हो तो ठीक है, नहीं तो पीट-पीट कर भगा दूंगा।" इस पर मरदाना जी निराश होकर लौट आए और गुरुदेव को पूरी घटना कह सुनाई कि वह आप का बहुत अपमान कर रहा था और मुझे गालियां दे रहा था। जैसे कि तुझे जीने का कोई अधिकार नहीं, इत्यादि।

गुरुदेव ने बहुत धैर्य से सब वार्ता सुनी और कहा, "इस में ऐसी कौन सी गलत बात है? फ़कीर साई को क्रोध आ गया होगा खैर ..... कोई बात नहीं आप एक बार फिर जाएं और उसे बहुत नम्रता पूर्वक विनती करें कि पानी पिला दें।"

गुरुदेव का आदेश मान कर भाई मरदाना जी फिर से पहाड़ी की चोटी पर पहुँचे तथा बहुत ही नम्रता पूर्वक विनती करने लगे, "हे साई जी! आप महान हैं, आप मेरी भूल की तरफ ध्यान न देकर, मुझे पानी पिला दें। अन्यथा मैं प्यास से मर जाऊँगा।" यह बात सुनकर वली कंधारी बहुत जोर से हंसा और कहने लगा, "ऐ मूर्ख जिसे तूने अपना मुरशिद (गुरू) बनाया है, उस में इतनी भी अजमत (आत्म शक्ति) नहीं जो तुझे पानी पिला दे। उस ने तुझे मेरे पास दुबारा क्यों भेजा है?" तथा डांटते हुए उस ने भाई जी को निराश वापस लौटा दिया। वापस लौटकर भाई मरदाना गुरुदेव के चरणों में लेट गए और कहने लगे, "गुरुदेव, उस ने मुझे लाख मिन्नत करने पर भी पानी नहीं पिलाया। और पीटने की धमकी देते हुए आप का भी अपमान किया। अब तो बस आप मुझे पानी पिला दें, नहीं तो मैं यहीं प्राण त्याग दूंगा।" गुरुदेव मुस्करा दिये और कहने लगे, "वह फ़कीर साई है, उस की बात का बुरा नहीं मानते। एक बार तुझको फिर उस के पास जाना ही होगा शायद उसे दया आ ही जाए।" भाई मरदाना जी न चाहते हुए भी गुरुदेव के आदेश को मानते हुए तीसरी बार पहाड़ी की चोटी पर पहुँचे और पानी के लिए नम्रता पूर्वक आग्रह करने लगे। किन्तु वली कंधारी इस बार भाई मरदाना को देखकर आग बबूला हो

उठा। उस ने एक लाठी ली और भाई जी को पीटने दौड़ा। भाई मरदाना जी यह देखकर कि वली उसे पीटने वाला है, भागकर पहाड़ी से नीचे उतरने लगे और निढाल अवस्था में गुरुदेव के चरणों पर गिर कर कहने लगे, "अब मैं प्यास से प्राण त्याग रहा हूँ। यदि आप मुझे जीवित देखना चाहते हैं तो मुझे तुरन्त पानी पिला दें।" गुरुदेव जी ने उन्हें धैर्य बंधाया और कहा, "हम आप को मरने नहीं देंगे। आप अपनी आवश्यकता अनुसार पानी पी लेना। परन्तु इस से पहले यह छोटी सी चट्टान हटानी होगी। इस के नीचे पानी ही पानी है।"

भाई जी ने तुरन्त आज्ञा मानकर चट्टान को सरकाने का प्रयत्न किया, जैसे ही वह चट्टान जरा सी सरकी तो नीचे से मीठे जल का एक चश्मा फूट निकला। भाई जी बहुत प्रसन्न हुए, उन्होंने अपनी प्यास बुझाई और फिर से कीर्तन करने में लीन हो गए।

उधर वली कंधारी को जब पानी की आवश्यकता हुई तो वह अपनी बावली पर पहुँचा। परन्तु क्या देखता है? उसकी बावली तो सूख गई थी। वहाँ पर पानी के स्थान पर कीचड़ ही कीचड़ रह गया था। यह देखकर वह बहुत परेशान हुआ और सोचने लगा, "हो सकता है उस काफिर फ़कीर की अज़मत के कारण पानी सूख गया हो।" अत: वह पहाड़ी के नीचे देखने लगा तो पता चला कि नीचे पानी के झरने बह रहे थे तथा गुरुदेव को कीर्तन में व्यस्त पाया। यह सब देखकर वह क्रोध से अंधा हो गया। उस ने कहा, "यह काफिर नापाक (अपवित्र) राग में गाता है। इसे मौत के घाट उतारना ही बेहतर होगा। इस लिए उस ने एक बड़ी चट्टान गुरू जी की तरफ धकेल दी जो कि बहुत तीव्र गति से लुढ़कती हुई गुरुदेव की तरफ बढ़ने लगी। किन्तु यह क्या? गुरुदेव ने चट्टान की भयानक आवाज सुन कर अपना हाथ उस ओर कर दिया, मानो कह रहे हो, "हे चट्टान रुको।" बस फिर क्या था, वह चट्टान नीचे आते-आते धीमी गति में चली गई और अन्त में गुरुदेव के हाथ से स्पर्श कर वहीं खड़ी हो गई।

इस दृश्य को देखकर वली कंधारी कौतूहल वश परेशान हो उठा। वह सोचने लगा कि कहीं उस से भूल हो गई है? अत: उसे एक बार इस फ़कीर को ज़रूर मिलना चाहिए। यह विचार कर वह पहाड़ी से नीचे उतरा और गुरू जी की शरण में आ गया।

गुरुदेव ने उसे कहा, "करते हो इबादत परन्तु उस ख़ालक की ख़लकत को दो घूट पानी भी अल्लाह के नाम पर नहीं पिला सकते। फ़कीरी क्या? और नफरत क्या? फ़कीर होकर दिल में इतना मतभेद? यह मोमन है वह काफिर है? हर एक इन्सान में उस खुदा का नूर तुम्हें दिखाई नहीं देता तो इबादत कैसे परवान चढ़ेगी?" यह बातें सुन वली कंधारी का सारा अभिमान जाता रहा। और उसने गुरुदेव से क्षमा याचना की। गुरुदेव ने उसे उपदेश देते हुए कहा, "बाकी के जीवन में खालक को खलकत में ढूंढो और इबादत के साथ-साथ सेवा भी किया करो, जिस से अभिमान (अहं भाव) इन्सान को उसके लक्ष्य से विचलित नहीं कर सकता।"

सदा रहन-सहन पर बल- (रावल पिंडी नगर, पंजाब)

श्री गुरू नानक देव जी हसन अबदाल (पंजा साहब) से प्रस्थान कर पंजाब की तरफ बढ़ते हुए रावल पिंडी नगर में पहुँचे। यह नगर उन दिनों भी उत्तरी पंजाब का बहुत बड़ा व्यापारिक केन्द्र था। वहां जाने के लिए वहां से ही रास्ता आगे जाता था। आवागमन तथा व्यापारिक सुख सुविधा होने के कारण वहाँ की आर्थिक दशा बहुत अच्छी थी। अधिकांश लोग धनी थे, अत: रहन-सहन बहुत ऊँचे स्तर का था। गुरू जी नगर के बाहर मुख्य सड़क पर जब एक बरगद के वृक्ष के नीचे कीर्तन में लीन हो गए तो वहाँ पर राहगीरों की भीड़ इकट्ठी हो गई। वे सब आनंद विभोर हो रहे थे तथा मधुर संगीत के आकर्षण के कारण आगे नहीं बढ़ पा रहे थे। तभी काशमीर की सैर कर लौट रहे एक बड़े सेठ ने जब भीड़ को देखा तो उस ने अपने इक्के (टांगा) को रुकने का आदेश दिया, और पूछा वहाँ भीड़ क्यों है? इस के उत्तर में एक श्रोता ने बताया कि कोई फ़कीर मस्ती में गा रहा है, जिस का आनंद राहगीर उठा रहे हैं। यह सुनते ही इक्के से उतर कर भीड़ को चीरते हुए सेठ आगे बढ़ता हुआ गुरुदेव के पास पहुँचा और चरण स्पर्श कर बैठ गया। कीर्तन की समाप्ति पर भीड़ के छंटते ही उस ने गुरुदेव से कहा, "मैं कश्मीर की सैर से लौट रहा हूँ। वहाँ पर मैं जहां-जहां भी गया हूँ वहां पर घर-घर कीर्तन द्वारा हरि यश करने की चर्चा सुनता रहा हूँ। अत: मेरे हृदय में आप के दर्शनों की तीव्र अभिलाषा उत्पन्न हो गई थी। अब मैं अपने आप को भाग्यशाली मानता हूँ कि मुझे

सहज ही में आप के दर्शन करने का अवसर प्राप्त हुआ है, तथा वह गुरुदेव से अनुरोध करने लगा, "कृपया आप मेरे घर चलें, और मुझे सेवा का अवसर प्रदान कर कृतार्थ करें। गुरुदेव ने उस के हृदय की सच्ची भावना देखी तो इन्कार नहीं कर सके। उस की हवेली में पहुँचे। यह सेठ, यहाँ का एक बड़ा उद्योगपति था। नगर के कुछ गिने चुने कुलीन परिवारों मे सें एक होने के नाते मान्यता बहुत थी। इस लिए जल्दी ही समस्त नगर में समाचार फैल गया कि सेठ जी के यहाँ कोई महापुरुष आये हैं जो कि मनुष्य को उचित जीवन जीने का ढंग सिखाते हैं जिस से मनुष्य की समस्त कठिनाइयां दूर हो जाती हैं। इस समाचार के फैलते ही दर्शनार्थी लोगों का तांता लग गया, जिस के कारण सेठ ने हवेली के प्रांगण में मंच लगाया जहां गुरू जी ने जन समूह के समक्ष कीर्तन करना प्रारम्भ कर दिया। आप उच्चारण करने लगे–

सचु सभना होइ दारू पाप कढै धोइ ॥

नानकु वखाणै विनती जिन सचु पलै होइ ॥

राग आसा, पृष्ठ 468

कीर्तन के पश्चात् गुरुदेव ने संगत को सम्बोधन करके कहा, "हे भक्तजनों मनुष्य को अपने आचरण को उज्ज्वल करने के लिए जीवन को सत्य के मार्ग द्वारा तय करना चाहिए।" इस से सभी प्रकार की समस्यायों का समाधान स्वयं ही हो जाता है। पहले–पहल कुछ कठिनाइयां अवश्य दिखाई देती हैं। परन्तु धीरे–धीरे सब सामान्य हो जाता है, क्योंकि प्रभु ही सत्य है जो कि इस मार्ग पर चलते समय सहायता करता है।"

प्रवचनों के पश्चात् सेठ जी द्वारा भोजन व्यवस्था में बहुत स्वादिष्ट व्यंजन परोसे गए जिसे देख कर गुरू जी कह उठे–

बाबा होरु खाणा खुसी खुआरु ॥

जितु खाधै तनु पीडीऐ मन महि चलहि विकार ॥

राग सिरी, पृष्ठ 16

गुरुदेव कहने लगे, "भोजन, केवल शरीर को स्थिर रखने के लिए करना चाहिए न कि ऐसा भोजन करें जिस के सेवन से मन में विकार उत्पन्न हो। सादा भोजन ही

मनुष्य को चिरजीवी तथा स्वस्थ रखता है। केवल जीभ के स्वादों के चक्र में पड़कर भोजन करने के लिए जीयेंगे तो अपना अमूल्य जीवन नष्ट करने के अतिरिक्त कुछ नहीं पायेंगे।" इस प्रकार गुरुदेव प्रत्येक विषय पर अपनी विचारधारा समय-समय पर देने लगे। कुछ दर्शनार्थियों ने गुरुदेव के सम्मुख बहुमूल्य वस्त्र भेंट किए जिसे देखकर गुरुदेव कह उठे-

बाबा होरु पैनणु खुसी खुआरु ॥

जितु पैधे तनु पीड़ीऐ मन महि चलहि विकार ॥ 1 ॥ रहाउ ॥

राग सिरी, पृष्ठ 16

गुरुदेव ने कहा-हे सत पुरुषो ! हमे अपने खान-पान का ध्यान अवश्य ही रखना चाहिए, कहीं ऐसा न हो कि हम वह वस्त्र धारण करें जिस से मन में विकार उत्पन्न हो और मन एकाग्र होने के स्थान पर चंचल प्रवृति वाला हो जाए।

गुरुदेव जेहलम (बाल गुदाई) क्षेत्र में

श्री गुरू नानक देव जी रावल पिंडी से प्रस्थान कर के जिला जिहलम के एक टीले पर पहुँचे। यहाँ एक योगी संप्रदाय का आश्रम था, जिस के महन्त श्री बालक नाथ जी थे। लोग इन को बाल गुदाई के नाम से सम्बोधन करते थे। आप जी अतिथि सत्कार पर बहुत ध्यान देते थे। आश्रम से किसी को निराश नहीं जाने देते थे। जब इन को ज्ञात हुआ कि आश्रम के निकट ही कुछ फ़कीर निर्जन स्थान पर बैठे कीर्तन कर रहे हैं तो इन्हें आश्चर्य हुआ। उसी समय इन्होंने एक सेवक को भेजकर गुरू बाबा जी को अपने यहाँ बुलाने के लिए भेजा। परन्तु गुरुदेव इन का निमन्त्रण अस्वीकार कर दिया। यह जानकारी प्राप्त होते ही वह स्वयं गुरू जी का स्वागत करने पहुँचे और प्रार्थना करने लगे कि आप कृपया हमारे आश्रम में पधारें और हमें कृतार्थ करें। गुरुदेव कहने लगे, "हमें यहाँ कोई कष्ट नहीं। हम अतीत साधु हैं, हम साधनों के अभाव में भी सामान्य जीवन कुशलता से जीने के अभ्यस्थ है। किन्तु बाल गुदाई जी हठ करने लगे कि आप हमें सेवा का अवसर प्रदान करें। उन की अपार श्रद्धा देखकर गुरुदेव ने उन का आग्रह स्वीकार कर लिया।

आश्रम में बाल गुदाई जी ने गुरुदेव की अपने हाथों से सेवा प्रारम्भ कर दी तथा आप जी के समक्ष कुछ आध्यात्मिक जीवन में उत्पन्न होने वाली बाधाओं के विषय में शंकाएं रखीं। पूछने लगे कि भव-सागर किस विधि पार किया जा सकता है? उत्तर में गुरुदेव ने कहा, 'केवल अपनी सुरति निराकार पारब्रह्म परमेशर (दिव्य-ज्योति) में एकाग्र कर के आराधना करने पर प्राप्ति होती है। इस के लिए हठ योग के आसन या जप-तप, संयम इत्यादि क्रियाओं की कोई आवश्यकता नहीं, क्योंकि फलीभूत तो आप के ध्यान को ही होना है, जो कि सहज अवस्था में प्रत्येक प्राणी मात्र कर सकता है।'

जप तप संजम करम न जाना नामु जपी प्रभ तेरा ॥
गुरु परमेसरु नानक भेटिओ साचे सबदि निबेरा ॥
राग रामकली, पृष्ठ 878

आध्यात्मिक दुनियां का मुख्य सूत्र प्राप्त कर बाल गुदाई जी अति प्रसन्न हुए तथा उन्होंने गुरुदेव से दीक्षा ली। बाकी का जीवन हठयोग त्याग कर सहज जीवन जीने का निर्णय लेते हुए सेवा सिमरण में जुट गए।

गुजरात नगर – (प० पंजाब)

श्री गुरू नानक देव जी जिला जेहलम से आगे बढ़े और जिला गुजरात में पहुँच गये। वहाँ पर जय-सुख नामक गांव में एक साधू रहता था जिस का नाम केर भाग था। साधना करने पर उस को कुछ सिद्धि की प्राप्ति हो गई, जिस से वह जन-साधारण पर अपना प्रभाव स्थापित करने के लिए, अपना चमत्कारी रूप दिखाता था। जिस से वहाँ पर उन की बहुत मान्यता होने लगी थी। वह कभी-कभी किसी व्यक्ति विशेष पर प्रकोप के कारण, उसे भस्म कर देने की धमकी भी देता था, अन्यथा अनिष्ट कर उसे हानि भी पहुँचाता था। इस कारण पूरे क्षेत्र में जनता उस के भय से सहमी हुई थी कि साधु केर भाग कहीं नाराज न हो जाये। इस लिए अधिकांश लोग उस को खुश करने के लिए उपहार भेंट करते रहते थे। उस क्षेत्र में प्रवेश करने पर, गुरुदेव को इस विषय में

जानकारी मिली कि वहां पर एक साधु ने चमत्कारी आतंक मचा रखा है। स्थानीय लोग भय के कारण अंध विश्वासी बनते जा रहे हैं। इस बात को लेकर गुरुदेव को चिन्ता हुई कि एक साधु अपने मूल लक्ष्य से भटक गया है तथा प्रभु की दी हुई शक्तियों का दुरोपयोग कर समाज में भय उत्पन्न कर रहा है। जब कि साधु सन्तों का आचरण ऐसा होना चाहिए, जिस से समस्त समाज को लाभ ही लाभ हो। गुरुदेव जी उस को मिलने के लिए पहुँचे। परन्तु वह तो गुरुदेव को भी चुनौती देने लगा था, "मैं आप को तब जानूंगा जब आप मुझे चमत्कारी शक्तियों से पराजित कर देंगे।" ऐसे में गुरुदेव जी शान्तचित होकर कीर्तन में लीन हो गए तथा उस के अंह रोग को दूर करने के लिए बाणी उच्चारण करने लगे–

आतम महि रामु राम महि आतमु चीनसि गुर बीचारा ॥

अंम्रित बाणी सबदि पछाणी दुख काटै हउ मारा ॥

नानक हउमै रोग बुरे ॥

जह देखां तह एका बेदन आपे बखसै सबदि धुरे ॥ 1 ॥ रहाउ ॥

राग भैरउ, पृष्ठ 1153

गुरुदेव ने अपने प्रवचनों में संगत से कहा, "जब साधक के हृदय में अपनी साधना के बल का अभिमान आ जाए तो समझ लेना चाहिए प्रभु उस से अप्रसन्न हैं क्योंकि प्रभु उस साधक की परीक्षा लेने के लिए उसे अभिमान रूपी रोग प्रदान कर रहे हैं। जब तक साधक अपने हृदय से अहंभाव अर्थात अभिमान (हउमै) निकाल कर बाहर नहीं करता तब तक प्रभु मिलन में यह हउमै दीवार के रूप में विद्यमान रहती है। जब साधक अंहभाव त्याग कर नम्र हो जाता है तब आत्मा परमात्मा का मिलन होता है। अर्थात अंहभाव की दीवार टूट जाती है जो कि मिलन में बाधक है।"

केर भाग तपी इस तरह इन प्रवचनों तथा शब्द की 'चोट खाने से' गुरुदेव के चरणों में आ गिरा और क्षमा याचना करने लगा। गुरुदेव ने उसे कहा आत्म बल का प्रयोग बिना कारण करना प्रकृति के कार्यों में हस्तक्षेप करना है जिस से आत्मिक उन्नति रुक जाती है जब कि सभी प्राप्तियां नम्रता में ही फलीभूत होती हैं।

पीर हम्जा गौस स्यालकोट नगर – (प० पंजाब)

श्री गुरू नानक देव जी, वहां से पंजाब के स्यालकोट नगर में पहुँचे। नगर के निकट में एक घनी छायादार बेरी का वृक्ष था। उस के नीचे डेरा डाल कर गुरुदेव कीर्तन में व्यस्त हो गए। परन्तु अधिकांश लोग नगर को अपने सामान सहित छोड़कर बाहर जाते दिखाई दिये। पूछने पर पता चला कि हम्जा गौस नामक सूफ़ी फ़कीर नगर को तबाह करने के लिए चिल्ला (40 दिन का उपवास करते हुए तपस्या करना) काट रहा है। जिस का समय कल दोपहर को पूर्ण होने जा रहा है। वह सामने जो मस्जिद नुमा गुबंद है, उस का आश्रम भी वहां पर ही है। नगर के विनाश की बात सुनकर, वह भी एक फ़कीर द्वारा, गुरुदेव गम्भीर हो गए। तभी कुछ स्थानीय कुलीन पुरुषों ने आप के पास विनती की कि आप भी प्रभु में अभेद महापुरुष दिखाई देते हैं, अत: आप इस विषय में समय रहते कुछ करें जिस से विपदा से छुटकारा मिले और सभी का कल्याण हो। गुरुदेव ने भाई मरदाना जी को हम्ज़ा गौंस के आश्रम में यह संदेश देकर भेजा कि गुरू जी उस फ़कीर से मिलना चाहते है। भाई मरदाना जी के वहाँ पहुँचने पर उस के मुरीदों ने कहा कि पीर जी के कड़े आदेश हैं कि चिल्ला समाप्त होने से पहले उन से कोई भी सम्पर्क न किया जाए, क्योंकि ऐसे में चिल्ले में बाधा पड़ सकती है। परन्तु गुरुदेव ने अपना संदेश पुन: भेजा कि उन का फ़कीर साई से मिलना अति आवश्यक है, अत: समय रहते वह एक बार मिलने की व्यवस्था अवश्य करें। इस बार भी उस के मुरीदों ने भाई जी को वापिस निराश ही लौटा दिया। वे कहने लगे उन्हें तो अपने पीर जी के आदेश पर पहरा देना है। अत: वे इस संदेश को किसी प्रकार भी उन तक नहीं पहुँचा सकते। तीसरी बार गुरुदेव ने भाई जी के हाथ संदेश भेजा कि उनका संदेश पीर जी तक अवश्य ही पहुँचाएं, अन्यथा उस के चिल्ले में अल्लाह की तरफ से बाधा उत्पन्न होगी क्योंकि अल्लाह अपनी ख़लकत को बर्बादी से बचाने का कोई उपयुक्त उपाय जरूर करेगा। पीर जी के मुरीदों ने संदेश को सुनकर उस पर कोई प्रतिक्रिया नहीं की। भाई जी वापस लौट आए। दूसरे दिन ठीक दोपहर को उस कमरे का गुम्बद एक तेज तूफान के वेग से धमाके के साथ टूट कर नीचे जा गिरा। जिस से कमरे मे सूर्य के तेज प्रकाश से पीर जी की

इबादत मे खलल पड़ गई। इस प्रकार उस का चिल्ला सम्पूर्ण होने से पहले ही बाधा उत्पन्न होने के कारण समाप्त हो गया। वह भयभीत होकर इबादत गाह से बाहर आया और मुरीदों से पूछने लगे। यह क्या हुआ है और कैसे हो गया है? इस पर मुरीदों ने गुरुदेव के संदेशों के विषय में विस्तार पूर्वक बताया कि वे (गुरू जी) आप से चिल्ला सम्पूर्ण होने से पहले मिलना चाहते थे जिस से नगर को नष्ट होने से बचाया जा सके। पीर जी ने तब गुरुदेव के बारे में जानकारी प्राप्त की और पूछा वे इस समय कहाँ है? मुरीदों ने उत्तर में बताया कि वे सामने बेरी के वृक्ष के नीचे बैठे, जनता के बीच कुछ गाना बजाना करते रहते हैं। पीर हम्ज़ा गौंस तब अपनी पालकी पर सवार हो कर गुरुदेव के पास पहुँचा। अभिवादन के पश्चात् बैठ कर पूछने लगा, "आप ने मुझे संदेश भेजा था अत: मैं हाजिर हो गया हूँ।"

गुरुदेव ने तब उन पर प्रश्न किया, "क्या ख़ालक की ख़लकत को सुख देना पीर, फ़कीरों का काम है या दुख देकर उन को बर्बाद करना?"

इस का उत्तर पीर जी को नहीं सूझा। वह कहने लगा, "यह सारा नगर नाशुकों (अकृतध्न) का है इस लिए इसे बर्वाद होना ही चाहिए।"

इस पर गुरुदेव ने कहा, "आप को कैसे मालूम हुआ कि यहाँ पर अल्लाह का खौफ़ रखने वाला कोई नहीं?"

इस पर पीर जी कहने लगे, "सभी के सभी ऐसे ही हैं। यदि यकीन न आए तो नगर का सर्वेक्षण करवा कर देख लें। इस पर गुरुदेव ने भाई मरदाना जी को एक युक्ति द्वारा मगमण एवं निरीदाण के लिए भेज दिया तथा कहा, "बाजार से एक पैसे का सत्य तथा एक पैसे का मिथ्या (झूठ) खरीद कर लाओ।"

भाई मरदाना जी जब बाजार चले गए तब पीर जी कहने लगे, "बात दरअसल यह थी कि यहाँ का एक व्यापारी मेरे पास पुत्र प्राप्ति की कामना लेकर आता था। अत: मैंने उस से एक वादा लिया था कि उसके यहाँ दो पुत्र होंगे उन में से एक मुझे भेंट में देना होगा। वह उस समय सहर्ष मान कर, पुत्र प्राप्ति का वरदान ले गया था। परन्तु जब उस के यहाँ दोनों सन्तानें हो गई तो उस ने मुझे एक भी बेटा देने से साफ इन्कार कर दिया। अत: यहाँ सब बेईमान ही रहते हैं।"

इस पर गुरुदेव ने कहा, "यह सब ठीक है परन्तु आप ने इस के पीछे का कारण जानने की कोशिश की है कि यह वायदा खिलाफी क्यों हुई?" पीर जी कहने लगे, "इन बातों से मुझे कोई सरोकार नहीं।" इस पर गुरुदेव ने कहा, "आप, वास्तव में मां की ममता को नहीं जानते। वह चाहती हुई भी बच्चे को किसी भी कीमत पर अपने से अलग नहीं कर सकती। अतः यहाँ पर ममता की मजबूरी रही है। जबकि आप को निस्वार्थ होकर अपने भक्तों की मनोकामनाएं पूर्ण करनी चाहिए थी।" पीर जी को अपनी भूल का एहसास हो गया। दूसरी तरफ भाई मरदाना जी नगर के प्रत्येक दुकानदार से एक पैसे का सत्य तथा एक पैसे का मिथ्या खरीदने के लिए पूछताछ करते रहे परन्तु नगर में किसी ने भी वह सौदा न खरीदा था न बेचा था। अतः वे सब इस आश्चर्य जनक सौदे को समझ ही नहीं पाते थे। अन्त में सौदे के इस रहस्य को मूल चन्द नामक एक युवक ने समझा और उसने दोनों पैसे लेकर एक कागज पर तुरन्त लिख दिया कि जीवन मिथ्या है तथा मृत्यु सत्य है। गुरू जी ने कागज का वह टुकड़ा पीर जी के सामने प्रस्तुत किया और कहा, "देखो यह बात वही लिख सकता है जो सदैव प्रभु के खौफ में रहता है। प्रत्यक्ष को प्रमाण की आवश्यकता नहीं, इस लिए गुरुदेव ने कहा, "परिस्थितियां व्यक्ति को कभी-कभी मजबूर कर देती है। जिस से वह गलत साबित हो जाता है, वास्तव में सभी बेइमान नहीं होते। अच्छे-बुरे सभी प्रकार के लोग प्रत्येक स्थान पर पाए जाते हैं। यही प्रकृति का विधान है।" हम्ज़ा गौंस ने गुरुदेव के चरणों मे गिर कर क्षमा मांगते हुए कहा, "आप ने मुझ पर बहुत बड़ा उपकार किया है जो मुझे एक बहुत बड़ी भूल करने से बचा लिया है। अन्यथा न जाने कितने निर्दोष लोग मेरी वजह से बिना कारण मारे जाते।" गुरुदेव ने उन्हें निस्वार्थ होकर ख़लकत की सेवा करने की प्रेरणा दी।

युवक मूल चन्द, जिस के विवाह का दिन निश्चित हो चुका था, वह गुरुदेव का ऐसा भक्त बना कि कहने लगा, "हे गुरुदेव मुझे भी सदैव अपने चरणों में ही रखें, जहां जाए मुझे साथ ले चलें।" गुरुदेव ने उसे बहुत समझाया कि उनके साथ रहने पर जीवन में बहुत कष्ट झेलने पड़ सकते हैं क्योंकि हर समय परिस्थितियां एक सी नहीं रहती परन्तु मूलचन्द नहीं माना। वह कहने लगा, "मुझे सब कुछ स्वीकार होगा" और वह गुरुदेव के साथ चल पड़ा।

दन्त कथा दुर्गा देवी– (कटड़ा कस्बा, जम्मू क्षेत्र)

श्री गुरू नानक देव जी स्यालकोट से अख़नूर होते हुए कटड़ा नाम के कस्बे में पहुँचे। वहाँ पर उन दिनों भी वैष्णव देवी की मान्यता ऐसी ही थी जैसे कि आजकल है। गुरुदेव को स्थानीय लोगों ने उस स्थान के विषय मे किंवदन्तियां सुनाई कि एक समय था जब महिलाएं अपनी परम्परा अनुसार प्रतिदिन मवेशियों के लिए चारा अथवा ईंधन की लकड़ियां इत्यादि लेकर पहाड़ी से स्नान आदि कर लौटती थी। एक दिन की बात है कि एक कुलीन परिवार की एक अति सुन्दर युवती जिस का नाम दुर्गा था अपनी सखियों के साथ लौटते समय स्नान कर रही थी कि स्थानीय जमींदार का बिगड़ा हुआ लड़का, जिस का नाम भैरव था, अपने मित्रों के साथ शिकार खेलताहुआ वहाँ पर पहुँचा। यह युवक धन की अधिकता के कारण चंचल प्रवृति का स्वामी था। उस का एक मात्र ध्येय ऐश्वर्य का जीवन जीना था। अत: वह प्रत्येक क्षण सुरा–सुन्दरी के लिए लालायित रहता था। जब उस ने उन युवतियों को नदी में स्नान करते देखा तो उस से रहा न गया और वह युवतियों के पीछे हो लिया। दुर्गा ने उसे चुनौती दी, "तुम हमारे निकट न आना वरना हम तुम्हें अपनी दरांती से काट फेकेंगी।" परन्तु काम चेष्टा में अंधा भैरव कहाँ मानने वाला था, वह तो युवती दुर्गा के रूप का रस्वादन करना चाहता था। अत: उस ने चुनौती स्वीकार कर ली और बोला, "मैं गीदड़ धमकियों से डरने वाला नहीं।" इस पर कोई चारा न देखकर युवती दुर्गा भयभीत अवस्था में हाथ में दरांती ले कर पहाड़ी के ऊपर भाग खड़ी हुई। यह देखकर युवक भैरव घोड़े से उतरा और उस के पीछे हो लिया।"

इस प्रकार वह युवक, भैरव काम वासना के लिए युवती दुर्गा का पीछा करने लगा। आगे–आगे युवती दुर्गा और पीछे–पीछे भैरव, पहाड़ी चढ़ते ही गए, परन्तु दुर्गा को पकड़ने में वह सफल न हो सका तभी पहाड़ी के मध्य एक चट्टान में एक गुफा नुमा संकरी सुरंग थी जिस में युवती दुर्गा ने छिपकर शरण ली। परन्तु भैरव भी धुन का पक्का था वह कहाँ मानने वाला था। उस ने खोजते–खोजते दुर्गा को आखिर ढूंढ ही लिया। उस ने दुर्गा को पीछे से जाकर दबोचा। परन्तु चतुर दुर्गा तीव्र गती से दूसरे रास्ते से बाहर निकलने में सफल हो गई और फिर से पहाड़ी की शिखर की तरफ भाग खड़ी हुई। भैरव

भी कंदरा से बाहर निकला और फिर से पीछा करने लगा। दोनों भागते–भागते पहाड़ी के शिखर से होते हुए उस पार एक बड़ी चट्टान पर जा पहुँचे, और दोनों का आमना–सामना हुआ। भैरव ने कहा, "तुम भागो नहीं मैं तुम्हें हमेशा के लिए अपना बना लूंगा। मैं तुम से विवाह करना चाहता हूँ।" दुर्गा ने उत्तर में कहा, "मैं तुम्हें भली भान्ति जानती हूँ, तुमने कई स्त्रियों का सतीत्व भंग किया है तथा कई युवतियों को झांसा देकर उन को पतित किया है। मैं तुम्हारे छलावे में आने वाली नहीं।" भैरव ने भगवान को साक्षी मान कर शपथ लेते हुए कहा, "मैं इस बार सच कह रहा हूँ कि मैं तुम से विवाह करना चाहता हूँ।" उत्तर में युवती दुर्गा ने कहा, "मैं तुम से किसी भी कीमत पर विवाह नहीं करना चाहती क्योंकि तुम मांस–मदिरा का सेवन करते हो तथा दुराचार करना तुम्हारा कर्म है। इस लिए मैं किसी कुकर्मी से कोई सम्बन्ध नहीं बनाना चाहती।" इस कड़वे सत्य को सुनकर भैरव आखरी दाव के लिए युवती दुर्गा पर झपटा। परन्तु युवती दुर्गा सावधान थी। उस ने तुरन्त अपनी दरांती पूरे वेग से भैरव की गर्दन पर दे मारी, बस फिर क्या था, जमींदार के पुत्र भैरव की गर्दन उसी क्षण धड़ से अलग हो गई और वह वहीं ढेर हो गया।

इस अनचाही हत्या को देखकर युवती दुर्गा भयभीत हो गई और प्रशासन की तरफ से दण्ड मिलने की अशंका से वह कांपने लगी। कोई चारा न देखकर छिपने के विचार से निकट ही एक गुफा में जा कर शरण ले ली।

युवती दुर्गा ने एकान्तवास के समय में सर्वशक्तिमान प्रभु की आराधना प्रारम्भ कर दी, "हे प्रभु! मेरी रक्षा करें। मैंने यह हत्या किसी नीच विचार के कारण नहीं की। सच्चे हृदय तथा एकान्त हो कर की।" प्रभु चरणों में प्रार्थना स्वीकार हुई और युवती दुर्गा को वरदान के रूप में तेज प्रताप प्राप्त हुआ। उधर गांव निवासी भी युवती दुर्गा को खोजते–खोजते वहाँ पहुँचे, जहां दुर्गा ने शरण ले रखी थी। सभी बुजुर्गों ने दुर्गा को बाहर आने को कहा परन्तु वह मान नहीं रही थी। तब उसे अधिकारी वर्ग की तरफ से आश्वासन दिया गया कि उसे कुछ नहीं कहा जाएगा क्योंकि वह हत्या उसने आत्म रक्षा तथा आत्म गौरव के लिए की है। अत: वह अपराध, अपराध नहीं उसका अधिकार था। इस आश्वासन पर दुर्गा ने आत्म समर्पण कर दिया। प्रशासन की ओर से मुकदमा चलाया गया, जिस में न्यायधीश ने युवती दुर्गा को सम्मान पूर्वक स्वतन्त्र करते हुए अपनी ओर

से प्रसन्नता व्यक्त करते हुए कहा, "इस युवती ने जो वीरता का उदाहरण प्रस्तुत किया है वह स्वर्ण अक्षरों से लिखा जाएगा। दुर्गा एक ऐसी वीरांगना है जिस पर सभी गर्व कर सकते हैं। उस ने एक दुष्ट को समाप्त कर इस क्षेत्र को बुराई से मुक्ति दिलवाई है, इस लिए यह मां तुल्य है।"

इस प्रकार दुर्गा के शरण स्थल को उस की याद मे पूजा जाने लगा। समय व्यतीत होने के साथ-साथ मान्यताएं भी बदलने लगी। इस वृतांत को सुनकर गुरुदेव ने कहा, "इस महान नारी के चरित्र से जन-साधारण को शिक्षा लेनी चाहिए। कम से कम वे लोग जो यहाँ इन्हें अपना इष्ट मान कर तीर्थ यात्रा के लिए आते हैं उन्हें तो इस घटना क्रम से प्रेरणा लेनी चाहिए कि अपने आत्म गौरव के लिए नारी रण चंडी बनकर दुष्टों का दमन कर सकती है। भले ही उसे इस संघर्ष में कितनी विपत्तियों का सामना करना पड़े। उन्हें विलासिता का जीवन नहीं जीना चाहिए क्योंकि युवती दुर्गा मांस, मदिरा का सेवन करने वालों से अति घृणा करती थी।" अत: गुरुदेव ने सभी यात्रियों को उपदेश दृढ़ करवाने के लिए अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा, "मानव को प्रत्येक स्थान से गुण ग्रहण करने चाहिए तथ अवगुण त्याग कर उज्ज्वल जीवन जीना सीखना चाहिए।"

गुणा का होवै वासुला कढि वासु लईजै ॥
जे गुण होवनि साजना मिलि सांझ करीजै ॥
सांझ करीजै गुणह केरी छोडि अवगण चलीऐ ॥
पहिरे पटंबर करि अडंबर आपणा पिड़ु मलीऐ ॥
जिथै जाइ बहीऐ भला कहीऐ झोलि अम्रितु पीजै ॥
गुणा का होवै वासुला कढि वासु लईजै ॥ राग सूही, पृष्ठ 765

गुरुदेव ने प्रवचनों में कहा, "जिज्ञासु को सदैव ध्यान में रखना चाहिए कि वह साधना किसी व्यक्ति विशेष की न कर निरगुण स्वरूप सत्यचित आनंद की करनी चाहिए क्योंकि व्यक्ति का शरीर नाशवान है तथा मानव होने के नाते उस में शारीरिक कमजोरियां होती हैं। अत: 'शब्द गुरू' से सम्बन्ध स्थापित कर उसको अपना जीवन उज्ज्वल करना चाहिए।"

रघूनाथ मन्दिर – (जम्मू नगर, कशमीर)

श्री गुरू नानक देव जी की विचारधारा से प्रभावित लोगों ने गुरू जी से अनुरोध किया कि वे कस्बा कटड़ा में उनके नगर जम्मू में भी पधारें जिस से वहाँ पर भी अंध विश्वास तथा कुरीतियों के प्रति समाज में चेतना लाई जा सके। जम्मू नगर मे राजा जसवंत सिंह द्वारा निर्मित राजकीय 'रघुनाथ मन्दिर' में रूढ़ीवादी विचारधारा को बढ़ावा दिया जा रहा था, जिस से जनता अंधविश्वास में जकड़ती चली जा रही थी। परिणाम स्वरूप जन-जीवन भ्रामक हो रहा था। गुरुदेव ने नगर के मुख्य द्वार 'गुम्मट' के निकट आसन लगाया और कीर्तन प्रारम्भ किया–

दुबिधा दुरमति अंधुली कार ॥
मन मुखि भरमै मझि गुबार ॥ 1 ॥
मनु अंधुला अंधुली मति लागै ॥
गुर करणी बिनु भरमु न भागै ॥ 1 ॥ रहाउ ॥
मनमुखि अंधुले गुरमति न भाई ॥
पसू भए अभिमानु न जाई ॥ 2 ॥ राग बसंत, पृष्ठ 1190

'गुम्मट' द्वार, नगर का मुख्य केन्द्र था। वहाँ पर गुरू जी की 'बाणी' श्रवण करने के लिए विशाल भीड़ इकट्ठी हो गई। शब्द की समाप्ति पर गुरुदेव ने कहा-प्राणी को दुविधा में नहीं जीना चाहिए क्योंकि दुविधा के कर्म को कोई फल नहीं लगता, इस लिए दृढ़ता से निश्चित होकर, अंध-विश्वासों से छुटकारा प्राप्त करना अनिवार्य है नहीं तो हमारा परीश्रम व्यर्थ जाएगा।

यह बातें सुनकर बहुत से लोगों ने जिज्ञासा व्यक्त की कि वे क्या शिक्षा देना चाहते हैं? इस पर गुरुदेव ने कहा, "आप वास्तव में सर्वशक्तिमान को आराधना चाहते हैं परन्तु उस के लिए साधन के रूप में एक मूर्ति अपने और प्रभु के बीच स्थापित कर ली है। जिस के द्वारा आप प्रभु में लीन होना चाहते हैं किन्तु ऐसा होता नहीं है। आरम्भ

में तो मूर्ति पूजक अपने आराध्य को स्मरण करने मात्र के लिए उसकी मूर्ति बनाता है। किन्तु मूर्ति पूजन से जीवन में धीरे-धीरे ऐसी अवस्था आ जाती है जब वह मूर्ति को साधन के बदले साध्य मानने लग जाता है। इस प्रकार वह अपने रास्ते से भटक जाता है और उस का परीश्रम फलीभूत नहीं होता। अत: समय रहते आरम्भ में ही सावधानी से अपने इष्ट की आराधना 'दिव्य ज्योति' मान कर करनी चाहिए जिस से चूकने का प्रश्न ही समाप्त हो जाता है।"

सूफी फ़कीर मीयां मिट्ठा जी– (पसरूर नगर, पंजाब)

श्री गुरू नानक देव जी जम्मू से वापस लौटते समय पसरूर नगर में पहुँचे। वहाँ एक बहुत प्रसिद्ध सूफी फ़कीर मीयां मिट्ठा जी रहता था। उसने गुरुदेव की बहुत कीर्ति सुन रखी थी, उस के मन में अभिलाषा थी कि कभी गुरू नानक देव से आमना सामना हो जाए तो वह उन से आध्यात्मिक शक्ति परीक्षण करेगा। यदि उसका बस चला तो विचार गोष्ठी में उन्हें पराजित भी करेगा।

गुरुदेव तब पसरूर के पास कोटला गांव में एक उद्यान में जा बैठे और कीर्तन में लीन हो गए। मीयां मिट्ठा जी को जब यह ज्ञान हुआ कि उसकी इच्छा अनुसार नानक देव जी वहाँ पधारे हुए हैं तो वह सोचने लगा कि नानक जी यहाँ तक तो चले आए हैं। अब उसको उन के आसन तक जाना चाहिए, ऐसा विचार कर वह प्रतिद्वन्दी की दृष्टि से गुरुदेव के समक्ष पहुँचा। गुरुदेव ने उस का स्वागत किया। इस पर मीयां मिटठा जी ने गुरुदेव से पूछा आप किस मुकाम पर पहुँचे हैं? गुरुदेव ने बहुत धैर्य से उत्तर दिया, "अल्लाह के फज्ज़ल से इबादत कर रहे हैं उम्मीद है बरकत जरूर पड़ेगी और इबादत कबूल हो जाएगी।"

इस पर मीयां मिटठा जी ने कहा, "बन्दगी तब कबूल होती है जब रसूल पर ईमान लाया जाए।"

पहला नाउ खुदाइ का दूजा नवी रसूल ॥

ऐसा कलमा जि कहि दरगह पवहि कबूल ॥ (जन्म सारवी)

उत्तर में गुरुदेव ने कहा, "आप की पहली बात तो ठीक है अव्वल नाम खुदा का ही है परन्तु यह बात गलत है कि दूसरा स्थान नवी अथवा रसूल का है। वास्तव में खुदा के दर पर तो अनेक नबी, रसूल (मुहम्मद साहब) खड़े हैं। खुदा को मिलन के लिए कलमा पढने के स्थान पर अपनी नियत रास करनी चाहिए और प्रेम तथा श्रद्धा से खुदा की स्तुति करनी चाहिए।

अवल नाउ खुदाइ दा दर दरबान रसूल ॥

सेखा नीअत रासि करि दरगह पवहि कबूल ॥ (जन्म सारवी)

इस युक्ति संगत को तर्क सुनकर फ़कीर मीयां मिटठा निरूत्तर हो गया और उस को गुरुदेव पर श्रद्धा बन आई। उसने कुछ अन्य विषयों पर आध्यात्मिक विचार विर्मश किया और संतुष्ट होकर गुरू जी के चरणों में शीश झुका दिया, अन्त में वह बोला, "मैं सोचता था कि लोग आप की बड़ाई वैसे ही बढ़ा-बढ़ा कर करते रहते है परन्तु प्रत्यक्ष में ही आप कामल मुरशद (पूर्ण पुरुष) हैं। आप ने मेरा अभिमान ऐसे नष्ट किया है जैसे नीबू निचोड़ने पर उस में कुछ भी शेष नहीं रहता। अपने को अब मैं तुच्छ समझने लगा हूँ।" गुरुदेव ने मियां मिटठा जी के स्नेह के कारण कुछ दिन उस के पास ठहरना स्वीकार किया और गुरमत दृढ़ करवाई। उस के पश्चात् गुरू जी पक्खो के रंधावे ग्राम के लिए चल पड़े।

चौधरी अजिता जी से परामर्श- (पक्खो के रंधावा ग्राम, पंजाब)

श्री गुरू नानक देव जी लगभग दो वर्ष के प्रचार दौरे के पश्चात् सन् 1517 ई० में पसरूर नगर से अपने ससुराल पक्खो के रंधावे ग्राम में लौट आए। यहीं पर आप जी ने अपना परिवार भी बसा रखा था। आप के बड़े बेटे श्री चन्द जी ने आजीवन यती रहने की प्रतिज्ञा की थी तथा छोटे लड़के लक्खमी दास का विवाह गुरुदेव ने अपनी देख-रेख में करवा दिया था। उनकी एक सन्तान थी। गुरुदेव के लौटने का समाचार मिलते ही चारों तरफ खुशी की लहर दौड़ गई। विशेषकर चौधरी अजीता रंधावा बहुत चाव से आप को

मिलने आया। और आगामी कार्यक्रम की रूप-रेखा निश्चित करने के लिए आप से विचार विमर्श होने लगा। चौधरी अजीता ने परामर्श दिया कि वे उसी क्षेत्र में कोई स्थान चुन लें। और वहीं पर अपना प्रचार केन्द्र स्थापित करें तथा नये नगर की आधार शिला रखें जो कि समय के साथ-साथ विकास करता जाए। इस प्रकार केन्द्रीय स्थान होने से प्रचार में बहुत सहायता मिलेगी। गुरुदेव ने कहा हम पिछली बार रावी नदी के उस पार एक गांव चुना था जो कि करोड़ी शाह की सम्पति है। इस बार वहीं पीर एक केन्द्रीय भवन की स्थापना के लिए प्रयास करेंगे। अभी उनका, फिर पच्छिमी क्षेत्र में प्रचार दौरे पर जाने का विचार है। वहाँ से लौट कर स्थायी रूप में आवास का कार्यक्रम बनायेंगे। यदि प्रभु ने चाहा तो नया नगर भी बसेगा और गुरमति का प्रचार केन्द्र भी विकसित होगा।

बेबे नानकी जी का देहान्त– (सुलतानपुर, पंजाब)

उन्हीं दिनों गुरुदेव को सुलतानपुर लोधी से संदेश प्राप्त हुआ कि बेबे नानकी जी का स्वास्थ्य बहुत दिनों से अच्छा नहीं रहता। वह उन को बहुत याद करती है उनकी ओर से बिनती है कि वे उनसे मिलें। इस संदेश को पाकर गुरुदेव जी भाई मरदाना सहित सुलतानपुर पहुँचे। बहन जी वहां पर आप की राह देख रही थी वह दर्शन कर गदगद हो गई और उन्होंने कहा, “भैया जी अब मेरा अन्तिम समय निकट आ गया है। मैं चाहती हूँ कि मेरे प्राण आप की छत्र छाया में निकलें, जिस से मेरी अन्तेष्टि आप कर सकें।” गुरुदेव ने उन्हें सांत्वना दी और कहा, “सब कुछ अकालपुरुष की इच्छा अनुसार उचित ही होगा, आप चिन्ता न करें।” और दूसरे दिन बेबे नानकी जी ने नाशवान शरीर त्याग दिया। जिस से उन की इच्छा अनुसार गुरुदेव ने उन का अन्तिम संस्कार किया। भाई जय राम जी वियोग न सहन कर पाए। वह भी दो दिन बाद ही शरीर का त्याग कर गये। इस प्रकार गुरुदेव ने भाई जय राम जी की भी अन्तेष्टि क्रिया स्वयं कर दी। इस कार्य से निवृत होकर गुरुदेव अपने माता-पिता को मिलने राय भोए की तलवण्डी चल पड़े। तब आप से मूल चन्द नामक एक शिष्य ने अपने घर लौटने की इच्छा प्रकट की जो कि स्यालकोट से आप के साथ रहने का हठ कर आया था। गुरुदेव ने उसे तुरन्त आज्ञा दे दी तथा कुछ आवश्यकता अनुसार धन देकर विदा किया। जब आप तलवण्डी पहुँचे तो

वहाँ के निवासियों ने आप का स्वागत किया। परन्तु बहन 'नानकी जी तथा भाई जय राम जी' के देहान्त के बारे सुनकर सभी लोग आप के पास शोक प्रकट करने आये। गुरुदेव ने सभी को प्रभु इच्छा में सहज जीवन जीने की प्रेरणा दी तथा अपने माता-पिता को धैर्य बंधाया और कहा, "प्रभु लीला में सदैव प्रसन्न चित रहना चाहिए।" आप जी कुछ दिन वहीं ठहरे रहे और फिर वहीं से पश्चिम की यात्रा पर निकल पड़े।
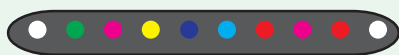
अध्याय पाँचवा

यात्रा – चतुर्थ

सज्जण तथा कज्जण शाह – (तुलम्बा कस्बा, प० पंजाब)

श्री गुरू नानक देव जी अपने माता-पिता जी से आज्ञा लेकर अपने प्रिय मित्र भाई मरदाना जी के साथ पश्चिम क्षेत्र की यात्रा पर निकल पड़े। आप का लक्ष्य इस बार मुसलमानी धार्मिक स्थलों का भ्रमण करना था। इस कार्य के लिए आप ने मुल्तान नगर की तरफ यात्रा आरंभ कर दी क्योंकि वहाँ बहुत अधिक संख्या में पीर फ़कीर निवास करते थे। रास्ते में तुलम्बा नामक कस्बा था। वहाँ से गुजरते समय आप को कज्जण शाह नामक एक युवक मिला जो कि बहुत ही प्रभावशाली व्यक्तित्व का स्वामी था। जब उस ने गुरुदेव के चेहरे की आभा देखी तो वह विचारन करने लगा कि वह व्यक्ति अवश्य ही धनी पुरुष है क्योंकि उस के साथ नौकर भी है। उस ने गुरुदेव के समक्ष अपनी सराय का बखान किया और कहा, "आप विश्राम के लिए रात्रि भर हमारे यहाँ ठहर सकते हैं। आप को प्रत्येक सुख-सुविधा उपलब्ध कराई जाएगी।" इसी प्रकार वह अन्य यात्रियों को अपनी ओर आकर्षित करने के उद्देश्य से सुख-सुविधा का आश्वासन दे रहा था। यह बात सुनकर भाई मरदाना जी ने गुरुदेव की तरफ देखा, गुरुदेव ने भाई जी से कहा, "आज इसी कज्जण शाह की सराय में ठहर जाते हैं।" परन्तु इस बात पर भाई मरदाना जी को आश्चर्य हुआ क्योंकि गुरुदेव कभी भी किसी सराय इत्यादि का आश्रय नहीं ढूंढ़ते थे। भाई जी ने गुरुदेव पर प्रश्न किया, "आप तो रात्रि सदैव उद्यान में ही व्यतीत कर देते हैं। आज इस सराय का आश्रय किस लिए?" गुरुदेव ने तब उत्तर दिया, "सराय में आज हमारी आवश्यकता है क्योंकि जिस कार्य के लिए हम घर से चले हैं वह वहीं पूरा होगा।" भाई मरदाना जी इस रहस्य को जानने के लिए युवक कज्जण शाह के पीछे-पीछे उस की सराय में पहुँचे। सराय के मुख्य द्वार पर कज्जण का चाचा सज्जन शाह यात्रियों का स्वागत करने के लिए तत्पर खड़ा मिला। गुरुदेव तथा भाई मरदाना जी

का उस ने भव्य स्वागत किया और उनके विश्राम के लिए एक कमरा सजा दिया तथा आग्रह करने लगा, "आप स्नान आदि से निवृत होकर भोजन करें।" परन्तु गुरुदेव ने उत्तर दिया, "अभी उन्हें भूख नहीं।" और मरदाना जी को कीर्तन आरम्भ करने का आदेश दिया। कीर्तन प्रारम्भ होने पर गुरुदेव ने शब्द उच्चारण किया-

उजलु कैहा चिलकणा घोटिम कालड़ी मसु ॥

धोतिआ जूठि न उतरै जे सउ धोवा तिसु ॥

सजण सेई नालि मैं चलदिआ नालि चलंनि ॥

जिथै लेखा मंगीए तिथै खड़े दिसंनि ॥

राग सूही, पृष्ठ 729

सज्जन शाह यात्रियों की बहुत आवभगत किया करता था। और उन को सेवाभाव के धोखे में रख कर मार डालता था या उन को लूट लेता था। गुरुदेव ने उस के इस छल कपट को जान लिया था। अत: उन्होंने इस जाल साज का ढोंग जनता के सामने लाना था या उस को मानव कल्याण के कार्य के लिए प्रेरित करना था।

सज्जन तथा कज्जन ने अनुमान लगाया कि गुरू जी की पोटली में पर्याप्त धन है। जब रात गहरी हुई और सब लोग सो गए। गुरुदेव तब अपने मधुर कीर्तन में ही व्यस्त रहे। सज्जन उन के सोने की प्रतीक्षा करने लगा और उन के बगल वाले कमरे में धैर्य से कीर्तन श्रवण करने लगा। मधुर संगीत तथा शब्द के जादू ने उसे वहीं पर पत्थर से मोम कर दिया। वे बाणी के भावार्थ की और ध्यान देने लगा। गुरुदेव कह रहे थे कि उज्ज्वल तथा चमकीले वस्त्र धारण करने मात्र से क्या होगा? यदि हृदय आमावस की रात के अंधेरे की तरह काला है तो कांसे के बरतन की तरह चमकने से क्या होगा, जिसे स्पर्श करते ही हाथ मलीन हो जाते हैं। वह उस मकान के समान है जो बाहर से अत्यन्त सज्जित हो परन्तु भीतर खाली और डरावना हो। उस के भीतर अन्धकार ही अन्धकार है। जो बगुले की भांति बाहर से श्वेत, विनम्र व साधु रूप धारण किए है, परन्तु निर्दोष जीवों को तड़पा-तड़पा कर मार कर खा जाता है। यह सुनते ही उस के परिपक्व पाप उसने सामने प्रकट हो गये। वह घबरा कर गुरुदेव के चरणों में आ गिरा और क्षमा याचना करने

लगा। गुरुदेव ने उसे गले लगाया और कहा, “तुम्हें अपने कुकर्मों के लिए प्रायश्चित करना होगा। आज से तुम दीन-दुखियों की सेवा में लीन हो जाओ तथा वास्तव में सज्जन बनकर जन-साधारण की सेवा करो।” गुरुदेव ने उस से भविष्य में सत्य मार्ग पर चलने का वचन लिया। सज्जन जो वास्तव में ठग था, सचमुच में सज्जन पुरुष बन गया और गुरुदेव की शिक्षा के अनुसार जीवन बिताने लगा।

फ़कीर बहाउद्दीन मखदूम – (मुल्तान नगर, प० पंजाब)

श्री गुरू नानक देव जी तुलम्बा नगर से मुल्तान नगर पहुँचे। वह स्थान फ़कीरों की नगरी कहलाता था। क्योंकि वहाँ पर अनेक सूफी फ़कीरों के आश्रम थे। गुरुदेव जब वहाँ पहुँचे तो उन फ़कीरों को बहुत चिन्ता हुई कि गुरू नानक देव जी के तेज प्रताप के आगे वह टिक नहीं सकेंगे। इसलिए उन्होंने आपस में विचार विमर्श किया कि किसी भी युक्ति से गुरू नानक देव जी तक यह बात पहुँचाई जाए कि वहाँ पहले से ही बहुत पीर-फ़कीर मौजूद हैं। उन के आने से वहाँ का सन्तुलन बिगड़ जायेगा। वास्तव में बात यह थी कि जब गुरुदेव अपने दूसरे प्रचार-दौर में पाकपटन में शेख ब्रह्म जी से मिले थे तो उन्होंने आप की बाणी का प्रचार प्रारम्भ कर दिया था तथा आप के बताये मार्ग पर स्वयं भी जीवन यापन करना आरम्भ कर दिया था। इस बात की चर्चा मुल्तान के घर-घर हो रही थी। उन फ़कीरों ने एक रहस्यमय ढंग से यह संदेश गुरुदेव तक पहुँचाने का कार्यक्रम बनाया। उन्होंने दूध से लबालब भरा हुआ एक कटोरा गुरुदेव के समक्ष प्रस्तुत किया। गुरुदेव ने तब भाई मरदाना जी को एक चमेली का फूल तथा एक बताशा दूध के कटोरे में डालने के लिए कहा और कटोरा तुरन्त लौटा दिया। इस पर भाई जी ने इस रहस्य को जानने की इच्छा प्रकट की। गुरुदेव ने बताया कि स्थानीय फ़कीर उन्हें वहां पर देखना नहीं चाहते। उन का कहना है कि उनके यहाँ रहते गुरुदेव जी की आवश्यकता नहीं। इसलिऐ हमने इस बात का उत्तर दिया है कि जैसे दूध में बताशा मिश्रित हो जाता है तथा चमेली का फूल कोई स्थान न लेकर केवल तैरता रहता है, ठीक उसी प्रकार वह उन लोगों पर कोई बोझ नहीं बनेंगे तथा किसी का भी अनिष्ट नहीं होगा।

उन दिनों मुल्तान में बहाउद्दीन मखदूम प्रमुख फ़कीरों में से एक थे, जिन्होंने गुरुदेव के सम्मुख होकर विचार विमर्श प्रारम्भ किया। वहाँ के अन्य फ़कीरों ने भी बाद में उस गोष्ठी में भाग लिया जिन में पीर बहावल हक, सय्यद अब्दुल कादरी इत्यादि प्रमुख थे।

प्रथम भेंट होने पर बहाउद्दीन मखदूम ने गुरुदेव से पूछा, "आप कुशल मंगल में हैं?" गुरुदेव ने उत्तर में कहा, "प्रभु में लीन आप जैसे पुरुषों के दर्शन होने के कारण मैं हर्ष-उल्लास में आ गया हूँ।" यह उत्तर सुनकर बहाउद्दीन मखदूम जी बहुत प्रसन्न हुए। चर्चा आरम्भ हुई एवं मखदूम जी ने कहा, "हमें मालूम है आप हिन्दू-मुस्लिम को सम दृष्टि से देखते है, परन्तु आप यह बताएं कि दोनों में उस खुदा की ज्योति एक सम है?" गुरुदेव ने उत्तर में कहा, "उस अल्लाह के नूर का अंश सब में विद्यमान है परन्तु जो लोग उस की इबादत करते हैं, उन में उस का अंश विकसित होना प्रारम्भ कर देता है, जिससे उस व्यक्ति विशेष का तेज-प्रताप बढ़ता जाता है। इस बात के लिए हिन्दू या मुस्लिम होने का सम्बन्ध नहीं। भावार्थ यह कि वह किसी मानव से भी मतभेद नहीं रखता है। वास्तविकता यह है कि वह सब में बिराजमान होकर स्वयं सृष्टि का खेल देख रहा है-

आपे रसीआ आपि रसु आपे रावणहारु ॥

आपे होवै चोलड़ा आपे सेज भातारु ॥

रंगि रता मेरा साहिबु रवि रहिआ भरपूरि ॥ रहाउ ॥

आपे माछी मछुली आपे पाणी जालु ॥

आपे जाल मणकड़ा आपे अंदरि लालु ॥

आपे बहु विधि रंगुला सखीए मेरा लालु ॥

राग सिरी राग, पृष्ठ 23

इस शब्द को सुनकर बहाउद्दीन मखदूम ने गुरुदेव से पूछा, "उस प्रभु की कृपा दृष्टि किस प्रकार के कार्य करने से प्राप्त हो सकती है?" गुरुदेव ने उत्तर में कहा, "वे सभी लोग कृपा दृष्टि के पात्र हो सकते हैं जो खुदा की रज़ा में आ जाते हैं। अर्थात

गुरुमुख बन जाते हैं इस के विपरीत जो लोग मनमानी कर अल्लाह की रज़ा के विरुद्ध चलने की कोशिश करते हैं उन पर उस की खुशी नहीं हो सकती अर्थात वह मनमुख कहलाते हैं।" इस उत्तर को सुनकर बहाउद्दीन मखदूम पूछने लगे, "मुझे गुरुमुख मनुष्यों की पहचान करवाओ। जिस से मैं मनमुख तथा गुरुमुख में भेद समझ सकूँ।"

गुरुदेव ने उत्तर में कहा, "रात को खुदा की बंदगी करते समय आप अपनी इस जिज्ञासा को ध्यान में रखें, तत्पश्चात् सो जाएं, आप को उत्तर मिल जाएगा।" पीर बहाउद्दीन मखदूम ने ऐसा ही किया। उन को रात में स्वप्न हुआ कि वह हज़ यात्रा पर जा रहे थे। रास्ते में उन के जहाज को तूफान के कारण एक टापू पर शरण लेनी पड़ी। उस दीप में एक छोटी पहाड़ी थी, जिस के शिखर पर उन को कुछ लोग बंदगी करते दिखाई दिये। जब भोजन का समय हुआ तो सभी के लिए परोसा हुआ भोजन अर्श से प्राप्त हुआ। कोई भी भूखा नहीं रहा, सभी सन्तुष्ट थे। दूसरे दिन बहाउद्दीन मखदूम समुद्र के किनारे बैठे थे कि समुद्र में घनघोर वर्षा होने लगी परन्तु धरती पर सूखा पड़ा हुआ था। ऐसा देखकर पीर जी ने कहा, "हे खुदा! जहां वर्षाकी आवश्यकता है, वहाँ तो वर्षा हो नहीं रही। जहां पहले से पानी ही पानी है वहाँ पर वर्षा हो रही है। यह क्या माजरा है?" बस फिर क्या था, वर्षा समुद्र में न होकर धरती पर होने लगी। पीर जी भोजन के लिए जब पहाड़ी के शिखर पर पहुँचे तो सभी को समय अनुसार अर्श से भोजन प्राप्त हुआ। किन्तु पीर जी के लिए आज भोजन नहीं भेजा गया। पीर जी विवशता के कारण भूखे रहे। पीर जी अगले दिन फिर से समुद्र किनारे जा बैठे। वहाँ उन्होंने देखा समुद्र में एक जहाज तूफान के कारण डूब रहा था। पीर जी से न रहा गया। उन्होंने खुदा से कहा, "हे खुदा! इन यात्रियों के परिवार इन की प्रतीक्षा कर रहे होंगे। इस लिए जहाज़ डूबना नहीं चाहिए।" जहाज़ डूबने से बच गया। पीर जी वापस पहाड़ी पर पहुँचे। पीर जी के लिए आज भी कुछ न आया, बाकी सभी ने भोजन प्राप्त किया। इस पर इबादत-गीर लोगों ने पीर जी से पूछा, "आप पहले भी कभी भूखे रहे हैं?" पीर जी ने कहा, "नहीं।" यह सुनकर इबादत-गीरों के मुखिया ने कहा, "फिर तो जरूर आप से कोई भूल हुई है, नहीं तो यहाँ कोई भूखा नहीं रहता।" पीर जी ने उत्तर में कहा, "कल मैंने शंका व्यक्त की थी कि पानी क्यों समुद्र में बरस रहा है, जब कि धरती को इस की आवश्यकता है तथा आज मैंने डूबते हुए जहाज के लिए खुदा से गिला-शिकवा किया है।" यह सुनकर

इबादत गीरों के मुखिया ने कहा, "जो व्यक्ति खुदा के कामों में हस्तक्षेप कर अपने आप को उस से अधिक बुद्धिमान समझता है वहां उस के लिए भोजन नहीं जुटाया जाता। भोजन केवल उन्हीं के लिए है जो खुदा के प्रत्येक कार्य में प्रसन्नता व्यक्त करते हैं अर्थात उसकी रज़ा में ही राजी रहने के आदी हैं।"

इस उत्तर को पाते ही बहाउद्दीन मखदूम की आंख खुल गई। वह जल्दी से उठे और स्वप्न के भावार्थ को समझने लगे। उन्होंने महसूस किया कि वह प्रकृति के कार्यो में हस्तक्षेप करता है। प्रभु के सामने मनमानी करने का दोषी है क्योंकि वह अक्सर आत्मिक शक्ति (रुहानी ताकत) का प्रदर्शन कर अपने पैरोकारों को भ्रमाता है तथा अपनी मान्यता करवाता है।

दूसरे दिन पीर बहाउद्दीन मखदूम जब गुरुदेव के सामने उपस्थित हुए तो चरणों में नत-मस्तक हो कर कहने लगे, "मुझे ज्ञान हो गया है कि गुरू की आज्ञा में ही रहने से खुदा की प्रसन्नता प्राप्त हो सकती है। मैं आयंदा भूल कर भी अपनी मनमानी नहीं करूंगा। खुदा की रज़ा में सदैव ही खुशी अनुभव करूंगा।"

गुरुदेव ने उन का मार्ग दर्शन करते हुए कहा, "मनमुख सदैव भटकते हैं केवल गुरुमुख ही लक्ष्य को प्राप्त कर सकते हैं।" गुरू जी उस पीर जी के स्नेह के कारण कुछ दिन और उन के पास ठहरे तद् पश्चात् 'उच्च' नगर की तरफ प्रस्थान कर गए।

पीर शेख अबदुल बुखारी मखदूम – (उच्च नगर, प० पंजाब)

श्री गुरू नानक देव जी मुल्तान नगर से प्रस्थान कर उच्च नगर में पहुँचे। उन दिनों वह नगर इस्लाम का गढ़ कहलाता था। वहाँ पर तेरहवीं शताब्दी में सूफी फ़कीर जलालुद्दीन बुखारी हुए हैं, उन दिनों उन की गद्दी पर शेख हाजी अबदुल साहब बुखारी थे, जिन्हें मखदूम तखल्लुस से निवाजा गया था परन्तु समय के साथ-साथ लोग उन को प्यार से 'उच्च के पीर' कह कर सम्मान देते थे। गुरुदेव की भेंट 'उच्च के पीर' मखदूम शेख हाजी अबदुल साहब बुखारी से हुई। गुरुदेव के व्यक्तित्व से वह बहुत प्रभावित हुए। उन्होंने आध्यात्मिक ज्ञान के आदान प्रदान के लिए गुरुदेव से विभिन्न प्रकार के प्रश्न पूछे, जिस का सारांश कुछ इस प्रकार है।

उच्च के पीर जी–फ़कीरी का प्रारम्भ कहाँ से होता है तथा अन्त क्या है?

गुरुदेव जी–फ़कीरी का आरम्भ अपने अस्तित्व को मिटाने में है (फना अस्त) अर्थात सम्पूर्णता केवल इस ज्ञान को प्राप्त कर लेने में है कि उस अल्लाह के अतिरिक्त कुछ भी नहीं (बका अस्त) अर्थात सब कुछ तू ही तू है।

उच्च का पीर–इस प्रकार के ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति का साधन क्या है? अर्थात यह रुहानी खज़ाना कहाँ से प्राप्त हो सकता है?

गुरुदेव जी–इस खज़ाने का भण्डार सत्संगत में विद्यमान है। जो सत्संगत करेंगे उन को इस खज़ाने की चाबी (कुंजी) प्राप्त हो जाएगी।

उच्च का पीर–मन पर नियन्त्रण किस प्रकार किया जाए?

गुरुदेव जी–प्रभु चरणों में प्रार्थना करते रहना ही इस का यन्त्र है। तथा मृत्यु को सदैव याद रखना चाहिए।

उच्च का पीर–मन, शान्तचित किस प्रकार हो सकता है?

गुरुदेव जी–मीठी बाणी तथा नम्रता धारण करने से एकाग्रता प्राप्त होती है।

उच्च का पीर–दिव्य ज्योति का प्रकाश क्या है?

गुरुदेव जी– आत्मज्ञान का होना ही दिव्य ज्योति के दर्शन अथवा प्रकाश है।

उच्च का पीर–हमें किस वस्तु की प्राप्ति के लिए संघर्ष करना चाहिए?

गुरुदेव जी–बुद्धि विकास के लिए प्रयत्नशील रहना चाहिए। अर्थात ज्ञान कहीं से भी प्राप्त हो स्वीकार करना चाहिए।

उच्च का पीर–मनुष्य को प्रसन्नता कब प्राप्त होती है?

गुरुदेव जी–जब दर्शनों की अभिलाषा सम्पूर्ण होती है अर्थात जब मानव अपने मुख्य लक्ष्य को प्राप्त कर लेता है।

उच्च का पीर – जीवन किस प्रकार व्यतीत करें?

गुरुदेव जी – धैर्य, सन्तोष (सबूरी) ही जीवन को लक्ष्य के निकट लाकर खड़ा कर देता है अर्थात निष्काम हो जाए।

उच्च का पीर – लक्ष्य की प्राप्ति के लिए मार्ग कौन सा धारण करें?

गुरुदेव जी – सच्चाई तथा परोपकार का मार्ग अपनाओ।

उच्च का पीर – विश्राम किस प्रकार प्राप्त हो सकता है?

गुरुदेव जी – चिन्ताओं से मुक्ति पाना ही वास्तविक विश्राम है। यह केवल अपनी चतुराईयों का त्याग कर प्रभु की रज़ा (हुक्म) में प्रसन्ता व्यक्त करने पर ही प्राप्त हो सकता है।

उच्च का पीर – संसार की यात्रा किस प्रकार सफल हो सकती है?

गुरुदेव जी – अवगुणों का त्याग करके सदगुणों को धारण करने पर यह यात्रा सफल हो जाती है।

महिलाओं की समस्याओं का समाधान – (सरव्वर नगर, सिंध)

श्री गुरू नानक देव जी सिंधु नदी के किनारे-किनारे लम्बी यात्रा करते हुए उच्च नगर से सरव्वर नगर पहुँचे। सरव्वर एक विकसित नगर है जो कि सिंधु नदी के किनारे बसा हुआ एक विकसित नगर है। इसलिए जल साधनों के कारण उन दिनों वह एक बहुत बड़ा व्यापारिक केन्द्र था। गुरुदेव के आगमन का समाचार फैलते ही बहुत बड़ी संख्या में लोग उनके दर्शनों के लिए उमड़ पड़े। आप समस्त जन समूह को एक ईश्वर की आराध ना का उपदेश देते हुए गुरुदेव उनके प्रवचनों से प्रभु इच्छा में सन्तुष्ट रहने की प्रेरणा करते। एक दिन कुछ महिलाएं आप के पास अपनी कुछ घरेलू समस्याएं लेकर पहुँची तथा उन का समाधान पूछने लगी। अधिकांश महिलाओं की समस्या गृह कलेश इत्यादि था। गुरुदेव ने उन महिलाओं की समस्याएं ध्यान से सुनी और उन की मानसिक सन्तुष्टि के लिए कहा–

सुखु दुखु पुरब जनम के कीए ॥

सो जाणै जिनि दातै दीए ॥

किस कउ दोसु देहि तू प्राणी ॥

सहु अपना कीआ करारा हे ॥ 14 ॥

हउमै ममता करता आइआ ॥

आसा मनसा बंधि चलाइआ ॥

मेरी मेरी करत किआ ले चाले ॥

बिखु लादे छार बिकारा हे ॥ 15 ॥

राग मारू, पृष्ठ 1030

गुरुदेव ने उन महिलाओं को समझाते हुए कहा, "प्राणी के कर्म ही प्रधान है। इसी के अनुसार उस को यहाँ सभी सुख सुविधाएं उपलब्ध होती हैं। ईर्ष्या निन्दा इत्यादि से कुछ मिलने का नहीं, व्यक्ति मन की शान्ति खो देता है। सुख तो त्याग तथा सेवा में है। यदि अभिमान त्याग कर मीठी बाणी बोलकर सगे सम्बंधियों का मन जीत लिया जाए तो धीरे-धीरे सभी कुछ सामान्य हो जाता है। बस, बात तो धैर्य और सूझ-बूझ से प्रभु में आस्था रखते हुए जीवन व्यतीत करने की है।

जुलाहा दाउद – (दादू नगर, सिंध)

श्री गुरू नानक देव जी सख्खर नगर से सिंधु नदी के साथ-साथ चलते दादू नगर में पहुँचे। उन दिनों यह नगर अपनी भौगोलिक स्थिति के कारण विकसित था। क्योंकि वहाँ पर व्यापारियों तथा हज्ज यात्रियों का आवागमन बना रहता था। गुरुदेव जी, नगर के बाहर उस स्थान पर ठहर गए जहां से हज-यात्री पैदल यात्रा के लिए ईरान देश की ओर रुख करते थे। अपने नियम अनुसार आप जी नित्य कीर्तन करते रहते। वहाँ के स्थानीय निवासी भी कीर्तन की वर्षा का आनंद लेने पहुँच जाते तथा प्रवचन सुनकर घर लौट जाते। श्रद्धालुओं में दाउद नाम का एक जुलाहा था, जो गुरुदेव के प्रवचन सुन कर

उनमें अथाह श्रद्धा-भक्ति रखने लगा था। गुरुदेव के लिए उस ने कड़े परीश्रम से एक सुन्दर गलीचा बुना, क्योंकि गुरुदेव को वह सदैव घास पर ही बैठे देखता था। गलीचा तैयार करके उस ने बहुत श्रद्धा के साथ भेंट किया और विनती की, "हे गुरुदेव ! आप इस गलीचे पर आसन लगाएं।" उस की श्रद्धा-भक्ति देखकर गुरुदेव ने उस को कंठ से लगाया और स्नेह पूर्वक कहा, "तेरा गलीचा हमें स्वीकार है परन्तु हम इस का क्या करेंगे? क्योंकि हम रमते फ़कीर हैं हमारा गलीचा यही हरी घास ही है।" अत: वह जो सामने कुत्तिया के बच्चे पैदा हुए हैं, आप इस को उस के उपर नीचे डाल दो। क्योंकि वह नव-जात शिशु सर्दी के मारे कांप रहे हैं। इस समय उन को गलीचे की अति आवश्यकता है। दाउद ने आज्ञा का पालन करते हुए तुरन्त ऐसा ही किया। गुरुदेव की प्रसन्नता का पात्र बनकर वह घर लौट गया।

देवी देवताओं के चक्रव्यू से मुक्ति – (हिंगलाज नगर, सिंध)

श्री गुरू नानक देव जी दादू नगर में हज्ज पर जाने वाले किसी काफले की प्रतीक्षा में थे। संयोग से उनको एक काफिला मिला जो कि हज्ज के लिए जा रहा था। गुरुदेव भी उस काफिले में सम्मिलित हो गए। उन का विचार था कि ईरान ईराक होते हुए अरब देश में पैदल पहुँचेंगे। परन्तु जल्दी ही आप का उन यात्रियों से मतभेद हो गया। हुआ यूं कि एक दिन के सफर के पश्चात् आप जी ने अपने नियम अनुसार भाई मरदाना जी को कीर्तन करने के लिए कहा। जैसे ही कीर्तन की मधुर बाणी हाजियों ने सुनी, तो उन में से एक, जो कि मौलवी था, कहने लगा, "ये लोग शायद हिन्दू (काफिर) हैं तभी संगीत जैसी हराम चीज़ को गाते सुनते हैं, जिस से मन शैतान हो जाता है। इस लिए हम इन को अपने साथ नहीं ले जा सकते। क्योंकि इस्लाम में संगीत कुफ्र है। वैसे भी हिन्दुओं के लिए हज करने पर प्रतिबन्ध है। कहीं हम लोग इन के साथ पकड़े गए तो मारे जाएंगे।" उन्होंने जब यह बात गुरुदेव से कही कि वे उनके साथ नहीं जा सकते तो भाई मरदाना जी बहुत निराश हुए। किन्तु गुरुदेव ने उन्हें विश्वास दिलवाया, "वे चिन्ता न करें खुदा ने चाहा तो आप अवश्य ही काबे की ज़ियारत करेंगे। बस धैर्य रखो।" गुरुदेव ने तभी पैदल यात्रा करने का विचार त्याग कर, समुद्री यात्रा द्वारा मक्के जाने की योजना बनाई

और हिंगलाज नगर की तरफ चल पड़े। यात्रा में आप को कई यात्री तथा व्यापारी मिले जो कि जहाजों द्वारा सिंध से अरब देशों को माल का आयात निर्यात करते थे। वे लोग गुरुदेव के साथ बहुत प्रसन्न हुए क्योंकि सफ़र के पड़ावों पर उन को सत्संग करने का शुभ अवसर प्राप्त हुआ। कीर्तन की महिमा का उन लोगों को एहसास हुआ। उन में से कुछ एक तो कीर्तन के शैदाई हो गए। इस प्रकार गुरुदेव से उनकी घनिष्टता हो गई। उन दिनों हिंगलाज एक सम्पन नगर था, जो कि हिंगलाज नदी के किनारे बसा हुआ था। जिस में अधिकांश हिन्दू मतावलम्बी रहते थे। उस नगर की एक छोटी सी पहाड़ी की चोटी पर काली माता का एक मन्दिर था। रमणीक घाटी वाले मन्दिर में गुरुदेव यात्रियों सहित चले गए और मन्दिर के निकट प्रभु स्तुति में कीर्तन करने लगे। प्रभु स्तुति सुनकर वहाँ के निवासी तथा अन्य यात्री जिज्ञासा वश गुरुदेव की बाणी सुनने लगे।

जो उपजै सो कालि संघारिआ ॥

हम हरि राखे गुर सबदु बीचारिआ ॥ 1 ॥ रहाउ ॥

माइआ मोहे देवी सभि देवा ॥

कालु न छोड़ै बिनु गुरकी सेवा ॥

ओहु अबिनासी अलख अभेवा ॥ 2 ॥

हिरदै साचु वसै हरि नाइ ॥

कालु न जोहि सकै गुण गाइ ॥ 9 ॥ राग गउड़ी, पृष्ठ 227

कीर्तन की समाप्ति पर गुरुदेव ने कहा, "हे जिज्ञासु भक्त जनों! सब को जान लेना चाहिए कि प्रथम, ब्रह्मा भी काल से मुक्त नहीं है। जिन को कि सब सृष्टि की उत्पति कर्ता मानते हैं। इस लिए जो भी जीवधारी यहां पर दिखाई देता है, वह एक न एक दिन अवश्य ही काल वश होगा। परन्तु जो लोग सत्संगत में हरियश श्रवण करते हैं काल उन का मित्र बन जाता है तथा उन के साथ मित्रों वाला व्यवहार करते हुए प्रभु चरणों में निवास दिलवाता है। इस लिए निर्गुण स्वरूप प्रभु के गुण गायन सदैव करने चाहिए जो कि सर्वशक्तिमान है। और देवी देवताओं के चक्रव्यूह से मुक्त रहना चाहिए।"

इस प्रकार चारों तरफ गुरुदेव का यश फैल गया। अनेकों श्रद्धालु वहां पर एकत्र होने लगे तथा गुरू उपदेशों से लाभ उठाने लगे। वहां पर गुरुदेव ने एक धर्मशाला बनवाई। जहां पर ज्योति स्वरूप पारब्रह्म परमेश्वर की उपासना करने का विधि-विधान दृढ़ करवाने लगे जैसा कि हरियश के लिए किसी काल्पनिक देवी देवताओं की मूर्ति की कोई आवश्यकता नहीं होती, केवल गुरू शब्द का ही सहारा लेना चाहिए। तत् पश्चात् आप जी सोनमयानी बन्दरगाह की ओर प्रस्थान कर गए।

अरब देशों को प्रस्थान – (सोनमयानी बन्दरगाह, सिंध)

श्री गुरू नानक देव जी हिंगलाज नगर से सोनमयानी बन्दरगाह पर पहुँचे, जो कि प्राकृतिक बन्दरगाह है। उन दिनों भी वहां से अरब देशों के साथ जहाजरानी द्वारा बहुत बड़े पैमाने पर व्यापार होता था। गुरुदेव ने दूर दृष्टि से काम लेते हुए जैसा देश तैसा भेष के कथन अनुसार सूफी फ़कीरों जैसे नीले वस्त्र धारण कर लिए तथा हाथ में काँसा इत्यादि ले लिया। वहाँ के निवासियों ने जब गुरुदेव को देखा तो अधिकांश ने सोचा, "शायद यह सूफी मत के फ़कीर हैं जो कि हज यात्रा के लिए यहाँ पधारे हैं।" परन्तु कुछ लोगों ने आप को जल्दी ही पहचान लिया क्योंकि वे रास्ते में आप से मिले थे या हिंगलाज के मन्दिर में आप के प्रवचन सुन चुके थे। अत: उन के मन में शंका उत्पन्न हुई, जिसके कारण वे पुन: आप जी के दर्शन करने आए और जिज्ञासा वश प्रश्न करने लगे, "आप जी वास्तव में किस मत के धारक हैं?" गुरुदेव ने उत्तर में कहा, "मैं तो केवल ज्ञान का धारक हूँ किसी विशेष मत का मतावलम्बी नहीं। जहां तक वस्त्रों या वेष-भूषा की बात है, मैं सदैव आवश्यकता अनुसार तथा देश-काल अनुसाार परिवर्तन करता रहता हूँ।" उन को गुरुदेव ने शिक्षा देते हुए कहा-

सच वरतु संतोखु तीरथु गिआनु धिआनु इसनानु ।।
दइआ देवता खिमा जपमाली ते माणस परधान ।।
जुगति धोती सुरति चउका तिलकु करणी होइ ।।
भाउ भोजनु नानका विरला त कोई कोइ ।। 1 ।।

राग सारंग, पृष्ठ 1245

इस युक्ति पूर्ण आत्म ज्ञान की शिक्षा को सुनकर सभी लोगों ने गुरुदेव जी को नमस्कार किया। और वह श्रेष्ठ मनुष्य बनने की प्रेरणा लेकर लौट गए। इस प्रकार गुरुदेव के आगमन की घर-घर चर्चा होने लगी। उनकी स्तुति सुनकर जहाज का एक स्वामी उनसे मिलने आया और विनती करने लगा, "हे गुरुदेव ! मैं चाहता हूँ कि आप मेरे जहाज़ पर पधारें क्योंकि फ़कीरों, महापुरुषों के चरणों की बरकत से तूफानी संकट से टल जाते हैं और आप का कीर्तन तो मन को शान्ति प्रदान करता है। जहाज़ के सफर में मैं कीर्तन सुनना चाहता हूँ जिस से समय अच्छा कटेगा।" गुरुदेव ने उस सिंधी-जहाज़ी का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। वास्तव में जहाजी संगीत प्रेमी था। इस लिए गुरुदेव से उस की बहुत निकटता हो गई। इस प्रकार यात्रा प्रारम्भ हुई। गुरुदेव का अधिकांश समय हरियश में कीर्तन करने में ही व्यतीत होता। जहाज़ की छत पर सुबह-शाम सत्संग होता, गुरुदेव के प्रवचनों से अन्य यात्री भी लाभ उठा रहे थे कि कुछ दिनों में अदन बन्दरगाह आ गया। जहाज़ के चालक ने बंदरगाह पर ठहर कर घोषणा कर दी कि जब तक जहाज रसद पानी लेता है या माल उतारने या लादने का कार्य चलता है तब तक सभी यात्री घूम फिर आएं। इस कार्य के लिए तीन दिन का समय लगता था, अत: गुरुदेव भी यात्रियों सहित अदन नगर की सैर में निकल गये।

मधुर मोसीकी हराम नहीं– (अदन नगर, अरब देश)

जहाज़ से उतर कर श्री गुरू नानक देव जी अदन नगर की सैर के लिए अन्य यात्रियों के साथ नगर के मुख्य पयर्टक स्थल पर पहुँचे। उन की विचित्र वेषभूषा को देख कर वहां पर जन साधारण के मन में जिज्ञासा उत्पन्न हुई कि वह नया फ़कीर किस सम्प्रदाय से सम्बन्धित है? क्योंकि गुरुदेव ने उस समय कुछ मिला-जुला स्वरूप धारण कर रखा था। यूं तो उन दिनों भी अदन एक मुस्लिम देश था परन्तु वहाँ पर जहाज़रानी का बड़ा केन्द्र होने के कारण हर तरह के यात्रियों का आवागमन बना रहता था। इस लिए अन्य समुदायों पर भी प्रतिबन्ध जैसी कोई बात नहीं थी।

गुरुदेव के लिए कीर्तन भी जरूरी था। अत: वहाँ पर भी उन्होंने भाई मरदाना जी से कीर्तन का आग्रह किया। भाई जी ने कीर्तन प्रारम्भ किया जिस की मधुरता से दूर-दूर

से जन समूह आकर एकत्रत हो गया क्योंकि ऐसा मधुर संगीत उन्होंने पहले कभी सुना नहीं था। भाषा परिवर्तन के कारण भले ही उन को बाणी की समझ नहीं आई परन्तु संगीत के मन मोहक जादू ने उन्हें ऐसा बान्धा कि वे वहीं के होकर रह गए। कीर्तन की समाप्ति पर स्थानीय निवासियों ने गुरुदेव से तरह-तरह के प्रश्न पूछे जिन का उत्तर देकर गुरुदेव ने उन को सन्तुष्ट कर दिया।

उन का पहला प्रश्न था, "आप किस सम्प्रदाय के हैं?" गुरुदेव ने उत्तर में कहा, "मैं खुदा का बन्दा हूँ, बन्दगी मेरा काम है, जिस से सभी को निजात मिल सकती है, मैं किसी मजहबी जनून में विश्वास नहीं करता।" दूसरा प्रश्न था, "मोसीकी हराम है फिर आप मोसीकी का इस्तेमाल क्यों करते हैं?" गुरुदेव ने उत्तर दिया, "मोसीकी दो प्रकार की है, पहली वह जो मन को चंचल करती है, जिस से शरीर झूमता है, दूसरी वह जिस से मन शान्त होता है जिस से शरीर के स्थान पर रूह (आत्मा) झूमती है अथवा आनन्दित होती है। ऐसी मोसीकी हराम नहीं है जो रूह को खुदा की बन्दगी के साथ जोड़ती है।" इस उत्तर को पाकर सभी प्रसन्न हुए। गुरुदेव वहाँ पर दो दिन अतिथि बनकर रहे तथा उन को सत्संग के लिए एक धर्मशाला बनाने की प्रेरणा देकर वापिस जहाज़ पर लौट आए। जहाज़ पुन: चलकर अलअसवद बन्दरगाह (ज़द्दा नगर) पर पहुँचा। सभी हाजी उतर गए, इस बार गुरुदेव ने भाई मरदाना जी को सहाल दी कि कुछ समय के लिए वह अपनी रबाब के पुर्जे अलग-अलग कर ले। जिस को बाद में आवश्यकता पड़ने पर जोड़ लेंगे। भाई मरदाना जी ने ऐसा ही किया और रबाब को खोल कर एक गठरी में बांध लिया और वे जाते हुए काफले के साथ चल पड़े।

गोष्ठी – इमाम रुकनदीन के साथ – (मक्का नगर, साउदी अरब)

जहाज़ से उतर कर श्री गुरू नानक देव जी अन्य यात्रियों के साथ मक्के नगर में पहुँच गए। भाई मरदाना जी ने काअबा की मीनारें देखकर बहुत प्रसन्नता प्रकट की। गुरुदेव ने उस समय अपनी विशेष वेष–भूषा, नीला वस्त्र धारण कर, हाथ में कासा लिया हुआ था तथा बगल में बाणी की पुस्तक ले रखी थी। अरबी–फारसी भाषा तथा मुस्लिम परम्पराओं के वे ज्ञाता थे। आप जी बहुत प्रभावशाली मुवाहिद (अद्वैतवादी) सूफ़ी दरवेश लग थे। काअबा पहुँचने पर सभी हज़–यात्री थकान के कारण और सूर्य अस्त होने पर विश्राम के लिए परिक्रमा में चले गये और रात्रि के समय वहीं पर सो गए। सूर्य उदय होने को जब एक पहर (तीन घण्टे) रहता था तो जीवन नाम का मौलवी, जो कि भारत से हज़ करने पैदल के रास्ते आकर वहाँ पहले ही से पहुँचा हुआ था, दीपक जला कर झाड़ू लगाने के विचार से आया। नए आए हाजियों को उसने ध्यान से देखा जो कि सो रहे थे। उस की दृष्टि जब गुरुदेव पर पड़ी तो वह देखता ही रह गया क्योंकि काअबा की तरफ पांव कर गुरुदेव सो रहे हैं। उस झाड़ू बरदार को बहुत क्रोध आया, वह चिल्लाया कि कौन कुफ्र कूफारी (नास्तिक) है जो काअबा शरीफ की तरफ पांव कर सोया हुआ है। उसने उसी क्षण गुरुदेव को लात प्रहार कर दी और कहने लगा, "तुम काफ़िर हो या मोमन तुम्हें दिखाई नहीं देता, तुम खुदा के घर की तरफ पांव कर सो रहे हो?" गुरुदेव ने बहुत धैर्य तथा नम्रता पूर्वक उत्तर दिया, "मैं थका हुआ यात्री हूँ। अतः गुस्ताखी माफ कर दें, कृपया मेरे पांव उस तरफ कर दें, जिस तरफ खुदा न हो।"

दूसरे ही क्षण बिना कुछ सोचे समझे उस ने गुरुदेव के पांवों को पकड़ा और एक तरफ घसीटने लगा लेकिन उस के आश्चर्य की सीमा न रही जब उसने देखा कि जिध र गुरुदेव के पैर घसीट कर ले जाता उस को उधर ही काअबा भी घूमता हुआ दिखाई देता। प्रभु की ऐसी दैवी शक्ति के चमत्कार को प्रत्यक्ष देखकर वह सहम गया, सभी हज़ यात्री भी इस कौतुक को देखकर आश्चर्य चकित रह गए।

इतने में उसे अपनी भूल का ऐहसास हुआ और वह सोचने लगा, ख़ुदा तो प्रत्येक दिशा में विद्यमान है फिर वह उस इस के पांव किस तरफ करे। शोर

सुनकर बगल के हाजी भी उठ बैठे जो कि गुरुदेव के साथ ही जहाज़ से आए थे। उन्होंने कहा, "ठीक है, जिधर खुदा का वजूद नहीं उन के पांव उधर कर दो। नहीं तो हम तुम्हें भी लात मारते हैं, क्योंकि तुम भी खुदा की तरफ पांव किये हुए हो?" जीवन ने पूछा, "वह कैसे? मैंने तो पांव काबे की तरफ नहीं किए हैं।" इस पर अन्य हाजियों ने कहा, "शरह के अनुसार खुदा रब्बउल–आलमीन (सर्वव्यापक) है तो वह हर जगह मौजूद है, जमीन के नीचे भी है। अतः हम तेरे पांव काटते हैं क्योंकि तू हमारे खुदा की तरफ पांव करके चल फिर रहा है।" इस युक्ति तथा तर्क संगत बात सुनकर जीवन मौलवी चकरा गया। जहां–जहां वह देखे उसे वहीं–वहीं काबा ही काबा दिखाई देने लगा। गुरुदेव के चरणों में वह तुरन्त आ गिरा और क्षमा याचना करने लगा।

जब इस घटना का पता काबे के मुख्य मौलवी (इमाम) रुकनदीन को हुआ तो वह गुरुदेव से मिलने आया और उन से अनेकों आध्यात्मिक प्रश्न पूछने लगा–

इमाम रुकनदीन–आप के विषय में मुझे जो जानकारी मिली है वह यह है कि आप मुस्लिम नहीं है। बराय मेहरबानी आप बताएं कि आप का यहाँ आने का मुख्य प्रयोजन क्या है?

गुरुदेव जी–मैं आप सभी के दर्शनों के लिए यहाँ आया हूँ जिस से विचार–विमर्श किया जा सके।

रुकनदीन–कृपया आप यह बताएं कि हिन्दू अच्छा है कि मुसलमान?

गुरुदेव जी–केवल वही लोग भले हैं जो शुभ आचरण के स्वामी हैं। अर्थात जन्म, जाति से कोई अच्छा बुरा नहीं है।

रुकनदीन–रसूल को आप मानते हैं कि नहीं?

गुरुदेव जी–अल्लाह के दरबार में कई एक रसूल और नबी (अवतार) हाथ जोड़े खड़े हैं।

इस पर कुछ अन्य मौलवियों ने गुरुदेव से पूछा-हमारे पैगम्बर ने हमें सम्पूर्ण ब्रह्मज्ञान (इल्म-ए-हकीकी) दिया है। फिर आपने यहाँ आने का कष्ट क्यों किया है? आप हमें कौन से विशेष ज्ञान (मारफत) का मार्ग दिखाने आए हैं, जिस से हम अनजान हैं?

गुरुदेव जी-पैगम्बर उसे कहते हैं जो खुदा का पैगाम मनुष्य तक पहुँचाए। अत: आप के रसूल या नबी खुदा का पैग़ाम लाए थे कि हे बंदे ! बन्दगी करोगे तो बहिश्त को जाओगे परन्तु इस मार्ग से अब बहुत लोग विचलित हो गए हैं। इस लिए वैसा ही पैग़ाम मैं फिर से लेकर आया हूँ।

रुकनदीन-सच्चे ईमान (सिदक) की कौन-कौन सी शर्तें अथवा नियम है?

गुरुदेव जी-ख़ास तौर पर चार नियमों का पालन सदैव करना चाहिए।

1. खुदा को सदैव अपने पास विद्यमान जानना। 2. सदगुणों वाले लोगों के संग खुदा के गुणों की चर्चा सदैव करनी अर्थात सत्संग करना। 3. ज़रूरत मन्दों की सहायता के लिए खर्च अपनी शुभ आय में से दसवन्ध (आय का दसवाँ भाग) करना। 4. जान बूझ कर कोई गलत कार्य न करना अर्थात पापों से पवित्र रहना।

रुकनदीन-आप के विचार में विवेकशील मनुष्य (बजुर्ग) कौन है?

गुरुदेव जी-1. जो पुरुष नियत रास करता है अर्थात हृदय से किसी का बुरा नहीं चाहता। 2. किसी से ईर्ष्या नहीं करता। 3. दुख-सुख को एक सम जानकर किसी समय भी विचलित नहीं होता अर्थात खुदा पर गिला शिकवा नहीं करता। 4. यदि वह स्वयं शक्तिशाली हो तो अपनी शक्ति का दुरोपयोग नहीं करता अर्थात दूसरों को अपनी शक्ति से भयभीत नहीं करता। काम, क्रोध पर नियन्त्रण कर सामाजिक बंधनों में रहता है। 5. अवगुणों का त्यागी तथा शुभ गुणों का धारक ही विवेकी है।

रुकनदीन-हम धर्म में चार सिद्धांतों (शराह) के पालन करने का विधान है। 1. रोजे रखना। 2. जगराते द्वारा तपस्या करना। 3. दान (खैरात) देना। 4. मौन रहना। इन सब के करने पर खुदा की दृष्टि में कबूल माना जाएगा।

गुरुदेव जी – हजार दिन एकांत वास में तपस्या करें, हजार खज़ाने खै़रात में दें तथा हजार दिन रोजे रखें या मौन रह कर इबादत करें किन्तु किसी एक ग़रीब का भी हृदय पीड़ित किया या उसे सताया तो सब कुछ व्यर्थ चला जाएगा। इस पर इमाम करीम दीन ने गुरुदेव से पूछा, "शरीयत, तरीकत, मारफत तथा हकीकत शरहा के ये चार मुख्य नियम हैं। अत: आप बताएं कि किस नियम द्वारा खुदा तक पहुँचाने में सरलता है?"

गुरुदेव जी – यह चारों नियम खुदा तक पहुँचाने के मार्ग हैं परन्तु प्रत्येक व्यक्ति अलग-अलग क्षमता रखता है। अत: जिसको जो सरल सहज लगता है वह उसी को अपना सकता है। ठीक उसी प्रकार जैसे हज सभी हाजियों का लक्ष्य है परन्तु सभी अपनी सुविधा अनुसार मार्ग चुन लेते हैं।

पीर जलालउद्दीन – मुसलमानों के लिए बहिश्त (स्वर्ग) बनाया गया है। इस लिए दीन कबूल करने से ही दरगाह में स्वीकार्य हैं।

गुरुदेव जी – आत्मा (रूह) को हिन्दू या मुस्लिम में वांटा नहीं जा सकता, जब तक यह शरीर है तब तक सम्प्रदायिक झगड़े हैं। जब शरीर नाश होगा तो रूह के कर्म प्रधान हैं। उसी के अनुसार उस का न्याय अथवा निर्णय होगा।

गुरुदेव के उत्तरों से इमाम रुकनदीन जब सन्तुष्ट हो गया तो उस ने गुरू बाबा नानक जी को हज़रत नानक शाह फ़कीर कहना प्रारम्भ कर दिया। उन के प्रेम के कारण गुरुदेव उन के पास कुछ दिन विचार गोष्ठी करते रहे। इतने में वह काफिला भी आ पहुँचा जो कि गुरुदेव को अपने साथ लाने को तैयार नहीं था, जिस को वे पीछे सिंध क्षेत्र में ही छोड़ आए थे। उन्होंने गुरुदेव को जब पहले से ही मक्का में उपस्थित देखा तो उन को बहुत आश्चर्य हुआ। इस पर भी जब उन को यह मालूम हुआ कि गुरू जी ने अपने तर्कों से इमाम रुकनदीन का मन जीत लिया है तो उन्होंने गुरुदेव से अपनी भूल की क्षमा याचना की, "हम ने आप के साथ रास्ते में जो गुस्ताखी की है उस के लिए हमें क्षमा करें।"

मक्का के निवासियों से आज्ञा लेकर गुरुदेव जी जलदी ही मदीना की यात्रा के लिए चल पड़े।

गोष्ठी – इमाम अब्दुल रहमान – (मदीना नगर, अरब देश)

श्री गुरू नानक देव जी मक्का नगर से प्रस्थान कर मदीना पहुँचे। वहाँ पर आप के आगमन की प्रतीक्षा बड़े उत्साह के साथ पहले से हो रही थी। क्योंकि इमाम रुकनदीन आप का श्रधालू जो हो गया था, आप का वहाँ पर भव्य स्वागत किया गया तथा दार्शनिक विचार विमर्श के लिए विशेष गोष्ठिओं का आयोजन किया गया। इस्लाम के जो जो विचारों तथा सिद्धांतों से आप का मतभेद था आपने उनके प्रति बिना किसी भय या झिझक के आलोचना की और अपने विचार व्यक्त करते हुए सत्य मार्ग का प्रर्दशन किया। उस गोष्ठी में बहुत से विद्धानों ने भाग लिया। जिस में इमाम अब्दुल रहमान बगदादी, इमाम आजम, इमाम जाफ्फर इत्यादि प्रमुख थे। गोष्ठी में पहला प्रश्न था, "शैतान इबादत में खलल (बाधा) डालता है और बन्दे को बन्दगी नहीं करने देता।" गुरुदेव ने उत्तर में कहा, "जब खुदा एक है उस का प्रतिद्वन्दी (शरीक) है ही नहीं तो वह शैतान कहाँ से आ गया? वास्तव में मन की दो अवस्थाएं होती हैं, पहली–सुमति और दूसरी कुमति। व्यक्ति को समस्त परीश्रम मन को साधने में ही लगाना है जिस से कुमति पर नियन्त्रण कर सुमति को बढ़ावा दिया जा सके। बस यही फ़कीरी है।"

इमाम–लोगों का कहना था–कि खुदा ने चार पुस्तकें जम्बूर, तेंरेत, अंजील, कुरान उपहार स्वरूप भेंट (बख्शिश) की है तथा चार पैगम्बर भेजे हैं–दाऊद, मूसा, ईसा तथा मुहम्मद साहब। उत्तर में गुरुदेव ने कहा, "खुदा अनंत काल से है। न जाने उस के यहाँ से कितने पैगम्बर आ चुके हैं तथा कितनी पुस्तकों की उत्पत्ति हो चुकी है। इसीलिए भविष्य में न जाने कितनी पुस्तकें तथा कितने पैगम्बर आते रहेंगे। उस विशाल स्वामी का कोई अन्त नहीं। वह किसी से भी मतभेद नहीं करता क्योंकि सब उसी की संतानें हैं। उस प्रभु में यदि कोई अभेद होना चाहता है तो उसे जान लेना चाहिए कि खुदा की दृष्टि में सब एक समान हैं।"

सम्राट हमीद (कारू) – (मिश्र के काहिरा नगर, मिश्र देश)

श्री गुरू नानक देव जी मदीना नगर से ताबुक नगर होते हुए मिश्र देश की राजधानी काहिरा पहुँचे जो कि नील नदी के किनारे बसा हुआ है। उन दिनों वहां पर सम्राट हमीद का राज्य था, जिस का मुख्य लक्ष्य जनता का शोषण कर धन एकत्र करना था। वास्तव में राष्ट्रीय आय में से जनता की भलाई अथवा नागरिक सुख–सुविधाओं के लिए सम्राट हमीद कुछ भी खर्च नहीं करता था। जन–साधारण का जीवन कष्टों भरा था, इस लिए जनता ने सम्राट को 'कंजूस' बादशाह कहना शुरू कर दिया। 'कंजूस' को मिश्री भाषा में कारू कहते हैं। इस प्रकार बादशाह का नाम हमीद कारू पड़ चुका था। परन्तु वह दरवेशों, फ़कीरों इत्यादि का सम्मान करता था। गुरुदेव जब उस नगर में पहुँचे तो सरकारी अधिकारियों ने अपने देश वासियों की व्यथा कह सुनाई और गुरुदेव से अनुरोध किया कि वे किसी युक्ति से बादशाह को धन के लोभ से मुक्ति दिलाएं। तांकि प्रशासन की तरफ से जनता की भलाई के कार्यों में धन खर्च किया जा सके। पीड़ित जनता की कठिनाइयों को ध्यान में रखकर गुरुदेव ने अधिकारियों को अश्वासन दिया कि किसी विशेष तर्क से जनता की सेवा के लिए बादशाह को प्रेरणा करेंगे। जनता तथा अधिकारियों को विश्वास में लेकर गुरुदेव, राजमहल तक जा पहुँचे तथा वहाँ कीर्तन आरम्भ कर दिया।

चला चला जे करी जाणा चलणहारु ॥
जो आइआ सो चलसी अमरु सु गुरु करतारु ॥
भी सचा सालाहणा सचै थानि पिआरु ॥
दर घर महला सोहणे पके कोट हजार ॥
हसती घोड़े पाखरे लसकर लख अपार ॥
किसही नालि न चलिआ खपि खपि मुए असार ॥
सुइना रुपा संचीऐ मालु जालु जंजालु ॥
सभ जग महि दोही फेरीऐ बिनु नावै सिरि कालु ॥

राग सिरी राग, पृष्ठ 63

कीर्तन की मधुर ध्वनि सुनकर उस के आकर्षण से बादशाह तथा बेगम दासियों सहित गुरुदेव के समक्ष उपस्थित हुए। उन्होंने गुरुदेव के प्रवचन सुने। गुरुदेव ने कहा, "यह दृष्टिमान समस्त विश्व मिथ्या है क्योंकि परिवर्तन प्रकृति का नियम है। यहाँ कोई स्थिर नहीं है, सभी को एक न एक दिन जाना ही है। इस लिए संसार रूपी सराय से विदा होने के लिए प्रत्येक क्षण तैयार रहना चाहिए। अत: अपने पास शुभ गुणों का भण्डार इकट्ठा करना चाहिए जो कि परलोक में भी सहायक हो सके।" इस बचन को सुनकर बादशाह हमीद ने विचार की कि फ़कीर की बात में तथ्य है। तथा गुरुदेव की शरण में आकर कहने लगा, "हे फ़कीर साईं ! आप कोई सेवा का अवसर प्रदान करें।" इस पर गुरुदेव ने उसको एक सूई दी और कहा, "आप इसको हमारी अमानत जान कर रख लें, हम इसको आप से अगले जहान में ले लेंगे।" बादशाह ने बिना विचारे किये सूई रख ली और अपनी बे़गम को देकर कहा कि यह सूई सम्भालो, यह सूई नानक शाह फ़कीर की अमानत है, वे हम से इसे अगले जहान में वापस ले लेंगे। यह सुनकर बुद्धीमान बेगम बोली, "आप भी कैसी बातें करते हैं अगले जहान में तो यह शरीर भी नहीं जाता, यह सूई क्या साथ जाएगी?" इस तर्क को सुनकर बादशाह तुरन्त लौट आया और गुरुदेव को सूई लौटा कर कहने लगा, "कृपया इस सूई को आप वापिस ले लें, मैं इसे साथ नहीं ले जा सकता क्योंकि मेरा शरीर भी यहीं छूट जाएगा।" बादशाह का उत्तर सुनकर गुरुदेव बोले, "जब इस छोटी सी सूई को तुम साथ नहीं ले जा सकते तो इतना विशाल धन का भण्डार जो संचित किया है उसे वहाँ कैसे ले जाओगे?" यह बात सुनते ही वह गुरुदेव के चरणों में गिर पड़ा और क्षमा याचना करने लगा। गुरुदेव ने उसे उपदेश देते हुए कहा, "नेक बादशाह वही है जो अपनी प्रजा की भलाई के लिए धन खर्च करे। इस तरह के नेक कार्य ही आप के शुभ गुण बनकर आप के साथ जाएंगे, जो कि प्रजा की दुआएं बन कर दरगाह में तुम्हारी सहायता करेंगे।" बादशाह हमीद ने गुरुदेव की शिक्षा को ध ारण करते हुए समस्त खज़ाने को प्रजा के लिए विकास के कार्यो पर तुरन्त खर्च करने की स्वकृति दे दी। वहाँ से गुरुदेव योरोशलम के लिए प्रस्थान कर गए।

चिंतन मनन आवश्यक – (येरुशलम नगर, इज़राईल)

श्री गुरू नानक देव जी काहिरा (मिश्र) से येरुशलम नगर में पहुँचे। यह नगर यहूदी, इस्लाम, ईसाई संस्कृति का मिला-जुला केन्द्र है। गुरुदेव को वहाँ किसी प्रकार के विरोध का सामना नहीं करना पड़ा। अत: आप के कीर्तन को श्रवण करने के लिए बहुत से संगीत प्रेमी एकत्रित हुए। आप जी शब्द गायन कर रहे थे –

जेते जीअ तेते सभि तेरे विणु सेवा फलु किसै नाही ।।
दुखु सुखु भाणा तेरा होवै विणु नावै जीउ रहै नाही ।।

राग आसा, पृष्ठ 354

ईसा मसीह का जन्म स्थल होने के कारण उन के अनुयाइयों द्वारा आप जी का अतिथि सत्कार करते हुए भव्य स्वागत किया गया। तद् पश्चात् परस्पर प्रेम-प्यार की भावनाओं को बढ़ावा देने के लिए विचारों का आदान-प्रदान किया गया। इस गोष्ठी में गुरुदेव ने अपने प्रवचनों में कहा-प्रेम का मार्ग ही कल्याणकारी है। जो लोग प्रेम, सेवा तथा प्रार्थना में विश्वास करते हैं, वे प्रभु की निकटता प्राप्त कर लेते हैं। यही सिद्धांत सर्वमान्य सत्य हैं। जहां सत्य का वास होगा, वहाँ यह तीनों सिद्धांत प्रधान होकर दृष्टिगोचर होंगे। सिद्धांत तो केवल मानव हृदय की शुद्धि करके उसे परम तत्व को प्राप्त करने के लिए तैयार करते हैं। वास्तव में परम तत्व को प्राप्त करने के लिए तो भजन अर्थात चिंतन करना अति आवश्यक है अन्यथा परम तत्व की प्राप्ति सम्भव नहीं, जो कि मनुष्य योनि का मूल लक्ष्य है।

सत्संगत अनिवार्य – (इस्तम्बोल नगर, टर्की)

श्री गुरू नानक देव जी यूरेशलम से प्रस्थान कर टर्की देश की राजधानी इस्तम्बोल में पहुँचे। यह नगर योरुप महाद्वीप में पड़ता है। उन दिनों भी वहाँ पर इस्लाम का प्रचार–प्रसार हो चुका था। अत: गुरुदेव को उन के परिधान के कारण हाज़ी समझ कर जन–साधारण सम्मान देने लगे। परन्तु जब उन्हें मालूम हुआ कि आप जी किसी विशेष सम्प्रदाय से कोई सम्बन्ध नहीं रखते और मत–मतान्तरों के मतभेदों से मुक्त हैं तो उन्हें बहुत आश्चर्य हुआ। इस लिए आप से मिलने अनेकों लोग आते। आप से कीर्तन श्रवण करते, प्रवचन सुनते तथा अपनी शंकाओं के समाधान हेतु विचार–विनिमय करते। अधिकांश लोगों का प्रश्न होता–प्रभु प्राप्ति के लिए इस्लाम, ईसाई अथवा यहूदी सिद्धांतों में से कौन से श्रेष्ठ है? जिन को धारण करने से परम तत्व की प्राप्ति हो सकती है? इन सब प्रश्नों के उत्तर में गुरुदेव कहते, "वे सभी सिद्धांत अच्छे है जो मनुष्य को चरित्रवान बनाएं। वस्तुत: मनुष्य का लक्ष्य तो उच्च आचरण का स्वामी बनने का है। यह तभी संभव हो सकता है यदि मनुष्य अपनी दैनिक क्रिया में सत्य–संगत करना अनिवार्य अंग बना ले। क्योंकि सत्संग ही प्रतिदिन उज्ज्वल जीवन जीने की प्रेरणा करता है। जो लोग सत्संगत में नहीं जाते वे किसी भी समुदाय से सम्बन्ध रखते हों, धीरे–धीरे विनाश की तरफ बढ़ जाते हैं।"

सतसंगति कैसी जाणीऐ ।। जिथै एको नामु वखाणीऐ ।।

एको नामु हुकमु है नानक सतिगुरि दीआ बुझाइ जीउ ।।

राग सिरी, पृष्ठ 72

गुरुदेव ने वहाँ के निवासियों को प्रेरणा दी कि वे एक धर्मशाला बनाकर प्रतिदिन सत्संगत करें तथा कहा जो लोग वहाँ आकर महापुरुषों का जीवन तथा उन की विचारधारा (वाणी) इत्यादि का अध्ययन करते रहेंगे, वे अपना जीवन सफल कर परम तत्व को प्राप्त करेंगे।

चौदह तबकों का खण्डन– (बगदाद नगर, इराक)

श्री गुरू नानक देव जी तुर्किस्तान की राजधानी इस्तम्बोल (यूरोप) से लौटते समय अरजरुम, मोसल, दजला इत्यादि नगरों से होते हुए इराक की राजधानी बगदाद पहुँचे। आप जी ने नगर के मध्य में एक उद्यान में डेरा लगा लिया। दूसरे दिन सूर्य उदय होने से पूर्व फज़र (प्रभात) की नमाज़ के समय बहुत उँचे स्वर में, मीठी तथा सुरीली संगीतमय आवाज में, प्रभु स्तुति के गीत गाने प्रारम्भ कर दिये। जब यह मधुर बाणी एकांत के समय नगर में गूंजी तो नगर वासी स्तव्ध रह गए। क्योंकि उन्हांने ऐसी सुरीली संगीतमय आवाज पहले कभी सुनी नहीं थी। निकट ही स्थानीय फ़कीर पीर बहलोल जी की खानकाह (आश्रम) थी। गुरुदेव की आवाज को आजान समझकर वे बहुत प्रभावित हुए परन्तु नगर वासी इस अनोखी संगीतमय आजान (बांग) से अप्रसन्न थे। उन का मानना था कि जब शरहा में संगीत हराम है तो आजान के लिए संगीत का प्रयोग क्यों किया गया? सूर्योदय होने पर कौतूहल वश जन–साधारण गुरुदेव जी के दर्शनों को आए कि देखें कौन है? जो बगदाद जैसे इस्लामी शहर, जहां पर शरहा का पूर्णत: पालन किया जाता है, में नई विधि द्वारा अजां करता है? जब जनता के अपार समूह ने गुरुदेव जी को घेर लिया। उस समय आप जी ईश्वर की अनन्ता एवं महानता के गीत गाने में व्यस्त थे। आप जी गा रहे थे –

पाताला पाताल लख आगासा आगास ॥
ओड़क ओड़क भालि थके वेद कहनि इक वात ॥
सहस अठारह कहनि कतेबा असुलू इकु धातु ॥
लेखा होए त लिखिऐ लेखै होए विणासु ॥
नानक वडा आखिए आपे जाणै आपु ॥

'जपु जी साहब', पृष्ठ 5

भाई मरदाना जी के मधुर संगीत और आप जी के मीठे स्वर में जन-साधारण ने जब हरियश सुना तो वे मन्त्र मुग्ध होकर सुनते ही रह गए। कुछ एक कट्टर पंथियों ने इस घटना की सूचना वहां के ख़लीफा को दी। जिसने तुरन्त आदेश दिया कि ऐसे व्यक्ति को संगसार कर दो अर्थात पत्थर मार-मार कर मृत्यु श्य्या पर सुला दो। क्रोधित भीड़ जब हाथ में पत्थर लिए गुरुदेव जी के समक्ष पहुँची उस समय कुछ बुद्धीमान व्यक्ति गुरुदेव जी से इसी विषय में विचार-विमर्श कर रहे थे। उन में पीर दस्तगीर का बेटा भी सम्मलित था। उन्होंने पूछा कि आप ने अपने कलाम में अनेक पाताल तथा अनेक आकाशों का वर्णन किया है, जब कि इस्लामी विश्वास के अनुसार पूरे ब्रह्माण्ड में केवल सात आकाश तथा सात पाताल (चौदह तबक) हैं। शरहा के विरुद्ध गलत व्याख्या क्यों? गुरुदेव ने उचित समय जान कर अपने द्वारा गाई गई बाणी की व्याख्या करनी प्रारम्भ कर दी। आप जी ने कहा. "मानव की बुद्धि सीमित है। वह अपनी तुच्छ बुद्धि अनुसार विशाल प्रभु की पूर्णत: व्याख्या नहीं कर सकता क्योंकि प्रभु अनंत है। उसको ज्ञान और बुद्धि की सीमाओं में बांधा नहीं जा सकता, वह असीमित है। उसके विशाल अनंत रूप को सीमाओं में बांधना उस का निरादर ही नहीं उस की अनन्तता को चुनौती देना भी है। जहां तक राग अथवा संगीत का प्रश्न है उसके उचित प्रयोग को न समझने के कारण ही भ्रान्तियां उत्पन्न हुई हैं तथा इसे हराम कहा गया है। यदि राग अथवा संगीत की वह किस्में (जातियां) प्रयोग में लाएं जिस के श्रवण करने मात्र से मन शान्त होता है तो वह कदाचित हराम नहीं हो सकता क्योंकि उस के द्वारा खुदा की तारीफ़ होती है। जिस संगीत से प्रभु-भक्ति की प्रेरणा मिले उस का निषेध करना ईश्वर भक्ति से मुख मोड़ना है। सभी राग तथा गीत-संगीत मनुष्य की हीन प्रवृतियों को नहीं उभारते। ईश्वर-भक्ति में यदि संगीत का प्रयोग किया जाए तो साधारण मनुष्य भी अपने को ईश्वर के समीप ले जा सकता है। मनुष्य तो मनुष्य राग, पत्थरों को भी पिघला देता है। राग, आत्मा का भोजन है। राग में यदि ईश्वर की महिमा का सम्मिश्रण कर दिया जाए तो राग पवित्र और आराध्य हो जाता है।"

गुरुदेव जी द्वारा की गई इस व्याख्या पर पीर दस्तगीर के बेटे ने सहमति प्रकट की। परन्तु उसने प्रश्न किया, "आपने जो आजान (बांग) प्रात: काल दी थी वह तो अपूर्ण थी। उस में आप जी ने 'मुहम्मद रसूल लिल्लाह' क्यों नहीं उच्चारण किया?"

उत्तर में गुरुदेव ने कहा, "मैंने अपनी भाषा में भी कहा था–'ईश्वर महान है' अर्थात अल्ला हूँ अकबर परन्तु मुहम्मद उसके एक मात्र प्रति निधि हैं, नहीं कहा था। वह इस लिए कि जब ईश्वर महान है तो उस के प्रतिनिधि समय–समय पर इस संसार में आते रहे हैं और भविष्य में भी आते ही रहेंगे। अत: नबी, रसूल, पैगम्बर, इस धरती पर नई पुस्तकें और नया विधान लेकर आते रहे हैं और आते रहेंगे।"

इस व्याख्या को सुनकर, वह क्रोधित भीड़ भी शांत हो गई जिसके हाथ में पत्थर थे। जो कि ख़लीफा के आदेश पर गुरुदेव को मौत के घाट उतारने आए थे। इस तरह की अनोखी घटनाओं के विषय में सुनकर, ख़लीफा भी स्वयं उपस्थित होकर गुरुदेव से ज्ञान चर्चा करने लगा। उस गोष्ठी में पीर दस्तगीर तथा पीर बहलोल जी भी सम्मलित हुए। गुरुदेव ने उन सब का मन अपनी तर्क शक्ति से मोह लिया तथा सभी को निरुतर कर अपना अनुयायी बना लिया। कुछ दिन वहाँ पर ठहर कर गुरुदेव जी ईरान देश को प्रस्थान कर गए।

खुदा का बन्दा हूं बन्दगी मेरा काम– (तहरान नगर, ईरान)

श्री गुरू नानक देव जी बगदाद नगर (ईराक) से ईरान की राजधानी तहरान पहुँचे। ईरान में अधिकांश लोग शीया सम्प्रदाय से सम्बन्ध रखते थे। गुरुदेव की बाणी तथा उनके व्यक्तित्व से वे लोग बहुत प्रभावित हुए। उन्होंने गुरुदेव से पूछा, "आप किस मत के फ़कीर हैं?" गुरुदेव जी ने उत्तर में कहा मैं, "किसी विशेष मत का धारक नहीं हूँ। मैं तो खुदा का बन्दा हूँ। बन्दगी करना मेरा काम है। इस लिए मैं इन चक्करों में नहीं पड़ता।" वहाँ के निवासी इस उत्तर से सन्तुष्ट नहीं हुए। गुरुदेव से उन्होंने फिर से पूछा, "क्या आप हज़रत रसूल अल्लाह मुहम्मद साहब तथा हज़रत अल्ली पर इमान लाते हैं?" गुरुदेव ने इस पर उत्तर दिया। "हज़रत मुहम्मद तो एक पैगम्बर थे, पैगम्बर का तात्पर्य है कि खुदा का संदेश जनता तक पहुँचाने वाला व्यक्ति अत: वे अल्लाह से संदेश लेकर आए थे। वास्तव में संदेश वाहक के द्वारा लाया गया संदेश ही महत्व रखता है न कि संदेश–वाहक। अत: हम भी उन के संदेश का पूर्णरूप से पालन

कर अल्लाह के फरमानों पर जीवन व्यतीत करते हुए प्रत्येक क्षण आराधना में लीन रहने का प्रयत्न करते हैं।" लेकिन कुछ कट्टर पंथियों को यह उत्तर उचित नहीं जान पड़ा। वे कहने लगे, "आप हमारे पीर अब्दुल रहमान साहब के पास चलें, वह इस बात का निर्णय करेंगे।" उन के साथ विचार विमर्श में गुरुदेव ने कहा, "खुदा का नूर समस्त प्राणी मात्र में है। इसी प्रकार उसका नूर पैगम्बरों में भी हैं अत: सभी पैगम्बर एक समान हैं। "इस उत्तर को सुनकर पीर अब्दुल रहमान ने अपने अनुयाइयों से कहा, "यह अल्मस्त फ़कीर है आप लोग इन से विवाद न करें। यह जो कहते हैं सब ठीक है; क्योंकि यह अल्लाह की इबादत करते-करते उस जैसे ही हो चुके हैं। ठीक उसी प्रकार जिस तरह नदियां सागर में विलीन हो जाती हैं और अपना अस्तित्व खो देती हैं। अब इन का भी अपना कोई अस्तित्व नहीं जिस की वह पहचान कराएं।"

मुहम्मद साहब और अली एक सम– (मशहद नगर, ईरान)

श्री गुरू नानक देव जी तहरान से प्रस्थान कर मशहद नगर पहुँचे। यह नगर ईरान में तुर्कमानिस्तान की सीमा के निकट स्थित है। वहाँ पर शीया समुदाय के एक पीर खलीफा हारुन अल रसीद का मकबरा है। जिस की ज़ियारत करने उन के अनुयायी दूर-दूर से आते थे। गुरुदेव जब वहाँ पहुँचे तो वार्षिक उर्स चल रहा था अत: मेला लगा हुआ था। गुरुदेव जी की मनमोहक बाणी सुनकर, उनके निकट बहुत बड़ी संख्या में लोग इकट्ठे हो गए। कुछ एक कट्टर पंथियों को यह बात शरहा के विरुद्ध मालूम हुई, इसी कारण पीर जी के उत्तराधिकारी ने आप से भेंट की और भांति-भांति के प्रश्न करने लगा। उस का मुख्य प्रश्न था, "आप को हज़रत मुहम्मद साहब तथा अली साहब में क्या अंतर दिखाई देता है?" गुरुदेव ने उत्तर में कहा, "शस्त्र विद्या तथा वीरता की दृष्टि से अली साहब बड़ा है और आत्मिक ज्ञान तथा शिक्षा की दृष्टि से मुहम्मद साहब बड़ा है किन्तु सूझ-बूझ में दोनों एक समान हैं।" इस उत्तर से मकबरा अधिकारी सन्तुष्ट हो गया और गुरुदेव का वह अदब करने लगा। इस बात को देखकर जन-साधारण तो कीर्तन श्रवण करने उमड़ पड़ा। गुरुदेव ने तब बाणी उच्चारण की –

मुसलमान कहावणु मुसकलु जा होइ ता मुसलमानु कहाए ॥
अवलि अउलि दीन करि मिठा मसकल माना मालु मुसावै ॥
होइ मुसलमु दीन मुहाणै मरण जीवण का भरमु चुकावै ॥
रब की रजाइ मनै सिर उपर करता मंनै आपु गवावै ॥
तउ नानक सरब जीआ मिहरमति होवै ता मुसलमान कहावै ॥

राग माझ, पृष्ठ 141

प्रार्थना ही फलदायक – (बुख़ारा नगर, तुर्कमानिस्तान)

श्री गुरू नानक देव जी मशहद नगर से ईरान सीमा पार कर तुर्कमानिस्तान क्षेत्र में प्रवेश कर वहाँ के एक प्रमुख नगर बुख़ारा में पहुँचे जो कि नदी के किनारे बसा हुआ है। यह नगर उस क्षेत्र का बहुत बड़ा व्यापारिक केन्द्र होने के कारण धनी जन संख्या वाला है। गुरुदेव के वहाँ पहुँचने पर उन का मधुर कीर्तन सुनने जनता उमड़ पड़ी। उन दिनों वहाँ पर बौद्ध तथा इस्लाम धर्म की मिली जुली सभ्यता थी। इस लिए किसी विवाद की कोई सम्भावना तो थी नहीं। जनता ने आप का भव्य स्वागत किया और आप के प्रवचन ध्यान से सुने। आप ने कहा –

बाबा अलहु अगम अपारु ॥
पाकी नाई पाक थाइ सचा परवदिगारु ॥ रहाउ ॥
तेरा हुक्मु न जापी केतड़ा लिखि न जाणै कोइ ॥
जे सउ साइर मेलीअहि तिलु न पुजावहि रोइ ॥
कीमति किनै न पाइआ सभि सुणि सुणि आखहि सोइ ॥

राग सिरी, पृष्ठ 53

परमेश्वर की महिमा अवर्णनीय है। वह पवित्र तथा स्थायी है। उस के आदेशों को जान लेना मुश्किल और लिख लेना तो दूर की बात है। भले ही सैकड़ों विद्वान इकट्ठे हो जाएं वे उसकी महिमा का भेद कण मात्र भी नहीं जान सकते। वस्तुत: जो भी सुना पढ़ा जा रहा है। वह सब एक दूसरे का अलग-अलग अनुभव मात्र ही है।

जन-साधारण ने गुरू जी के प्रवचनों में बहुत रुचि दिखाई। जिस से अपार भीड़ आप के प्रवचन सुनने के लिए आने लगी। जनता में से किसानों ने आप से विनती की, "हे वली-ए-हिन्द ! अल्लाह की दरगाह में दरखासत करें कि बारिश हो, काफी दिनों से सूखा पड़ा हुआ है।" गुरुदेव ने इस पर, समस्त किसानों को प्रभु के सम्मुख प्रार्थना करने को कहा। किसानों ने गुरुदेव जी के आदेश अनुसार इकट्ठे होकर प्रार्थना प्रारम्भ कर दी। हरि-इच्छा से प्रार्थना सम्पूर्ण होने पर धीमी-धीमी वर्षा आरम्भ हो गई जिस से सभी किसान हरियश करते हुए हर्षोउल्लास से घरों को लौट गए।

साध-संगत का महत्त्व- (ताशकंद नगर, उजबेगीस्तान)

श्री गुरू नानक देव जी बुखारा नगर से उजबेगीस्तान की राजधानी ताशकंद पहुँचे। यह नगर साधारणत: शीतल जलवायु वाला क्षेत्र है। जन-साधारण ने आप का पहिरावा देखकर आप को हाजी समझा। इस कारण बहुत से लोग आप को मिलने चले आए, परन्तु जब उन को मालूम हुआ कि आप निर्पेक्ष विचारधारा वाले फ़कीर हैं तो आप की विचारधारा को जानने की लोगों को उत्सुकता हुई। आप ने समस्त जन समूह को उज्ज्वल जीवन जीने के लिए साध-संगत करने की प्रेरणा दी। इस पर एक जिज्ञासु ने आप से प्रश्न किया कि भक्तजनों के दर्शन अथवा सत्यसंगत में जाने का क्या महत्व है? गुरुदेव ने उत्तर में कहा -

ऐ जी सदा दइआल दइआ करि रविआ गुरमति भ्रमनि चुकाई।।
पारसु भेंटि कंचनु धातु होई सतिसंगति की वडिआई ।।
हरि जलु निरमलु मनु इसनानी मजनु सतिगुरु भाई ।।
पुनरपि जनमु नाही जन संगति जोती जोत मिलाई ।।

राग गूजरी, पृष्ठ 505

जिस प्रकार साधारण धातु पारस पत्थर के स्पर्श मात्र से सोना हो जाती है ठीक उसी प्रकार नास्तिक व्यक्ति सत्संग में आने से आस्तिक बन कर विवेकशील एवं चरित्रवान मनुष्य बन जाता है। संगत में हरियश करने-सुनने से पुन: जन्म नहीं लेना पड़ता अर्थात आवागमन मिट जाता है। प्राणी लीन अवस्था में प्रभु चरणों में समा जाता है।

यहाँ पर गुरुदेव सत्संगत की स्थापना करवा के वापस लौटने के लिए समरकंद की ओर चल पड़े।

धार्मिक परिधान महत्वहीन – (समरकंद नगर, तुर्कमेतिनस्तान)

श्री गुरू नानक देव जी ताशकंद से लौटते समय समरकंद नगर पहुँचे। वहाँ पर भी लोगों में धर्म के नाम पर बहुत सी भ्रान्तियां फैली हुई थीं। कुछ चतुर लोग धर्म की आड़ में अपनी आय के साधन के रूप में अपने तथाकथित पुस्तकीय ज्ञान को धार्मिक परिधान धारण करवा कर, आध्यात्मिक व्यक्ति होने का स्वांग रचकर मतभेद उत्पन्न कर रहे थे। जिस कारण जन-साधारण में परस्पर प्रेम-प्यार के स्थान पर आपसी द्वेष उत्पन्न हो रहा था। गुरुदेव जी इस निम्नस्तर की प्रवृति से बहुत खिन्न हुए। उन्होंने ऐसे लोगों को चुनौती दी और कहा –

जगि गिआनी विरला आचारी ॥
जगि पंडितु विरला वीचारी ॥
बिनु सतिगुरु भेटे सभ फिरै अहंकारी ॥
जगु दुखीआ सुखीआ जन कोइ ॥
जगु रोगी भोगी गुण रोइ ॥
जगु उपजै बिनसै पति खोइ ॥
गुरमुखि होवै बुझै सोइ ॥

राग आसा, पृष्ठ 413

जन-साधारण ने आप की उदार नीति का स्वागत किया, क्योंकि आप द्वारा दिया गया तत्व ज्ञान उनको प्राप्त हो रहा था। परन्तु सत्ता के बल में मौलवी लोग आप से रूष्ट रहने लगे, क्योंकि वे ज्ञानी लोगों को पूर्ण रूप से समाप्त कर जड़ से उखाड़ फैकना चाहते थे।

आप जी ने वहाँ पर सत्संगत की स्थापना करवाई, उस सत्संगत का नाम नानक कलंदर के नाम से प्रसिद्ध हुआ। वहां की भाषा के अनुसार कलंदर शब्द का भावार्थ है त्यागी पुरुष।

संसार एक मेला है – (बल्लख नगर, अफ़ग़ानिस्तान)

श्री गुरू नानक देव जी समरकंद नगर से लौटते हुए बल्लख नगर में पहुँचे, जो कि अफ़ग़ानिस्तान का सीमावर्ती नगर है। वहाँ से बल्लख नदी आगे बढ़ती हुई दो भागों में विभाजित हो जाती है। आज कल इस नगर का नाम वज़ीराबा है। गुरुदेव जी ने नदी के तट पर डेरा लगाया, जहां से नदी का विभाजन हो रहा था। उन दिनों नगर में एक वार्षिक उत्सव का आयोजन हो रहा था। उस उत्सव की विशेषता यह थी कि वहाँ पर प्राचीन काल से एक विशाल देग पड़ी हुई थी, किंवदन्तियों अनुसार जिस को राजा बल ने तैयार करवाया था। अत: उस की याद में 40 दिन का मेला लगता था और देग़ में भोजन तैयार कर सम्पूर्ण यात्रियों को भोजन कराया जाता था। उस भण्डारे में सभी वर्ग के लोग भाग लेते थे जिस से परस्पर प्रेम-प्यार बना रहता था। उचित वातावरण देखकर गुरुदेव ने शब्द गायन किया -

नदीआ वाह विछुंनीआ मेला संजोगी राम ॥

जुगु जुगु मीठा विसु भरे को जाणै जोगी राम ॥

कोई सहजि जाणै हरि पछानै सतिगुरु जिनि चेतिआ ॥

बिनु नाम हरि के भरमि भूले पचहि मुगध अचेतिआ ॥

राग आसा, पृष्ठ 439

कीर्तन की मधुरता के कारण मेले में आए लोग गुरुदेव के चारों ओर इकट्ठे हो गए और बाणी सुनने लगे। कीर्तन की समाप्ति पर गुरुदेव ने कहा, "हे भक्तजनों ! सभी इस संसार रूपी मेले में सभी इकट्ठे हुए हैं फिर बिछुड़ जाएंगे। अत: समय रहते मिठास को पहचानना चाहिए तथा जीवन यात्रा सावधानी पूर्वक करनी चाहिए। विकारी मन सदैव विचलित होकर विष भरे कार्य करने को लालायित रहता है। इस लिए सत्य गुरू की शरण में जाकर प्रभु आराधनायुक्त शिक्षा लेनी चाहिए, जिस से चंचल मन पर नियन्त्रण रखा जा सके।" वहाँ के निवासी सय्यद रज़व शाह ने अपनी शंकाओं के समाधान हेतु आप जी से बहुत से आध्यात्मिक प्रश्न पूछे। जिन के उत्तर में गुरुदेव ने कहा, "मनुष्य को सदैव सादा जीवन, उच्च विचार धारण करने चाहिए। इस प्रकार सहज ही अल्लाह से दूरी कम होती चली जाती है।"

किआ खाधै किआ पैधै होइ ॥ जा मनि नाही सचा सोइ ॥

राग माझ, पृष्ठ 142

दीर्घ आयु महत्त्वहीन – (कंधार नगर, अफ़ग़ानिस्तान)

श्री गुरू नानक देव जी बल्लख नगर से अफ़ग़ानिस्तान में दक्षिण क्षेत्र की तरफ चल पड़े। इस देश के दक्षिणी क्षेत्र में कंधार नामक बहुत प्रसिद्ध व्यापारिक केन्द्र है। वहाँ पर बहुत दीर्घ आयु के एक फ़कीर यार अली खान की खानकाह (आश्रम) थी। उसको अपनी आयु अधिक होने पर बहुत गर्व था। इस लिए जनता भी बहुत मान्यता देती थी। गुरुदेव जी को जब उन की आयु के अधिक होने का एहसास कराया गया तो गुरुदेव जी कहने लगे –

बहुता जीवणु मंगीऐ मुआ न लोड़ै कोइ ॥
सुख जीवनु तिसु आखीऐ जिसु गुरमुखि वसिआ सोइ ॥

राग सिरी राग, पृष्ठ 63

फ़कीर अली खान को जब बताया गया कि एक फ़कीर आए हैं जो कि दीर्घ आयु को कोई महत्व नहीं देते तो वह गुरुदेव से मिलने आया। गुरुदेव ने उन्हें समझाते हुए कहा, "प्राणी को इस कायां से मोह नहीं करना चाहिए क्योंकि वास्तव में यह मिट्टी है। यदि इस के मोह जाल में बन्धे रहे तो फिर, बार-बार जन्म लेना पड़ेगा। अत: सभी प्रकार के बन्धन तोड़कर जीवन मुक्त हो जाना चाहिए। खुदा के दर पर तब ही स्वीकार्य होंगे"।

जीवन मुक्तु सो आखीऐ जिसु विचहु हउमै जाइ ॥
धंधै धावत जगु बाधिआ ना बुझै वीचारु ॥
जंमण मरणु विसारिआ मनमुख मुगधु गवारु ॥
गुरि राखे से उबरे सचा सबदु वीचारि ॥

राग मारू, पृष्ठ 1010

गुरुदेव ने उन्हें बताया कि मृत्यु को सदैव ध्यान में रख कर जीवन यात्रा करनी चाहिए जिस से अभिमान निकट नहीं आये। अभिमान, किसी प्रकार का भी हो, बन्धन है। जिस को तोड़ना अनिवार्य है नहीं तो आवागमन के चक्र से बच नहीं सकते। इस लिए गुरू के शब्दों की कमाई करनी चाहिए अर्थात गुरू उपदेशों पर ध्यान केन्द्रित करते हुए माया के बन्धनों से छुटकारा प्राप्त करना चाहिए। वह शिक्षा धारण कर अली यार ख़ान ने गुरू चरणों में नमस्कार कर दी और कहने लगा, "मैं आप का आभारी हूँ, जो आप ने समय रहते मेरा मार्ग दर्शन किया है।"

पीर रोशन जमीर – (काबुल नगर, अफ़ग़ानिस्तान)

श्री गुरू नानक देव जी कंधार नगर से अफगानिस्तान की राजधानी काबुल में पहुँचे। वहाँ के निवासियों में से कुछ एक ने बल्लख नगर के मेले में आप के दर्शन कर के लोटे थे, उन्होंने आप का पीर-ए-हिन्द हजरत बाबा नानक कह कर भव्य स्वागत किया। आप का कलाम जिन्होंने भी सुना वे आप के होकर रह गए।

माइया मोहि सगल जगु छाइआ ॥
कामणि देखि कामि लोभाइआ ॥
सुति कंचन सिउ हेतु वधाइआ ॥
सभु किछु अपना इकु रामु पराइआ ॥
ऐसा जापु जपउ जपमाली ॥
दुख सुख परहरि भगति निराली ॥ रहाउ ॥

राग प्रभाती, पृष्ठ 1342

आप जी ने अपने प्रवचनों में जन-साधारण को सम्बोधन करते हुए कहा, "लोग अपना मुख्य लक्ष्य भूल गए हैं अत: सांसारिक कार्यों में ही खो कर रह गए हैं। जब कि उन का यहां पर आने का मुख्य प्रयोजन अपनी आत्मा की खोज करना था। इस कार्य के लिए एक मात्र साधन प्रभु के नाम का चिंतन मनन करना ही है।"

आप की स्तुति सुनकर वहाँ के स्थानीय पीर रोशन ज़मीर आप से मिलने आए। उन्होंने आप से विवेचन किया। आप के युक्ति संगत विचारों से वह बहुत प्रभावित हुए। अत: आप से पूछा, "सफलता की कुंजी क्या है?" आप जी ने उत्तर में कहा, 'अपने मन पर नियन्त्रण रखो यही सफलता की कुंजी है' -

मनि जीतै जगु जीतु ॥ *'जपुजी साहिब', पृष्ठ 6*

अर्थात जो व्यक्ति मन पर नियन्त्रण करने में सफल हो जाता है वह समस्त विश्व को अपने आचरण से विजय कर सकता है।

आप जी, संगत के स्नेह में बंधे हुए, वहाँ पर बहुत दिन ठहरे। कई भक्तों ने तो आप की बाणी अपने पास संग्रह कर ली। इस अवधि में आप जी ने वहाँ पर सत्संग की स्थापना करवाई जिस में प्रतिदिन प्रात:काल हरियश होने लगा। आप वहाँ से जब विदायगी चाहने लगे तो पीर रोशन जमीर कहने लगा, "मैं आप के दीदार के बिना नहीं रह पाऊंगा।" इस के उत्तर में गुरुदेव ने कहा, "आप हर रोज सुबह सत्संगत में हमारे दीदार हमारी बाणी उच्चारण करते समय कर सकते हैं। अर्थात हमारी बाणी ही हमारे दर्शन-ऐ-दिदारे है।"

काया अमूल्य निधि – (जलालाबाद नगर, अफगानिस्तान)

श्री गुरू नानक देव जी काबुल से लौटते समय जलालाबाद पहुँचे। वहाँ की जनता ने बहुत चाव से आप का कीर्तन श्रवण किया तथा आप को बताया कि वहाँ से कुछ दूरी पर एक गांव में एक साधु रहता है जिस का नाम घड़ूका है। वह साधू सदैव मौन रहता है किसी से कुछ नहीं कहता, जो कुछ खाने को मिल जाता है उसी पर संतोष कर लेता है। प्रर्याप्त भोजन इत्यादि न करने के कारण उस का शरीर केवल हड्डियों का पिंजर मात्र रह गया है। यह जानकारी प्राप्त होते ही गुरुदेव जी, वहाँ पर पहुँचे जहां पर घड़ूका साधू मौन धारण कर के हठ योग से भजन बंदगी में लीन था। गुरुदेव ने जब उस के शरीर की ऐसी दशा देखी तो उन को बहुत दुख हुआ और कहने लगे – 'यह शरीर प्रकृति का दिया हुआ अद्‌भुत उपहार है। इस शरीर को प्रभु ने मनुष्य की आत्मा के लिए एक मकान के रूप में रखा है, जिस को अन्दर-बाहर दोनो रूपों से स्वस्थ रखना मनुष्य का कर्त्तव्य है। इस शरीर का यदि कोई अपमान करता है अर्थात आत्म हत्या करता है, भले ही वह किसी विधि द्वारा हो तो वह एक बड़ा अपराध है। जिस का उत्तरदायित्व उस पर है, इस लिए अपने शरीर के प्रति सदैव ही सावधान रहना चाहिए। यदि शरीर रोगी होगा या नहीं रहेगा तो अपना जीवन लक्ष्य कैसे प्राप्त कर सकेंगे। यह सुन्दर काया बार-बार नहीं मिलती। अत: जो मिली है उस का उचित ध्यान रखना तथा उस से उचित कार्य लेना मनुष्य का पहला धर्म है। उस समय गुरुदेव ने भाई मरदाना जी को कीर्तन करने को कहा तथा आप जी ने शब्द उच्चारण किया –

काची गागरि देह दूहेली उपजै बिनसै दुखु पाई ॥
इहु जगु सागरु दुतरु किउ तरीऐ बिनु हरि गुर पारि न पाई ॥
राग – आसा, पृष्ठ 355

कीर्तन की मधुर आवाज से घड़ूके साधु की समाधि खुल गई। वह निढ़ाल अवस्था में था अत: बोला, "मुझे सहारा दो। मैं इस बाणी से अपनी मन की प्यास-तृप्ति चाहता हूँ।" तद् पश्चात् गुरुदेव ने कहा, "यह शरीर कच्ची गागर के समान है, न जाने कब टूट जाए और सब काम अधूरे छूट जाए।" अत: प्राणी को जागरुक होना चाहिए, समय रहते इस भव सागर को पार करने के लिए हरियश करते रहना चाहिए तथा शरीर रूपी मन्दिर को भी इस कार्य के लिए तैयार रखना चाहिए।

मठ गोरख हटड़ी – (पिशावर नगर, सीमा प्रांत)

श्री गुरू नानक देव जी ज़लालाबाद से दर्रा खैबर पार कर पिशावर नगर में पहुँचे। उन दिनों वहां पर सिद्ध-योगियों का एक प्रसिद्ध मठ "गोरख हटड़ी" था। उन योगियों के आलौकिक बल के चमत्कारी प्रभाव में जन-साधारण फंसे हुए थे। अत: साधारण जनता उन लोगों की खुशामद (चापलूसी) करना ही धर्म-कर्म समझती थी तथा इसी कार्य में अपने को धन्य मान लेते थे। भूली-भटकी जनता का मार्ग दर्शन करते हुए गुरुदेव ने अपने प्रवचनों में कहा, "सेवा करना उत्तम कार्य है परन्तु भय अथवा किसी दबाव में आकर सेवा करने से कोई लाभ नहीं। वास्तव में प्रत्येक व्यक्ति को स्वयं का जीवन प्रभु नाम में रंगना अति आवश्यक है। यही नाम समय आने पर फलीभूत होता है।" गुरुदेव की विचारधारा का समस्त जनता पर गहरा प्रभाव हुआ। इस से योगियों को चिन्ता हुई। वे गुरुदेव से मिलने आए। गुरुदेव ने उन्हें चुनौती देते हुए कहा, "हठ योग से कोई लाभ होने वाला नहीं। प्राप्ति तो सहज मार्ग से, गृहस्थ में रहकर कहीं अधिक हो सकती हैं। शर्त केवल यही है कि जीवन चरित्र को उज्ज्वल रखकर जीया जाए।" योगी कहने लगे, "हठ योग से हमने अपनी आयु दीर्घ कर ली है। योग साधना से हम ऐसी ही कई प्राप्तियां कर सकते हैं।" इस पर गुरुदेव ने कहा, "इन अलौकिक शक्ति प्राप्तियों से व्यक्ति अभिमानी हो कर प्रभु चरणों से दूर हो जाता है। अभिमान ही एक ऐसा रोग है जो कि प्राणी तथा प्रभु के मध्य दीवार के समान खड़ा हो जाता है। इस प्रकार सिद्धि प्राप्त व्यक्ति अपने मूल लक्ष्य से विचलित होकर भटक जाता है। रही बात आयु बढ़ाने की, जन-साधारण को तो इस की आवश्यकता ही नहीं होती। क्योंकि शरीर रूपी पुराने, वृद्ध चोले को क्यों धारण कर रखा जाए जब कि वह जरजरा हो चुका होता है अर्थात कई प्रकार के रोगों से ग्रस्त होकर कष्टों का कारण बना रहता है। जब तक पुराना चोला छूटेगा नहीं तब तक प्रकृति सुन्दर स्वस्थ नई काया कैसे प्रदान करेगी।" यह सुनकर योगी बोखला उठे। कहने लगे, 'पहले यह बताओ मनुष्य कितनी आयु भोग सकता है?' गुरुदेव ने कहा, "इस विषय में आप को अधिक ज्ञान है, आप ही इस पर प्रकाश डालें।" एक योगी अपना अनुभव बताते हुए कहने लगा, "यदि शरीर की ठीक से देख-भाल की जाए। पौष्टिक आहार तथा व्यायाम किया जाए तो मनुष्य समान्यत: सौ वर्ष सरलता

से स्वस्थ्य रहते हुए जीवन व्यतीत कर सकता है।" इस पर दूसरा योगी बोला, "योग-अभयास से इस आयु को कई गुणा बढ़ाया जा सकता है।" यह सब सुनकर गुरुदेव ने अपना निर्णय देते हुए कहा -

हम आदमी हां इक दमी मुहलति मुहतु न जाणा ॥
नानकु बिनवै तिसै सरेवहु जा के जीअ पराणा ॥
राग धनासरी, पृष्ठ 660

गुरुदेव ने कहा, "मैं जो यह श्वास ले रहा हूँ वही मेरा अपना है परन्तु दूसरा श्वास जो मैंने अभी लेना है उस के विषय में कुछ नहीं कह सकता कि वह श्वास (सांस) आए या न आए। न जाने कब हृदय गति बन्द हो जाए। इस लिए मैं मृत्यु को सदैव सामने रख कर कार्य करता हूँ।"

बाबर का आक्रमण-सैदपुर, (ऐमनाबाद-प॰ पंजाब)

श्री गुरू नानक देव जी पिशावर नगर से सीधे सैदपुर पहुँचे। उन दिनों अफ़ग़ानिस्तान के बादशाह (मीर) बाबर ने हिन्दुस्तान पर आक्रमण कर दिया था। गुरुदेव ने अफगानिस्तान में विचरण करते समय यह अनुमान लगा लिया था कि प्रशासन की तरफ से सैनिक गति-विधि तीव्र हो चुकी है। अत: आक्रमण की तैयारियां हो रही हैं। युद्धों से होने वाले परिणामों से आप जी अपने देश वासियों को समय रहते सावधान करना चाहते थे। इस लिए आप अपने प्यारे मित्र भाई लालो जी के यहाँ पधारे। इतने में पिशावर के शासकों (हाक्मों) ने बिना युद्ध किये बाबर से पराजय स्वीकार करते हुए सन्धि कर ली। इस प्रकार बाबर विजय के नारे लगाता हुआ, सैदपुर पर आक्रमण करने आ गया। सैदपुर वासियों को जब स्थानीय प्रशासन की तरफ से बाबर के आक्रमण का प्रतिरोध करने के लिए तैयार होने को कहा जाने लगा तो गुरुदेव ने सभी को सांत्वना देने लगे कि समय रहते सावधानी पूर्वक कार्य कर लेने चाहिए जिस से निर्दोष जन-साधारण युद्ध की लपेट में न आवें। आप के विचार सुनकर एक व्यक्ति आप के पास आया और बोला, "हे

गुरुदेव ! मेरे घर में मेरी बिटिया का विवाह निश्चित हो रखा है। मैं क्या करूं?" गुरुदेव ने तब उसे एक विशेष सुरक्षित स्थान बताया जहां पर सभी साधन उपलब्ध थे तथा कहा, "आप वहाँ जाकर विवाह की व्यवस्था करें। बारात को वहीं आमंत्रित करें इसी में सभी का भला है।" इस प्रकार गुरुदेव स्वयं सभी लोगों को जागरुक करने में व्यस्त हो गए और अपनी सुरक्षा करने का ध्यान मन से निकाल दिया। गुरुदेव के कहने पर कुछ लोगों ने सुरक्षित स्थानों में शरण ले ली परन्तु जो लोग युद्ध की विभीषिका से अवगत होना नहीं चाहते थे अथवा धन, यौवन तथा सत्ता के नशे में थे, गुरुदेव की बातों पर उन्होंने ध्यान नहीं दिया। बाबर के आक्रमण से बचने के लिए शासक वर्ग अंधविश्वासों के जाल में फंसे होने के कारण तांत्रिक क्रियाओं में उलझे हुए थे। सैनिक बल का पुनर्गठन करने के स्थान पर उन्होंने मुल्लाओं को कलाम पढ़ने (कुरान का पाठ करने) पर लगा दिया ताकि आफत पर विजय प्राप्त की जा सके। सैनिक शक्ति का समय पर नवीनीकरण आधुनिकीकरण न होने के कारण बाबर जल्दी ही विजयी हो गया क्योंकि उस के पास नये समय का तोपखाना इत्यादि शस्त्र-अस्त्र थे।

सैदपुर के शासकों ने बाबर का रणक्षेत्र में मुकाबला किया। परन्तु सैनिक सन्तुलन ठीक न होने के कारण पराजित हो गए। जिस से विजयी बाबर की सैनाएं नगर को ध्वसत करने में जुट गई। सैनिकों ने अत्याचार करने प्रारम्भ कर दिये, क्योंकि विजय की मस्ती में बाबर ने अपनी सेना को माले-ए-गनीमत को हथियाने (लूट-पाट करने) की पूरी छुट्टी दे दी थी। जिस से लूट पाट के साथ-साथ युवतियों के साथ बलात्कार होने लगे। शत्रु-सैनिकों के घरों को आग लगा दी गई और जन-साधारण का अपमान होने लगा। कई निर्दोष मौत के घाट उतार दिये गए। चारों तरफ मृत्यु का तांडव नाच हो रहा था। बाबर के सैनिकों को मजदूरों की आवश्यकता पड़ी। बाकी बच गये लोगों को बन्दी बना लिया गया। गुरुदेव तथा उन के साथी भाई लालो, भाई मरदाना जी भी इन्हीं बन्दियों में थे। बन्दिओं का कार्य था कि सेना का सामान ढोना तथा उन के भोजन के लिए आटा पीसना। अधेड़ आयु के लोगों को चक्की पीसने के लिए नियुक्त किया गया। भाई मरदाना जी ऐसी परिस्थिति में संकेतिक दृष्टि से गुरुदेव की तरफ प्रश्न करने लगे। गुरुदेव ने तब उन्हें आदेश दिया कि वे रबाब बजाने का कार्य ही प्रारम्भ करें। जैसे ही भाई जी ने रबाब में सुर-ताल बनाया गुरुदेव उच्चारण करने लगे-

सोहागणी किआ करम कमाइआ ॥

पूरबि लिखिआ फलु पाइआ ॥

नदरि करे कै आपणी आपे लए मिलाइ जीउ ॥

हुकमु जिना नो मनाइआ ॥

तिन अंतरि सबदु वसाइआ ॥

सहीआ से सोहागणी जिन सह नालि पिआर जीउ ॥

जिना भाणे का रसु आइआ ॥

तिन विचहु भरमु चुकाइआ ॥

नानक सतिगुरु ऐसा जाणीऐ जो सभसै लए मिलाइ जीउ ॥

सिरी राग, पृष्ठ 71

गुरुदेव ने जैसे ही ईश्वर इच्छा में जीने मरने का उपदेश गायन किया, सभी बन्दियों के चेहरे सामान्य अवस्था में आ गए। उन के हृदय से भय निकल गया जिस से वे गुन-गुनाते हुए मस्ती में अपना-अपना कार्य करने लगे। इस मस्ती भरे गान को सुनकर वहाँ पर खड़े सन्तरी आश्चर्य में अपने अधिकारियों को बुला लाए कि एक मस्ताना फ़कीर है जो कि दयनीय परिस्थितियों में भी निर्भय होकर मधुर कंठ से गा रहा है। इस दृश्य को देखकर अधिकारी भयभीत हुए कि कहीं वह कामिल फ़कीर (पूर्ण संत) हुआ तो, जोर-जबर के कारण कोई शाप ही न दे दे। अतः वे सीधे मीर बाबर के पास सूचना देने पहुँचे। सूचना पाते ही बाबर स्वयं बन्दियों को देखने चला आया। बाबर के साथ आये अहलकारों में से एक ने गुरुदेव को तुरन्त पहचान लिया। उसने बाबर को बताया कि कुछ दिन पहले इस फकीर को काबुल में देखा था। वहाँ के लोग इन की बहुत मान्यता करने लगे थे। बाबर ने जैसे ही करुणामय वातावरण के स्थान पर हर्ष उल्लाहस का माहौल पाया तो उसे समझने में देरी नहीं लगी कि वह सब उसी फ़कीर की ही देन है। उस ने गुरुदेव से अभद्रता (गुस्तारवी) की क्षमा याचना की। परन्तु गुरुदेव ने उसे फटकारते हुए कहा, "तुम बाबर नहीं ज़ाबर हो। पापियों की बारात लेकर आए हो। तुमने निर्दोष लोगों की हत्याएं करवाई है तथा महिलाओं के शील भंग करवाए हैं। यदि

शासकों को दण्डित किया होता तो हमें कोई रोष नहीं था परन्तु तुमने बिना कारण विध्वंसक कारवाइयों से जन-साधारण को बेघर कर दिया है। जिस का अल्लाह की दरगाह में तुम्हें हिसाब देना होगा।" इस कड़वे सत्य को सुनकर बाबर का सिर शर्म से झुक गया। उसने अपना अपराध स्वीकार करते हुए कहा, "हे फ़कीर साईं! आप मेरा मार्ग दर्शन करें।" इस पर गुरुदेव ने कहा, "जो शासक अपनी प्रजा के साथ न्याय नहीं करते। इस के विपरीत प्रजा का भ्रष्टाचार तथा क्रूरता से शोषण करते हैं वह बहुत जल्दी समाप्त हो जाते हैं। प्रकृति का ऐसा ही नियम है। यदि चिर-स्थाई रहना चाहते हो तो दयावान बनकर सदैव न्याय, इन्साफ का तराजू हाथ में रखो।" बाबर ने तुरन्त गुरुदेव के चरण तुरन्त स्पर्श करते हुए शपथ ली, "आयंदा कभी भी मेरे सैनिक जन-साधारण पर अत्याचार नहीं करेंगे। मैं आप की शिक्षा धारण करते हुए घोषणा करता हूँ कि नगर में अमन बहाल तुरन्त कर दूँगा। यदि आप की आज्ञा हो तो इस नगर का नाम भी सैदपुर से अमन-आबाद रख देता है।" इस बात के लिए गुरुदेव ने तुरन्त स्वीकृति प्रदान कर दी। बाबा और बाबर में सन्धि हो गई। बाबर ने गुरुदेव से कहा, "अब मेरे लिए आप कोई हुक्म करें मैं आप का सेवादार हूँ।" इस पर गुरुदेव ने कहा, "सभी बन्दियों को आदर सहित रिहा कर दो।" बाबर ने कहा ऐसा ही होगा परन्तु आप भी मुझ से कुछ धन सम्पति ले लें। उत्तर में गुरुदेव ने कहा-

मानुख की जो लेवै ओटु ॥
दीन दुनी मै ताकउ तोटु ॥
कहि नानक सुण बाबर मीर ॥
तैथों मंगे सो अहमक फ़कीर ॥ *(जन्म साखी)*

मैं बन्दों से नहीं खुदा से मांगता हूँ, मुझे अपने लिए कुछ नहीं चाहिए जो भी चाहिए जनता के लिए अथवा परोपकार के लिए चाहिए।

नोट- सैदपुर नगर का नाम धीरे-धीरे (बाद में) ऐमनाबाद हो गया।

माता पिता से मिलन – (तलवण्डी ग्राम, प० पंजाब)

श्री गुरू नानक देव जी बाबर को एक अच्छा शासक होने की शिक्षा देकर स्वयं भाई मरदाना जी के साथ अपने नगर तलवण्डी पहुँचे। आप की चौथी प्रचार यात्रा का यह अन्तिम चरण था। नगर वासियों ने आप का भव्य स्वागत किया। आप के माता-पिता अब वृद्ध हो चुके थे, आप ने उन से विनम्र आग्रह किया, "मैं अब स्थाई जीवन व्यतीत करने के लिए जो नया नगर बसाने की योजना बना रहा हूँ, आप वहाँ पर मेरे और अपने पोतों के साथ रहें। जैसे कि आप जानते हैं वह स्थान रावी नदी के तट पर मेरे ससुर ने कृषि कार्यो के लिए कुछ वर्ष पूर्व खरीदा था। माता पिता ने स्नेह-वश गुरुदेव से सहमति प्रकट कर दी। परन्तु कहा, "बेटा पहले आप वहाँ ठीक से रहन-सहन की व्यवस्था करो, तत्पश्चात् हमें भी यहाँ से ले जाना।" गुरुदेव ने उन की इच्छा अनुसार ही कार्यक्रम बनाया। भाई मरदाना जी भी कुछ दिन अपने परिवार के साथ रहे। अन्त में "पक्खो के रंधावे" जाते समय गुरुदेव ने भाई मरदाना को भी साथ लिया और उन्हें कहा कि आप भी अपने परिवार को तैयार रहने के लिए कहें। वहाँ पर ठीक प्रकार व्यवस्था होते ही हम सब को अपने पास बुला लेंगे। इस प्रकार गुरुदेव तलवण्डी से पक्खों के रंधावे ग्राम के लिए चल पड़े।

बुड़ा नामक किशोर – (कत्थू नंगल ग्राम, पंजाब)

श्री गुरू नानक देव जी तलवण्डी ग्राम से भाई मरदाना जी को साथ ले कर अपने परिवार को मिलने "पक्खो के रंधावे" के लिए चल पड़े। रास्ते में एक पड़ाव के समय जब आप कत्थू नंगल ग्राम मे एक वृक्ष के नीचे कीर्तन में व्यस्त थे, तो एक किशोर अवस्था का बालक आपकी मधुर बाणी के आकर्षण से चला आया और काफी समय कीर्तन श्रवण करता रहा, फिर जल्दी से घर लौट गया। घर से कुछ खाद्य पदार्थ तथा दूध लाकर गुरुदेव को भेंट करते हुए कहा, "आप, कृपया इन का सेवन करें।" उस किशोर की सेवा-भक्ति देखकर गुरुदेव अति प्रसन्न हुए और आशीष देते हुए कहा, "चिरंजीव रहो !" तथा पूछा, "बेटा तुम क्या चाहते हो?" किशोर ने उत्तर दिया, "हे गुरुदेव !

मुझे मृत्यु से बहुत भय लगता है मैं इस भय से मुक्त होना चाहता हूँ।" इस पर गुरुदेव ने कहा, "बेटा तेरी आयु तो खेलने-कूदने की है तुझे यह गम्भीर बातें कहाँ से सूझी हैं? यह मृत्यु का भय इत्यादि तो बुढ़ापे की कल्पना होती है। वैसे मृत्यु ने आना तो एक न एक दिन अवश्य ही है।" यह उत्तर सुन कर किशोर ने फिर कहा, "यही तो मैं कह रहा हूँ, मृत्यु का क्या भरोसा न जाने कब आ जाए। इस लिए मैं उस से भयभीत रहता हूँ।" उसकी यह बात सुनकर गुरुदेव कहने लगे, "बेटा तुमने तो बहुत तीक्ष्ण बुद्धि पाई है। उन सूक्ष्म बातों पर बड़े-बड़े लोग भी अपना ध्यान केन्द्रित नहीं कर पाते, यदि मृत्यु का भय ही प्रत्येक व्यक्ति अपने सामने रखे तो यह अपराध ही क्यों हो? खैर ..... तुम्हारा नाम क्या है?" किशोर ने उत्तर में बताया कि उसका नाम बूड़ा है तथा उसका घर इसी गांव में है। गुरुदेव ने तब कहा, "तेरे माता पिता ने तेरा नाम उचित ही रखा है क्योंकि तू तो अल्प आयु में ही बहुत सूझ-बूझ की बूढ़ों जैसी बातें करता है, वैसे यह मृत्यु का भय तुम्हें कब से सताने लगा है?" किशोर (बुड़ा जी), "एक दिन मेरी माता ने मुझे आग जलाने के लिए कहा मैंने बहुत प्रयत्न किया परन्तु आग नहीं जली। इस पर माता जी ने मुझे बताया कि आग जलाने के लिए पहले छोटी लकड़ियां तथा तिनके घास इत्यादि जलाए जाते हैं। तब कहीं बड़ी लकड़ियां जलती हैं। बस मैं उसी दिन से इस विचार में हूँ कि जिस प्रकार आग पहले छोटी लकड़ियों को जलाती है ठीक इस प्रकार यदि मृत्यु भी पहले छोटे बच्चों या किशोरों को ले जाए तो क्या होगा?" गुरुदेव ने कहा, "बेटा तुम भाग्यवान हो जो तुम्हें मृत्यु निकट दिखाई देती है। इसी पैनी दृष्टि के कारण एक दिन तुम बहुत महान बनोगे।" यदि तुम चाहो तो हमारे आश्रम में आकर रहो।" यह बात सुनकर किशोर अति प्रसन्न हुआ और पूछने लगा, "हे गुरुदेव ! आप का आश्रम कहाँ है?" गुरुदेव ने उसे बताया कि उनका आश्रम वहाँ से लगभग 30 कोस की दूरी पर रावी नदी के तट पर निमार्णाधीन है। उन्होंने उस का नाम करतार पुर रखने का निश्चय किया है। अब वे लौटकर उस में स्थायी रूप से रहने लगेगें तथा वहीं से गुरुमत का प्रचार करेंगे।"

इस सब जानकारी को प्राप्त कर किशोर (बूड़ा जी) कहने लगा, "गुरुदेव ! मैं अपने माता-पिता से आज्ञा लेकर कुछ दिन बाद आप की सेवा में उपस्थित हो जाऊंगा।" गुरुदेव ने तब किशोर से कहा-यदि हमारे पास आना हो तो पहले उस के लिए दृढ़ निश्चय तथा आत्म समर्पण की भावना पक्की कर लेना और उस के लिए स्वयं को तैयार करो।"

जउ तउ प्रेम खेलन का चाउ ।।
सिरु धरि तली गली मेरी आउ ।।
इतु मारगि पैरु धरीजै ।।
सिरु दीजै काणि न कीजै ।।

मः 1, पृष्ठ 1412

घर पर स्थाई वापसी- (पक्खों के रंधावे ग्राम, पंजाब)

श्री गुरू नानक देव जी अपने परम साथी मरदाना जी सहित अपने ससुराल, पक्खों के रंधावे, अपनी चौथी (पश्चिम कीद्ध यात्रा समाप्त कर लौट आए हैं। यह समाचार क्षण भर में गांव में फैल गया। आप के दर्शनों को भीड़ उमड़ पड़ी। उस भीड़ में चौधरी अजिता भी आया। चारों ओर हर्ष-उल्लास में मंगल गीत गाये गए।

अन्तिम (छटा अध्याय)
चौधरी अजिता जी को उपदेश

श्री गुरू नानक देव जी अपने चौथे प्रचार दौरे से वापस आये, तो पक्खो ग्राम के चौधरी अजिता से घनिष्ठता बढ़ती गई। समय-समय, अलग-अलग विषयों पर गुरुदेव का उन के साथ विचार विमर्श होता रहता। वह अपनी शंकाओं का समाधान गुरुदेव से करवाते रहते। इस प्रकार गुरुदेव की शिक्षा उन के मन को बहुत भाती।

एक दिन चौधरी अजिता, गुरुदेव से विचार-विमर्श करते समय पूछने लगा, "हे गुरुदेव जी! इस जीवन को सार्थक करने के लिए मनुष्य ने कई धर्मो को अपनाया है तथा कई प्रकार की मान्यताओं का प्रचलन किया है। किन्तु हमें कौन सा मार्ग अपनाना चाहिए?" गुरुदेव ने उत्तर में कहा, "धर्म का मार्ग प्रेम-भक्ति है। वस्तुत: धर्म वही उचित है जिस को प्रत्येक वर्ग का व्यक्ति सहज रूप में अपना सके तथा जिस को अपनाने से प्राप्ति अधिक हो और परीश्रम कम करना पड़े। जन-साधारण को गृहस्थ में समस्त घरेलू कर्त्तव्य निभाते हुए, ध्यान (मन) प्रभु चरणों में रखना चाहिए। इस विधि को 'सहज योग' कहते हैं। इस में मन पर नियन्त्रण रखते हुए सभी कुछ संयम से ही करना है किसी बात की अति नहीं करनी। जो भी कार्य प्रकृति के नियमबद्ध सिद्धांतों के अनुरूप होगा, उस में निश्चिय ही सफलता मिलेगी। इस लिए इस मार्ग को 'गाडी राह' भी कहते हैं जिस पर हर कोई चल सकता है। इस में कर्म-काण्डों का खण्डन कर मन की शुद्धता पर बल दिया गया है। आध्यात्मिक दुनिया में शरीर गौण है। वहाँ केवल मन ही प्रधान है। मन को जीतने से लक्ष्य तुरन्त प्राप्त होता है। अत: मन को साधने के लिए सत्संग करना अनिवार्य है। साध-संगत में व्यक्ति अवगुणों का त्याग कर गुणों को ध ारण करने का अभ्यास करता है। इस कार्य के लिए उस का मार्ग दर्शन महापुरुषों की बाणी तथा उन का जीवन चरित्र प्रेरणा स्रोत होता है।"

यह सब कुछ जान कर अजिता चौधरी कहने लगा, "गुरुदेव, फिर देरी किस बात की है? आप यहाँ स्थायी रूप से अपनी देख-रेख में सत्संग मण्डल की स्थापना करें। जिस से जिज्ञासु लाभान्वित हों।" गुरुदेव ने उत्तर दिया, "अब हम उस स्थान को बसाने का कार्यक्रम बना रहे हैं जिसे पिता (ससुर मूल चन्द) जी ने कुछ वर्ष पूर्व कृषि कार्यो के लिए खरीदा था।"

इस पर अजिता विनती करने लगा कि मैं आप का शिष्य बनना चाहता हूँ। कृपया मुझे सब से पहले गुरू दीक्षा देकर कृतार्थ करें। गुरुदेव ने उन के हृदय की तीव्र, सच्ची इच्छा को देखकर उस को गुरू दीक्षा दे कर सिक्ख बनाने का वचन दिया।

श्री गुरू नानक देव जी पक्खो के रंधावे ग्राम से चौधरी अजिता को साथ लेकर रावी के तट पर एक नए नगर की आधार शिला रखने के लिए ले आए। आप जी ने आस-पास के गांवों से सभी लोगों को आमन्त्रित किया और एक समारोह का आयोजन कर भाई दोदा जी से आश्रम का शिलान्यास करवाया और सत्संग की स्थापना कर प्रस्तावित नगर का नाम करतारपुर रखा। गुरुदेव के श्रद्धालुओं ने तन, मन, धन से सेवा प्रारम्भ कर दी। कुछ ही दिनों में देखते ही देखते एक भवन हवेली के रूप में तैयार हो गया। जहां पर प्रतिदिन साध-संगत जुड़ने लगी और दूर-दूर से लोग आकर रहने लगे। वहाँ की महमा कस्तूरी की सुगंधि की तरह फैलने लगी। निकट के नगर कलानौर परगने का जागीरदार (हाकिम) करोड़िया इस स्तुति को सहन नहीं कर पाया। उस का अभिमान उस के आड़े आ गया। उसने सोचा, वह भूमि तो उनके क्षेत्र की है, वहाँ करतारपुर बसाया जा रहा है। माना कि उस ने उस भूमि को पटवारी मूलचन्द को कृषि कार्यो के लिए बेचा है परन्तु वहाँ पर उन को नगर बसाने की आज्ञा किस ने दी है? यदि वे लोग खेती न कर, वहाँ पर बस्ती बनाना चाहते थे तो उन से अनुमति लेनी चाहिए थी। क्योंकि खेती न करने से उसे लगान मिलने वाला नहीं है। खैर..... एक तो उस की आज्ञा के बिना नगर बसा रहे हैं दूसरा समाज में जागृति के नाम पर, समाज का ढांचा ही खराब कर डालेंगे। जाति-बिरादरी, हिन्दू-मुसलमान के परम्परागत रीति रिवाजों को नष्ट करना

इस का काम है। वह ऐसे समाज विरोधी तत्वों को जड़ से उखाड़ फेकेगा। अत: उस ने अपना एक प्रतिनिधि भेज कर कहलवाया, जिस भूमि पर आप ने बस्ती बसानी प्रारम्भ की है वह सरकारी भूमि है। जो आप ने रुपया जमा करवाया था वह कई वर्षों के बकाया लगान में चुकता हो गया है। इस लिए इस भूमि को खाली कर दो।

गुरुदेव ने उत्तर में कहा, "हमने यह भूमि खरीदी है इस का पट्टा हमारे पास है। जहां तक लगान का प्रश्न है, हम ने इस भूमि पर पिछले कई वर्षों से खेती की ही नहीं, इस लिए लगान किस बात का? भूमि हमारी है हम उस का किसी प्रकार से भी प्रयोग करें, उस पर हमारा अधिकार है। हमें इस के लिए किसी से अनुमति लेने की कोई आवश्यकता नहीं।" इस उत्तर को प्राप्त कर करोड़िया बहुत क्रोधित हुआ। उसने अपने साथ कुछ सिपाही (प्यादे) तुरन्त लिए और गुरुदेव के डेरे को बर्बाद करने के विचार से घोड़े पर सवार होकर चल पड़ा। रास्ते में एक स्थान पर घोड़ा एक साधारण से विस्फोट से भयभीत होकर नियन्त्रण से बाहर हो गया। जिस कारण करोड़िया मल घोड़े से नीचे गिरा और टांग पर गहरी चोट आई। पीड़ा के कारण आगे बढ़ना सम्भव न था, अत: रास्ते में ही से वापिस लौट गया। कुछ दिन पश्चात् जब वह स्वस्थ हुआ, तब उसने पुन: सिपाही लेकर डेरा बर्बाद करने की ठानी और घर से चल पड़ा। तब कई हितैषियों ने उसे समझाने की चेष्टा की कि नानक जी पूर्ण पुरुष हैं उन से बिना कारण वैर-भाव रखना उचित नहीं।, इस प्रकार उस का अनिष्ट हो सकता है। किन्तु करोड़िया किसी की भी सुनने को तैयार नहीं था। वह क्रोध में आग उगलता हुआ आगे बढ़ने लगा। लम्बी यात्रा के कारण उस का रक्त चाप बढ़ गया जिस कारण उस की आंखों के सामने अंधेरा छाने लगा। वह चक्कर खा कर गिरने लगा तभी उस के सहायकों ने उसे थाम लिया और परामर्श दिया कि वे अपनी विचार-धारा बदलें और शान्तचित होकर पुन: विचार करें कि वे जो करने जा रहे हैं क्या यह न्याय है? इस पर करोड़ियां वापस चला गया। घर जा कर अपनी भावनाओं का विशलेषण करने लगा।

गुरुदेव को इस घटना का पता चला तो निम्नलिखित पंक्तियां उच्चारण की-

नानकु आखै रे मना सुणीऐ सिख सही ॥
लेखा रबु मंगेसीआ बैठा कढि वही ॥
तलबा पउसनि आकीआ बाकी जिना रही ॥
अजराईलु फरेसता होसी आइ तई ॥
आवणु जाणु न सुझई भीड़ी गली फही ॥
कूड़ निखुटे नानका ओड़कि सचि रही ॥ 2 ॥

राग रामकली, पृष्ठ 953

अन्त में एक दिन वही करोड़िया जन-साधारण बनकर, कुछ उपहार लेकर पैदल ही गुरुदेव के दर्शनों को आया। गुरुदेव की महमा उसने जैसी सुनी थी वैसी ही पाई। डेरे में प्रात:काल तथा संध्या समय हरि यश होता देखकर उस का मन शान्त हो गया। उस ने गुरुदेव को उपहार भेंट किये तथा अपनी भूल के लिए प्रायश्चित करते हुए क्षमा याचना की। गुरुदेव ने उसे शिक्षा देते हुए कहा, "किसी के प्रति भी अनुमान लगाकर निर्णय करना भूल होती है। साक्षात अनुभव ही सत्य निष्कर्ष होता है। अत: प्रत्यक्ष को प्रमाण की कोई आवश्यकता नहीं होती। इस लिए आप बताएं कि आप ने यहाँ क्या गलत देखा है, जो कि सामाजिक अथवा राजनैतिक नियमों के विरुद्ध है। यहां तो परस्पर प्यार ही प्यार बांटने की शिक्षा दी जाती है। यही नियम प्रकृति के निकट ला खड़ा करता है, जिस से व्यक्ति आनंद उठा सकता है।"

करतार पुर के जागीरदार करोड़िया से झगड़ा समाप्त होते ही गुरुदेव ने अपने छोटे साहबज़ादे लखमी दास तथा भाई मरदाना जी को तलवण्डी भेजा कि वे अपने दादा-दादी तथा भाई मरदाना जी के परिवार को करतारपुर ले आयें। इस प्रकार गुरुदेव के माता पिता और भाई मरदाना जी का परिवार करतार पुर रहने लगे।

स्यालकोट के व्यापारी मूल चन्द की मृत्यु

श्री गुरू नानक देव जी ने कुछ दिनों में अनुभव किया कि करतार पुर नगर बसाने के लिए उसे व्यापारिक केन्द्र बनाना अति आवश्यक है। इस लिए उन्होंने विचार किया, यदि वहाँ पर कुछ व्यापारियों को आमन्त्रित कर के स्थायी रूप में बसा दिया जाए तथा कुछ कारीगरों द्वारा उद्योग स्थापित किये जाएं तो करतार पुर में किसी वस्तु का अभाव न होने के कारण नगर का निर्माण हो जाएगा। अत: आप जी ने निकट के नगर स्यालकोट से कुछ व्यापारियों को निमन्त्रण देने के विचार से स्वयं भाई मरदाना जी सहित चले जाना पसंद किया। क्योंकि वहाँ पर आप का एक सिक्ख, भाई मूलचन्द रहता था जो कि आप का परम भक्त होने के साथ एक व्यापारी भी था। गुरुदेव ने भाई मरदाना जी द्वारा उस के घर संदेश भेजा कि वह उन्हें मिलने आये। मूलचंद की पत्नी को जब मालूम हुआ कि वही फ़कीर दोबारा आए हैं जिन के साथ उसका पति घर-बाहर त्याग कर चला गया था तो उस ने सोचा यदि इस बार भी उसका पति उन के साथ चला गया तो उसका क्या होगा। अत: उस ने छल से काम लेते हुए अपने पति को छल चरित्र द्वारा बहला फुसला कर छिप जाने के लिए विवश कर दिया और झूठ-मूठ कह दिया कि मूल चन्द घर पर नहीं, कहीं बाहर गए हुए हैं। गुरुदेव को जब यह उत्तर मिला तो उन्होंने कहा, "अच्छा उस की विमुखता उस को घर पर नहीं रहने देगी।" कच्चे कोठे में छिपे होने के कारण मूल चन्द को सांप ने काट लिया। जिस कारण उस की मृत्यु हो गई।

नगर वासियों ने गुरुदेव को पहचान लिया और उन का हार्दिक स्वागत किया। गुरुदेव ने व्यापारियों की एक सभा बुलाई जिस में सभी को नये नगर करतार पुर में जाकर निवास करने के लिए नि:शुल्क भूमि देने का प्रस्ताव रखा जिस को बहुत से व्यापारियों तथा कारीगरों ने तुरन्त स्वीकार कर लिया। तभी मूल चन्द की मृत्यु का समाचार गुरुदेव को दिया गया। तथा विनती की गई कि उसे क्षमा करें। इस पर गुरुदेव ने कहा, "ठीक है इस का कल्याण अब अपने दसवें स्वरूप में करेंगे।"

श्री गुरू नानक देव जी द्वारा भूमि के निःशुल्क प्रस्ताव के आकर्षण के कारण दूर-दूर से व्यापारी तथा कारीगर लोग करतार पुर में बसने लगे। देखते ही देखते नगर की जन संख्या दुगनी-चौगुनी होने लगी। इस के अतिरिक्त गुरुदेव के दर्शनों के लिए भी रात-दिन श्रद्धालुओं का तांता लगने लगा। इस लिए गुरुदेव ने रात दिन लंगर लगवा दिया। लंगर के लिए अनाज व्यवस्था बनी रहे, इस के लिए आप जी ने नगर बसने की भूमि के अतिरिक्त भूमि पर खेती आरम्भ कर दी। आप जी अपनी दिन चर्या में अमृत बेला में उठकर रावी नदी में स्नान करने के उपरान्त धर्मशाला में बैठकर सहज योग में प्रभु चिन्तन करते। जब संगत तथा रबाबी मरदाना जी आ जाते तब कीर्तन आरम्भ हो जाता। सूर्य उदय होने पर आप जी संगत के समक्ष प्रवचन करते, तत्पश्चात् समाप्ति कर समस्त संगत अपने-अपने घरों को लौट कर घर-गृहस्थी के कार्यों में लीन हो जाती। गुरुदेव स्वयं भी हल अथवा दरांती लेकर अपने खेतों की देख-भाल के लिए जाते। दूर से आए दर्शनार्थियों के लिए लंगर व्यवस्था होती। स्थायी रूप से साथ में रहने वाले सेवकों को आदेश था कि वे अवकाश पाते ही खेतों में कार्यरत हो जाए। सन्ध्या समय पुनः सत्संग का दरबार लगता। गुरुदेव श्रद्धालुओं के मन की शंकाओं का निवारण करते तथा उन की जिज्ञासाओं पर विचार-विमर्श अथवा गोष्ठी होती। इस तरह के दैनिक नियमों के अनुसार गुरुदेव ने अपने सिक्खों (शिष्यों) को ढालना प्रारम्भ कर दिया तथा चरित्र निर्माण के कार्यक्रम में बाणी का अध्ययन करना अनिवार्य कर दिया गया। इस के साथ ही तीन सूत्रीय कार्यक्रम को भी व्यवहारिक रूप रेखा देनी प्रारम्भ कर दी (किरत करो, नाम जपो और बांट कर खाओ)।

श्री गुरू नानक देव जी के दरबार में एक दिन एक वैरागी साधु आया। उस ने सत्संग में बैठकर आप जी के प्रवचन सुने तथा अपनी शंकाओं का आप से समाधान करवाया परन्तु जब भोजन का समय हुआ तो उसने पंक्ति में बैठकर लंगर ग्रहण करने से इन्कार कर दिया और कहने लगा, "मैं भोजन स्वयं, अपने हाथों से अति पवित्रता पूर्वक तैयार करता हूँ। अतः आप मुझे रसद-सामग्री दे दें। मैं भोजन स्वयं तैयार कर लूँगा।" गुरुदेव ने उसे समझाने की चेष्टा की, कि लंगर में भी भोजन पवित्रता को ध्यान में रख कर ही तैयार किया जाता है परन्तु सब व्यर्थ, वह नहीं माना और अपने हठ पर अड़ा रहा कि वह तो भोजन स्वयं तैयार कर के ही खाता है। इस पर गुरुदेव ने उसे रसद देने का आदेश दे दिया। वह रसद लेकर एक स्थान पर भूमि खोद कर चूल्हा बनाने लगा तो उस स्थान में हड्डियां गड़ी हुई निकल आईं। उस ने वह स्थान छोड़ कर बहुत सारे रसोई बनाने के लिए अन्य स्थान चुने परन्तु जिस स्थान को भी खोदता वहीं से हड्डियां निकल आती। इस प्रकार वह पूरा दिन रसोई के लिए स्थान चुनता रहा किन्तु उसे कोई भी ऐसा स्थान न मिला जहां हड्डियां न हों। अन्त में वह भूखा-प्यासा तथा थका हारा वापिस लौट आया और गुरू जी पास निवेदन करने लगा, "मुझे जैसा भी है भोजन कराएं नहीं तो मैं भूख प्यास से मर जाऊँगा।" सिक्खों ने तब उसे बहुत प्रेम से भोजन कराया और कहा, "आप झूठी पवित्रता का अभिमान लिए बैठे हैं जो कि आध्यात्मिक मार्ग के पंथिक के किसी काम की नहीं। पवित्रता तो केवल वैज्ञानिक दृष्टिकोण से केवल जीवाणुओं तथा कीटाणुओं से सुरक्षा के लिए की जाती है।"

गुरुदेव ने वैरागी साधु को सम्बोधित होते हुए कहा, "बिना किसी आधार के पवित्रता के नाम पर पाखण्ड करना अपने लिए झंझट मोल लेना है तथा इस में समय और शक्ति दोनों ही व्यर्थ जाते हैं। लाभ के स्थान पर सदैव हानि ही हानि प्राप्त होती है अतः यह जान लेना चाहिए कि अनाज, पानी, नमक तथा घी इत्यादि का मिश्रण आग पर पकाते ही पवित्र वस्तु बन जाती है, किन्तु इस पापी शरीर के स्पर्श मात्र से उस में लार मिश्रण से अपवित्र होकर विष्टा का रूप धारण कर लेता है। इस लिए जान लेना चाहिए कि केवल वही मनुष्य पवित्र है जो प्रभु का नाम स्मरण करते हैं। जो लोग प्रभु चिंतन से दूर हैं वे भले ही लाख बार शरीर स्वच्छ करें या बार-बार पवित्रता के नाम पर वस्तुओं को धोऐं, तो भी वे कदाचित पवित्र नहीं माने जा सकते।

अन्न देवता पानी देवता बैसंतर देवता लूणु
पंजवा पाइआ घिरतु ।। ता होआ पाकु पवितु ।।
पापी सिउ तनु गडिआ थुका पईआ तितु ।।
जितु मुखि नामु न ऊचरहि बिनु नावै रस खाहि ।।
नानक ऐवै जाणीऐ तितु मुखि थुका पाहि ।।
राग आसा, पृष्ठ 473

सूचे ऐहि न आखीअहि, बहनि जि पिंडा धोइ ।।
सूचे सेई नानका जिन मनि वसिआ सोइ ।।
राग आसा, पृष्ठ 472

गुरुदेव अचल बटाला के मेले में

श्री गुरू नानक देव जी, स्वयं द्वारा बसाए गए नगर 'करतार पुर' में मानव मूल्यों पर आधारित, नव चेतना के लिए जिन सिद्धांतों का प्रचार कर रहे थे, उन्होंने उस जीवन शैली को गुरुमति मार्ग का नाम देकर, उस पद्धति से जीवन यापन करने वालों को सिक्ख का नाम दिया। वैसे आप जी, गुरू-सिक्ख का नाता तो अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विदेशों में भी स्थापित कर आए थे। परन्तु उस के लिए केन्द्रिय स्थान न होने के कारण, पुन: सम्पर्क न हो पाने से, वह नाता प्रफुल्लित नहीं हो पा रहा था। समय के अन्तराल या कुछ भौगोलिक दूरियों के कारण जो विघ्न बीच में आए थे उन्हें पुन: सुरजीत करने के लिए आप ने जन-साधारण से सीधा सम्बन्ध स्थापित करने का फिर से विचार किया अत: आप इस उद्देश्य को लेकर निकट के नगरों के मेलों इत्यादि में सम्मिलित होने के लिए अचल बटाला पहुँचे।

जिला गुरदासपुर में बटाला नगर से दो कोस दक्षिण की तरफ अचल नाम का एक प्राचीन शिव मन्दिर है। उस मन्दिर के कारण उस गांव का नाम भी अचल बटाला प्रसिद्ध हो गया है। उन दिनों वह स्थान नाथ पन्थी (योगियों) का बहुत प्रसिद्ध केन्द्र था। वहाँ शिवरात्रि पर्व पर हर वर्ष मेला लगता था। उस मेले में चारों तरफ से नाथ पन्थी योगी आकर धूनियां लगाते थे और लोगों को प्रभावित कर उन से धन बटोरने के लिए अनेकों प्रकार की सिद्धियों का प्रर्दशन करते थे। उन के अतिरिक्त वैष्णव और अन्य सम्प्रदाय के साधु भी अपने प्रचार द्वारा श्रद्धालुओं से धन संग्रह करने के लिए आते थे। वे वैष्णव लोग जिन्हें पंजाब के लोग प्राय: भगतिया कहते थे, लोगों को रास लीला और नृत्य दिखाकर या भक्ति भावना के पदे (शब्द) गा कर रिझाते थे। उस मेले में इस बार श्री गुरू नानक देव जी भी अपने सेवकों को साथ लेकर जन-साधारण का मार्ग दर्शन करने के लिए आए। आप जी ने एक वृक्ष के नीचे अपना खेमा लगाया और स्वयं सेवकों के साथ अपनी परम्परा अनुसार कीर्तन में व्यस्त हो गए कीर्तन की मधुरता के चुम्बकीय आकर्षण से अपार जन समूह आप के निकट आकर बैठ गया। दूसरी तरफ वैष्णव भक्त (भगतिए) लोग, अपनी रास लीला द्वारा जनता का मनोरंजन कर रहे थे जिस कारण

खेल तमाशा देखने वाले वहाँ एकत्र हो गए। अत: नाथ-योगियों की तरफ किसी का भी ध्यान नहीं गया। वे लोग इस तरह की उपेक्षा सहन नहीं कर पा रहे थे।

गुरुदेव जब यहाँ अपने सेवकों सहित पहुँचे तो कुछ योगियों ने उन्हें तुरन्त पहचान लिया, जिन की भेंट लगभग 30 वर्ष पूर्व गुरुदेव से सुमेर (कैलाश) पर्वत पर हुई थी। भले ही 30 वर्ष के अन्तराल के कारण गुरुदेव अब युवावस्था में नहीं थे ना ही उन्होंने कोई संन्यासियों जैसी वेष-भूषा धारण कर रखी थी। किन्तु उन के प्रभावशाली व्यक्तित्व तथा कीर्तन मण्डली का साथ में होना उन की पहली पहचान थी।

गुरुदेव को वहाँ पर देखकर योगियों को चिंता हुई कि जन-साधारण कीर्तन के आकर्षण से बन्धकर नानक जी के हो जाऐंगे, अत: उन के निकट कोई नहीं आयेगा जिस कारण उन के लिए माया का संकट उत्पन्न हो जायेगा। इस संकट के समाधान हेतु उन्होंने जनता का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने के लिए कोई हंगामा करने के विचार से, मस्ती में आंखें मूंदकर नृत्य करते हुए, भगतियों का माया वाला बर्तन उठवा कर कहीं छिपा दिया, जिन में जनता उन के लिए अनुदान के रूप में पैसे डालती थी। इस पर मेले में बहुत हल चल मच गई कि स्वांगियों का धन कोई चुरा ले गया है। वे स्वांगी लोग गुरुदेव के पास आए और निवेदन करने लगे, "हे गुरुदेव जी! आप हमारी सहायता करें हमें हमारा खोया हुआ धन वापस दिलवा दें।" गुरुदेव ने उन्हें सांत्वना दी और कहा, "सब ठीक हो जायेगा। बस धैर्य रखें।" गुरुदेव ने अपने सेवकों को तुरन्त सर्तक किया और आदेश दिया कि सभी योगियों की गति-विधि पर कड़ी नज़र रखें। ऐसा ही किया गया। गुरुदेव को एक श्रद्धालु ने बताया कि योगियों के संकेत पर उसने एक व्यक्ति को कोई वस्तु छिपाते हुए देखा है। फिर क्या था वहाँ की छानबीन तुरन्त की गई जिस से वह धन का बर्तन प्राप्त कर लिया गया। इस प्रकार स्वांगी प्रसन्न होकर, गुरुदेव का धन्यावाद करते हुए उन का यश गान करने लगे। इस के विपरीत योगियों की प्रतिष्ठा पर बहुत बड़ा आघात पहुँचा, जिस को योगी सहन नहीं कर पाए। उन के हृदय द्वेष अग्नि से जलने लगे, वे क्रोधित हो गए और इस बात को अपना अपमान समझ कर गुरुदेव के साथ वाक्य युद्ध करने पहुँच गए। गुरुदेव इस के लिए पहले से ही तैयार बैठे थे। अत: वाक्य युद्ध आरम्भ हो गया।

योगियों के मुखिया भंगर नाथ ने गुरुदेव को चुनौती दी और कहा, "हम अतीत साधु हैं हमने योग बल प्राप्त किया हुआ है। हम यहाँ उस का प्रदर्शन कर सकते हैं यदि तुम हमारे सामने कोई करामात दिखा दो तो जनता के सामने हम आप को श्रेष्ठ मान लेते हैं। नहीं तो हम श्रेष्ठ हैं।"

उत्तर में गुरुदेव ने कहा– अलौकिक शक्तियों का प्रदर्शन करना मदारियों का काम है। सच्चे साधु को यह क्रिया शोभा नहीं देती। यदि कोई ऐसा करता है तो वह प्रकृति के कार्यों में हस्तक्षेप करता है। ऐसा प्रदर्शन करने वाले लोग भले ही कुछ क्षण के लिए जनता की वाह–वाह ले सकते हैं परन्तु अपने वास्तविक लक्ष्य से चूक जाते हैं, जिस से उन की साधना व्यर्थ चली जाती है। यदि आप वास्तविक अतीत साधु हैं तो आप को चाहिए कि आप प्रभु के भरोसे पर रहें, अत: किसी सांसारिक वस्तु की इच्छा नहीं करनी चाहिए। जो कुछ परमात्मा सहज में दे, उस पर संतोष करते हुए निर्वाह करना चाहिए, किन्तु आप का आचरण इन बातों के विपरीत है। आप केवल वाह–वाह लेने के लिए अपनी शक्ति का दुरोपयोग करते हैं। इस के पीछे धन एकत्र करने की कामना रहती है, जो कि एक सन्यासी को नहीं करनी चाहिए। यह कडुवा सत्य सुनकर योगी बौखला उठे। उस समय गुरुदेव ने इस सम्बन्ध में बाणी उच्चारण की–

हाथि कमंडल कापड़ीआ मनि त्रिसना उपजी भारी ॥
इसत्री तजि करि कामि विआपिआ चितु लाइआ पर नारी ॥
सिख करे करि सबदु न चीनै लंपटु है बाजारी ॥
अंतरि बिखु बाहरि निभराती ता जमु करे खुआरी ॥
सो संनिआसी जो सतिगुर सेवै विचहु आपु गवाए ॥
छादन भोजन की आस न करई अचिंतु मिलै सो पाए ॥
बकै न बोलै खिमा धनु संग्रहै तामसु नामि जलाए ॥
धनु गिरही संनिआसी जोगी जि हरि चरणी चितु लाए ॥

राग मारू, पृष्ठ 1013

इस के अतिरिक्त आप लोगों का पर्वतों से यहाँ आने का मुख्य उद्देश्य काम तृप्ति के लिए पर-नारीयों को वश में करना ही है जब कि आप दावा करते हैं कि आप स्त्री त्यागी है।

जब सब योगी निराश होकर स्वयं को पराजित अनुभव करने लगे तब उन्होंने, गुरुदेव से प्रार्थना की कि कृपया आप उन्हें बताएं कि आप के पास वे कौन सी शक्ति है, जिस से आप जनता का मन जीत लेते हैं?

गुरुदेव ने उत्तर में कहा, "हे योगियो! हमारे पास केवल प्रभु नाम की शक्ति है, इस के अतिरिक्त कोई नाटकीय चमत्कारिक करामातें नहीं रखते। वे सब हमारी दृष्टि में तुच्छ हैं। हमने परमेश्वर के सच्चे नाम और साध-संगति का आश्रय लिया है जो सदैव हमारा मार्ग दर्शन करता है।"

अन्त में योगियों ने गुरुदेव के साथ संधि करने के विचार से आश्रम से मदिरा मंगवाई (वे लोग इस उत्सव का आनंद लेने के लिए पहले से ही तैयार कर के रखते थे) और उस मदिरा का एक प्याला गुरुदेव के समक्ष प्रस्तुत किया। गुरुदेव ने उस प्याले को देखकर कहा-मैं यह झूठा मद्य नहीं पीता, मैंने प्रभु नाम रूपी सच्चा मद्य पिया हुआ है जिससे सदैव एक रस खुमार चढ़ा रहता है जिस का नशा कभी भी नहीं उतरता। यह सुनकर योगी कौतूहल वश पूछने लगे, वह मद्य कैसे तैयार किया जाता है, कृपया उन्हें उस की विधि बताएं। इस पर गुरुदेव ने बाणी उच्चारण की ओर निम्नलिखित पंक्तियां उच्चारण की-

गुड़ करि गिआनु धिआनु करि धावै कर करणी कसु पाईऐ ॥

भाठी भवन प्रेम का पोचा इतु रसि अमिउ चुआईऐ ॥

बाबा मनु मतवारो नाम रसु पीवै सहज रंग रचि रहिआ ॥

अहिनिसि बनी प्रेम लिव लागी सबदु अनाहद गाहिआ ॥ रहाउ ॥

पूरा साचु पिआला सहजे तिसहि पीआए जा कउ नदरि करे ॥

अम्रितु का वापारी होवै किआ मदि छुछै भाउ धरे ॥

गुर की साखी अंम्रित बाणी पीवत ही परवाणु भइआ ॥

दर दरसन का प्रीतमु होवै मुकति बैकुंठै करै किआ ॥

सिफती रता सद बैरागी जूऐ जनमु न हारै ॥

कहु नानक सुणि भरथरि जोगी खीवा अंम्रित धारै ॥

राग आसा, पृष्ठ 360

कत्थू नंगल का समर्पित किशोर

श्री गुरू नानक देव जी की कीर्ति जैसे-जैसे फैलने लगी तैसे-तैसे श्रद्धालु भी आप के दर्शनों के लिए दूर-दूर से आने लगे। एक दिन कत्थू नंगल नामक ग्राम का एक किसान भाई सुग्घा जी अपने परिवार सहित आप के दर्शनों को आया उन के साथ उन का युवा बेटा भी था। जिस को वे लोग प्यार से बूड़ा-बूड़ा कह कर पुकारते थे। वह युवक आप को तरुण अवस्था में अपने गांव में पहले मिल चुका था। अत: वह आप के दर्शनों के लिए लालायित रहता था। उस की यह अभिलाषा कुछ वर्ष बाद पूरी हो रही थी, अत: वह सदा के लिए आप की निकटता प्राप्त कर सेवा में रहना चाहता था। इस लिए उस ने माता-पिता से आज्ञा लेकर गुरुदेव की सेवा में रहने की इच्छा व्यक्त की जो कि गुरुदेव ने सहर्ष स्वीकार कर ली किन्तु कहा-बेटा सोच समझ कर निश्चय करना सिक्खी पर चलना सरल नहीं है, सिक्खी तो खण्डे (दो धारी तलवार) की

धार के समान है, इस पर चलना मृत्यु को स्वीकार कर, तन-मन-धन सभी कुछ समर्पित कर जीना होता है। एक बार इस मार्ग में प्रवेश लेने के बाद फिर लौट कर पीछे नहीं देखना होता, भले ही अपने प्राणों की आहुति क्यों न देनी पड़े।

जे तउ प्रेम खेलण का चाउ ॥
सिर धरि तली गली मेरी आउ ॥
इतु मारगि पैरु धरीजै ॥
सिर दीजै काणि न कीजै ॥
(जन्म सारवी)

युवक 'बूड़ा' ने तुरन्त दृढ़ निर्णय लेते हुए गुरुदेव के सभी बचन स्वीकार करते हुए अपनी स्वकृति दे दी कि वह हर क्षण सिक्खी पर न्योछावर होने के लिए तत्पर रहेगा। उस में किसी प्रकार का आलस्य नहीं करेगा।

इस पर गुरुदेव ने युवक 'बूड़ा' को गले लगाया और उसे चरणामृत (चरणधोल) देकर दीक्षित किया।

धीरे-धीरे संगत में युवक 'बूड़ा' का नाम भाई बुड्ढा जी प्रसिद्ध हो गया, जो कि समय के साथ-साथ बाबा बुडढा जी कहलाए।

भगता ओहरी तथा जापू वंसी

श्री गुरू नानक देव जी के दरबार में एक दिन दो साधारण व्यक्ति आये। जिन का नाम भगता ओहरी तथा जापू वंसी था। जब उन्होंने आप के प्रवचन सुने तो उन के हृदय में शंका उत्पन्न हुई कि वह तो अनपढ़ हैं ज्ञान तो शिक्षित वर्ग तक सीमित रहता है अत: उनका कल्याण कैसे सम्भव होगा?

गुरुदेव ने इस के उत्तर में कहा-कर्म तो शिक्षित और अशिक्षित दोनों करते हैं

शुभ कर्म करने पर कल्याण अवश्य होगा यदि व्यक्ति साध संगत की ओट लेकर जीवन व्यतीत करे तो उसे आदर्श जीवन जीने की युक्ति प्राप्त हो जाती है। जिस में व्यक्ति को शुभ गुणों को धारण करते हुए अशुभ गुण का त्याग करना होता है। उन्होंने फिर पूछा, "हे गुरुदेव जी! अवगुणों का हम परित्याग करना चाहते हैं, परन्तु हम अज्ञानी हैं हम से सहज में कुकर्म हो जाते हैं, क्योंकि हमें मालूम नहीं कि जीवन में किन-किन बातों से सतर्क रहना चाहिए?" गुरुदेव ने इस पर कहा, "मनमुख व्यक्ति जैसा आचरण नहीं करना चाहिए अर्थात मनमानी नहीं करनी चाहिए। गुरु उपदेशों को सदैव सामने रखकर जीवन जीना चाहिए। जिस के अन्तरगत 1. दूसरों के साथ ईर्ष्या, द्वेष, चुगली इत्यादि नहीं करनी। 2. अभिमान त्याग कर नम्रता का जीवन जीना। 3. दूसरों पर अपनी विचारधारा बल पूर्वक न लादना इत्यादि। जहां तक सम्भव हो निष्काम-भाव से सेवा, परोपकार करने का प्रयत्न करते रहना चाहिए।"

भाई जोधा जी तथा फिरणा जी

श्री गुरू नानक देव जी के दरबार में दूर-दूर से जिज्ञासु आते और अपनी मानसिक अवस्था प्रकट करते। गुरुदेव उन्हें उन्हीं के अनुरूप शिक्षा देकर कृतार्थ करते। एक दिन गुरुदेव के समक्ष भाई जोधा जी तथा भाई फिरणा जी आए और प्रार्थना करने लगे, "हे गुरुदेव जी! हमें सफल जीवन की युक्ति बताएं।" गुरुदेव ने उन के दृढ़ संकल्प को देखते हुए, उन की भावनाओं के अनुरूप एक विशेष आदेश दिया - 1. अमृत बेला का समय कभी भी बिस्तर पर नष्ट नहीं करना, सूर्योदय से दो घड़ी पहले सदैव शौच-स्नान से निवृत होकर प्रभु चिंतन के लिए मन एकाग्र कर गुर शब्द में ध्यान लगाना अथवा बाणी पठन का अभयास करना। 2. सत्संगत में जाकर सेवा करने का अभ्यास करना, जिस से अहं भाव से छुटकारा प्राप्त होगा। 3. बालों का मुण्डन (रोमों का खण्डन) नहीं करना, केशों का सत्कार करना। इस से आप को निज स्वरूप प्राप्त होगा, जिस में प्रभु के दर्शन करना सहज हो जाएगा। यही युक्ति सफलता की कुंजी है।

भाई जोधा जी ने इस पर पूछा गुरुदेव जी, "चिंतन-मनन प्रात:काल ही क्यों करना चाहिए?" गुरुदेव ने उत्तर में कहा, "प्रारम्भिक अवस्था में अभ्यासी को यह समय उपयुक्त है क्योंकि उस समय शरीर और मन अभयास के लिए तैयार रहते हैं, जिस से प्राप्तियां सहज में सम्भव हो जाती हैं।"

उन दोनों ने गुरू उपदेश की कमाई करने का प्रयत्न किया और गुरुदेव के सफल अनन्य सिक्खव कहलाए।

शीहां तथा गज्जण जी

श्री गुरू नानक देव जी के दरबार में एक दिन दो चचेरे भाई शीहां और गज्जण आए और प्रार्थना करने लगे, "हे गुरुदेव जी! हम आवागमन से मुक्त होना चाहते हैं अत: हमारा मार्ग दर्शन करें।" उत्तर में गुरुदेव ने कहा, "यदि हृदय में सच्ची अभिलाषा है तो आप वाहगुरू शब्द का जाप करना आरम्भ कर दें। धीरे-धीरे अभ्यास बन जाने पर ध्यान एकाग्र हो जायेगा और सुरति सुमिरन हर समय बना रहेगा। भव-सागर से पार होने का यही एक मात्र साधन है।" इस पर भाई गज्जण बोला, "कृपया आप हमें वाहिगुरू शब्द की व्यारव्या कर बताएं कि इस के अर्थ-बोध क्या हैं, तथा प्रभु में विलय होने में शब्द किस प्रकार सहायक है?" गुरुदेव ने कहा, "वाहि शब्द का प्रयोग आश्चर्य के लिए किया जाता है, जिस के अस्तित्व से समस्त वस्तुओं का बोध होता है, यदि उस के अस्तित्व का बोध न हो पाए तो गुरू नाम ज्ञान तक पहुँचाने वाली शक्ति का है। वाहिगुरू का नाम प्राणी को उस आश्चर्य की अवस्था तक ले जाता है जहां पर इस जड़ रूप अनित्य देह को त्याग कर, प्रकाश रूपी दिव्य ज्योति में विलय होने का सौभाग्य प्राप्त होता है। किन्तु इस अभ्यास के लिए साध-संगत में लकर जाना अनिवार्य है, सत्यसंगत ही वह स्थान है जहां प्रभु स्वयं प्रकाशमान है। वहाँ पर किया गया अभ्यास शत प्रतिशत सफल होता है क्योंकि वह आध्यात्मिक समस्याओं के समाधान की पाठशाला होती है।

गुरुदेव के माता-पिता का देहान्त

श्री गुरू नानक देव जी के माता पिता जी ने अपने जीवन के अन्तिम दिनों में जब अपनी कल्पना के विपरीत अपने बेटे की आध्यात्मिक महापुरुष के रूप में रव्याति देखी तो उन के मन को सन्तोष हुआ और उन को पूर्ण ज्ञान हो गया कि नानक जी उनके वंश का गौरव है अत: उन का अन्तिम जीवन बहुत हर्ष-उल्लास में व्यतीत हो रहा था। किन्तु वृद्धावस्था को प्राप्त हो जाने के कारण उन का स्वास्थ्य अब अनियामित रहता था। वे भी सत्संग की महमा से ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति कर चुके थे। अत: एक दिन उन्होंने नानक जी से कहा-बेटा, अब हम अपने जर्जर शरीर का त्याग चाहते हैं क्योंकि श्वासों की पूंजी भी लगभग समाप्त हो चुकी है। गुरुदेव ने उन को सहर्ष मात लोक से प्रस्थान करने की सहमति दे दी। एक दिन प्रात:काल पिता कालू जी शोच-स्नान कर समाधि लीन हो गये, कुछ समय बाद सेवकों ने गुरुदेव को बताया कि पिता कालू जी देह त्याग गए हैं। गुरुदेव ने समस्त संगत को साथ लिया और पिता जी का अन्तिम संस्कार सम्पन्न कर दिया। ठीक इस प्रकार ही कुछ दिन पश्चात् माता तृप्ता जी ने भी सहज ही समाधि लगा कर देह त्याग दी और मात लोक से विदा ले ली।

पृथा और रवेडा

श्री गुरू नानक देव जी के दरबार में दर्शनार्थ दो मित्र पृथा और खेड़ा भी करतार पुर आये। उन्होंने नित्य के कार्यक्रम में कीर्तन तथा गुरुदेव के प्रवचन सुने तो उन्हें ज्ञान हो गया कि ह सांसारिक वस्तुएं मिथ्या हैं किन्तु घर से चलते समय मन में कुछ कामनाएं लेकर चले थे जो कि सत्संग करने पर निवृत हो गई। कुछ दिन वे दोनों गुरू दरबार की सेवा में व्यस्त रहे। एक दिन जब अचानक वे गुरुदेव के सम्मुख हुए तो उन्होंने आग्रह किया, "कुछ मांगो। आपकी सेवा-भक्ति पर हम सन्तुष्ट हैं।" किन्तु उस समय तक दोनों की अन्तर आत्मा तृप्त हो जाने के कारण कुछ मांग नहीं पा रहे थे। गुरुदेव के वचन सुनकर प्रेम के वशीभूत होकर उन के नेत्र द्रवित हो उठे और बस इतना ही कह पाए, "हे दीन बन्धु! आप तो सर्वज्ञ हैं अत: ऐसी वस्तु दें जिस से मन शांत हो जाए तथा

सभी कामनायें सदैव के लिए समाप्त हो जाएं, जिस से फिर कभी याचना करने की इच्छा ही न रहे।" इस उत्तर को सुनकर गुरुदेव अत्यन्त प्रसन्न हुए, परन्तु उन्होंने पुन: वचन किया, "आप जब घर से यहाँ आए थे तो मन में कामना लेकर चले थे। अब समय है मांगो!" किन्तु अब दोनों मित्र निष्काम हो चुके थे। अत: उन्होंने निवेदन किया, "गुरुदेव जी! अब तो बस यही याचना है कि हमें अपने चरणों में स्थान दे दें, जिस से आवागमन का चक्कर समाप्त हो जाए।"

गुरुदेव ने गुरमति के अनुकूल प्रार्थना सुनकर खुशी महसूस की और कृपा दृष्टि हो कहने लगे, "हमारे चरण गुरुमुखों की संगति में रहते हैं यदि आप इसी प्रकार सत पुरुषों की सेवा में तत्पर रहा करेंगे तो हमारी चरण-शरण में सदैव रहोगे, क्योंकि गुरु सिक्खों की संगति ही परमेश्वर में अभेद होने का एक मात्र मार्ग है। शरीर सगुण स्वरूप है जिस से कभी न कभी वियोग अवश्य ही होगा परन्तु यदि निर्गुण स्वरूप 'शब्द' को हृदय में बसाओगे तो फिर कभी भी बिछुड़ोगे नहीं।"

पृथ्वी मल तथा रामां डंडी सन्यासी

श्री गुरू नानक देव जी के दरबार एक दिन की बात है कि दो सन्यासी आए और वहाँ पर ठहर गए। कीर्तन, कथा तथा प्रवचन आदि का प्रवाह देख कर वहाँ के सत्संग से बहुत प्रभावित हुए। उस से उन की विचारधारा बदल गई और वे सोचने लगे कि वे क्यों न इस नई पद्धति को अपनाएं जिस से उनका भी कल्याण हो। एक दिन गुरुदेव के सम्मुख होकर उन्होंने निवेदन किया, "हे गुरुदेव जी! जैसी महिमा सुनी थी वैसी ही यहाँ पाई है अत: हमारी इच्छा है कि हमें कोई सहज युक्ति प्रदान करें जिस से हमारा कल्याण हो, क्योंकि सन्यास की अति कठोर तपस्या से हम ऊब गए हैं, वह अब हमारे बस की बात नहीं रही।"

गुरुदेव ने उन्हें सान्तवना दी और कहा-हम आप को हठ योग के स्थान पर सहज योग का सुविधाजनक मार्ग बतायेंगे जिस को हर एक गृहस्थी भी अपना सकता है और

इस में प्राप्ति भी कहीं अधिक होती है, इस के विपरीत हठ तप करने वालों को मन और शरीर को साधने के लिए, शरीर को कष्ट देने पड़ते हैं। इस क्रिया के लिए हठकर्म अनिवार्य है, इस में उन्हें ऋद्धि-सिद्धियां प्राप्त होती हैं। परन्तु निष्काम और ऊँची आत्मिक अवस्था तक पहुँचने के लिए उन के बस की बात नहीं रह पाती, क्योंकि ये लोग अपनी कामनाओं तथा वासनाओं पर नियन्त्रण नहीं कर सकते। अतः हठ मार्गी, तत्व-ज्ञान को न प्राप्त कर जीवन निष्फल गंवा देते हैं। यदि आप निष्काम एवं ऊँची आत्मिक अवस्था से तत्व-ज्ञान को प्राप्त कर परम ज्योति में विलीन होने की प्रबल इच्छा रखते हैं तो शब्द का निध्यासन किया करें। शब्द का रस आ जाने के उपरान्त ज्योति प्रज्वलित होकर दृष्टिमान होने लगती है। मनुष्य तब आनंद विभोर हो जाता है। यह शब्द का सुखद अनुभव ही तत्व ज्ञान तक पहुँचने का एक मात्र साधन है किन्तु इस की सीढ़ियां साध-संगति से होकर जाती हैं। अतः ध्यान रहे कि सत्संग का आसरा कभी भी छूटने न पाए।

भाई मालो और भाई मांगा

श्री गुरू नानक देव जी के करतार पुर में निवास के समय उन के दरबार में दो अनन्य सेवक प्रतिदिन कथा कीर्तन श्रवण करने आते थे। वे स्वयं भी कथा कीर्तन में भाग लेते थे और आध्यात्मवाद के पथिक होने के नाते अच्छा ज्ञान रखते थे। परन्तु एक दिन उन्होंने गुरुदेव के मुखारविन्द से श्रवण किया कि कीर्तन कथा हरि यश इत्यादि करना सहज तपस्या है, जिस का महत्व हठ योग द्वारा किए गये तप से कहीं अधिक है। तो इन को शंका हुई। उन्होंने गुरुदेव से पूछा कि योगी और सन्यासी लोग कहते हैं, "जिस प्रकार का परीश्रम उसी प्रकार का फल, किन्तु आप ने कहा है कि कथा कीर्तन सहज साधना है, जिस का फल हठ योग से कहीं महान है? यह बात हमारी समझ मे नहीं आई। कृपया आप इसे विस्तार पूर्वक बताएं।"

गुरुदेव ने उत्तर में कहा-सभी लोग धन अर्जित करने के लिए पुरुषार्थ करते हैं। कुछ लोग कड़ा परीश्रम नहीं करते परन्तु धन अधिक अर्जित कर लेते हैं जैसे स्वर्णकार (जौहरी), वस्त्र विक्रेता इत्यादि परन्तु इस के विपरीत श्रमिक लोग अधिक परीश्रम

करते हैं, बदले में धन बहुत कम मिलता है। ठीक उसी प्रकार हठ साधना द्वारा शरीर को कष्ट अधिक उठाना होता है परन्तु ज्ञान की प्राप्ति नहीं होती जिस से लक्ष्य चूक जाता है और साधना निष्फल चली जाती है। ठीक इस के विपरीत-कथा कीर्तन श्रवण करने से प्रथम ज्ञान की प्राप्ति हो जाती है और बाद में उपासना दृढ़ होकर फलीभूत होती है।

कर्मचन्द (कालू)

श्री गुरू नानक देव जी के दरबार में एक दिन कर्म चन्द (कालू) नाम का एक आदमी बड़ी तीव्र अभिलाषा लेकर आया और उस ने गुरुदेव से पूछा, "हे सदगुरू बाबा जी! आप की बाणी में मनमुख और गुरुमुख सिक्खों का विस्तृत वर्णन है। कृपया आप हमें समझाएं कि मनमुख तथा गुरुमुख सिक्ख के क्या लक्षण होते हैं?"

गुरुदेव ने उत्तर में कहा-मनमुख वे लोग होते हैं जो अपने मन की वासनाओं के वशीभूत होकर दुष्कर्मों में संलग्न रहते हैं भले ही वे परिणाम स्वरूप कष्ट भोग रहे हों। इन के विपरीत गुरुमुख वे लोग हैं जो पापों और दुष्कर्मों को त्यागकर गुरू ज्ञान ज्योति के प्रकाश में सत्य मार्ग के पथिक होकर जीवन निर्वाह करते हैं भले ही इस कठिन कार्य के लिए उन्हें कई चुनौतियों का सामना ही क्यों न करना पड़े। गुरुमुख का आचरण इसी प्रकार का होना चाहिए।

1. सिक्ख, मानव मात्र को अपना मित्र समझे, दूसरों के हर्ष में अपना हर्ष अनुभव करे।
2. दीन-दुखी के लिए करुणा रखे और उन की सहायता के लिए तत्पर रहे। अहंभाव का त्याग कर नम्रता तथा दया जैसा सद्गुण धारण करे।
3. दूसरों की कीर्ति अथवा गौरव सुनकर प्रसन्न चित हो, ईर्ष्या द्वेष को निकट न आने दे।
4. सतगुरू के उपदेशों को श्रद्धा से निष्काम होकर, धारण कर संसार में रहते हुए, माया से निर्लिप्त और विरक्त होकर जीवन निर्वाह करे।

वही सिक्ख वास्तव में गुरुमुख है। इस के विपरीत आचरण करने वाला मनमुख है।

शेख मालो जी

श्री गुरू नानक देव जी के करतार पुर में निवास से आस-पास के क्षेत्र में सिक्खी का प्रसार दूर तक हो गया था क्योंकि गुरुदेव के सिद्धांतों के अनुसार, समस्त मानव मात्र एक प्रभु की सन्तान है अत: वर्गीकरण रहित समाज की स्थापना का ध्वज फहरा दिया गया, जिस में जाति-पाति, रंग, नस्ल, भाषा, संम्प्रदाय इत्यादि का भेद-भाव समाप्त कर सभी को मिल-जुल कर रहने का गुरू उपदेश प्राप्त होने लगा। यह सब देख कर शेख मालो जी बहुत प्रभावित हुए और उन्होंने गुरुदेव के समक्ष अपनी शंका व्यक्त की कि साधारणत: हिन्दू तथा मुसलमानों की जीवन पद्धति में बहुत अन्तर है। इस लिए आप की दृष्टि में कौन सा सिद्धांत उत्तम है?

गुरुदेव ने उत्तर में कहा-हिन्दू मुसलमानों में सांस्कृतिक अंतर हैं। यह अन्तर देश-वेष परम्पराओं तथा भाषा इत्यादि के कारण दिखाई देता है किन्तु मानवीय आचार-विचार एक ही है, क्योंकि परमात्मा प्रत्येक प्राणी मात्र में एक सी ही ज्योति लिए विद्यमान है।

इस उत्तर से सन्तुष्ट होकर शेख जी ने पुन: निवेदन किया- कृपया आप अल्लाह के दरबार में प्रतिष्ठा सहित प्रवेश पाने का अपना सिद्धांत बताएं।

गुरुदेव ने उत्तर में कहा-अल्लाह (परमेश्वर) के गुण-गायन करो, उसकी इच्छा को सहर्ष स्वीकार करते हुए, दुख-सुख सम कर जानो। समस्त जीवों के लिए मन में दया धारण कर निष्काम सेवा, परोपकार के लिए अपने को समर्पित कर दो, तो अल्लाह के दरबार में अवश्य ही आदर सहित प्रवेश पाओगे तथा इस जगत मे भी सम्मान प्राप्त करोगे।

शेख जी बहुत दिन गुरू चरणों में रह कर सेवा करने का अभ्यास दृढ़ करते रहे और सिक्खी का व्यवाहरिक स्वरूप समझकर लौट गये।

शेख उबारे खान

श्री गुरू नानक देव जी के दरबार से सिक्खी धारण कर जब शेख मालो जी अपने गृह लौट गए तो उन के मित्र शेख उबारे खान को भी जिज्ञासा उत्पन्न हुई कि जिस महापुरुष की प्रशंसा उस का मित्र कर रहा है उन के दर्शन किये जाएं। अत: वह भी समय पाकर गुरू दरबार में उपस्थित हुए।

अभिवादन के पश्चात् शेख साहब ने आप ने विनती की कि हे पीर जी! कृपया आप यह बताएं कि आध्यात्मिक ज्ञान में हिन्दू दर्शन शास्त्र सम्पूर्ण है या मुसलमानी फलसफा? गुरुदेव ने इस प्रश्न के उत्तर में कहा दोनो में तत्व सार, आर्चण अनिवार्य अंग है। मानवता का उद्देश्य यही भी है। यदि कोई सम्प्रदाय यह दावा करे कि उन की पद्धति ही श्रेष्ठ अथवा सर्वोत्तम है जिस से प्रभु प्राप्ति सम्भव है तो यह मिथ्या प्रचार है क्योंकि प्रभु तो विधि विधानों से रीझता नहीं, वह तो भक्त की भावना पर न्योछावर होता है।

उबारे खान कट्टरता के धरातल से चेतना एवं जागृति पर लौट आये। जिस से वह बहुत प्रसन्न चित होकर अपने निज स्वरूप की खोज में लग गये।

अब्दुल रहमान

श्री गुरू नानक देव जी के दरबार से लौटकर शेख उबारे खान कुछ दिन पश्चात् एक कट्टर मुसलमान फ़कीर अब्दुल रहमान को मिलने गये और उस ने फ़कीर को बताया, "मैं नानक देव जी का सिक्ख बन गया हूँ, तो वह बहुत नाराज़ हुआ, और कहने लगा, "तुम्हें, एक काफिर को मुरशद बनाने की क्या आवश्यकता पड़ गई थी?" इस पर शेख उबारे खाने ने कहा, "नानक निर्पेक्ष है वह इलाही नूर है। उन के लिए गुस्ताख शब्दावली का प्रयोग करना अपराध ही नहीं घोर पाप है। आप पहले उन से भेंट तो कर लें। फिर उन के प्रति कोई धारणा बनाना।" इस दृढ़ता पूर्वक उत्तर को सुनकर अब्दुल रहमान के मन में भी संकल्प उत्पन्न हुआ कि अच्छा है यदि नानक जी से मुलाकात हो जाए, जिस से प्रत्यक्ष वार्तालाप कर के दुविधा दूर कर सकूं।

दूसरे दिन गुरुदेव अपने सेवकों के साथ, उस के गांव रतड़-छत्तड़ पहुँचे। जन-साधारण ने वहाँ उन का हार्दिक स्वागत किया और उन के प्रवचन सुने। इस समाचार को पाते ही कि नानक जी उस के यहाँ आए हुए हैं वह जल्दी से दर्शनों को आया और अपनी शंकाओं के समाधान हेतु कई प्रश्न किये। पूछने लगा-आप तो बुत परस्त (मूर्ति पूजक) हैं जिस कारण कर्मकाण्डों में उलझे रहते होंगे?

गुरुदेव ने उत्तर में कहा-हम, केवल निराकार ज्योति स्वरूप पारब्रह्म परमेश्वर अर्थात एक अल्लाह के उपासक हैं। कर्म-काण्डों में हम एक क्षण भी व्यर्थ नहीं नष्ट करते। यह सुनकर फ़कीर अब्दुल रहमान ने कहा-मैं भी यही सोचता था कि आप मूर्ति-पूजक नहीं हो सकते क्योंकि इस क्रिया में प्राप्ति तो होती ही नहीं। प्रत्यक्ष भेंट हो जाने पर उस ने स्पष्ट शब्दों में गुरुदेव से पूछा आप हिन्दू कहलाते हैं कि मुसलमान? गुरुदेव ने उत्तर में कहा-हमारा धर्म केवल प्रेमा-भक्ति है, जो प्रेम करते हैं वे सम्प्रदायक झगड़ों में नहीं उलझते अत: वेद व कतब से हमारा कोई मतभेद नहीं है।

सुलतानपुर के पुराने मित्र से मिलन

श्री गुरू नानक देव जी जिन दिनों करतार पुर के निर्माण में व्यस्त थे उन्हीं दिनों बाबर ने पानीपत के युद्ध में विजय प्राप्त कर ली। जिस कारण समस्त देश में राजनैतिक उथल-पुथल हुई। बहुत से लोग मारे गये, बहुत से लोग बेरोज़गार होकर दर-ब-दर भटकने पर विवश हुए। पंजाब मे नवाब दौलत खान की मृत्यु के बाद अराजकता फैल गई। सुलतानपुर लोधी भी इस की चपेट में आ गया, जिस से वहाँ के निवासी बिखर कर रह गए। गुरुदेव का एक मित्र जो कि सुलतानपुर में दौलत खान का कर्मचारी था, बेरोज़गार होकर भटकने लगा। जब उस को मालूम हुआ कि नानक देव जी जो कि उस के कभी सह-कर्मी रह चुके थे, एक नया नगर बसा रहे हैं तो वह जिज्ञासा वश गुरुदेव से मिलने आया। जब उस ने करतार पुर में गुरुदेव की महमा देखी तो चकित हुआ, किन्तु प्रत्यक्ष को प्रमाण की आवश्यकता नहीं थी। उस ने जब धर्मशाला में नवीन मर्यादा द्वारा निराकार ज्योति स्वरूप पारब्रह्म परमेश्वर की आराधना होते देखी तो वह इस नई प्रणाली

से बहुत प्रभावित हुआ और उसको अपने वैष्णव मत के कर्म काण्ड निरर्थक मालूम होने लगे, विशेषकर गुरुघर की लंगर प्रथा उसे बहुत रुचिकर लगी। गुरुदेव से मिलकर वह सहकर्मी अति प्रसन्न हुआ। गुरुदेव ने उस का भव्य स्वागत किया और अतीत की घटनाओं का स्मरण किया। इस मित्र ने एक दिन गुरुदेव से प्रश्न किया, "हम वाणिज्य के विषय मे बहुत कुछ जानते हैं जब कोई व्यापारी व्यापार कर के लौटता है तो वह अपने मित्रों को अपने अनुभव सुनाता है कि मैंने किस विधि से लाभ कमाया है ठीक उसी प्रकार, कृपया! आप मुझे बताएं कि ये इतनी बड़ी प्राप्ति, आप को किस प्रकार हुई? जिस के अनुसार आप की दूर-दूर तक मान्यता हो रही है?

गुरुदेव ने उत्तर मे कहा-आध्यात्मिक दुनिया से व्यापार तन से नहीं मन से होता है यदि मन की वृति एकाग्र कर प्रभु चरणों में पहुँच जाओ तो आप को भी यह प्राप्तियां सम्भव हैं। बस एक बार अपने मन को प्रभु चरणों में समर्पित कर तो देखो।

गुरुदेव का मित्र इस संकेत को समझ गया, उस ने मित्रता तथा समानता का रिशता त्याग कर नम्रता धारण कर प्रार्थना की, "मुझे भी आप अपना शिष्य बना कर कृतार्थ करें। मैं आप से दीक्षा लेना चाहता हूँ जिस से बाकी का जीवन में प्रभु नाम की कमाई कर सकूं।" गुरुदेव ने उस के मन में आए परिवर्तन को देखकर, उसे चरणामृत देकर दीक्षित किया और कुछ दिन साधसंगत मे नाम-वाणी का अभ्यास करवा कर विदा किया।

भाई मरदाना जी का देहान्त

भाई मरदाना जी गुरू दरबार की कीर्तन द्वारा प्रतिदिन सेवा कर शोभा बढ़ा रहे थे परन्तु उन का स्वास्थ्य कुछ दिन से ठीक न होने के कारण, सेवा मे विघ्न पड़ना आरम्भ हो गया, इस लिए उन्होंने अपने स्थान पर अपने पुत्र शाहजादा जी को यह सेवा निभाने के लिए प्रोत्साहित किया। धीरे-धीरे शाहजादा जी गुरू घर की रीति जानने लग गए और अपने पिता जी के स्थान पर वह सेवा सम्भालने लगे। एक दिन गुरुदेव को सन्देश मिला कि भाई मरदाना जी शारीरिक दृष्टि से कुछ कमज़ोरी अनुभव कर रहे हैं, अत: उन्होंने गुरुदेव को घर पर बुलाया है। गुरुदेव उन के घर पहुँचे, भाई मर्दाना जी ने आप से प्रार्थना

की कि उस का अन्तिम समय अब बहुत निकट आ गया है अत: उसे विदाई दें। गुरुदेव ने उन्हें अपने कंठ से लगा कर कहा–शारीरिक दृष्टि से तो सभी को यह संसार त्याग कर विदा होना ही है परन्तु आत्मिक दृष्टि से तुम कभी भी नहीं बिछुड़ सकते। खैर... अब आप अपनी अन्तिम इच्छा बताएं कि आप का अन्तिम संस्कार किस विधि अनुसार किया जाए तथा कब्र इत्यादि बनवा कर आप की यादगार स्थापित कर दी जाए?

इस पर भाई मरदाना जी के नेत्र सजल हो उठे और कहने लगे–हे गुरुदेव जी! मैं आप के साथ पूरी आयु घूमता रहा हूँ तथा आप के उपदेश सुनता रहा हूँ अत: आप की कृपा से अब इतना ज्ञान तो हो गया है कि यह नाशवान शरीर मिट्टी का पुतला है, इस लिये देहाभिमान किस बात का? इस को किसी विधि विधान से ठिकाने लगा दो, तो भी कोई अन्तर नहीं पड़ने वाला, वास्तव में तो कर्म प्रधान है, रही बात यादगार बनाने की वह तो मुझे शरीर रूपी पिंजरे की कैद से निकाल कर पत्थरों की कब्र में कैद करना चाहते हो। कृपया मैं भी जान गया हूँ, अल्लाह की प्राप्ति इन तृष्णाओं से मुक्ति पाने में है। जब तक तृष्णा रहेगी आवागमन का चक्कर बना रहेगा। अत: आप जैसा ठीक समझें करें। मेरी अब कोई मांग नहीं रही। ऐसा कह कर उन्होंने गुरुदेव की गोद में शरीर त्याग दिया। गुरुदेव ने उन का अन्तिम संस्कार रावी नदी के तट पर कर दिया। बाढ़ आई और सभी कुछ बहा कर ले गई, जिस से कोई चिन्ह शेष न रहा।

भाई लहणा जी

श्री गुरू नानक देव जी, अपनी दिन चर्या अनुसार प्रात:काल के दरबार की समाप्ति कर अपने खेतों में कुंए से पानी दे रहे थे, उस समय एक घुड़ सवार युवक उन के निकट आया और पूछने लगा, "बाबा जी मुझे नानक देव जी के यहाँ जाना है, कृपया आप रास्ता बता दें।" इस पर गुरुदेव ने कहा, "युवक, मैं तुम्हें वहीं पहुँचा देता हूँ" और वे घोड़े की लगाम हाथ में थाम कर गलियों में चल पड़े। हवेली पर पहुँचने के पश्चात् आप ने युवक से कहा–आप घोड़ा सामने वृक्ष के साथ बांध दें और अंदर चले आयें। इतने में गुरुदेव अपने आसन पर जा बिराजे। घोड़ा बांध कर जब युवक अन्दर दरबार स्थान पर पहुँचा तो चकित हुआ और पूछने लगा कि आप ही गुरू नानक देव है। इस पर गुरुदेव ने हंसकर कहा–हां मैं ही नानक हूँ।

युवक ने झेंपते हुए कहा–क्षमा करें मैं आप को पहचानता नहीं था नहीं तो ऐसी अवज्ञा कभी न करता। मैं घोड़े पर सवार था और आप मेरे घोड़े के मार्ग दर्शक। यह मुझ से अनर्थ हो गया है। गुरुदेव ने उत्तर में कहा–युवक तुम्हारा नाम क्या है? युवक बोला–मेरा नाम लहणा है। यह सुनकर गुरुदेव ने टिप्पणी की तुम्हारा नाम लहणा है तो तुम लेनदार हो और हम देनदार हैं बस यही कारण था कि तुम घोड़े पर सवार थे और हम पैदल तुम्हारे घोड़े के मार्ग दर्शक, इस में चिन्ता करने की कोई बात नहीं।

भाई लहणा जी, गुरुदेव की नम्रता, सादगी और साधारण किसानों का जीवन देखकर अति प्रभावित हुए। गुरुदेव ने उन से कुशलक्षेम पूछी–भाई लहणा जी ने उत्तर में बताया, “मैं खडूर नगर का एक छोटा सा दुकानदार हूँ। प्रतिवर्ष वैष्णव माता (दुर्गा) जी के दर्शनार्थ जत्था लेकर जाता हूँ। इस वर्ष भी वहीं जा रहा हूँ। मेरे साथी नगर के बाहर मुख्य सड़क के किनारे की सराय में ठहरे हैं। केवल मैं ही आप के दर्शनों को आया हूँ क्योंकि मैंने एक दिन प्रात:काल पनघट पर स्नान करते समय आप के एक सिक्ख भाई जोधा जी से आप की बाणी सुनी थी जो कि बहुत प्रभावशाली थी जिस के कारण मेरा मन आप के दर्शनों के लिए लालायित रहने लगा था अत: आज अवसर पाते ही चला आया हूँ।”

गुरुदेव ने, भाई लहणा जी का जलपान इत्यादि से अतिथि सत्कार किया तथा विश्राम के लिए एक विशेष कमरे में ठहराया और संध्या के दीवान में सम्मिलित होने को कहा–संध्या के दीवान में संगत मिलजुल कर कीर्तन करने लगी तत्पश्चात् गुरुदेव ने प्रवचनों में कहा–

देवी देवा पूजीऐ भाई किआ मागउ, किआ देहि ॥
पाहणु नीरि पखालीऐ भाई जल महि बूडहि तेहि ॥

राग सोरठि, 638

समस्त विश्व का कर्त्ता एक पारब्रह्म परमेश्वर ही है। अत: उस के द्वारा उत्पन्न देवी, देवताओं के आगे कभी हाथ नहीं पसारने चाहिए क्योंकि उन को भी उसी परमेश्वर से शक्ति प्राप्त होती है जिस ने जगत की सृजना की है इस लिए शक्ति प्राप्ति के लिए

सीधे उसी की उपासना तथा आराधना करें, जो सभी का स्वामी है। यदि स्वामी को त्याग कर दासी से मांगेंगे तो क्या मिलेगा? यह क्रिया उसी प्रकार की होगी जिस प्रकार कोई पुरुष मक्खन प्राप्ति की इच्छा से पानी को मथना शुरू कर दे, परिणाम स्वरूप वह पश्चाताप मे पीड़ित होगा और उस का परीश्रम निष्फल जाएगा।

भाई लहणा जी को ये युक्ति तथा तर्क संगत प्रवचन बहुत अच्छे लगे। उन्होंने मन में विचार किया मैं आज तक मन की शान्ति की अभिलाषा के लिए भटकता रहा हूँ। गुरुदेव के कथन अनुसार तो मेरा सब परीश्रम व्यर्थ चला गया है। वस्तुत: मुझे तत्व वस्तु की तो प्राप्ति हुई भी नहीं। मैं अब इन महापुरुषों से वह ज्ञान प्राप्त करने का प्रयत्न करूंगा, जिस से मैं अपनी इच्छाओं पर नियन्त्रण कर निष्काम हो जाऊँ। मुझे किसी वस्तु की आवश्यकता ही न रहे जिस से मेरी मांगने की भावना सदैव के लिए समाप्त हो जाए।

ऐसा विचार कर भाई लहणा जी ने गुरुदेव के चरणों में प्रार्थना की, हे गुरुदेव जी! मैं आप की निकटता चाहता हूँ, जिस से मैं परमार्थ की सूक्षमता का गहन अध्यन कर सकूं। गुरुदेव ने उत्तर में कहा – भाई लहणा, यह तो तभी सम्भव हो सकता है जब तुम स्वयं को पूर्णत: समर्पित कर दो, अन्यथा दुविधा – पूर्ण मन से किसी कार्य की सिद्धि नहीं कर पाओगे।

भाई लहणा जी ने तुरन्त इस कार्य के लिए अपने मन को तैयार कर सहमति दे दी कि वह सदैव सर्वत्र न्योछावर करने के लिए तत्पर है। बस उसे आत्म ज्ञान चाहिए।

इस पर गुरुदेव ने शर्त रखी और कहा – भाई देखो! यह मार्ग कठिन है। इस पर पग बढ़ाने से पहले भली भान्ति सोच विचार कर लो। इस प्रेम मार्ग पर एक बार बढ़ने के पश्चात् फिर पीछे मुड कर कभी नहीं देखना होगा। यह मार्ग बलिदान मांगता है, प्राणों की आहुति मांगता है, जिस कारण सिर पर कफन बान्ध कर चलना पड़ता है! तभी क्रांति सम्भव होती है, जिस की प्राप्ति के पीछे लक्ष्य छिपा होता है।

भाई लहणा जी ने उत्तर में कहा – यदि मुझे लक्ष्य की प्राप्ति हो सकती है तो मैं उस के लिए तन, मन, धन से पूर्णत: समर्पित रहूंगा। भले ही आप कभी भी परीक्षा ले सकते हैं। गुरुदेव ने भाई लहणा जी को तब आशीष दी कि उसकी कामना पूर्ण हो –

जउ तउ प्रेम खेलण का चाउ ॥

सिरु धरि तली गली मेरी आउ ॥

इतु मारगि पैरु धरीजै ॥

सिरु दीजै काणि ना कीजै ॥ *राग प्रभाती, पृष्ठ 1412*

भाई लहणा जी ने दूसरे दिन अपने साथियों को यह कह कर विदा कर दिया कि वे लोग अपनी यात्रा पर आगे चले जाएं किन्तु वह स्वयं अब कहीं नहीं जाएगा क्योंकि वह जिस उद्देश्य को लेकर घर से चला था वह वहीं पूर्ण हो गया है।

भाई लहणा जी की भेंट गुरुदेव के अनन्य सिक्ख बाबा बुढ्ढा जी से हुई जो कि उनकी सम आयु के थे। उन दोनों की जल्दी की एक ही लक्ष्य होने के कारण प्रगाढ़ मित्रता हो गई। एक दिन बाबा बुढ्ढा जी ने भाई लहणा जी से उनके परिवार के विषय मे पूछा तो उन्होंने अपना पारिवारिक परिचय इस प्रकार दिया–मेरा जन्म मते की सराय जिला फिरोजपुर में सन् 1504 में पिता फेरूमल जी के यहाँ माता राम कौर की कोख से हुआ है। जीविका के लिए इन दिनों खडूर नगर में पंसारी की दुकान चला रहा हूँ। मेरी पत्नी का नाम खीवी है। मेरी चार सन्तानें हैं। दो पुत्र तथा दो पुत्रियां। जिन के क्रमश: नाम है–दातू भाई, दासू भाई, बीबी अमरो तथा बीबी अनोखी। इन दिनों मैं अपने भांजे को दुकान का कार्यभार सौंप कर यहाँ आया हुआ हूँ। कुछ दिनों के लिए घर में वापिस जाकर, काम–काज को यथा पूर्वक चलता रहने के लिए, देख भाल कर पुन: गुरू चरणों में सेवा के लिए लौट आऊंगा। इस प्रकार कुछ दिनों पश्चात् भाई लहणा जी गुरुदेव से आज्ञा लेकर, घर की देखभाल के लिये अपने नगर खडूर चले गए।

मुलायम चन्द (मूला)

श्री गुरू नानक देव जी के करतार पुर निवास के समय एक सिक्ख मुलायम चन्द (मूला) गुरू दीक्षा लेकर अपने घर पर श्रद्धा भक्ति से गुरू आदेशों अनुसार जीवन व्यतीत कर रहा था। आते–जाते साधु संतों की तन, मन, धन से वह सेवा करता तथा अवकाश के समय साध–संगति में नाम बाणी का अभ्यास करता था। इस बात की चर्चा नगर में

दूर-दूर तक फैली हुई थी कि मुलायम चन्द (मूला) गुरू बाणी श्रवण कराने वाले, कीर्तनीय पर धन न्योछावर कर देता है। इस बात की भनक जब एक धूर्त ठग को हुई तो उस ने भाई मूला जी को अपने षड़यन्त्र द्वारा ठगने की योजना बना डाली। अत: उस ने परीश्रम कर गुरू बाणी के कुछ शब्द कंठस्थ कर लिए तथा सिक्ख वेष धारण कर के गृह आ गया और विनती करने लगा वह गुरू दर्शनों को जा रहा है इस लिए रात भर उन के यहाँ विश्राम करना चाहता है। भाई मूला जी ने अपने सरल स्वभाव के कारण उस पर तुरन्त विश्वास कर लिया और अतिथि सत्कार मे कोई कसर न छोड़ी। उस स्वांगी के मुंह से बाणी सुनकर गद्गद् हुआ और कुछ धन भेंट भी किया, जिस से उस धूर्त ठग ने वह अलमारी देख भी ली जहां पर धन-आभूषण इत्यादि रखे हुए थे। अर्द्धरात्रि को उस ठग ने चुपके से धन तथा आभूषणों का डिब्बा चुरा लिया। प्रात:काल वह धूर्त जब शौच के लिए घर से बाहर जाने लगा तो उससे डिब्बा सरक कर जमीन पर आ गिरा, जिसको देखकर भाई मूला की पत्नी चिल्लाई यह चोर है, इसने मेरे गहने चुरा लिए हैं परन्तु मूला जी ने वह डिब्बा उसी धूर्त को दे दिया और पत्नी को शान्तचित होकर चुप रहने का संकेत किया। पत्नी के पूछने पर कि आप ने ऐसा क्यों किया? मूला जी ने उसे समझाते हुए कहा-यदि हम इस स्वांगी को पकड़वा देते तो गुरू के सिक्खों की बदनामी होनी थी अत: गुरू के नाम की लज्जा के कारण शान्त रहने में ही सभी का भला है।

कुछ दिनों पश्चात् मुलायम चन्द (मूला) जी गुरुदेव के दर्शनों को करतार पुर आया तो गुरुदेव ने उठकर उसे आलिंगन में लेकर आशीष दी और कहा-तुमने गुरू के नाम के कारण, एक स्वांगी का पर्दा रखा है। अत: गुरू भी सदैव तेरा पर्दा रखेगा। गुरुदेव ने उसे बताया कि वह धूर्त ठग पश्चाताप के कारण यहाँ आया था। क्षमा याचना कर रहा था। उस का कहना था कि भाई मूला की उदारता से प्रभावित होकर उस ने सदैव के लिए ठगी को त्याग दिया है। अत: उस का जीवन भी आप की निष्ठावान सेवा देख कर बदल गया है।

मुलायम चन्द (मूला) जी ने गुरुदेव से प्रश्न किया कि उस धूर्त ठग को जब आप की बाणी का ज्ञान था तो उस का जीवन पहले क्यों नहीं बदला?

गुरुदेव ने उत्तर में उन्हें बताया कि यह मन एक शीशे की भान्ति है। इस पर जन्म-जन्म की मैल चढ़ी हुई है, जब इसे प्रभु नाम के रंग से धोते हैं तो वह धीरे-धीरे स्वच्छ होता चला जाता है। जब पूर्ण रूप से स्वच्छ हो जाता है तो अपना प्रतिबिम्ब इस में स्पष्ट दिखाई देने लगता है। वह धूर्त ठग बहुत लम्बे समय से कुकर्म कर रहा था इस लिए कुछ समय तो उसे हृदय रूपी शीशे को, नाम रूपी जल से धोने में अवश्य ही लगना था।

भाई लहणा जी गुरू सेवा में समर्पित

श्री गुरू नानक देव जी एक दिन अपनी दिन चर्या के अनुसार धान के खेतों में से घास निकाल रहे थे तो भाई लहणा जी उन से मिलने आए। गुरुदेव ने उन से कुशल क्षेम पूछी कि घर पर सब मंगल है? लहणा जी ने उत्तर में बताया कि घर का कार्यभार अपने भानजे को सौंप कर तथा उचित प्रबन्ध कर वे उन की सेवा में उपस्थित हुए हैं। इस पर गुरुदेव ने कहा यदि सेवा के लिए उन के पास आए हो तो घास की वह गांठ उठा लो और घर पर जा कर मवेशीयों को डाल दो। लहणा जी ने उत्तर में कहा-जैसी आप की आज्ञा (सत्य वचन) जी, और धान के खेतों का कीचड़ नुमा गीला घास, तुरन्त सिर पर उठा लिया। खेतों से घर तक पहुँचते-पहुँचते घास में से टपक रही पानी की बून्दों से लहणा जी के रेशमी वस्त्र कीचड़ के दागों से भर गए। जब इस दृश्य को गुरू के महल (माता सुलक्खणी जी) ने देखा तो उन से रहा न गया। इस कार्य को उन्होंने भक्त का तिरस्कार माना और गुरुदेव से कहा-यह कार्य किसी दूसरे श्रमिक को सौंप दिया होता, आप की बेपरवाही के कारण खडूर नगर से 50 कोस की पैदल यात्रा कर अभी-अभी आए श्रद्धालु के बहुमूल्य रेशमी वस्त्र कीचड़ से खराब हो गए हैं।

गुरुदेव ने उत्तर में कहा-प्रिय, ध्यान से देखो, यह घास की गांठ नहीं त्रिलोकी का छत्र है। यह कीचड़ की बून्दें नहीं, केसर के छींटे है! यह सुनकर सुलक्खणी जी ने कहा-वह तो ठीक है किन्तु उन को विश्राम की सख्त आवश्यकता थी, क्योंकि भेंट में पहाड़ी नमक को वह सिर पर उठाकर लाए हैं। गुरुदेव ने उत्तर दिया-आप इन बातों की चिन्ता न किया करें।

विशिष्टि शिष्यों का प्रशिक्षण

श्री गुरू नानक देव जी के दरबार में भक्तजनों का आवागमन निरन्तर बना रहता। कुछ सेवक स्थाई रूप से उनके पास सेवारत थे, जिन में से कुछ युवक बहुत प्रतिभाशाली थे। गुरुदेव की अपनी आयु भी अब 63 वर्ष के निकट थी। एक दिन उन्होंने अपने स्थायी रूप में निकट रहने वाले शिष्यों को सम्बोध हो कर कहा, "मेरा शरीर भी अब वृद्ध अवस्था की ओर अग्रसर हो रहा है। शरीर का कोई भरोसा नहीं न जाने कब साथ देना छोड़ दे। अत: मैं चाहता हूँ कि जिस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए, मैंने जीवन भर कार्य किया है तथा देश देशान्तरों में घूमा हूँ उसी कार्य को आप सब मिलकर उसी लग्न तथा निष्ठा से आगे बढ़ाते चले जाएं, क्योंकि यह कार्य बहुत बड़ा है। मेरे जीवन में तो कदाचित सम्पूर्ण हो ही नहीं सकता अत: उस के लिए आप सब को कई पीढ़िओं तक इसी प्रकार सक्रिय बना रहना होगा।"

"मेरा मुख्य उद्देश्य था, 'मानव कल्याण' अर्थात कोटि-कोटि जन-मानस की सम्पूर्ण रूप मे स्वतन्त्रता। स्वतन्त्रता से मेरा तात्पर्य है कि प्रत्येक व्यक्ति हर दृष्टि से पूर्ण रूप से आत्म निर्भर होना चाहिए, यानी यह कि केवल राजनैतिक दृष्टि से स्वतन्त्र होना प्रर्याप्त नहीं बल्कि सामाजिक, आर्थिक तथा धार्मिक दृष्टिकोण से भी प्रत्येक व्यक्ति स्वावलम्बी होना अति आवश्यक है। यह कार्य असम्भव तो नहीं किन्तु कठिन अवश्य है। इस के लिए सामाजिक चेतना लानी है, जो कि लम्बे समय के संघर्ष के पश्चात् कहीं सम्भव होगी। क्योंकि स्वार्थी लोग इन कार्यो में अड़चने डालेंगे, जिस कारण उन से मतभेद उत्पन्न होगा। यही मतभेद कहीं-कहीं प्रतिशोध में भी बदल सकता है। हमारे प्रतिद्वन्दी हमें मिटा डालने के कार्यक्रम बनाकर उस पर योजनाबद्ध कार्य करेंगे। जिस से हम सामाजिक क्रांतिकारियों को भारी क्षति उठानी पड़ सकती है। इस लिए हमें पूर्ण सतर्कता से युक्ति संगत नियमावली से समाज मे जागृति लानी है और संगठित होकर सदैव संघर्ष-रत रहना है। इन कार्यो के लिए प्राणों की आहुति भी देनी पड़ सकती है। जिस के लिए हमें अपने मन को सदैव तैयार रखना है।"

"लक्ष्य की प्राप्ति तभी सम्भव हो सकती है जब आप स्वयं सशक्त हो, तात्पर्य यह कि सब से पहले 'मानव कल्याण' के लिए स्वयं को प्रत्येक दृष्टि से शक्तिशाली बनाकर, शक्ति का प्रयोग, शक्ति सन्तुलन बनाए रखने के लिए करें। क्योंकि प्रकृति का यही सिद्धांत है दुर्बल को बलवान मार डालता है अथवा खा जाता है। जब तक आप के पास शक्ति नहीं रहेगी। आप की आदर्श बातों अथवा कार्यो का कोई मूल्य नहीं क्योंकि विरोधी पक्ष आप के कार्यो के लिए सदैव बाधाएं उत्पन्न कर आप को पराजित करना चाहेगा। अत: सर्व प्रथम लक्ष्य की प्राप्ति के लिए साधन के रूप में शक्ति प्राप्त करना अनिवार्य है।"

शक्ति के आठ स्वरूप हैं- आज तक कई पराक्रमी पुरुष अथवा चक्रवती सम्राट, इन्हीं आठों शक्तियों को प्राप्ति कर जगत में महान कहलाये हैं।

शारीरिक, मानसिक, आत्मिक, धन, जन, शस्त्र, पदवी, एकता इत्यादि।

1. शारीरिक – यह शक्ति लक्ष्य का मूल स्रोत है, इस की प्राप्ति के लिए पौष्टिक आहार का सेवन सदैव करना, नशे, चिन्ताओं से दूर रहना तथा कसरत इत्यादि करना अनिवार्य है।

2. मानसिक शक्ति – इस शक्ति की प्राप्ति के लिए प्रत्येक व्यक्ति का शिक्षित होना अनिवार्य है। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए मातृ भाषा को साधन बनाना चाहिए।

3. आत्मिक शक्ति – यह शक्तियों का मूल स्रोत है, इस शक्ति की प्राप्ति के लिए प्रत्येक व्यक्ति को प्रात:काल शौच-स्नान से निवृत होकर सहज योग से मन एकाग्र कर हरि नाम का चिंतन मनन करना चाहिए।

4. धन की शक्ति – इस शक्ति की प्राप्ति के लिए प्रत्येक व्यक्ति को पुरुषार्थी बन कर, सत्य मार्ग पर चलकर, अपनी आजीविका स्वयं अर्जित करनी चाहिए।

5. पदवी (उपधि) की शक्ति – इस शक्ति की प्राप्ति के लिए सक्रिय राजनीति में भाग लेकर अथवा योग्यता के बल पर सत्ता अथवा उच्च पद्वी प्राप्त करनी चाहिए। जिस से मानव कल्याण कर सकें।

6. शस्त्र अस्त्र शक्ति – प्रत्येक व्यक्ति को अपनी सुरक्षा के लिए समय अनुसार आधुनिक अस्त्र–शस्त्र धारण कर के आत्म निर्भर बनना चाहिए।

7. जन शक्ति – गुरुमति विचारधारा का प्रचार कर अपने अनुयायियों की संख्या को सदैव बढ़ाना ही मुख्य लक्ष्य होना चाहिए।

8. एकता की शक्ति – आपसी मतभेदों को सदैव भुलाकर, संस्थाओं के रूप में संगठित होकर रहना चाहिए।

उपरोक्त आठों शक्तियों की प्राप्ति का प्रयास ही सम्पूर्ण स्वतन्त्रता है अथवा 'मानव कल्याण' का पहला कदम है। ऐसा सम्भव हो गया तो समस्त विश्व मे दुख–क्लेश का नाश हो जायेगा तथा सदैव के लिए शान्ति स्थापित हो जायेगी। यदि इन प्राप्त शक्तियों के सदुपयोग द्वारा पीड़ित वर्ग के उत्थान के लिए, क्रमश: चार भागों में कार्यक्रम चलाएंगे तो सब ठीक होगा।

1. सामाजिक वर्गीकरण के विरुद्ध – तथा कथित अछूत जातियों को समानता का अधिकार दिलवाने के लिए, उन्हें अपनी तरफ से प्रेम–प्यार अथवा सत्कार से सामान्य जीवन जीने के लिए साधन जुटा कर देना।

2. आर्थिक शोषण – धनी वर्ग की आत्मा को झंझोड़ना अथवा शोषित वर्ग के अधिकारों के लिए उन के पक्षधर बनकर न्याय के लिए दुहाई देना।

3. धार्मिक मतभेद – धर्म के नाम पर घृणा न कर परस्पर प्रेम प्यार से सब के साथ व्यवहार करना। निरर्थक भ्रमों, पारवण्डों के विरुद्ध वैज्ञानिक दृष्टिकोण से आंदोलन चलाना, जिस से पीड़ित समाज को बराबर का जीवन अधिकार मिल सके।

4. राजनैतिक – दुष्ट तथा स्वार्थी शासकों के अत्याचारों के विरुद्ध जन–आंदोलन लाने के लिए, जागृति लाना अथवा सत्ता को किसी आदर्शवादी मनुष्य के हाथों सौंपना।

राजे सीह मुकदम कुत्ते ॥

जाइ जगाइनि: बैठे सुते ॥

राग मलार, पृष्ठ 1288

उत्तराधिकारी के लिए परीक्षण

श्री गुरू नानक देव जी अपने मुख्य उद्देश्य 'मानव कल्याण' की सम्पूर्णता के लिए योजनाबद्ध कार्यक्रम चला रहे थे। अब उन का ध्येय था कि उन के पश्चात् अपना यह कार्य किसी योग्य, निष्ठावान, सम्पूर्ण-समर्पित व्यक्ति के हाथों सौंपा जाए। जिस से लक्ष्य की प्राप्ति में समय के साथ-साथ कोई बाधा उत्पन्न न हो। यदि कोई बाधा उत्पन्न होती है तो योग्य उत्तराधिकारी बुद्धी तथा धैर्य से उस का समाधान कर सिक्खों का मार्ग दर्शन करने मे सक्षम हो। जिस से यह प्रवाह निरन्तर गतिशील होकर प्रगति के पथ पर अग्रसर रहे और लक्ष्य की प्राप्ति में चूक की सम्भावना उत्पन्न न हो। इस लिए आप जी ने इस कार्य के लिए अपने पुत्रों एवं सेवकों को कसौटी पर परख कर उचित निर्णय लेने का विचार बनाया।

आप जी एक दिन अपने सेवकों एवं पुत्रों के साथ करतार पुर में विचरण कर रहे थे। उस समय आप के हाथ में एक सुन्दर लोटा था। अकस्मात ही वह लोटा आप के हाथ से छूट गया और वह लुढ़कता हुआ दुर्गन्ध एवं गंदे कीचड़ से भरे एक गड्डे में चला गया। आप जी वहीं रुक गये और अपने बड़े लड़के बाबा श्री चन्द जी को आदेश दिया, 'बेटा ! वह लोटा निकाल कर ले लाओ।' पिता जी का आदेश पा कर श्री चन्द जी दुविधा में फंस गए और विचार करने लगे क्या करूं, कीमती वस्त्र बदबू एवं गंदे कीचड़ से लिप्त हो जायेंगे जब कि यह एक नगण्य लोटा ही तो है। इस के लिए परेशान होने की क्या आवश्यकता है। अत: उन्होंने उत्तर दिया-'पिता जी ! आप भी कैसी बातें करते हैं? यह एक साधारण सा लोटा ही तो है, और दूसरा आ जायेगा। उस के लिए मैं अपने वस्त्र क्यों खराब करूं।' उसी क्षण छोटे बेटे बाबा लक्खमी दास को संकेत किया कि वह जाए और लोटा निकाल लाए। अब लक्खमी दास भी सोचने लगे कि बड़े भाई की बात तो ठीक ही है। इस लोटे के स्थान पर दूसरा लोटा आ जायेगा। उन्होंने भी तुरन्त उत्तर दिया-'पिता जी ! बड़े भैया जी ठीक ही कह रहे हैं। दूसरा लोटा आप को अभी मंगवा देते हैं।' इस उत्तर को सुनकर गुरुदेव ने भाई बूढ़ा जी को आदेश दिया, "बेटे! लोटा निकाल लाओ।" उन्होंने उत्तर दिया, "गुरुदेव! आप आश्रम चलें मैं किसी सफाई कर्मचारी से लोटा निकलवा कर लाता हूँ।" इस पर गुरुदेव ने भाई लहणा जी को संकेत

किया। वह तुरन्त गड्ढे में उतर गए और लोटा निकाल लाए और नदी के जल से स्वच्छ कर गुरुदेव के समक्ष प्रस्तुत कर दिया। गुरुदेव ने उन्हें हृदय से लगाया और सब को सम्बोधित हो कर के कहा, "बात लोटे की नहीं थी। बात तो आज्ञा पालन की थी, जिस में एक विशेष रहस्य छिपा पड़ा था कि समर्पित सिक्ख को, भविष्य में निम्न वर्ग के उद्धार के लिए, उन की गंदी बस्तियों में जाकर, उन जैसा जीवन जीना पड़ सकता है। जो व्यक्ति स्वयं को श्रेष्ठ समझता है यह कार्य उस के बस का है ही नहीं।"

धर्मशाला की दीवार का पुनः निमार्ण

श्री गुरू नानक देव जी एक रात को सातवें पहर (अर्द्ध रात्री) को धर्मशाला में पहुँचे। कई दिनों से धीमी गति की वर्षा हो रही थी। कड़ाके की सर्दी पड़ रही थी। उस समय धर्मशाला की एक कच्ची दीवार गिर गई। जिसको देखकर गुरुदेव ने महसूस किया कि दीवार गिरने के कारण धर्मशाला के भीतर भी ठंड बढ़ गई है। अत: शीत लहर के कारण संगत ठीक से नहीं बैठ पायेगी। इस लिए आप ने अपने जयेष्ठ पुत्र श्री चन्द जी को आदेश दिया, 'बेटा! इस दीवार को तैयार करने का प्रयत्न तुरन्त करो।' श्री चन्द जी ने, गुरुदेव को उत्तर दिया - 'हे पिता जी ! अभी रात है दिखाई नहीं देता तथा वर्षा भी हो रही है, ऐसे समय में गारे से दीवार तैयार करना कठिन ही नहीं असम्भव है।' श्री चन्द जी के इन्कार करने पर गुरुदेव ने पुन: वही बात छोटे बेटे लक्खमी दास को कही कि बेटा जैसे-तैसे भी हो दीवार का निर्माण अभी करना अति आवश्यक है। उन्होंने कहा - पिता जी भैया जी ठीक ही कह रहे हैं। सूर्योदय होने पर ही कुछ किया जा सकता है। गुरुदेव ने भाई बुड्ढा जी को संकेत किया - 'बेटा, तुम यह कार्य अभी आरम्भ कर दो।' किन्तु उन्होंने भी कहा - 'गुरुदेव गारा टिकेगा नहीं। अत: परीश्रम व्यर्थ जायेगा।' इस उत्तर को सुनकर गुरुदेव ने भाई लहणा जी की तरफ संकेत किया, "भाई लहणा! तुम इस कार्य को अभी प्रारम्भ कर दो ताकि संगत की एकत्रता तक दीवार बन कर तैयार हो जाए। भाई लहणा जी ने आदेश पाते ही दीवार की चिन्नाई तुरन्त आरम्भ कर दी। यह देखकर गुरुदेव अति प्रसन्न हुए।

उन्होंने संगत के आने पर प्रवचन देते हुए कहा-सिक्ख वही है जो कि विपत्ति काल में भी अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिये संघर्षरत रहता है, वह इस बात की विचार नहीं करता कि परीश्रम व्यर्थ जा रहा है अथवा फलीभूत हो रहा है। उस का उद्देश्य केवल अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए सदैव कार्यरत रहना है भले ही परिस्थितियां कितनी भी विषम क्यों न हों?

मृतक चूहे के शव की खोज

श्री गुरू नानक देव जी एक दिन धर्मशाला के भवन मे दुर्गन्ध अनुभव करने लगे। पास बैठे बेटों को उन्होंने आदेश दिया, "देखो तो यह दुर्गन्ध कहाँ से आ रही है?" बेटों ने इस आदेश को आगे सेवकों को दे दिया और कहा, "जल्दी खोजो दुर्गन्ध कहाँ से आ रही है?" जल्दी ही सेवकों ने खोज लिया कि एक चूहे का शव सड़ा हुआ अल्मारी के पीछे दबा पड़ा है परन्तु दुर्गन्ध के कारण उस शव को वहाँ से कोई हटाने को तैयार नहीं हुआ। सभी लोग सफाई कर्मचारी की खोज में निकल पड़े। जैसे ही भाई लहणा जी को इस बात की सूचना मिली जो कि उस समय बर्तन साफ करने की सेवा में लीन थे। वह तुरन्त उस स्थान पर पहुँचे जहां से दुर्गन्ध आ रही थी और उन्होंने बिना किसी की सहायता से यह कार्य क्षण भर में कर दिया तथा तत्पश्चात् उस स्थान को भी जल से धो कर पोचा लगा दिया।

यह देखकर गुरुदेव अति प्रसन्न हुए और उन्होंने अपने प्रवचन में कहा, "सेवक वही जो आज्ञा का पालन स्वयं करे, जो सेवक आज्ञा को दूसरों पर लाद देते हैं अथवा अन्य साधन अपना कर खाना-पूर्ति करते हैं तथा किसी विशेष कार्य के लिए दूसरों पर निर्भर रहते हैं वे लक्ष्य की प्राप्ति कदाचित नहीं कर सकते।"

अर्धरात्री में वस्त्रों की धुलाई

श्री गुरू नानक देव जी नियमानुसार अर्धरात्री में शौच-स्नान से निवृत होकर अपने निजी आसन पर बिराजमान हुए। उन्होंने महसूस किया कि उनके वस्त्र पसीने के कारण गंदे हो गए हैं। प्रात:काल दरबार लगने पर जब संगत में यह वस्त्र भद्दे दिखाई पड़ेंगे तो ठीक न होगा। अत: उन्होंने बेटे श्री चन्द जी को बुला कर कहा, "बेटा यह वस्त्र अभी धो डालो ताकि दरबार के समय पहने जा सकें।" श्री चन्द जी ने उत्तर दिया, "पिता जी आप चिन्ता न करें सुबह धुलवा लेंगे आप अभी अन्य वस्त्र धारण कर लें।" गुरुदेव ने उत्तर सुनते ही पुन: छोटे बेटे लक्खमी दास को आदेश दिया, "बेटा मेरे कपड़े धोकर ले आओ।" उन्होंने भी कहा, "पिता जी इस समय कपड़े धोना उचित नहीं है। आप दूसरे वस्त्र धारण कर लें।" इस पर गुरुदेव ने अन्य सेवकों की तरफ संकेत किया कि उन में से कोई जा कर वह कपड़े धोकर ला दे। संकेत पाते ही भाई लहणा जी ने कपड़े लिए और रावी नदी पर जा पहुँचे। देखते ही देखते अर्ध चन्द्रमा उदय हो गया। भाई लहणा जी ने वहाँ पर सभी कपड़े धोये और रेत पर सूखने डाल दिये। भीषण गर्मी के कारण धीमी-धीमी गति की पवन के झोकों से वस्त्र तुरन्त सूख गए। और उन्हें लेकर भाई लहणा जी लौट आए और स्वच्छ वस्त्र गुरुदेव के समक्ष प्रस्तुत किये। जिन्हें देखकर गुरुदेव गदगद हो गए और कह उठे, "सिक्खी उसी की प्रफुल्लित होती है जो आज्ञा का पालन करते हुए पुरुषार्थी जीवन व्यतीत करता है।"

उचित उत्तर

श्री गुरू नानक देव जी एक रात भीष्ण गर्मी के कारण अपने निकटवर्ती सेवकों के साथ विश्राम कर रहे थे। उन्होंने महसूस किया कि बिस्तर छोड़ने का समय हो गया है। उन्होंने बेटे श्री चन्द जी को पूछा, "बेटा देखना रात्रि कितनी व्यतीत हुई है तथा कितनी शेष है।" श्री चन्द जी उठे उन्होंने नक्षत्र विज्ञान से अनुमान लगाकर बताया कि ठीक अर्ध रात्री का समय है। इस पर गुरुदेव ने पुन: लक्खमी दास को आदेश दिया, "बेटा तुम भी समय का ठीक-ठीक अनुमान लगाओ।" वह भी नक्षत्र विज्ञान के आधार पर यही

अनुमान लगा पाए कि अर्धरात्रि ही शेष है और सातवां पहर प्रारम्भ हो गया है किन्तु गुरुदेव ने पुन: सेवकों को कहा, "आप सभी जाओ और नक्षत्र विज्ञान को समझो और बताओ रात कितनी बाकी है।" बुड्ढा जी उठे उन्होंने अनुमान लगाया और कहा, 'हे गुरुदेव ! अनुमानत: रात्रि तो आधी ही व्यतीत हुई है और आधी ही शेष है। किन्तु जब गुरुदेव ने भाई लहणा जी से यही प्रश्न दोहराया तो उन्होंने हाथ जोड़कर नम्रता पूर्वक उत्तर दिया, "हे गुरुदेव जी! उस प्रभु की लीला अनुसार कुछ व्यतीत हो गई है और कुछ बाकी है।" इस उचित उत्तर को सुनकर गुरुदेव सन्तुष्ट हो गए।

बूझो तो जाने

श्री गुरू नानक देव जी एक दिन सत्संग की समाप्ति पर अपने निजी सेवकों के साथ परिवार में बैठे थे और अपने विनोदी स्वभाव के अनुसार अपनी मुट्ठी मे कोई वस्तु बन्द कर पूछने लगे, "बेटा श्री चन्द बताओ तो मेरी मुट्ठी में क्या है?" श्री चन्द जी ने अनुमान लगाया और बताया, "पिता जी आपने अपनी मुट्ठी में रुपये का सिक्का रखा हुआ है।" गुरुदेव ने इसी प्रश्न को पुन: लक्खमी दास से पूछा तो उन्होंने भी कहा, "इस में एक सिक्का ही मालूम होता है।" इस पर सेवकों की तरफ संकेत हुआ कि बारी-बारी वे भी बताएं। सभी अनुमान लगाने लगे। जब आप जी ने भाई लहणा जी को संकेत किया तो उन्होंने विनम्रता पूर्वक कहा, "हे गुरुदेव जी! आप की मुट्ठी में समस्त विश्व की बरकतें हैं। यदि यह मुट्ठी किसी के लिए खुल जाए तो उसे ऋद्धि-सिद्धि, ब्रह्मज्ञान, भक्ति-शक्ति अथवा प्रभु में अभेदता (मोक्ष) प्राप्त हो सकती है।" इस उत्तर को सुनकर गुरुदेव प्रसन्न हुए और कहने लगे, "बात तो रहस्य जानने में है, जो दूर दृष्टि का स्वामी होगा उसी के हाथों सफलता की कुंजी रहेगी।"

कड़ी साधना

श्री गुरू नानक देव जी के दरबार में संगतों का आवागमन सदैव बना रहता, जिस कारण दिन-रात लंगर तैयार मिलता। गुरुदेव के स्वयं के खेतों का अनाज भी लंगर के कार्यों में प्रयोग होता। एक वार मौसम खेती के अनुकूल न रहा, अतः खेती अच्छी न हुई। पूरे देश में अनाज का अभाव महसूस होने लगा। जिस कारण अति गरीबी की स्थिति में रहने वाले लोगों के लिए लंगर एक आकर्षण बन गया। भूख के मारे लोग दूर-दूर से लंगर प्राप्ति के लिए आने लगे, जिस कारण लंगर (जाति पाति रहित सामूहिक भोजन) पर दबाव सदैव बना रहता। गुरु-मर्यादा अनुसार सभी सेवक लंगर में एक पंक्ति में बैठ कर संगत के साथ, एक जैसा भोजन ही करते, इसी कारण सभी को पर्याप्त भोजन मिल जाता। यही स्थिति लम्बे समय तक बनी रही। परिणाम स्वरूप सेवकों को कठिनाइयां आड़े आने लगी। कुछ सेवक तो घरों को लौट गए किन्तु भाई लहणा जी, भाई बुढ़ढ़ा जी वहीं सेवा में तत्पर रहे। गुरुदेव जी ने यह देख कर भाई लहणा जी को कई बार संकेत से कहा, "तुम क्यों परेशान होते हो, यहाँ तो यही स्थिति बनी रहेगी। जाओ, घर का सुख आराम भोगो।" परन्तु लहणा जी अडिंग बने रहे और सभी प्रकार की कठिनाइयाँ झेलते रहे। इस सब को देखकर गुरुदेव मन ही मन भाई लहणा जी की सेवा पर रीझ उठे।

संगत को सन्तुष्ट किया

श्री गुरू नानक देव जी के दरबार में हाज़री भरने दूर-दूर से संगत आई हुई थी।भीषण गर्मी के पश्चात् वर्षा ऋतु प्रारम्भ हो गई। मूसला धार वर्षा होने के कारण लंगर तैयार नहीं किया जा सका। अतः संगत को रात भर बिना भोजन रहना पड़ा। जब सूर्योदय हुआ, वर्षा रुकी तो भोजन की व्यवस्था होने लगी किन्तु इस कार्य में समय लगना था।: गुरुदेव ने अपने बड़े बेटे को आदेश दिया, "बेटा श्री चन्द, संगत भोजन के

बिना भूखी है। कुछ मिठाई अथवा फलों का प्रबन्ध करो जिस से संगत को अल्प - आहार मिल जाए।" यह आदेश सुनकर श्री चन्द जी कहने लगे, "पिता जी ऐसी विषम परिस्थिति में मिठाई अथवा फल कहाँ से उपलब्ध होंगे, जो कि संगत के लिए पर्याप्त हों?" यह उत्तर सुनकर पुन: इस आदेश को छोटे बेटे लक्खमी दास को दिया। वह भी बात को सुनी अनसुनी कर टाल गए। इस पर गुरुदेव ने निकट वर्ती सेवकों को बुला कर आदेश दिया, "बेटा कुछ करो संगत भूखी है, कहीं से मिठाई अथवा फल लाओ। जिस से संगत को अल्प - आहार मिल जाए। तब तक भोजन तैयार हो जाऐगा।" अन्य सेवक विचार करने लगे कि अब ऐसी वस्तुएं कहाँ से लाएं। किन्तु भाई लहणा जी तुरन्त सामने वाले आम के विशाल वृक्ष पर चढ़ने लगे, उन्हें दूसरे सेवकों ने रोका कि वह आम आचारी हैं अच्छी नस्ल के न होने के कारण खट्टे हैं। इन से कुछ नहीं होगा किन्तु भाई लहणा जी ने देखते ही देखते वृक्ष की डालियों को जोर से झंझोड़ा तो पक्के हुए आमों की तेजी से वर्षा होने लगी। संगत ने जिन्हें चूस कर अपनी भूख मिटाई और कहने लगी, "धन्य है भाई लहणा जी।" परन्तु भाई लहणा जी कहने लगे - धन्य है! सत्यकरतार !!!

ओलों की वर्षा

श्री गुरू नानक देव जी, दैनिक नियमानुसार एक दिन अमृत बेला में अपने निजी सेवकों के साथ रावी नदी में स्नान करने लगे तो भाई लहणा जी उन के कपड़ों के पास प्रतीक्षा मे बैठै थे। तभी अकस्मात काली घटाएं छा गई,। और ओले बरसने लगे। अन्य सेवकों ने तूफान उमड़ता देखकर वृक्षों की आड़ ली परन्तु भाई लहणा जी ने गुरुदेव के कपड़े इकट्ठे कर अपने सीने से चिपका लिए और उन पर औंधे होकर बैठ गए, जिस से वे भीगने न पाएं। खूब ओले बरसे जिस से सर्दी बहुत बढ़ गई। किन्तु भाई लहणा जी गुरुदेव की प्रतीक्षा में वही डटे रहे, टस से मस नहीं हुए। इस अवधि में भाई जी को ठंड

के कारण बेहोशी छा गई। गुरुदेव जब नदी से लौटे तो उन्हें बहुत आश्चर्य हुआ जिस से अन्य सेवकों को बुलाकर भाई लक्खमी जी को घर पहुँचाया और उपचार करने लगे। लहणा जी के स्वस्थ होने पर गुरुदेव ने उन से पूछा, "बेटा, अपने साथियों की तरह तुमने वृक्षों की आड़ क्यों नहीं ली?" इस के उत्तर में भाई लहणा जी कहने लगे, "मैं आप को वहाँ छोड़ कर कैसे जा सकता था फिर आप के कपड़े भी तो भीग जाते।" इस उत्तर को सुनकर गुरुदेव गद्‌गद् हो गए।

अन्तिम परीक्षा

श्री गुरू नानक देव जी की आयु जब 70 वर्ष के लगभग हुई तो उन्होंने अपने उत्तराधिकारी का चुनाव करने के प्रयोजन से सभी सेवकों तथा पुत्रों की परीक्षा लेनी प्रारम्भ कर दी। उन्होंने समय-समय पर सेवकों एव पुत्रों को कसौटी पर परखना शुरू कर दिया। अत: एक दिन उन्होंने अपने उत्तराधिकारी की अन्तिम और कड़ी परीक्षा लेने का मन बना कर एक योजना बनाई और बड़ी सतर्कता से व्यवहारिक रूप दिया, ताकि परीक्षार्थियों को सन्देह न होने पाये कि उन की परीक्षा ली जा रही है।

सब से पहले उन्होंने नगर के शमशान घाट पर एक बड़ी कढ़ाई मे हलुवा तैयार कर के उस कढ़ाई के चारों ओर लकड़ियां चिन दी जिस से कढ़ाई दिखाई न दे। कढ़ाई पर दो लम्बे बांस तथा घास-फूस इस अन्दाज से जोड़ा कि वह चदर ढकने पर शव दिखाई दे और घर लौट कर अपनी वेष भूषा वैरागियों वाली धारण कर ली। जब दिन चर्या के अनुसार दरबार सजने का समय हुआ तो संगत के उपस्थित होने पर गले मे

चान्दी के सिक्कों की थैलियां लटकाए एक हाथ मे मोटा सा लट्ठ तथा दूसरे हाथ मे कुत्ते की रस्सी पकड़ कर बिना कुछ बताए नगर के बाहर शमशान घाट की तरफ चल दिये। संगत तथा प्रमुख सेवकों ने पूछा गुरुदेव आप कहाँ जा रहे हैं? आज आप ने यह क्या रूप धारण कर रखा है? इत्यादि-परन्तु गुरुदेव ने किसी की बात का कोई भी उत्तर नहीं दिया। इस पर सभी संगत उन के पीछे-पीछे हो गई। किन्तु गुरुदेव ने उन्हें डांट कर भगा दिया। कुछ सेवक तो अडिग थे वह नहीं गए, तब गुरुदेव ने उन के लिए चान्दी, सोने के सिक्कों की वर्षा प्रारम्भ कर दी। अधिकांश लोग सिक्कों को लूट कर वापस घर को चले गए। किन्तु मुख्य सेवक और सपुत्र तो अभी भी शेष थे। अब गुरुदेव ने कुत्ते को खुला छोड़ दिया जिस के भौंकने पर उस के काटने के भय से बाकी के सेवक तथा पुत्र घर लौट आए और सोचने लगे न जाने गुरुदेव को आज क्या हो गया है? कहीं मानसिक सन्तुलन तो नहीं खो बैठे। अब शेष दो ही सेवक थे। भाई बुड़ढा जी तथा भाई लहणा जी, गुरुदेव ने इन को भाग जाने को कहा और पीछे आने पर लट्ठ से पीटने लगे। बुड्ढा जी तो एक लट्ठ खा कर वहीं रुक गए किन्तु भाई लहणा जी पीटे जाने के बाद भी पीछा करते रहे। इस पर गुरुदेव ने उनको डांटते हुए पूछा, "लहणे तुम क्यों पिट रहे हो भागे क्यों नहीं?" उत्तर में भाई लहणा जी ने हाथ जोड़ कर नम्रता पूर्वक उत्तर दिया, "मैं कहाँ जाऊं मेरा तो कोई ठिकाना नहीं है।" यह सुनते ही गुरुदेव ने उन्हें पकड़ कर कहा, "तो ठीक है यदि हमारे साथ रहना चाहते हो तो यह मुर्दा खाओ।" भाई लहणा जी ने कहा, 'सत वचन' और पूछा, 'किधर से इसे खाऊं'। गुरुदेव ने कहा, "बीच में से खाओ"। जब भाई लहणा जी ने चादर उठाई तो वहाँ मुर्दा तो था नहीं, वहाँ तो योजना अनुसार कड़ाह प्रसाद (हलुवा) तैयार रखा था जो कि लहणा जी ने आदेश अनुसार खूब डट कर खाया। गुरुदेव भाई लहणा जी पर अति कृपालु हुए और कहने लगे, "लहणेया तेरे लिए कोई और ठिकाना नहीं है ना। बस मेरे को भी कोई और

ठिकाना नहीं मिल रहा था कि मैं अपनी ज्योति कहाँ टिकाऊं। अत: अब मुझे अपनी ज्योति के लिए उपयुक्त ठिकाना मिल गया है।" यह कह कर उन्होंने भाई लहणा जी को हृदय से लगा लिया और आशीष दी और वचन किया, "आज से तेरा पुर्न जन्म हुआ। तू मेरे अंग से उत्पन्न है। इस लिए तेरा नाम लहणा के स्थान पर अंगद हुआ। अब तुझ मे मुझ मे कोई अन्तर नहीं तू मुझ में अभेद है।"

उत्तराधिकारी की घोषणा

श्री गुरू नानक देव जी ने दृढ़ निश्चय कर संगत को दूर-दूर संदेश भेजे कि वे अपने उत्तराधिकारी की विधिवत घोषणा करने जा रहे हैं। अत: सभी लोग निश्चित समय पर उपस्थित हों।

निश्चित समय पर सभी तरफ से संगत एकत्रित होने पर आप जी ने भाई लहणा जी को अपने निजि-आसन (गुरू आसन) पर बिठाकर पांच परिक्रमा की और पांच पैसे, नारियल भेंट किया और बाबा बुड्ढा जी ने उन के माथे पर केसर का तिलक लगया। तत्पश्चात् गुरुदेव जी ने स्वयं दन्डवत प्रणाम कर भाई लहणा जी (अब अंगद देव जी) को अपना गुरू स्वीकार कर, घोषणा की कि आज से गुरू-पदवी भाई लहणा को (अपना निजि स्वरूप देकर) गुरू अंगद देव के रूप में सौंप रहा हूँ। अत: आप सभी संगत भी शीश झुका कर नम्रता पूर्वक प्रणाम करें अथवा मस्तक झुका कर अभिनंदन करें। गुरुदेव जी ने उस समय गुरू-शिष्य के नाते को बदलकर एक नई परम्परा की आध ारशिला रखी, जिस के अनुसार शिष्य को गुरू बनाकर और स्वयं शिष्य बन कर शीश झुका दिया। परिवार के सदस्य तथा संगत यह सब देखकर बहुत चकित हुई किन्तु गुरुदेव ने तो दीपक से दीपक जला कर उसे प्रकाशमान कर दिया था तथा साथ में अपनी समस्त पूंजी-वाणी की पोथी ('शब्द गुरू') जिस की उन्होंने अपने प्रचार दौरों के समय घटना क्रम के अनुसार रचना की थी। उसे अपने इस परम भक्त शिष्य को सौंप दी, जो कि अब गुरू-ज्योति प्राप्त कर चुके थे।

गुरुदेव ने आदेश दिया, "आज से मेरे स्थान पर अंगद देव जी गुरू कहलवाएंगे। गुरू अंगद देव जी को गुरू गद्दी पर बैइाने का शुभ कार्य दिनांक 2 सितम्बर, 1539 को सम्पूर्ण हुआ। किन्तु अंगद देव जी यह सब सहन नहीं कर पाए कि गुरुदेव जी, उन के कदमों पर शीश झुकाएं। उन्होंने सहज में ही अपने पैरों को शाप दे दिया और कहा, "इन पैरों पर कुष्ठ हो जाए।" किन्तु गुरुदेव ने उन्हें शान्त किया और कहा, "प्रभु की यही इच्छा है। अत: ऐसा होना ही था, क्योंकि आप की सेवा-भक्ति रंग लाई है।" परन्तु अंगद देव जी का वचन पूरा हुआ। उन के अपने पांव पर कुष्ठ रोग हो गया। यह देखकर गुरू नानक देव जी ने अपने हाथों से उन के चरण धो डाले और कहा, "इस कुष्ठ का रोग चिन्ह मात्र तो रहेगा ही, क्योंकि भक्त का वचन अटल होता है।" इस प्रकार गुरू अंगद देव जी के चरणों की एक उंगली पर जीवनभर कुष्ठ बना रहा।

गुरुदेव के अपने दोनों साहबजादों ने उन के आदेशानुसार अंगद देव जी को गुरू मानकर शीश झुकाना स्वीकार न किया। जिस कारण गुरुदेव उन से रुष्ट हो गए। गुरुदेव ने महसूस किया कि अंगद देव जी के वहाँ रहने पर दोनों भाई उन से ईर्ष्या करेंगे। अत: उन्होंने अंगद देव जी को बुलाकर उन को वापिस खडूर (साहब) नगर जाने का आदेश दिया और कहा, "वहीं रह कर गुरू पद्वी धारण कर गुरमति का प्रचार आरम्भ करो।" गुरू अंगद जी ने आज्ञा का पालन तुरन्त करते हुए करतार पुर नगर को छोड़ दिया और खडूर (साहब) नगर पहुँच कर साधना मे लीन हो गए।

परम ज्योति में विलय

श्री गुरू नानक देव जी ने श्री गुरू अंगद देव जी को गुरू पदवी सौंप कर उन को विदा किया। उस के उपरान्त उन्होंने आसन लगाकर संगत को कृतार्थ करना त्याग

दिया। जो भी उनके दर्शनों को आता आप जी उन्हें खडूर नगर जाने के लिए प्रोत्साहित करते। इस प्रकार कुछ दिन व्यतीत हो गए। एक दिन आप जी ने समस्त संगत तथा निकटवर्तीयों को संदेश भेजा कि इस नश्वर शरीर को त्याग कर वे निजधाम को प्रस्थान करने जा रहे हैं। आप सब से अब अन्तिम विदाई लेनी है, इस लिए आप सब समय अनुसार दर्शन देकर कृतार्थ करें। इस संदेश को प्राप्त करते ही सभी लोग गुरुदेव से मिलने आये, परन्तु उन से रूठे हुए उनके दोनों पुत्र नहीं आए। इस पर उन्होंने एक बार उन को विशेष रूप से संदेश भेजा कि उन दोनों को पिता जी याद कर रहे हैं और उन का कहना है कि यदि आप दोनों न आए तो भी वे शरीर त्याग देंगे। किन्तु श्री चन्द तथा लक्खमी दास ने इस बात को भी पिता जी का विनोद ही समझा। क्योंकि वे जानते थे कि गुरुदेव का स्वास्थ्य बिलकुल ठीक होगा। इसलिए वे नहीं आए। गुरुदेव ने सभी को प्रभु लीला में प्रसन्न रहने का आदेश दिया और कहा, "धैर्य ही सब से बड़ी शक्ति है।" और अपने पुत्रों की प्रतीक्षा किए बिना ही आप जी चादर तान कर सो गए।

गुरुदेव के सच्चखंड प्रस्थान का समाचार जब बाबा श्री चन्द और बाबा लक्खमी दास जी को मिला तो वे जल्दी से आए और गुरुदेव के समक्ष प्रार्थना करने लगे कि उन से भूल हुई है। उनको क्षमा करें तथा कम से कम दो घड़ी के लिए दर्शन देकर कृतार्थ करें। साहबजादों की ऐसी प्रार्थना सुनते ही गुरुदेव पुनः उठ बैठे और उनसे विचार-विमर्श करने लगे। बाबा लक्खमी दास जी ने मुख्य बात पूछी, "गुरुदेव के रहते सिक्खी-सेवकी बहुत चलती थी। सिक्खी का कार्यभार तो अब अंगद देव जी को सौंप दिया है। ऐसे में उनका क्या होगा?" श्री गुरू नानक देव जी ने उत्तर में कहा, "आप किसी बात की चिन्ता न करें। यदि आप लोग प्रभु चिंतन मे लीन रहोगे तो किसी प्रकार की कोई कमी नहीं रहेगी।"

इस मुलाकात के पश्चात् गुरुदेव जी फिर चादर तान कर सो गए। जब फिर जांचा गया तो आप जी इस बार शरीर का त्याग कर चुके थे।

शोक सभा का आयोजन किया गया। नगर के प्रमुख नागरिक उपस्थित हुए। कुछ विवेकशील व्यक्तियों ने गुरुदेव की अन्तिम इच्छा तथा आदेश जानने चाहे कि उनका पार्थिव शरीर किस विधि अनुसार प्रकृति में विलय किया जाए। क्योंकि गुरुदेव जी पुरोहित वर्ग के कर्म काण्डों पर विश्वास नहीं रखते थे। परन्तु उन्होंने इस विषय पर कोई वसीयत भी न की थी न ही किसी को इस विषय पर उन से पूछने का कभी साहस हुआ था। उन दिनों भी अन्तिम संस्कार के लिए दो विधियों का प्रचलन था। एक वैदिक रीति से अन्तेष्टि तथा दूसरी मुसलमानी शरहा अनुसार दफन करना। किन्तु गुरुदेव ने तो समस्त जीवन इन दोनों प्रणालियों से ऊपर उठकर निर्पेक्ष जीवन जिया था। उन का नारा था 'न हम हिन्दू न मुस्लमान' अर्थात मैं परम ज्योति का सेवक, एक इन्सान मात्र हूँ। इसी लिए उन्होंने बाल्यकाल में जनेऊ भी धारण करने से साफ़ इनकार कर दिया था क्योंकि उन का मत था कि उस को धारण करने से समाज में जाति, वर्ण भेद के नाम पर बुराइयां उत्पन होती है तथा बहन-भाई में भी नारी पुरुष के नाम पर मतभेद उत्पन किये जाते हैं। जबकि दोनों को समाज में बारबर के अधिकार मिलने चाहिए। आप जी ने अपने समस्त जीवन काल में जहां हिन्दू समुदाय के कर्मकांडों, आडम्बरों तथा पाखण्डों का विरोध किया वहां इस्लाम की रूढ़िवादी विचारधारा का भी कड़े शब्दों में खण्डन किया। अत: उन्होंने मानव समाज का नये रूप में पथ प्रदर्शित किया। कुछ लोगों ने प्रस्ताव रखा कि गुरुदेव जी की राय जानने के लिए उन की बाणी से सीख ली जाए। इस पर प्रमुख सेवकों ने उन की बाणी के कुछ विशेष शब्द जो कि मृतक संस्कार के लिए थे, जिन में जन साधारण के लिए सुन्दर संदेश था प्रस्तुत किये-

मिटी मुसलमान की पेड़ै पई कुमिआर ।।
घड़ि भांडे इटा कीआ जलदी करे पुकार ।।
जलि जलि रोवै बपुड़ी झड़ि झड़ि पवहि अंगिआर ।।
नानक जिनि करतै कारणु कीआ सो जाणै करतारु ।।

राग आसा, पृष्ठ 466

\- - - - -

इक दझहि इक दबीअहि इकना कुते खाहि ।।
इकि पाणी विचि उसटीअहि इकि भी फिरि हसणि पाहि ।।
नानक एव न जापई किथै जाइ समाहि ।।

राग सोरठि, पृष्ठ 648

इस रचना को सुनकर सभी ने एक मत होकर कहा कि गुरुदेव की इच्छा अनुसार परम्परा से ऊपर उठकर कोई नई विधि अनुसार बिना कर्मकाण्ड के उनका अन्तिम संस्कार कर दिया जाए।

इस पर गुरुदेव का शरीर जल प्रवाह कर दिया गया। जिस से उन की इच्छा अनुसार उनकी कोई समाधि अथवा यादगार न तैयार की जा सके।

गुरुदेव जी बनारस में जब कबीर पन्थियों से मिले थे तो आप ने उन की वाणी को अपनी पोथी में संकलित कर लिया था, जो कि उन की अपनी विचार धारा के अनुरूप थी, अपनी पोथी में संकलित कर लिया था। जिस का एक शब्द इस प्रकार है -

बुत पूजि पूजि हिंदू मूए तुरक मूए सिरु नाई ।।
ओइ ले जारे ओइ ले गाडे तेरी गति दुहू न पाई ।।

राग सोरठि - कबीर जी, पृष्ठ 654

\--- कथा सम्पूर्ण हुई ----